

अमृता प्रीतम की श्रेष्ठ रचनाएँ

अमृता प्रीतम

जन्म १९१९, गुजरावाला मातृभाषा पंजाबी प्रथम रचना संग्रह १९३६ में प्रकाशित, लगभग तीन दशकों से पंजाबी के साहित्य सृजन क्षेत्र में प्रमुख स्थान पंजाबी का यह आधुनिक दृष्टि भाव और नैतिकी शिल्प का प्रवर्तिका साहित्य अकादमी पुरस्कार द्वारा सम्मानित साहित्य अकादमी की वायव्यारिणी समिति की सन्स्था अनेक देशों का साहित्यिक भ्रमण, 'नागमणि' पत्रिका की सम्पादिका, प्रकाशित कृतियाँ ५० के लगभग १७ कविता संग्रह, १९ उपन्यास, ५ कहानी संग्रह, ३ लोकगीत संग्रह, २ यात्रावृत्त, १ आत्मकथा, १ निबंध संग्रह।

अमृता प्रीतम की श्रेष्ठ रचनाएँ

इमरोज़ के नाम

—अमृता प्रीतम

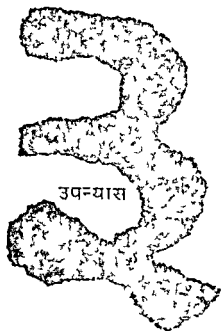
तीन उपन्यास

बारह कहानिया

कविताएँ

तेरह लेख

विश्व प्रसिद्ध
उपन्यासों के
दस पात्र



सिन्धु	१
मागमजि	८१
धाया	११५

मटमला दिा था। बारी के टुकड़े पर बड़ी पूरा मटर छील रही था। उँगलियों में पकड़ी हुई फली के मुँह को खोलकर जब उम ने दानो को मुट्ठी में सरकाना चाहा, तो एक मफेद कीड़ा उस के अँगूठे पर लग गया।

जमे एकाएक कीचड़ भरे गड्डे में पाव जा पड़ने पर एक सिहरन सी हो उठती है वही ही सिहरन पूरे के सारे शरीर में दौड़ गयी। हाथ झटकाकर उम ने कीड़े को परे फेंक दिया और अपने हाथों को अपने घुटनों में भीच लिया।

पूरा के सामने मटर की फलिया, निकाले हुए दाने और खाली छिलके बिखरे पड़े रहे। उम ने जाड़े हुए घुटना के बीच में स दाना हाथ निकालकर अपने कलेजे का थाम लिया। उसे लगा, माना सिर स पाव तक उम का शरीर मटर की उस फली की भांति हो जिस के भीतर मटर के स्वच्छ दानों के स्थान पर कोई गन्दा कीड़ा पल रहा है।

पूरा को अपने शरीर के अग-अग स घिन आने लगी। उम का मन चाहा कि वह अपन पेट में पल रहे कीड़े को झटका दे, उम अपने शरीर से दूर झाड़ दे, ऐसे जस कोई चुभे हुए काटे का नाखूना में फसाकर निकाल देता है, जैसे कोई धँसे हुए गोबर का उखाड़कर फेंक देता है जैसे कोई चिपटी हुई बिल्ली को नोचकर अलग कर लेता है जैसे कोई चिपटी हुई जाक को ताड़ फेंकता है।

पूरे सामने दीवार की ओर देखने लगी। बीते हुए दिन एक एक कर के वहाँ से गुजर रहे थे।

पूरा गुजरात जिले के एक गांव छत्तोअनी के शाहो की बेटी थी—गाह जिन का माहूवार का काम बब का बंद हा चुका था, किन्तु फिर भी वह कहलाते शाह ही थे। समय के बुचक्र ने गाहो के उस घर का यह हाल हा गया कि देग और कण्डाल जमे उन के बड़े-बड़े बरतन भा ढिक् गये—वे बरतन जिन पर उन के पक्का के नाम खुद हुए थे। प्रति दिन की इस जीती जागती ग्लानि से बचने के लिए पूरे के पिता और चाचा अपना गाँव छाड़कर मियाम चले गये। वहाँ उन के दिन पलक भारते ही पलट गये।

उन दिन पूरा दौटती फिरती थी और उस की मा की गाँव में एक लड़का था। उजड़े हुए गाँव का यह परिवार फिर अपने गाँव छत्ताआनी आया। पूरा के पिता ने अपना गिरवी पड़ा हुआ मकान छुटवाकर अपने दाप-दादा के नाम की लाज रख ली। यद्यपि उस के पिता को नया मकान बनवाने में इस से भी कम पैसे खर्चने पड़ते पर उस ने अघाघुघ लगाये हुए न्याज की भी परवा न की और एक बार दात भीचकर अपने पूर्वजों के नाम का रक्षा कर ली।

अनाज चारा और अन्य वस्तुआ की ठीक-ठाक व्यवस्था कर के वह सियाम चले गये, किन्तु उन का मकान उन का नाम उन के पीछे गाँव में रहता रहा। अगली बार जब वह अपने गाँव लौटे उस समय पूरा पूरा चौदह वर्ष की थी। उस से छोटा उस का एक भाई था उस से छोटी पूरो का ऊपर तले की तीन बहनें थी और अब के पूरो की माँ की छोटी बार फिर किसी बच्चे की उम्मीद थी।

शाहो के उस परिवार ने गाँव आकर पहला काम किया कि पास के गाँव रत्तोवाल व एक अच्छे खाते-पीते घर में पूरो के लिए लड़का देखा। पूरो की मा माचता थी कि जब वह नहा धोकर उठगी तब बड़े चाव से पूरो का काज आरम्भ करगी। इस बार वह पक्की तरह सोचकर आय थी कि इस भार का उतारकर हा लौटेंगे।

पूरो का हानेवाली समुराल में उन दिन तीन दुधार पशु थे और गाँव में उन का मकान पहला था जिस के ऊपर की पक्की इटा की बरमाती बना हुई थी। मकान के माथे पर उन्होंने 'ओम' लिखवाया हुआ था। लड़का सूरत का अच्छा और बुद्धिमान दीन पड़ता था।

पूरो के पिता ने पाँच रुपये और गुड की भेली देकर लड़का रोक् लिया था। उन दिन गुजरात जिले में अदला-बदला के सम्बन्ध होने थे। जिस लड़के से पूरा की सगाई हुई उस लड़के की बहन का सगाई पूरा के भाई के साथ की गयी यद्यपि पूरो का भाई उस समय मुक्किल न बारह वरस का था और उस की भंगतर बहुत ही छोटी थी।

दो-तीन वरस के अंतर से ऊपर तले तीन लड़कियाँ को जन्म देने के कारण पूरा की माँ का मन धुँधला हो गया था। अब जब कि उन के दिन फिर गये थे घर में मन भर खाने का था जो भर पहनने का था उस का मन करता था कि उस के फिर एक लड़का हो।

इस बार आकर पूरो की मा ने दूसरा काम यह किया कि विधि-भाना की पूजा की। गाँव की कुछ स्त्रियाँ न पूरो के घर के आँगन में गोबर की एक गुडिया बनायी, लाल चुनरी के किनारी लगाकर उसे उस गुडिया के चिर पर उठा दिया दो माने साने की छोटी-सा नय बनवाकर उस की नाक में डाली और सब ने मिलकर गाया

त्रिमाता म्मी आवी ते मन्नी जावी

त्रिमाता म्मी आवी ते मन्नी जावी।

अमृता प्रीतम की श्रेष्ठ रचनाएँ

उन व अपने गाँव में आर आसपास के गाँवों में स्त्रियाँ व यह विश्वास था कि प्रत्येक बालक के जन्म के समय विधिमाता स्वयं आती है। यदि विधिमाता अपने पति से हँसती-खेलती जाती है तो आकर चटपट उड़की बनाकर चली जाती है, क्योंकि उसे अपने पति के पास लौटने की जरूरी होती है। किन्तु यदि विधिमाता अपने पति से झूठकर आती है तो उस लौटने की वाई विशेष जल्दी तो होती नहीं, वह आकर बहुत समय तक बठती है और आराम से लडका बनाती है। सा सब स्त्रियाँ ने मिलकर फिर गाना आरम्भ किया

विधिमाता रस्सी आँवी ते मनी जावी,

विधिमाता रस्सी आँवी ते मनी जावी।

विधिमाता शायद कहीं पास ही सुन रही थी, उस ने उन का कहा मान लिया। पन्द्रह-सोल्ह दिन बाद पूरे की माँ के लडका हो गया। शाहा के दूर-पार के सम्बन्धियों को भी बधाइयाँ मिलने लगी। चिन्ताजनक केवल एक बात थी, और वह यह कि लडका तेल्ह था। तीन बहनों पर भाई हुआ था। पूरा की माँ को बड़ी चिन्ता थी, राम कर किसी प्रकार लडका बच जाये, और बच जाये तो माता पिता को भारी न हा। विधिमाता का मनानेवाली स्त्रीयाँ फिर एक बार इकट्ठी हुई और कासी के एक बड़े-से थाल के बीच में बटा-मा छेद कर के लडके को उस में स आर-पार निकाश, साथ में गाती रही

निसला दी घाड आमी,

निसला दी घाट आमी।

तीन लडकियों के दल के बाद इस्वर की कृपा से उत्पन्न हुए लडके के सारे गणुन मनाकर अब सब को विश्वास हो गया कि लडका बच जायेगा।

पन्द्रहवाँ वष आरम्भ होने-हाते पूरे के अग प्रत्यग में एक हुलार-मा आ गया। पिछले बरस का मारा कमीज उस के शरीर पर लग हा गयी। पूरे ने पास की मण्डी से फूलावाला छोट लानर नये कुरते मिलवाये। कितना सारा अन्नक लगाकर चुनरियाँ तयार की।

पूरे की सहेलियाँ ने उस दूर स उस का मंगेतर रामबंद दिखा दिया था। पूरा की आँगा में उस की छवि परी की पूरे उतर गयी थी। उस का ध्यान आते ही पूरा का मुँह लाल हा जाता था।

पूरा नि गव हारर बहुत कम ही बाहर निकल सकती थी क्योंकि पास के गाँववालों का इस गाँव में आना-जाना बहुत रहता था। उस की ससुराल के गाँववाले वही पूरे का देख न लें। इस बात से पूरे बहुत डरती थी। और फिर वह गाँव बहुत बर के मुगलमाना का हा गया था।

बने जग दिन-दले पूरा और उस की सहेलियाँ खेता में घूम फिर आती थी। कई बार पूरा अपन खेता के पास स गुजरती हुई बच्चा सक् के आसपास अटक रहती,

उन दिना पूरा दौड़ती फिरती थी और उम की मा की गाँव में एक लका था। उजड़े हुए शाहा का यह परिवार फिर अपने गांव छत्ताआनी आया। पूरा के पिता ने अपना गिरवी पड़ा हुआ मकान छुटवाकर अपने बाप दादा के नाम की लाज रख ली। यद्यपि उम के पिता को नया मकान बनवाने में इस से भी कम पैसे खर्चने पड़ते, पर उस ने अघाघुघ लगाये हुए ब्याज की भी परमा न की और एक बार दात भीचकर अपने पूज्यों के नाम की रखा कर ली।

अनाज, चारा और अन्य वस्तुआ की ठीक-ठीक व्यवस्था कर के वह सियाम चले गये किन्तु उन का मकान उन का नाम उन के पाछे गांव में रहता रहा। अगली बार जब वह अपने गांव लौटे उस समय पूरा पूरे चौदह बप की थी। उम से छोटा उस का एक भाई था उस से छोटी पूरो की उपर तले की तीन बहनें थी और अब के पूरो की मा को छोटी बार फिर किसी बच्चे की उम्मीद थी।

शाहों के उस परिवार ने गांव आकर पहला काम किया कि पास के गांव रत्तोवाल के एक अच्छे खाते-पीते घर में पूरो के लिए लडका देखा। पूरो की मा साचती थी कि जब वह नहा धोकर उठेगी तो बड़े चाव से पूरो का काज आरम्भ करेगी। इस बार वह पक्की तरह सोचकर आये थे कि इस भार का उतारकर ही लौटेंगे।

पूरो की होनेवाली ससुराल में उन जिना तान दुधार पगु थे और गांव में उन का मकान पहला था जिस के ऊपर की पक्की इट्टी की बरमाती बनी हुई थी। मकान के माथे पर उन्होंने आम लिखवाया हुआ था। लडका सुरत का अच्छा और बुद्धिमान् दीनव पड़ता था।

पूरो के पिता ने पाँच रुपय और गुड की भेला देकर लडका रोक लिया था। उन दिना गुजरात जिले में बदला-बदला के सम्बन्ध होते थे। जिन लडके से पूरा की सगाई हुई उम लडके की बहन की सगाई पूरो के भाई के माथ की गयी यद्यपि पूरो का भाई उस समय मुश्किल ने बारह बरस का था और उस की मंगेतर बहुत ही छोटा थी।

दो दो बरस के अंतर से उपर तले तीन लकिया को जन्म देने के कारण पूरो की मा का मन थुब-मा हो गया था। अब जब कि उन के तिन फिर गये थे, घर में मन भर खाने का था जी भर पहनने का था उम का मन करता था कि उस के फिर एक लडका हो।

इस बार आकर पूरो की मा ने दूसरा काम यह किया कि विधि-माता की पूजा की। गांव की कुछ स्त्रियाँ न परा के घर के आँगन में गोबर की एक गुडिया बनायी, लाल चुनरी के किनारा लगाकर उसे उस गुडिया के मिर पर उठा दिया, दा मागे सोने की छोटी-सी नय बनवाकर उम की नाक में ढाली और सत्र ने मिल्कर गाया

विधमाता रम्मी आवो ते मन्नी जावो

विधमाता रम्मी आवो ते मन्नी जावो।

उन व अपने मौत्र म और आमपाम के गावा में स्त्रिया का यह विदवास था कि प्रत्येक बालक के जन्म के समय विधिमाता स्वय आती है। यदि विधिमाता अपने पति स हैंसती-नेलता आती ह तो आकर शटपट लडकी बनाकर चली जाती ह, क्याकि उसे अपने पति के पास लौटने की जल्दी होती ह। किन्तु यदि विधिमाता अपने पति से दूरकर आता ह तो उम लौटने की कोई विशेष जल्दी तो होती नहीं, वह आकर बहुत समय तक बैठती ह और आराम से लडका बनाती ह। सा सब स्त्रिया ने मिलकर फिर गाना आरम्भ किया

विधिमाता रस्सी आवी ते मनी जावी,

विधिमाता रस्मी आवी ते मनी जावी।

विधिमाता शायद वही पास ही सुन रही थी, उस ने उन का वहा मान लिया। पाद्रह-सोलह दिन बाद पूरा की माँ के लडका हो गया। गाहा के दूर-पार के सम्बन्धिया को भी बधाइयाँ मिलने लगी। चिन्ताजनक केवल एक बात थी, और वह यह कि लडका तेला था। तीन यहाँ पर भाई हुआ था। पूरा की मा को बड़ी चिन्ता थी, राम करे किसी प्रकार लडका बच जाये, और बच जाये तो माता पिता को भारी न हा। विधिमाता का मनानेवाली स्त्रियाँ फिर एक बार झुट्टी हुई और बाँसी के एक बड़े-स थाल के बीच में बटा-सा छद कर के लडके को उस में स आर-पार निवाला, साथ में गाती रही

त्रिलाला दी घाड आयी,

त्रिलाला दी घाड आयी।

तीन लडकिया व दल के बाद ईश्वर की कृपा से उत्पन्न हुए लडके के सारे शत्रुन मनावर अब सत्र को विश्वास हा गया कि लडका बच जायेगा।

पाद्रहवाँ वष आरम्भ हाते-हाते पूरा के अग प्रत्यग में एक हुलार-सा आ गया। पिछले बरस की सारी कमीज उस के शरीर पर लग हो गयी। पूरा ने पास की मण्डी से पून्नेवाला छोट लातर नये कुरते सिलवाये। कितना सारा अवरक लगाकर चुनरियाँ तयार की।

पूरो की सहेलिया ने उसे दूर स उस का मँगेतर रामचन्द दिखा दिया था। पूरा की आँखा में उम की छवि पूरो की पूरी उतर गयी थी। उस का ध्यान जाने ही पूरो का मुँह लाल हा जाता था।

पूरो नि गव हाकर बहुत कम हा बाहर निकल सकती थी क्योंकि पास के गाववाला का इस गान म आना-जाना बहुत रहता था। उस की समुराल के गाववाले वही पूरा को देख न लें इस बात स पूरो बहुत डरती थी। और फिर वह गाव बहुत कर के सुमलमानो का हो गया था।

बस जग दिन ढले पूरो और उम की सहेलिया खेता म घूम फिर आती थी। कई बार पूरा अपने खेता के पास स गुजरती हुई कच्ची सटक के आसपास अटक रहती,

पिजर

कभी कोई साम चुनने बट जाती, कभी किसी बेरी के पड स लगकर खडा हा जाता, बेर गिराती, उन्हें चुनती और सहेलिया का बाता में लगाये रखता। वह सदैव उस की हानेवाली समुराल का जानी थी।

मन ही मन वह साचती, यदि उस का मंगेतर आज इधर स गुजर जाये। वह उस गुजरते हुए एक बार दग ले। पुरो का दिल उग सटव क विनार मडे हाते हा धक धक करने लगता। फिर सारा रात पूरा अपने युवा मगतरे के स्वप्ना में मग्न रहती।

एक दिन पुरो की नयी जूती उस की एटी म बुरत लग रहा थी। सहलिया के साथ चलने वह पीछे रह रह जाती थी। पुरो और उस की सहेलिया खेता में स हावर घर लौट रही थी। सांग का अगवार पिपले हुए सिक्के की भांति चारा जोर बिखर गया था। लडकियाँ खेता की डील गैल चलती अव गाँव की पगडण्डी पर जा गयी थी। यह पगडण्डी वही चौडी और खुली हुई खाली भूमि पर हावर जाता था और वही कुछ पडा, पीपला और झाडिया क साथ-साथ माना उन की बाँह पकड पकडवर आगे बढता थी। सब लडकियाँ आगे पीछ इसी पगडण्डी पर चली जा रहा थी। पूरा जरा पीछे रह गयी थी। दायें पाँव की एडी के पाम एक बडा-सा छाला उभर आया था। पूरा ने तम जूती दाना पैरा मे उतारकर हाथा में ले ला जोर पाँव तजी से बढाने लगी।

लडकियाँ पूरा स कहा करती थी कि उस का दाया पर दायें पर से भारी था इसलिए उस क दाहिने पैर में जूता लगती था। इसी तरह पूरा का दायी हाथ भा बाय हाथ स भारी था। हाँ जी, चूडी पहनत हुए पता चलगा कहकर लडकिया पूरा को छेडा करता थी। पुरो की आँखा के सामने आ गया माना सच्चे हाथीदात की लाल चूडियाँ उस के हाथा में पहनायी जा रही ह। पिछली बडी-बडी खुला चूडियाँ पहनान के बाद आग की छटी चूडियाँ उस के दायें हाथ में फँस गया ह। नाई न तेल स उस के अंगूठे की हड्डी को मला और हाथीदात का लाल चूडी को उस के हाथ में जार स धकेलन लगा। परा का खयाल आया, वही उस की हाथीदात की लाल चूडी उस के दाहिने हाथ में टूट जाये तो। पुरो के कलेज का एक धक्का-सा गगा। हाय ! यह शगुन कितना बुरा ह ! उस की शगुन की चूडी, उस के सुहाग का चूडी उस क हाथा म क्या टूटे। पूरा ने अपने दाहिने हाथ का निरस्कार से दवा। भगवान ! उस का भगतरे युग-युग जिये ! हजार लाख वष जिये ! पुरो के हृदय ने कामना की। फिर पुरो का याद आया उस के गाँव म चूडा चडाते समय एक लटकी की चूडी सचमुच टूट गयी थी। पास खडा हुई स्त्रियाँ राम राम कहकर भगवान स उस के पति की कुशल-याचना करने लगी थी। फिर सुनार स सोने का एक पतला-सा तार टूटा हुई चूडी म पुरवाकर उस लडकी को फिर बहा चूडी पहनायी था माना उन्हान उस के पति की टूटी हुई जीवन डोरी का जोड लिया हा।

पूरा इन्ही गगुन-अपशगुन के बिचारा में फँसी हुई थी बि बापें हाथ की जोर के पोपल के पीछे से एक व्यक्ति निबलकर पूरा के सामने खड़ा हो गया। पूरा के कलेजे पर माना हथौड़ा-मा पड़ा। पूरा ने जल्दी से देखा, उम के गाव का जवान लटका रशीद उम के सामने खड़ा था। रशीद की आयु बाईस-चौबीस बरस की होगी। उस की भरी हुई जवानी उम के मुँह पर प्रत्यक्ष बोल रही थी।

पूरा ने दन्वा, रशीद की दानो बड़ा-बड़ी आँखें पूरा के मुँह पर गड़ी हुई हैं। वह काँप उठी। उस के मुँह से एक हल्की-सी चीख निकली और वह रशीद के पास से बचती हुई भाग खड़ी हुई।

पूरा भागती भागती लटकिया के साथ जा मिली। अब वह अपने घर के पास पहुँच गयी थी। पूरा का सास ठिकान न था। इतना ही भला हुआ कि रशीद ने उस के हाथ न लगाया, रशीद ने उस से मुँह से कुछ न कहा।

‘अरी, लटका था या बाई गेर था।’ सहेलिया ने उस से ठठोली की, बिनतु अभी तब पूरा की जान में जान नहीं आयी थी।

“गेर तो मिफ फाडकर खा जाता ह, कहते ह कि अगर रीछ का बाई जीरत अकेली मिल जाय तो वह उस मारता नहीं, उठाकर ले जाता ह। अपनी गुफा में ले जाकर उस को अपनी स्त्री बना लेता ह। सहेलिया में म एक ने यह बात सुनाया।

पूरा की जान फिर सूजने लगी। हाथ, उस करमा जली का क्या हाथ होगा जिसे रीछ अपनी स्त्री बना ले। यह साच-सोचकर पूरा का रग उठने लगा। पूरा का फिर रशीद की फंगी फली आँखें याद आ गयी।

अब पूरा अपने घर पहुँच गयी थी। सहेलिया हँसती-बोलती आगे बढ़ गयी।

दूसरे दिन जब पूरा और उम की महेलियाँ खता में सींगरे ताड़ रही थी, जल्दी से पूरा का मुट्ठी सांगरे पास हो चलते हुए रहैट पर घाने ले गयी। छटे छटे सींगरा का डण्डिया ताड़कर दा चार सींगर पूरा ने अपने मुँह में डाल लिये। तभी उस ने दन्वा कि पास के पड़ के साथ रशीद खड़ा हुआ ह। उस की टागा में स माना किसी ने जान ही खींच ली। भय उस के मुँह पर छा गया।

“अजी डरती क्या हो ? हम तो तुम्हारे चाकर ह।’ आज रशीद बाल उठा। उस के मुँह से शरारत टपक रही थी।

पूरा की एस लगा जिस अभी रशीद रीछ के चौड़े पंज की भाँति उस के मुख पर झपट पड़ेगा, उस की लम्बी लम्बी उँगलियाँ रीछ के नाखूना की भाँति उस की गरदन के चारों ओर फल जायेंगी। फिर वह उसे खींचता हुआ ले जावेगा और फिर फिर ?

सौभाग्यवश पूरा ने दन्वा सामने मे दा किसान चले आ रहे ह। रशीद वैसे का बसा ही खड़ा था। पूरा लाल टमाटरों से भरी हुई बयारी के ऊपर से छलाँग मारकर जल्दा जल्दी पाव फेंकती सहेलिया से जा मिली।

उस दिन पूरा बहुत निढाल सी रहा। सार रास्ते लटकिया का हाथ पकड़ पकड़कर चलती रही। परछाईया स भी काँप-काँप उठती, जरा जरा सी खड़खड़ाहट से भी चौंक चौंक उठती।

पूरा ने न तो कुछ अपनी माँ को बताया न अपने पिता का। उस की सहेलिया कहती थी, भला यह भी मा-बाप से कहने की काई बात है। जवान लटकिया को रास्ता चलत गोहूदे सदा से ही ताकते झाँकते आये हैं। मुँहजबानी कभी उन के गुलाम बनते हैं, कभी अपने-आप का उन का चाकर कहते हैं, ऐसे ऊल जलूल बकते हैं आये हैं। वह बका करें, भँका करें, भला काई कुत्ता ब भवने से डरकर सड़का पर चलना छोड़ देता है।

उस दिन उन के गाँव में एक छह-सात बरस का लड़का का एक पागल कुत्ते ने काट लाया। गली भट्टले की स्त्रिया ने मिलकर लड़के के घाव पर लाट मिरचें बांध दी। मिरचा की तेजा स कुत्ते के दाँता का जहर कट जाता है। पूरा ने जब यह खबर सुनी तो तुरंत ही उस के मन में विचार आया कि वह लाल मिरचें कूटकर रशीद की आग में जला दे। जितना वह रशीद की आग के सम्बन्ध में सावधानी थी उतना ही उसे जहर चढ़ता था।

सहेलिया पूरा की बाँहें पकड़कर सावधानी थी, पर पूरा को साहस न होता था कि वह खेत की ओर जाये।

और फिर अब पूरा का विवाह भी दिन दिन पास आ रहा था। पूरा के पिता ने धी और मदा इकट्ठा कर के घर में धर लिया था। पूरा की माँ न पीले रेशम से कढ़ी हुई लाल पुन्कारिया से लफ्फो का सटूक भर लिया था। सियाम से लाये हुए रशमी जोड़ा से उस ने दहेजवाला सफेद टुक मुँह तक भर दिया था। चुनरिया की छाटी बाकली चुन-चुनकर उस के पोरवे दुखने लगे थे। पिछली ओर का भाँतरवाला कमरा, जहाँ उस ने पूरा के दहेज के लिए पीतल के इक्यावन बरतन जाड़ थे, समाजम कर रहा था। उन दिना देहाता में क्राशिये के काम का बड़ा चलन था। पूरा न क्राशिये से बनाये हुए फूल जोड़-जाटकर पलग की पूरी चादर बनायी थी। दुसूती के तार गिन गिनकर उस ने फूल कान्ने सीख थे। अपने हाथ से अपन दहेज के लिए छलिया और मूँडे बनाये थे।

एक दिन पालक के नरम-नरम पत्ता का ताड़कर पूरा ने साग काटा। पूरा की माँ सुतली की बूनी हुई पीढ़ी पर बठा अपने लडके को दूध पिला रही थी। पूरा न मिट्टी की हड्डिया का बान के छात्रे-से गुच्छे से अच्छी तरह माँजा फिर साग को पानी स दो बार घाकर और उस में चने की दाल मिलाकर हँडिया को मुँह तक भर दिया। हारे की मीठा मीठी आग पर दूध पड़ा बड़ रहा था। पूरा ने चूल्हे में दा-चार छिप टिया लगाकर साग चढ़ा दिया।

पूरा का विवाह अब बस विलकुल पास आ गया था। पूरा की माँ का प्रताप

धी कि कौन जाने आज या कल पूरो की समुगल से काई नाप लेने हो आ जावे । पूरो कितनी सुंदर मुण्ड लटकी ह । राठी टुक्डा तो वह आगन में इधर से उधर चलते फिरते ही कर लेती ह । पूरो की सहेलियाँ कहती थी कि पूरा का जवानी भी तो भर-पूर चढ़ी है । पूरो के गारे निमल मुख पर आँख ठहरती न थी । पूरा की मा ने एक चाहत भरी दृष्टि से पूरो की आर दखा शायद वह साचती थी कि पूरा अब समुगल चली जायेगी, पूरो के मायके का घर भाय भाँय करेगा । पूरा अपनी मा का दाहिना हाथ थी । माँ की आखा में आँसू भर आये । हर बेटी की मा का राना पड़ता है । बेटी-बेटी पूरा की माँ गाने लगा

लाखी ते लाखी नी कलेजे दे नाल माए

दम्सी ते दम्सी इक बात नी ।

बाता ते लम्मीयाँ नी धीयाँ क्या जम्मिया नी,

अज्ज बिछाड बाँगे रात नी ।

पूरो की मा का कलेजा भर आया । पूरो चौंके के छोटे-छोटे काम निपटाती हुई अपना मा की आवाज सुन रही थी । पूरो के दिल में बिछोडे की एक हील-सी उठी । पूरो की मा आगे गाने लगी

चरखा जु डाहनीया में छापे जु पानीया में,

पिडियाँ ते बाँगे मेरे खेत नी ।

पुत्रा नू नित्ते उच्चे महल ते माडिया

धीया नू दित्ता परदेस नी ।

पूरा दौड़ी-दौड़ा आकर माँ के गले से लिपट गयी । मा बेटी दाना रो पड़ी । हर लट्की का यौवन उमे अपनी मा से अलग कर दता ह ।

पूरा की माँ ने जी कडा किया । बेटी के कंधे पर प्यार किया । सन्ध्या समय का अन्धकार उन के आगन में भी उतर आया था । पूरो की मा को याद आया कि दूसरी धीज चटाने को इस समय घर में कुछ भी नहीं थी, कौन जाने पूरो की समुगल स काद आत्मी आता ही हो ।

पूरो से उस ने कहा कि छोटी वहन की उँगला पकड़कर पाम के खेता में से चार भिण्डिया ही तोड़ ला । और चावला की एक मुट्ठी और गुड की भेली डालकर भीठे चावल भी चटा दे ।

पूरा का दिल भी आज भर भर आता था । उस ने अपनी छोटी वहन का साथ लिया और बाहर चली गयी ।

पूरा ने भिण्डिया तागी, दो-चार सींगरे ताडे और उल्टे पाव छोटी वहन को माथ लेकर घर की आर चली । लौटते समय पूरा को केवल यह विचार आ रहा था कि अब वह अपनी माँ से अलग हो जायेगी, अपनी वहना से बिछुड जायेगी अपने नहने-ने भाई स दूर चले जायेगी । बज्र के प्रहार के समान पूरो को एकाएक लगाल आया,

यदि यहाँ रशीद मिल जाये तो ?

और वह पाँव उठाकर चल्ने लगी। “पूरो, दौड़ क्या रही ह ?” पूरा का छोटी बहन का साँम चट गया था।

पूरो के पीछे का जोर से एक घाटा दीवती हुई जाया। पूरा अभी पगलपट्टी से हट भी न पायी थी कि न जाने घाड़ी या घुमवार कौन पूरा के दाहिने कंधे से टकरा गया। पूरा गिरने हा लगी थी कि किसी ने उमे कंधे से पक्कर घाँगी के ऊपर डाल लिया। पूरो की चीन्हे उल्टी हुई घोड़ी व साथ पल-पल दूर हाता चली गयी। उम की बहन खटी बाँपती रह गयी।

न जाने वह घोनी वहाँ से आयी थी उम का मवार कौन था, घाँगी कितनी देर तक दौड़ती रही पूरो अचेत थी।

पूरो का जोर होग आया वह एक कमरे में चारपाई पर पड़ा थी। चारा ओर दीवारों की सामन एक बंद दरवाजा।

पूरो को सब कुछ याद आ गया। उम ने दीवारा स अपना मिर दे-दे मारा उम ने दरवाजे से अपना मिर द दे मारा।

हार थक के पूरो चारपाई पर जा पड़ी। वह फिर अचेत हो गयी।

पूरो को जब होग आया कई उम के सिर में गरम धी मल रहा था। पूरो न एक बार सोचा शायद उस की माँ उम के मिरहाने बठी हुई थी और पूरा का बहुत तज बुगार चढ़ा था।

‘ओ मा !’ पूरो के मुख से निकला।

‘मेरा गलता माफ कर और एक बार होश में आ पूरो !’ किमी ने सिरहाने की आर से कहा।

ज्वर से जलती हुई पूरो ने मिर उठाकर देखा रशीद उस के मिरहाने बठा था। पूरो की एक चीख निकली और वह मूर्च्छित हो गयी।

पूरा ने दखा काली खालवाला एक रीछ उस के वालों म अपने पजे फेर रहा है, पूरो एक गुफा में पड़ी ह वह सिकुटती जाती ह, रीछ फलता जाता ह रीछ ने अपनी बालावाला बाहा में पूरो को लपेट लिया ह।

पूरो ने आखे फाड़-फाड़कर देखा कोई उस के पैरा व तलवे मल रहा था। फिर किमी ने उस के क्या को दबाया। फिर किमी ने उस के मुह में चुल्लू भर भर पानी डाला।

रीछ का गुफा या रशीद का घर ? पूरो के मिर में चक्कर आ रह थे। फिर शायद पूरो सो गया।

पूरो को अपनी माँ, अपना गाव सभी कुछ याद था। वैसे उमे लगता था कि उम गुफा में पड़े पड़े उसे कई बप हा गये ह। रशीद का सूरत देखने की उसे आत्त हो गयी थी। न रशीद ने उम से कभी कुछ कहा न उस ने रशीद का बुलाया।

सोता हुई पूरो के मुँह में रशीद गरम किया हुआ गुन और धी चमचे ने डाल देता था ।
कभी कुछ पूरो ने गले के नीचे उतर जाता था, कभी परा थूक डालती थी ।

फिर पूरो ने साहम कर के दीवार के साथ पोठ लगायी और चारपाई पर बैठ
गयी ।

“मैं कहाँ हूँ ?” पूरो ने पूछा ।

‘मेरे पास ।’ रशीद चारपाई के सामने स्टूल पर बठा था । रशीद का मुख
झुका हुआ था । आज उस की आँखें फट फटकर पूरो के मुख पर नहीं पड़ रही थी ।

“तू मुझे यहाँ क्या गया है ?” पूरो का पूछने का साहम हुआ ।

“फिर कभी बताऊँगा ।” रशीद ने इतना ही कहा और उठकर बाहर चला
गया । पूरो गुमसुम चारपाई पर पड़ गहा ।

इस समय कमरे का दरवाजा खुला हुआ था । पूरो ने देखा, बाहर एक छाटा
सा दालान है । दालान के साथ ही एक छोटी-सी ब्याड़ी है और फिर बाहर का
दरवाजा ।

पूरो कापते-कापते उठी । उस ने चारों ओर दीवारों को देखा । वह डर रही
थी अभी दून दीवारा में से कोई निकल जायेगा, उस की बाँहें पकड़कर उसे चारपाई पर
डाल देगा । किंतु दीवारा में से कोई न निकला । पूरो बाहर के दालान में आ गयी ।

आगत के एक काने में झूठे में आग बुझी हुई थी । पास ही एक हाँडी और
तवा-नरात बिखर पड़े थे । पानी का एक घड़ा भरा हुआ कोन में पड़ा था । पर कोई
आदमी वही नजर नहीं आता था ।

पूरो कापते पैरा से ब्याड़ी में आयी, बाहर के दरवाजे के पास आयी, फिर
पाछे मुड़कर कोठरा की ओर देखा फिर दरवाजे के पास का हा गयी ।

पर मकान का दरवाजा पूरो के भाग्य की भाँति बंद पड़ा था । पूरो ने बंद
दरवाजे के साथ अपना मिर लगा लिया, पर दरवाजे का न पूरो के झुके हुए सिर पर
तरम आया न मुरझाये हुए चेहरे पर, न भीगी हुई आवा पर ।

पल्ले से मुँह पाछकर पूरो दरवाजे से लौट आयी । घड़े में से पानी का एक
चुल्लू भरकर पूरो ने अपनी आवा पर डाला । फिर पूरो का विचार आया कि वह
दरवाजा पीटकर देखे । गायन कोई अटोमा-पनेमा या रास्ता चलना उस की आवाज
सुन ले ।

पूरो ने आँगन की बच्चों जैसा दीवारा की ओर देखा फिर एक बार साहस
जुटाकर दरवाजे को पीटना आरम्भ कर दिया । पूरो ने दरवाजे की दरजा के बीच से
देखा, बाहर खुला मैदान ही मैदान था । कोई मकान काठरी दिखाई नहीं देती । पूरो
सोच-मोचकर थक गयी न जाने वह किस जगल में थी ।

पूरो दरवाजे के पास ही खड़ी हुई था कि बाहर से दरवाजा खुला । रशीद ने
भीतर आकर दरवाजा बंद कर लिया और ताला लगा दिया । पूरो वहीं की वहाँ
पिनर

बठ गयी ।

“पूरो ! क्या क्या म हना म टक्करें मारता ह । भीतर चल कुछ अपने मुँह में डाल, तू ने दो दिन से कुछ नहीं खाया है ।” रशीद ने खड़े-खड़े कहा । वस न उस ने पूरो का हाथ पकड़कर उसे उठाया, न उस की ओर आखें फाड़ फाँकर देखा ।

“मुझ पर दया कर, रशीद ! मुझे घर छोड़ आ ।” पूरा उस के परा पर गिर पड़ी ।

इस बार रशीद ने पूरा को अपनी लाठी जमी जवान बाधा म उठा लिया और गठरी बनी हुई पूरो का कमकर अपने सीने से लगा लिया ।

“मेरे दिठ की आग कौन बुझायेगा ?” रशीद ने हाथ-पाव मारती हुई पूरो का अपनी बाधा में कसे रखा ।

वह तिन भी बीत गया वह रात भी बीत गयी । रशीद ने उस से फिर कुछ नहीं कहा । दरवाजा बंद का बमा बंद था रशीद वस का बमा ही पहर पर था ।

रशीद उस घर से बाहर भी जाता । घण्टे दो घण्टे बाहर भी लगा आता । पूरो बैठ रहती । फिर तारा की छाह में पूरो का हाथ पकड़कर रशीद उसे घर से बाहर ले जाने लगा । पूरो ने देखा उस घर के सिवा उस लम्बे चौड भदान म और कोई घर नहीं था । रशीद के इस मकान के पाम एक बहुत दूर तक फग हुआ बाग था । शायद यह घर बाग के मालिया का घर हो । बाग में मात्री अवश्य हागे पर पूरो ने उन्हें कभी देखा न था, न उन की आवाज ही सुनी थी । न तो पूरा के दिन हा वीतत थे न उस की रात ही काटे कटती थी । पूरो का केवल यही सन्तोष था कि रशीद ने उसे कोई बुरी भली बात नहीं कही थी । पूरा का मर्याना अभी तक बची हुई था । यह जोर बात थी कि रशीद पर न पूरो की प्राथनाआ का असर हाता था, न पूरो का गालिया का ।

पूरो के अपने अनुमान के अनुसार उसे कद हुए पूरे पन्द्रह दिन हा गये थे ।

एक दिन रशाद ने लाल रेशम का एक जोडा पूरा के सामने लाकर रखा । इस से पहले भी रशीद ने पूरो को बलने के लिए दो जोड सूती कपडा के लाकर दिये थे । पर इस बार रशीद ने लाल रेशम का जोडा पूरा के आगे रखते हुए कहा, “कल सबेरे नहा धाकर तयार हो जाना मौलवी आकर हमारा निकाह पग देगा ।

पूरो का दिल धक से हो गया । जा अब तक नहीं हुआ ह क्या अब होकर ही रहेगा !

उस दिन पूरो फिर रशीद के परा पर गिर पग ।

‘पूरा ! होनाहवाना कुछ नहीं । यय मेर सिर पर गुनाहा का बोझ न लाद । कमम ह अल्लाह पाक की, मुय से तेरा यह रोना नहा देखा जाता । रशाद ने मुह परे कर के कहा ।

पूरा की समझ में न आता था कि रशीद यगि ऐसा त्यावान ही था ता उस ने उस के सिर पर विपत्ति का यह पहाड क्या डाल दिया ?

“तुझे अपने अल्लाह की कसम है, रशीद ! सब-सब बता, तू ने मेरे साथ ऐसी क्या की है ?”

“पूरा ! तेरा मग सम्बन्ध कोई पिछला लेना-दना ही है । अब तुझे इन बातों से क्या मिलेगा ? जा हा गया मा हा गया । मैं तुझे सारी उम्र तकलीफ न होने दूँगा ।”

पूरा हरान की परेशान थी, यह क्या आदमी है ! “पूरा ! हमारे शोखा के के घराने में और तुम्हारे गाहा के घराने में दादा-पडदावा के समय से एक बैर चला आ रहा है । तेरे दादा ने पाच सौ रुपये में गिरवी रखे हुए हमारे मकान पर ब्याज दर-ब्याज लगाया था और कुर्की कराकर शोखा के घराने को घर से बेचर किया था । सिर्फ इतना ही नहीं, उस के मुशायों-बारिदा ने हमारे घर की औरतो की बाल-बुवाल कहे और मेरे दादा की बड़ा लडकी को जबरदस्ती तेरे दादा के बड़े लडके ने तीन रात घर में रखा । मेरे दादा के देखते-देखते यह सब हुआ । पर उस समय शोखा का घराना परे हुए गन्ने की भाँति था । सब खून के आसू पीकर रह गये । पर मेरे दादा ने मेरे चाचा-ताऊआ को और मेरे पिता को बुरान उठवाकर कसम दिल्वायी थी कि वे इस का बदला लेकर ही रहेंगे । उस का अगली पीढ़ी के समय बात सा गयी । अब जब तेरा काज इमी गाँव में रखा जाने लगा मेरे चाचा-ताऊआ के लहू में पुराना बल्ला खोलने लगा । उन्होंने मुझे कसम दिलायी, मेरे लहू की ललकारा और मुझ से कौल कराये कि मैं शाहा का लडकी का ब्याह से पहले किसी भाँति उठा ले जाऊँ ।” रशीद चुप हो गया ।

पूरा धयपूवक अपनी किस्मत की कहानी सुनती रही ।

“पूरा ! पहले ही दिन जब मैं ने तुझे देखा खुदा गवाह है, मुझे तुम से इश्क हाँ गया । एक ता मेरा मुहब्बत का जार, दूसरे मेरी पीठ पर सारा शोख घराना । मैं तुम से आया हूँ पर मुझ से कसम ले ले, मुझ से तेरा दुख नहीं देखा जाता ।” रशीद ने कहा ।

परा ने दाना हाया में अपना सिर धाम लिया ।

‘तेरी बूआ का मर ताऊ ने उठा लिया, पर रशीद ! इस में मरा क्या दाप ? हाय ! मैं कहा का न रही !’ पूरा का मुँह आसुआ से भीग गया ।

‘यही ता मैं कहता था पर मेरे चाचा मुझ पर फिटकार करते थे ।

‘तो रशीद ! उन के उवमान के कारण तू ने मुझे मार डाला ?’ पूरा ने राते राते कहा ।

‘पूरा ! मैं सारी उम्र तर आगे जग की नेमतें ला लाकर रखूँगा’ रशीद ने भर हुए गले से कहा, “मैं तर ताऊ की तरह नहीं बर्हूँगा नि तीन राता के बाद बेचारी औरत का धक्का द दूँ ।’

“रशीद ! एक बार मुझ मरा माँ से मिला द ।’ पूरा का कहन के लिए यही मिला ।

‘आ नेकवदत ! अब उस घर में तर लिए काई जगह नही । उन की बिरादरी का कौन हिन्दू फिर शाहा व घर का पानी पियेगा ! तू मर घर म पूरे पन्द्रह दिन रह चुकी ह ।’

“पर मैं ने ता सिफ तेरे घर के अन पानी स मुँह लगाया ह मैं ’ पूरा आने कुछ न कह सकी पर जा कुछ पूरो बहना चाहती थी उभ रशीद समझ गया ।

“इस बात को कौन मानेगा, पूरो ! यह ता मेरी गराकृत ह कि पहले मैं तेर साथ निवाह पञ्चाङ्गा ” रशीद ने नरम आवा से पूरो की आर देखा ।

पूरा की आँखा व सामने उस का मँगेतर फिर गया । अभी पूरा के तेल चढ़ना था, पूरा ने ‘माइएँ पचना’ था, पूरा के हलदी का उबटन मला जाना था पूरा का सच्च हाथीदाँत का लाल चूड़ा चढ़ा था, पूरो को कौडिया बाल क्लीरे छनवाने थे पूरा को रेशमी जाडे पहनने थे, पूरा के रूप चढ़ना था पूरा का डाला में बटना था पूरा पूरो पूरो

पूरा निर्दोष था । वह कसे समझ लेता कि उस की मा का दिल पत्थर हा जायेगा, उस क पिता का दिल लोह का बन जायेगा वे अपनी बेटा का घर से निवाल देंगे उन के घर की दीवारें उसी अदर रखने स इनकार कर देंगा ।

‘मैं जब लैटकर घर नही पहुँची ता उस समय मेरे माता पिता का क्या हाल हुआ होगा । मरी बहन ’ पूरो का वह समय याद आ गया जव हानी उस के सिर पर टूट पडा थी ।

वे राते कलपते रहे ह उसी तरह जस मेरा दादा, मेरा पिता मर चाचा मेरी बूआ के चल जाने पर रोये थे । पुलिस भी बहुत खाज गवर लगाकर हार गयी ह पर उन्हें भी कोई अता पता नही लग सका ह । और उन्हें पता लग भी कस सकता ह । पुलिस ने पूरा पाच सौ रुपया खाया ह ।” रशीद अपनी हँसी न राक सका । तू तो जानती ही ह कि इस समय हमारा पलड़ा भारी ह । सारा गाव मुसलमानों का ह । कोई हिन्दू का बच्चा आख उठाकर हमारी जार देख नही सकता । यही गनीमत ह कि उन की जान माल सलामत ह । उन्हें अपनी जान प्यारी ह व कुछ बाल नही सवते । अगर वे हमारे घर की ओर जँगली भी उठाते ता हमारे आदमी उन्हें नहर भी पार करने न दते । रशीद ने कुछ हसकर कहा । शायद उस के दिल म पुराने बदले का आग धधक उठी थी ।

पूरो को रशीद का मुख देखकर बड़ी घृणा हुई । उस का जन्म नष्ट हा गया । यह लोक गया, परलोक गया । शायद उम के माता पिता छत्तीआनी को अपनी पुत्री को बलि चगाकर वापस सियाम लौट भी गये हा ।

‘क्या मेरे माता पिता सियाम चले गये ह ? पूरा न तटपकर पूछा ।

‘नही, अभा नही । रशीद ने उत्तर दिया ।

‘मैं कहाँ रह रही हूँ ? अपने गाव स कितनी दूर ? पूरा न उसी प्रकार पछा ।

‘तू अपन गाव व पिछली आर माघाकिया के कुएँ के पार मेरे अपन दास म ह । पर शायद तू अपने गाव जाने का सपना दब रही ह । अभा नही । जरा बात ठण्डा हा ले, छह महीने बीत जायें, वहा भी ले चलूंगा ।’ रशीद मुमकराने लगा ।

पूरो चुप हा गयी । रशीद ने चावल के पुलाव की एक तश्तरी भरकर पूरा के आगे रखा । रशीद जब बाहर जाता था तब शायद किमी के हाथ अपने गाव से पकवान मँगवा लेता था । पूरो को कुछ पता न था ।

उस दिन पूरा के मन मे कुछ उधेड़बुन लगी रही ।¹ उसे डर था कही उस का साहस उसे जवाब न दे जाये इसलिए पूरा न चायल के दा चार कौर अपने मुँह म डाल लिये । पानी भी घूँट घूँट कर के एक बटारा पी लिया ।

उस रात पूरो ने सारा साहम इकट्ठा कर के अपने मन का पक्का किया । रशीद व सिरहाने दरवाजे की चावा रखी हुई थी । पूरो ने चुपके से उसे उठा लिया, दरवाजा खोला । उस का दिल धक धक कर रहा था कि रशीद अब जागा, अब जागा पर दुभाग्य स या सौभाग्य से कही रशीद की आस न खुली ।

बाहर रात के सताटे की देखकर पूरो काँप उठी । एक बार उस का जी किया कि वह लौटकर रशीद के पान चली जाय । न जाने रात के अंधेरे में वह छत्ताआनी का रास्ता पा सकेगी या नही । कही रात के अंधेरे म वह रशीद स भी गये-बीते किसान आदमी के हाथ ता न पड जायगी, न जाने उस की क्या दशा हागी । पर पूरा का अपनी मा का चेहरा याद आ गया, पूरा को अपने पिता का मुखड़ा याद आ गया वहन भाई याद आ गये । पूरा ने वम ही एक पगइण्डी पर चलना आरम्भ कर लिया, शायद यही माघाकिया के कुएँ का रास्ता हा । डरता-डरती काँपता वह चलती रही ।

रात का गहरा अंधरा पट चला था । माघाकिया के कुएँ का रास्ता ठीक निकला । पूरा ने झुटपुटे अंधरे में हा छत्ताआनी गाव का पिछवाडा पहचान लिया ।

अब पूरा न इधर में थी न उधर में । उस ने अपनी बची हुई शक्ति का अपने पाँवा में डाला । वह दौटने लगी ।

पूरा ने छत्ताआनी गाँव को पहचाना, अपन घर की आर मुडती हुई गली का पहचाना, अंधर में अपने घर की दावारा का पहचाना ।

पूरा न दरवाजा खटखटाया । जस ही किसी ने भातर स दरवाजा खोला, पूरा ख्याती म फग पर गिर पगी । वह अपना शक्ति का अंतिम जश भी खच कर चुकी थी । अब वह दोन्-दोडकर हाँफ-हाँफकर दारि का छू चुकी था । अब माना पूरा की सम्पूर्ण शक्ति नि गोप हा चुकी था ।

पूरा की आँखों में अंधरा छा रहा था । उस ने देना, उन की मा उन का पिता, हाथ में दिया लेकर उन के पास खडे हुए ह । वह एक घायल पगी की भाँति दयादा के कच्चे फग पर सिसकन लगी । उस ने दया, माँ की आँखा स पानी का पाराएँ बह रही ह । माँ ने पूरो का उठावर अपनी बाँहा में ले लिया । पूरा ने माँ की

छाती स अपने सिर का ऐस लगा लिया मानो उन के टूटे हुए सम्बन्ध फिर से जुड़ जायेंगे। पूरा का माँ की चीखें निकल गयी।

लाग इकट्ठे हो जायेंगे। पूरे के पिता ने अपनी स्त्री का कंधा हिलाकर बहा। पूरा की मा ने अपने पल्ले के कोने का इकट्ठा कर के अपने मुँह में ठूस लिया।

बेटा, तेरी किस्मत। अब हमारा बस का कुछ नहीं।' पूरा का अपने पिता का स्वर सुनाई दिया। वह अपनी माँ से चिपटी रही।

'जभी शेखा के' यहाँ से लाग आ जायग और हमारे बच्चे उच्च को पेर डालगे।'

मुझे लेकर सियाम चले चलो।' पूरा ने मा की छाती से मुँह जरा हटाकर बड़े जाग्रह से साँस बहा।

'हम तुझे बहा रखेंगे? तुझे कौन ब्याह कर ले जायेगा? तरा घम गया तरा जम गया। हम जो इस समय कुछ भी बाले तो यहाँ हमारे लहू की एक बूद भी नहीं बचेगी।

हाथ, मुँह अपने हाथ से हाँ मार डालो। पूरा ने तड़पकर कहा।

बेटा। जनमत हाँ भर गयी हाँ। अब यहाँ से चली जा। शेष आते ही हाँ। तेरे पिता तेरे भाई का बही पता भी नहीं मिलगा। ये सब का मार डालेंगे। माँ न जाने कस अपने दिल पर पत्थर रखकर यह बात बही।

पूरा का ध्यान आया, रणोद ने कहा था जो नेकबन्त अब उम घर में तर लिए कोई जगह नहीं। क्या रणोद ने सच ही कहा था?

परा का एक बार मगेतर रामचन्द्र का ध्यान आया। क्या मगाई और क्या पाह? क्या पूरे उम की कुछ न लगती था? उम ने पूरा की बात भाँन ली?

फिर पूरा का जान का मन न किया। उम ने साँचा, और सब रास्त ता बन्द ह शायद मौत का रास्ता खुला हा। वह उठकर बाहर का आर चले दी।

न मा ने राखा न पिता ने। पूरा चलती गयी। आत समय पूरा जीवन से भट करने आ रही थी उस के हृदय में लालसा थी जान की माता पिता से मिलन का। बहुत डरती-काँपती आयी था। गैरत समय वह मृत्यु से भेंट करने चली थी। अब उस का मन में कोई डर नहीं था, कोई भय नहीं था। मृत्यु से बचकर कोई उम का क्या कर सकता था।

पूरा निराश मायाकियों के कुँए की आर जा रही था। प्रभात का नवप्रकाश सब पगडण्डियाँ पर बिखरा हुआ था।

सामने से रणोद डग भरता चला आ रहा था। पूरा का पाव वही जम गया। मृत्यु ने भी पूरा पर अपना दरवाजा बन्द कर लिया था।

परा का लगा कि इन पन्द्रह दिनों में उम के शरीर पर से सारा मांस उतार लिया है अब वह निरा पिंजर है। उम का न कोई आशुति है न मूरत न कोई मन,

न मरजी। रशीद ने आकर पूरो की बाह पकड़ ली। वह उम के साथ चल गी।

तीसरे दिन एक मौजूबी आया। दो-तीन आदमी और आये। उन्होंने रशीद के साथ पूरो का निकाह पढ़ा दिया। फिर अपने-अपने ही रशीद ने पूरो का बताया कि उम के माता पिता कुलपूवक मियाम चले गये।

छत्तोआनी का नाम लेते हुए भी पूरो को चक्कर जाने लगता। रशीद इस बात को समझता था। और फिर पूरो का छत्तोआनी ले जाना भी खतरे से खाली नहीं था। शायद रंगद सोचता था कि कहीं वहाँ के या आमवास के गावा के हिंदू भड़क न जायें, यद्यपि अब पूरा महीना होनेवाला था और किसी का साहस न पड़ा था कि एक शत्रु भी बाल मका हो। और फिर दूसरे की आग में कौन कूटता है? यह तो पीढिया के वर थे किमी ने अपने मन में दबा लिये किसी ने निकाल लिये।

रशीद की मा या काई बहुत उस समय जीवित न थी। भाई थे, चाचा थे। रशीद ने पूरा से कहा कि वह उम वहा स कासा दूर अपने एक गाव सक्कडआली ले जायेगा जहा दाग पोता के रिश्ते का एक भाई रहीम का जमीन थी। शायद उम की कुछ जमीन को भी अपनी इधर का जमीन से बदल ले।

अब पूरो होनी के हर धक्के के लिए तयार थी। जब मगे माता पिता ने हा धक्का दे दिया, तो अब गावा में ही क्या पना था। यहा न मही वहा मही।

रशीद स्वय ही घर के बड़े की भाँति दो तीन टुक लाया फिर कुछ और सामान लाया, और फिर पूरो को माय लेकर सक्कडआली चल दिया। रास्ते में जैसे कोई आखें मीचकर चन्ता हा, ठीक उमी तरह रशीद के साथ-साथ चलकर पूरा नये गाव में आ गयी। नये गाँव में पहुँचते ही उन्हें एक अलग मकान मिल गया। शायद रशीद ने पहले ही रहीम से कह-सुनकर यह व्यवस्था कर ली थी। रहीम का घर उन के घर से काफी दूर था। फिर भी रहीम के घर की स्त्रिया उस स मिलने आयी। यह पहली बार थी जब पूरो का रशीद के सम्बन्धिया में स्त्रिया से मिलने का अवसर पना।

पूरो एक खोया हुई बछिया की भाँति उन के पास बठा रहा। उन्होंने पूरो से बहुत पूछताछ न की। छोटी मानी घर की आवश्यकताओं के सम्बन्ध में ही पूछती रही।

रशीद पूरा को पूरो ही कहकर बुलाता। निकाह के समय पूरो का नाम हमीदा रखा गया था, वह अभी उम की जवान पर नहीं चढ़ा था।

एक दिन अचानक ही रशीद एक आदमी को घर ले आया। वह बाँहो पर स्त्रिया-गुरपा के नाम जानता था। उम दिन फिर पूरा का हृदय टीम उठा, परन्तु जम ही रशीद ने कहा, उम ने बाँह आगे कर दी और उम की बायी बाँह पर 'हमीदा' गहरे हरे रंग के अक्षरों में गोता गया। रशीद भी उम दिन से उस हमांग पुकारने लगा। शायद यह मगाह रहीम के घरवाला ने दी थी।

पूरो अब हमीदा बन गयी। विन्तु अभी तक जब रात को वह सो जाता थी, उम के सपनों में उम की सहेलियाँ मिलती थीं। मपना में वह अपने माता पिता के घर खेलती-कूदती फिरती थी। सब उसे पूरा हाँ प्यारते थे। तिन के प्रवाग में पूरा हमीदा बन जाती थी। रात के अन्धकार में वह पूरा रहती। विन्तु पूरा गाँवती थी वह वास्तव में हमीदा थी न पूरा वह केवल एक पिंजर थी, केवल पिंजर—जिम का कोई रूप न था। कोई नाम न था।

पाँच-छह महीने बीते हागे कि पूरा के पिंजर में एक नही-गा जान फँकने लगी।

वैसाखी का मेला

मठमला दिन था। बीते हुए तिन एक एक कर के पूरो की आग का आग से गुजर गये। बारी के एक टुकड़े को अपने परो के नीचे लेकर पूरो पत्थर का द्रुत धनी हुई उन्हें देसती रही।

बाहर के दरवाजों को मोलकर रशीद भीतर के आँगन में आकर खड़ा हो गया। पूरो को जस खडका मुनाई ही नहीं दिया। पूरो को जमे कोई आता नियाई ही नहीं दिया। वह बड़ी की बड़ी रही। रशीद को शायद सबमुच ही पूरा में प्रेम था, वह चुपचाप से आकर पूरो के पाम बठ गया।

“क्या सोच रही हूँ ? रशीद ने अपनी एक बाँह पूरो के शरीर से मटा दी। पूरो आज अत्यन्त उदास थी, वह न हिल सकी न धोल सकी।

रशाद उसे दुलार करता रहा। फिर बहुत देर बाद पूरो ने कहा आज मुझे ऐसा लगता हूँ जैसे कोई मेरे भीतर मेरी जँतडियो का नोच रहा हो।’

रशीद हसता रहा और पूरो के मन को ढाढस बधाता रहा। फिर रशीद ने चूल्हे में बुझी हुई आग को सुलगाया और पूरा को पाम बिठाकर वह खुद एक पताले में बटेर भूँने लगा।

‘न तू कही आती-जाती हूँ न किसी से मिलती-जुलती हूँ। ऐसे तो अच्छे भले आदमी का जी धवरा उठता है। रशाद ने कुछ देर टप्परकर कहा।

कहा जाऊँ ? मेरे लिए और जगह ही कौन-सी है ? पूरो ने बुझी हुए मन से कहा।

“अब तू घर की माँकिन हूँ और चार दिन में तेरे आँगन में एक जाव खेऊने लगगा। मेरे लिए न सही, उम के लिए ही सही तुझे अपने मन को छाटा नहीं करना चाहिए। उस बेचार ने तेरा क्या बिगाडा है ?’ रशीद को अपने होनवाले बच्चे का ध्यान आ गया उम ने उसी की तुहाई देकर पूरो से यह आग्रह किया।

पूरो को फिर मटर की फटा में स निखले बीड़े का ध्यान आ गया जिने देख-
कर जी मिचला उठे, जिस के पामवाले मटर व दाना को फेंक दिया जाये ।

“ला, बटेरा के भमाग में घाड़े-मे मटर डालने ह ।” रानीद ने पूरो के आग
मिचरे हुए मटर के दाना की आर देखकर कहा ।

“मटर तो गर पकी हुई ह । अर मटरों की कौन-भी बहार ह, अब तो बसाल
चन्नेवाला है ।” पूरा जानती थी आज वह मटर नहीं खा सकेगी ।

‘हाँ, गर ! क-सा बमासी का बडा भारी मेला लगेगा ।’ रानीद ने गहज
भाव से कहा ।

‘बमासी बमासी पूरा के बाना में गूजन लगा । वह परत में ११-तीन
मुन्टी आग टालकर गूथने लगी जिस स उस का मन बंट जाये ।

‘आज ता मेरा जी कर रहा ह कि गुड ढालकर मेवइयाँ बनायी जायें ।’ रानीद
न कहा । पूरा चुपके स भीतर स मेवइयाँ और गु-ले आयी ।

उगी समय पूरा का एर बतूत पुरानी बात याद आ गयी । एक दिन पूरो की
माँ बठकर सूजी की मेवइयाँ ताड रही थी कि पूरो ने कहा, ‘माँ, गी माँ, मेरा तो
भगान का ताडा हुई मेवइयाँ खाने का जी करता ह ।’ इस पर माँ ने तुग्त कहा था,
‘हट, वह ता मुसलमान खाते ह ।’

यह बात याद आते ही पहले ता पूरा की आँखा में आँसू भर आये, फिर वह
हँस पनी ।

रानीद ने उस की हँसी का कारण पूछा, पूरा ने वह बात मुता दी । मुनाते
मुनाते वह फिर रा पड़ी । रानीद लज्जित-भा बटा हँसता रहा ।

दूसरे दिन भबरे अर पूरा सोकर उठा, गाँव में बँमासी के ढाल घज रह थे ।
पहले ता पूरो घर के काम-काज में लगी रही फिर वह छत पर चक्कर दूर गाँव में
लगा हुआ बमासी का मेला देखन लगी ।

दूर खड़ी परत का लागो का एक विशाल समूह दाव पड रहा था । लम्बे-तडग
जाट कमर में कारे तहमद बाधे हुए हाथो स तेज स चमकायी हुई लाठियाँ लिये, और
हृदय में उत्साह और जलास भर इधर स उधर आ-जा रहे थे । बहुत-से घोडिया पर
चढे हुए थे, पाछे अपनी स्त्रिया को बिठाये आगे एक १ बाल-बच्चा का भी लिये और
बहुत-से थे जा बच्चा की उँगली पकडे स्त्रियों को अपने पीछे लिये घूम रहे थे । कई
बलिष्ठ नवयुवक अपने यौवन और बल के मद में चूर सीमा ताने चल रहे थे, कुछ भाते
जाते थे, कुछ बातें करते जाते थे । दूर परे मदान में कुस्तियाँ हो रही हागी जलेबिया
के बाल लगे हुए हागे गरम पकौडियों का महक दूर तक हवा में फगी हुई होगी । गुड
के गजरपारे, मदे की मटरिया और मिठाइया के ढर के ढेर लाहे के चौड़े धागा में गजे
हुए हाग ।

पूरा के मस्तिष्क में एक विचार उत्पन्न हुआ मानो किनी ने उस के सिर स

हथौड़ा दे मांग। उस का मा ने तीन लडकिया के बाद इस धार पुत्र को जन्म दिया था और वह यह उस की पहली बँसाखा थी।

पूरा खड़ी थी, छत पर बैठ गयी। कौन जान इस समय उस की माँ ने उस के छोटे भाई को पानी चसाया होगा। पास बहती हुई किसी नदी का पानी लेकर गुलाब के फूल का उस पानी में भिगाकर, उस के भाई के नन्हें गुलाबी हाँठा में लगाया होगा। फिर उस की माँ का बघाईयाँ मिली होगी। और कौन जाने कौन जाने इस समय उस की मा को अपनी पेट की जायी पूरो की याद आ गयी होगी

पूरा की आत्मा में आत्मा भी आ-आकर थक चुके थे। वह दाना हाथा में सिर को पकड़े बठी रही।

सुबा जाट लडका की एक टोली काना में फूल अढाये हसती गाती पर मे गुजर रही थी। उन में मैं कोई बोली गा रहा था

खूह ते बठी दातन करदी
चिट्टेयाँ ददा ना मारी
नी आपे तनू ल जाणगे
जिन्हा नू लगे पियारी
नी आप तनू ल जाणगे

‘काग। काई प्यारी लगनेवालिया के हाल तो देखे।’ पूरा के मुह से धीरे में निकल गया।

फिर पूरो के मन में एक विचार आया वह रशाद का ही प्यारी लगी, रशीद उसे ले आया। वह अपने मगैतर रामचन्द को क्या प्यारी न लगी? उस ने तो उस की बात भी नहीं पूछी। वह तो रामचन्द को प्यारी लगना चाहती था। रशीद को तो उस ने स्वयं ढूँढा था न ही उस के माता पिता ने उसे चुना था।

जाट हमते जा रहे थे कूदते जा रहे थे भगडा नाचने जा रहे थे ‘बोलिया गाते जा रहे थे

तेरे लींग दा वज्जा लिशकारा
हालिया नू हल भुल्ल गय
तेरा भिज्जया परी दा लहंगा
पङ्छों दियाँ पण कणियाँ
सानू कण्ड ना दइ मुटियारे
ना राह राहे जाण वालीए

पूरा माचता रही सब गात सुन्दर लडकियों के ही गुण गाने ह सारे भजन सच्चे प्रेम का ही वणन करते ह। क्या कभी ऐसे गीत भी बनेंग जिन में मुझ जसी लडकियों के रदन की क्या लिखी जायेगी? क्या कभी ऐसे भजन भी होंगे जिन का कोई भगवान ही न होगा?

चढ़ता जवानीवाली कुछ नवयुवतियाँ अपने यौवन की उच्छलता में अपनी एक अलग टाली बनाकर मेले में चली जा रही थी। कुछ दूर पर जा रहे जाट लड़के अपनी टालियाँ में से मुड़ मुड़कर उन की ओर ताक झाँक रहे थे, और हँस रहे थे। गायद उन में हँसी मजाक कर रहे हैं। पूरो सोचने लगी, यदि सब जवान लड़कियों को यह लड़के अपनी-अपना घाड़ियाँ पर उठाकर भाग जायें, फिर क्या हो ? यदि ये इन लड़कियों को उठाकर ले जायें

पूरो का बच्चा

भरी गरमी आ गयी थी। 'छिपटियाँ' डालकर जलाये गये तदूर की भाँति घरती जल रही थी।

पूरो कभी बठती, कभी उठनी कभी लेट रहती थी। आज उस का जो ठीक नहीं था। पल-पल पर वह पानी पी रही था। उस की पडासिन ने उस से कहा था, "जब भी हा आज नहा ले और अपना सिर भी धो ले फिर क्या पता रात का या सवरे हा तैर घर कुछ हा जाये फिर तू कितने ही दिन उठने योग्य न रहेगी।"

रशीद ने देखा पूरो का रंग शरीर में उठती पीडा क साय साय पूनी जैसा सफेद होता जा रहा था। रशाद को वह समय याद आ गया जब वह छत्तीआनी की बच्ची सड़क से पूरो को अपने आगे घोड़ी पर बिठाकर भगा लाया था। उस समय भी पूरो का रंग सफेद फिटकरी जसा हो गया था। उस समय पूरो की आत्मा में से चीसें उठ रही थी आज उस के रक्त माम में से।

रशीद ने रहम के घर अपने खेता पर काम करनेवाला एक नौकर भेजा। पूरो को अकेली छोड़कर जाने का उसे साहस न हाता था। जब रहीम की माँ पटुची, उस समय बढती हुई पीडा पूरो के मुख पर बल खा रही थी। आने समय रहीम की माँ अपना गलीवाली उस रेशमा दाई को भी लेती आयी थी जिस ने रहीम की दाना स्त्रिया के दा-दो, तीन-तीन लड़के लटकिया पदा हाने के समय मदद दी थी।

दाई ने आने ही एक पुरानी दरी फश पर डालकर उस पर पूरा का लिटा दिया। पूरो चारपाई की नरमाई को छोड़कर कच्ची जमीन पर लेटी कराहने लगी।

रशीद बाहर दहली के पास खड़ा था। बंद किये हुए भीतरी किचाड के अंदर में पूरो की दातों में भिँची हुई लम्बी लम्बा हुकार रशीद को सुनाई देती रही। उस का मन कर रहा था, पूरा के शरीर में से बहुत नहीं ता कम से कम आधी पीडा निकालकर अपने में डाल ल। पूरा अकेली ही पड़ी कराह रही थी।

दाई नयी गोठवाले पसे से पूरा के मुख पर धीरे धीरे हवा करती रही। कितनी ही बार रहीम की मा ने घूँट घूँट कर के पूरा के मुँह में पानी डाला।

बाहर खड़े हुए रशीद ने तान जोर की चीखा व धाद वच्चे के टिटियाने का आवाज सुनी। उस के धाद पूगे के मुस स कोई आवाज न निवला। उस का कष्ट समाप्त हो चुका था। रशीद ने चन का साम लिया। उस का जी कर रहा था कि वह भीतर चला जाये। दाईं ता शायद वच्चे का देखभाल म लगी होगी, वह जा कर पूरा का सँभाले। पूरा अभी तक उस के हाथा राती हो रही था, पूरा अभी तक उस के कारण कराहती ही रही थी। पर भीतर उस की चाचा बठी हुई था भीतर दाईं बठा हुई थी। जब तक वे उसे भीतर न बुलावें, भीतर जाना उसे बड़ी अभद्रता प्रतीत होती थी।

मिनट पर मिनट बीतते गये पूरा की फिर आवाज नहीं आयी। रशीद के दिल में घबराहट उत्पन्न हुई—पूरा जीवित तो है ? उस की आवाज इतनी-सा भी क्या नहीं आती ?

इसी प्रकार आधा घण्टा बात गया। दाईं ने बाहर आकर रशीद से कहा “बटा, बधाई हो लडका हुआ है।

उम का क्या हाल है ? रशीद ने पूछा।

“ठीक-ठाक है बटा। ऐम ही कुनने बढत है लडका छत से ता गिर नहीं पडते।” दाईं ने हौसले के साथ मुसकराकर कहा उस हौसले के साथ जिम से उस न सकडा स्त्रिया की पीडा को अपने हाथा पर बेला था।

जब रशीद अंदर गया तो पूरा लटी हुई था। उम का जालें निटाल थी। उस के पास ही एक सफेद कपड म लपेटा हुआ उस का जोर रशीद का पुत्र पडा अँगूठा चुस रहा था।

रशीद का हृदय गव से भर उठा। उस ने पूरा पर विजय प्राप्त कर ली था इस जुए में उस ने सारी की सारी पूरा का जीत लिया था। पूरा अब केवल उस की भगायी हुई रखेल ही नहीं थी वह अब केवल उस की घर म डाला हुई स्त्रा ही नहीं थी, अब वह उस के पुत्र की माँ भी थी।

रहीम की माँ के कह अनुसार रशीद ने एक रुपया और गुड की भेला अपने पुत्र के ऊपर बारी। पूरा का उनीनी जालें खुला, उस ने रशीद को दखा।

‘अब तू मुझ से क्या कहता है ? मैं ने तुझे अपना आपा लिया मैं ने तुझे एक पुन दिया है अब मेर पाम बाकी क्या रह गया है ? माना पूरा ने मूक जिह्वा से रशाद से कहा। फिर पूरा ने जालें मीच ली।

गरम गुड और पिस हुए बादाम कुछ चम्मच पीकर जब पूरा के शरीर में कुछ जान आयी तो उम ने तखा कि उम के वच्चे का नरम-नरम मुँह उस की बाह से लग रहा है। पूरा के शरीर म एक कपकपी-सी आ गयी। उस लगा कि एक नरम सफेद कीडा उस के शरीर पर चढ रहा है। पूरा को घणा-सी हुई। उस का मन किया अपनी बाहा से लगे हुए कीडे का वह ताज डाल अपने पास से उसे दूर फक दे ऐस

जम काई चुभे हुए काटे का नाखूना म फँसाकर निकाल देता है, जमे काइ घेंस हुए माखरु का उखाड़कर फेंक देता ह, जम काइ चिमटा हुई किलनी को नाचवर अलग कर देता ह, जस काइ चिपटी हुई जाव का ताड़ पेंकता ह

रहीम की माँ का इन के घर पूरे तेरह दिन रहना था। अभी पूरा के लडका हुए कबल चार दिन हुए थे।

पाचवें दिन पूरा क दूध उतरा। जब तक दाइ रई की बत्तिया बनावर लडके के मुँह में दूध दती रही था। आज उस ने लडके को पूरा के स्तन से लगा दिया।

लडका पूरा की गानी म पडा रहा। उस के शरीर से चिपटा रहा। पूरा न अपनी अँतडिया में एक खिचन-सी अनुभव की। उस का मन किया कि वह लडके का गले लगाकर फूट-फूटकर राये। लडका उस के अपने रक्त का बना हुआ खिलौना था, उस क ही माम का बना हुआ पुत्र था। इस भरे-पूरे ससार म यह एक लडका ही उस का अपना था। वह जब कभी भी अपना माँ का मुख न देख सकेगी, वह अब कभी भी अपने पिता का मुख न देख सकेगी, वह अपने भाई बहना का भी कभी न देख सकेगी वह वह कबल अपने लडके का मुँह देना करगी, जिस के रक्त म उस के अपने माता पिता का रक्त भी मिला हुआ था। उस के माता पिता उस ता ताड़कर अलग फेंक गय, किन्तु अपने रक्त का कस अलग कर सकेंग जा कि पूरा के जग जग म रचा हुआ था, जा कि पूरा के घर उत्पन्न हुए लडक के रक्त म मिला हुआ था।

बच्चा पूरा का दूध पीता रहा। फिर पूरा का लगा यह लडका जबरदस्ती ही उस की नसा में स दूध खींच रहा है जबरदस्ती जबरदस्ती इस के पिता ने भी ता उस क साथ जबरदस्ती की थी। लडका भी ता अपन पिता का ही पुत्र था अपने पिता का रक्त था अपने पिता का मांस था अपने पिता का रूप था। जबरदस्ती यह उस के शरीर म घरा गया था जबरदस्ती ही उस क पेट में पल गया था, और जब जबरदस्ती हा उस की नसा से दूध खींच रहा था

पूरा ने अपने माथे का छुआ। आग म पड़ी हुई इट की भाँति उस का माथा गरम था। शायद उसे ज्वर चढा हुआ था पूरा के मस्तिष्क म एक विचार घूमने लगा, यह लडका उस लडके का पिता सब पुरुष जाति पुरुष पुरुष जो स्त्री क शगर का कुत्ते की हड्डी की भाँति चूसते ह, कुत्ते की हड्डी का भाँति चबाते ह।

लडका पूरा का दूध पीता रहा। पूरा का मन रहेंट के ढागा की भाँति भरता और साला हाता रहा।

अनाथ

पूरा व गालमटाल लडक का सब जाबद कहकर पुकारते थे। पूरा उम सुतला की पलगिया पर डालकर देखती रहती थी। टाँगें चला चलाकर वह अपने ऊपर की चादर उतार देता और उस पैरा में रौंद देता। पूरा ने उस के पाव में चाँदी की पतला सा पाजेब डाल रखा थी। जब वह टाँग मारता पाजेब की हल्की-सी छन छन पलगिया पर सुनाई देती। लातें चलाते समय जार लगाने के कारण उस का मुँह लाल हो जाता और उसे हिचकियाँ आने लगती।

फिर पूरा उस व हाथा की जोर दखती। उस का हथेला वास्तव में बहुत ही गारी थी, और हथेली के पीछे की आर मास इस तरह उभरा हुआ था कि पूरा को उस व हाथ बिल्कुल मोम के उम बबुए जमे लगते थे जिस छुटपन में उस ने सियाम से आते हुए कलक्से के एक बाज़ार में खरीदा था। पूरा ने उस बबुए का क्रागिए से चुनकर एक कुरता पहनाया था। छोटे भातिया का एक घागे में पिराकर उस बबुए का माला पहनायी थी। जाबद व हाथ बिल्कुल उम बबुए के हाथा की भाँति थल थल करते थे। मोम का वह बबुआ शायद अभी तक नहीं टटा हागा। पूरा साचने लगती कम्मा-कम्मी काच और मिट्टी का वस्तुआ का जीवन भा कितना लम्बा हो जाता है, शायद आज भी उस बबुए से पूरा की काई बहन खल रही हागा।

मुँह-अँधरे हा पूरा खता म जाती। रशीद लटके के पास बटता। एक दिन अभी अँधेरा ही था, पूरा खेता से लौट रही थी। गाँव के बाहर मुसलमाना के कुए पर उस ने हाथ पर धाय और जब वह अपने घर का लौट रहा थी उसे अपना गली की एक लडकी कम्मो दिवाई दी।

शरद ऋतु की हल्की-हल्की ठण्ड थी। कम्मो पानी की बटलाई का पत्थर के एक छाट-स पड़े पर रखकर खड़ी हा गयी थी। पूरा जब उस व पास से गुजरी कम्मा ने कापते हुए हाथ स पानी की उस बटलाई का उठा लिया। शायद उम व कंधे बटलाई का भार सहार न सके बटलाई कम्मो के कंधे स गिरने लगी। बटलाई के नीचे टिकी हुई कम्मा की हथेली भार के कारण बीच से ही दाहरी हाती हुई प्रतीत हाती था। दाय हाथ स बटलाई का सहारा देते हुए कम्मा व मुँह से निकल—
आ माँ !'

पूरा क पाव ख गय। पूरा कम्मा के पास हो गयी। उस का मन किया, दस बारह बरस की इस लडकी कम्मो व कंधे स बटलाई उतार ले। कम्मा उस के साथ साथ चलती जाये कम्मा जा पावा से नगा थी जो सदा खहर के सुथने के पायेंच ऊपर का भाड रखती थी, जिस की धारियावाली कमीज के मोटा पर लगा हुआ पबद कभी

उधड़ जाता था, कभी फिर लग जाता था, जिस की चुनरी के पाले सदा तार-तार होकर लटके रहते थे, जिस के बाल सग बान जमे मुदक और बिलरे रहते थे, और जिसे पूरो ने मदा दूर म ही दया था । आज वह उस के पास जाकर उम के उन कंधा पर से बटलोई उतार ले जिन कंधा की हड्डियाँ पीतल का बटलाई रा टक्कर खा रहा थी ।

“बड़ी देर हा गयी ह ? बरता के भाग क नीचे दया कम्मो ने माना पूरा मे आज देर न हाने का एक सहारा मांगा ।

‘अभी ता दिन भी नही निकला ।’ पूरो ने म्दिर स्तर में कहा ।

न जाने लडकी में कुछ साहस आ गया, उस ने अपन कंधा का भाग फिर घरती पर रख दिया । बटलाई के मुँह में से बाई एक चुल्लू भर पानी छलककर कम्मो के कंधा पर गिर पडा । धिमी हुई धारियावाली कमीज को पार कर क पाना की ठण कम्मा के शरीर में फड गयी । जाडा की छिटरन कम्मा के बदन में दौड गयी ।

पूरो रुक गयी । कम्मा पग की आर देखकर हँस पडी । एक घडी पहले वह देग हा जाने के डर से और घरतन के वाग मे सहमी हुई थी । पूरा न कम्मा के मुग पर सग वही भय का भाव देगा था । उम समय उस के चौडे हाठा पर पली हुई हँसी पूरो को ऐसी लगती जमे कि उम लडकी को हसना आता ही न हो वह या ही अपने होठ मरोड रही हा माना किमी का मुँह चिगा रही हा ।

“कम्मा ! तू रोज इसी वक्त आती ह ?” कम्मो का जो आवाजें पडती थी उन म पूरा का कम्मो का नाम मालूम हा गया था ।

“लगता ह, आज कुछ देर हा गयी ह मुये मार पडेगी । कम्मा ने फिर बटलाई पर हाथ धर लिया । मानो समय का जिक्र ही उम के लिए डरावना हो गया हो । उस के मुख पर मे उस की हँगी कच्चे रंग की भाति उतर गयी और फिर वही पुराना भय का भाव उस क मुख पर आ गया ।

“कम्मो ! वह तेरा कौन लगती ह ?

“बाची । कम्मो ने कहा और उम की बाँह बटलोई के भार के नीचे मुड गयी, कौन जाने उम बोझ के कारण या बाची के नाम से ।

‘तू वहे तो मैं तेरी बटलाई ले चलूँ ।’ पूरो ने कहा, पर अपना हाथ आगे न बढ़ाया । पूरो को इस बात का पूरा तरह ध्यान था कि लग जानते थे कि उस का नाम हमीदा ह—हमीना—रसोद की पत्नी, जोर कम्मा एक हिन्दू लडका था ।

“बटलोई भ्रष्ट हा जायगा ।’ कम्मा ने नि शक कहा ।

“पानी तो भ्रष्ट नही होगा । मैं पानी को हाथ नही लगाऊँगी, तू जाकर बाहर से बटलोई माज लीजो । कहने-कहने पूरो हँस पडी । कम्मा भी हँस पडी पर वह बटलोई उठाये रही ।

दोना अभी थोडी ही दूर गया हागी कि कम्मो का पर मुट गया । गिरती हुई

बटलाई का पूरा ने गव लिया पर बम्मा बगड-बगड पर गिर पड़ा। बम्मा के परम माच आ गयी।

पूरा ने बटलाई धरकर बम्मा का पर धामा हथेला से बम्मा के पैर का टमने के पाम मला। देखने-अंगने बम्मो उठन योग्य हो गयी। पूरा बटलाई उठाकर उम क साथ-साथ चलने लगी।

‘आ माँ! बहुर बम्मा राने लगी। पूरा को लगा जग बम्मो अपने तमाम दुगा के लिए अपनी परलावसामा माँ का उलाहना दे रही है।

‘पता कर के हमार लिए छाट गये’ पूरा ने कई बार बम्मा की चाची को बहते सुना था। बम्मा के माता पिता कोई न था। बम्मा का पिता तो गायन जाति था पर बहते से उम ने गहर में कोई औरत रगो हुई थी। वह बम्मा की बात न पूछती थी और इसी कारण बम्मा का पिता भी उस म कई वामना न रगता था। पूरा सोच रही थी जब माँ मर जाती है तब बाप भी पराय हो जाने है सोचते सोचते उम का ध्यान अपने जीवन की ओर चला गया माँ जीवित है फिर भी पिता पराय हो जाते हैं माँ भी पराय हो जाती है

गाँव अरु स्पष्ट दोरा पाने लगा था। प्रकाश भी बढ़ गया था और उन की गली का माँ भी अरु आ गया था। फिर मोना का यह डर था कि कोई पूरा को बटलाई उठाए न देव ले। बम्मा ने जब बटलाई गभाली उम क पाँव बाँध रहे थे। पूरा ने जलनी-जलनी बम्मा बटायें और बम्मा स अलग है अपनी गली में मुड गया।

उसा दिन दोपहर क समय पूरा का लम्बा कुछ ज़िद कर के रा रहा था और पूरा उस बहलाने में लगी हुई थी, जब दरवाजा खोलकर बम्मो उम के घर में आ गयी।

पूरा ने आगे बढ़कर बम्मो को अपने से चिपटा लिया। पूरा को लगा उम के पुत्र की अपेक्षा बम्मो को बहलाये जान की अधिक आवश्यकता है बम्मा जिस क आँसू पानेवाला कोई न था।

बम्मा के आँसू पूरा की बाँह पर गिर रहे थे। पूरा के जी में वही विचार रह रहकर आ रहा था कि जमे वह जावे की माँ है वमे ही बम्मो का माँ भी बन जाये — बम्मो छँटकर राने लगे वह उसे उठा उठाकर बिठाये उस गाँव में ले लेकर फिर उसे चूमते न थके। वह जावे की माँ है वह बम्मो की माँ भी बन जाये वह सब अनाथा की मा बन जाये। वह एक अच्छी पुत्री नहीं बन सारी थी वह एक अच्छी माँ बन पाये

बम्मो हिंदू थी और पूरा पूरा एक मुसलमानी थी यद्यपि अभी तब अपने आप को वह पूरा ही समझती थी। बम्मा पूरा के घर का कुछ ग्या नहीं सकती थी, पर परी का जी करता था कि बम्मो का अपने हाथ से बौर खिलावे उसे अपने हाथ

पूरो ने फिर कम्मो का पैर मला हथेलिया से गरम गरम घी रगड़ा रई मे सेंक किया ।

कम्मो घर जाने की जल्दी करने लगी । उस की चाची की लम्बी झाड उस की आखा में मलाया की भाति फिर रही थी । कम्मो दुलाई निरादनेवाली सुई लाने क वहाने चली आयी थी ।

पूरो ने कम्मो को वागमवाला गुन खिलाया, और फिर दुलाई निरादनेवाली सुई भीतर से निवाल कर दी ।

जाडा दिन निन बढ रहा था । लोगा ने माटे कपडे पहन लिये थे । लोगा ने रई भरवाकर वाली छोट की फतूहियाँ मिलवायी थी । लोगा ने माटे खेसों में अपने कपडा को लपेट लिया था ।

कम्मा अपनी आयु के बप छाये जा रही थी । न उस के शरीर पर यौवन चढता था, न ही उस के शरीर पर कभी नये वस्त्र दिखाई दिये थे । उम के नगे पर अब ठण्ड से ठिठुरने लगे थे ।

पूरा ने कम्मो के लिए एक नयी जूती बनवायी, पर कम्मो के लिए अपने परों में उम जूती को पहनना आसान काम नही था ।

बहुत साच बिचार के बाद कम्मो को वह जूती पहना दी गयी, और कम्मा ने अपनी चाची स कह दिया कि सामने ईश्व के खेत में पडी मिली ह । चाची ने यह बात मानी तो नही—भला गांव में ऐसी कौन होगी जा अपनी नयी जूती ऐसे पैंक आयी—पर वह कुछ बोली नही । कम्मो जूती पहनती रही ।

किन्तु हर राज तो नया चीज पडी नही मिल सकती । पूरो कम्मा की ठिठरती हुई हड्डिया को देखकर रह जाती ।

केवल रात्रि के अन्तिम प्रहर का अधिकार यह बात जानता था कि पूरा कम्मो की एक-दो बटलोइयाँ उठाकर उमे मास ले लेने देती थी ।

कम्मो निन में एकाध फेरा पूरो के घर का लगा लेती थी—कभी बेलन में रई साफ कर लेती, कभी चक्की में चने दल लेती, कभी हावनदस्ते में मसाला कूट लेती । पूरो उस का हाथ बटाता । चाची का काम काम हू जाता । नन्हा बच्चा जावेद कम्मो से हिल गया था । कभी कम्मो न आती तो पूरो उसे छोटे लडके का उलाहना देती । जहाँ तक कम्मो से बन पडता वह कभी नागा न करती ।

अब पूरा और कम्मो मौन्वेटिया की भाँति एक दूसरे स लड लेती थी, दा सहे लिया की भाति एक दूसरे से चिपट चिपटकर बठ जाती थीं ।

कई बार पूरो का मन करता था कि वह कम्मो के लिए कुछ बनाये । कम्मो के सूपे हुए शरीर पर अब एक हल्का-सा उभार आने लगा था—कम्मो के पिचके हुए गाला पर गांजाई आ गयी थी । पूरो के घर आकर कम्मो अपने बाल संवागती, पूरो चिवनाई का हाथ लगाकर कम्मो की मेनिया करती ।

एक दिन सबेरे मुह-अँधेरे बम्बो पूरा का पकड़कर बेतरह राने लगी। पूरा ने ध्यानपूर्वक उस की ओर देखा, बम्बो गाने की भाँति पेरी हुई जान पड़ती थी।

पूरो ने उसे अपने कलेजे से जगाया, उस का माया चूमा—किन्तु बम्बो का रोना किसी प्रकार थमने में न आता था। आसुआ से उस की चुनरी भीग गया थी, आसुआ से उस का हाथ भीग गये थे।

“मेरी चाची कहती है जो तू अब उस के घर गयी तो मैं तेरा खन पी डालूँगी।” बम्मा ने कहा और पूरो की छाती से लगकर सिसक सिसककर रोने लगी। वह जी भरकर राया, मानो पूरा उस का एक सहारा हो और उस से अलग करने के लिए बम्बो को कोई हाथ पकड़कर खींच रहा हो।

“पर क्यों ? मैं ने क्या किया है ? पूरो ने ठहरकर पूछा।

‘चाची कहती है, सुना है वह घर में भागकर आयी है तू भी किसी दिन उस की तरह भाग जायेगी। बम्बो ने राना बंद कर के कहा। प्रभान का प्रकाश उजला हाने लगा था। पूरो टूटी हुई पत्नी की भाँति हो गयी थी।

कटु सत्य

पूरो के हृदय पर एक के बाद एक चोटें पड़ती रही थी। उस का मन और मस्तिष्क इतने अल्प समय में ही कम से कम दस बरस बढ़े हो गये थे। पूरो की आयु बीस वर्ष से अधिक नहीं थी, किन्तु आयु उस जो कुछ नहीं मिखा सकता था वह उसे जीवन के कुठाराघातों ने मिखा दिया था। एक बुद्धिमान विचारक की भाँति पूरो गम्भीर हो गयी थी। पूरो का मन बनी विलक्षण बान साचता था बहुत कुछ सोचता था। किन्तु पूरो को अपने विचारों का व्यक्त करना न आता था। पाना के टकराने से उसे ज्ञाग उठने है और फिर पाना में समा जाते हैं उसी प्रकार पूरो का हृदय में उमर्गे उठती और विलीन हो जाती थी।

बम्बी-बम्मार पूरा रहीम के घर उस के घर की स्त्रिया का पास चली जाती थी। उन के पड़ोस की एक लड़की के पाले मुख से वह बहुत आकर्षित हुई थी। कई बार पूरो का मन करता कि उसे बुला ले। दुखी को दुखा ही पहचानता है। उस लड़की के भ्रान्त मुग पर बड़ी बड़ी थकी हुई-भी आँखें थी जो पूरो की ओर कुछ ऐसे झुक पड़ती थी मानो उन्हें भी पूरा की आवश्यकता हो। हाते-हात पूरो को पता लगा कि पिछले स पिछले साल इस लड़की का विवाह हुआ था। कई कहता था कि उस पर भूत प्रेत था कई कहता था उसे कोई भीतरी राग था। न जाने उसे क्या हो गया था उस का गरार बहुत दुबल हो गया था, उस का मुख पीला पड़ गया था।

पूरा न इसी तरह आते-जाने उस लड़की से परिचय कर लिया, और उस

परिचय का उस का माँ व ज़रिये से अपने लम धुनवाकर बड़ा लिया । उस लडकी का सब तारा पुकारते थे ।

कुछ दिना बाद पूरो ने सुना, तारा को कई बार दौरे भी पड जाते ह । उन दिना तारो अपन मामके आगी हुई थी । अब उसे अपनी समुराल जाना था । पूरो ने सुना, हर बार अपनी समुराल जाते समय तारो का इसी प्रकार हाता था, और जितनी बार वह अपनी समुराल से लीटकर आती थी उस के शरीर का मास पहले से भी कम हाता था, हर बार उस के शरीर को हड्डिया पहले से भी अधिक निकली हुई होता थी ।

दखनेवाले अपने मन में समजते थे कि बस दा-सीन फेरा की बात और ह फिर और सूखने के लिए उस के शरीर पर मास रह हा नही जायेगा फिर और दुसने के लिए उस की हड्डिया में जान ही न रह जायेगी । किन्तु मुह से काई कुछ न कहता था, न ते जानेवाले समुराला कुछ कहते थे न भेजनेवाले मामके के कुछ बालने थे ।

एक दिन तारा बिल्कुल अकेली बठी हुई था । पूरो उस के पास जाकर बैठ गयी । पहले भी कई बार उस से थोड़ी बहुत बातचीत कर चुका था, आज उस से बात करने के लिए बैठ ही गयी ।

“तारो ! कोई सयाना ता बतला हागा तुझे क्या हुआ है ?”

“कुछ भी नही ।”

“किमी ने नब्ज तो दखी होगी ?”

‘वकवाले मुखरे और अब की बोतल पीते पाते मैं थक गयी हूँ’

“तारो, कुछ तो बता, क्या अपनी जान की गाहक बनी है ?”

“अच्छा ह घरती का कुछ भार हल्का हा जायेगा, बहन’ तू क्या चिन्ता करती ह ?”

‘घरती पर ता न जान कितना भार पडा हुआ ह, तेर न रहन से कितना कम हा जायेगा । अपनी माँ स पूछकर दख जिस ने तुझे अनेक कष्ट झेलकर पाला है ।’

‘पाला हागा’ तारा न बपरवाही से कहा, “दा चार दिन रा बाकर अपने आप चुप हो जायेगा । वह कौन सी सुखी ह ।

‘पर ऐसी क्या बात ह मा से कह तुझे कुछ दिन और न भेजे ।”

“फिर क्या फक पड जायेगा । जसी यहाँ हूँ, वसी वहाँ ।”

‘हा लडकिया का काई कितने दिन रख सकता ह ।’

‘लडकिया, हेँह’ और तारा बटबटाकर चुप हो गयी । तारा के मन में न जाने क्या उलझन पडा हुई थी, न जाने वह क्या कहना चाहता थी, पर वह न पाती थी ।

‘लडकिया का क्या ह मा-बाप चाहे जिम के हाथ म उस क गले का रस्मी पकडा दें ।’ तारा ने थानी दर टट्टरकर कहा ।

“वहाँ का पाना अच्छा है ? ” पूरा ने पूछा ।

अच्छा न भी हाँ ता भी अच्छा ही है । तारा ने उत्तर दिया ।

“हा सकता है तुझे वहाँ का पाना माफिक न आया हो ।” पूरा ने बात का चलाये रखने के लिए कहा ।

“लडकियाँ को सदा पानी माफिक आता है ।” तारो ने कुछ ऐसा कहा कि पूरा उस के मुख की ओर देखती रह गयी ।

तारो मैं तेरी अपना ही हूँ, तू कुछ बताता क्या नहीं ? ” पूरा ने एस अपनेपन से कहा कि तारा का हृदय खुल गया ।

“बहन, मैं क्या बताऊँ । लडकियाँ का भगवान ने कुछ कहने योग्य जवान ही नहीं दी ।”

“ठीक है तारा ।

“माँ-बाप के पास मर लिए काई जगह नहीं है क्योंकि किसी भी लडकी के लिए माँ-बाप के पास जगह हाती ही नहीं, और मेरे पति के पास भी मेरे लिए जगह नहीं है क्योंकि उन के दिल और घर में एक और औरत बसी हुई है ।”

है । तारो, क्या तर आत्मी का पहले “याह हाँ चुबा था ? ता फिर तेर माँ बाप ने तुझे वहाँ क्या दे दिया ?”

“उन्हें पहले खबर नहीं थी और न ही उस का पहले “याह हुआ था । उस न तो बस एक औरत को घर में रखा हुआ है ।

पर उस के माँ-बाप का ता खबर हागी ?

जानते सभी थे । वह औरत उन की जात की नहीं है नाच जात की है । उस के माँ-बाप कहते थे कि बहू घर में अपनी ही जात का आनी चाहिए ।

पर उन्होंने यह न साचा कि परायी बेटी का क्या हाल होगा ?

दूसरे के दुख की कौन परवा करता है, बहन । फिर वे लोग कहते हैं कि रोगी देते हैं कपड़ा दते हैं, खुला हाथ है फिर किम बात का दुख है ?

“जमे औरत का केवल रोटी और कपड़ा ही चाहिए ? ” पूरा ने कहा ।

मेरे हृदय में आग सा धक्का उठता है । तू नहीं देखती सब देखता है । पूरा दा बरम हो गये हैं रोटी और कपड़े के लिए मैं उसे अपना शरीर बचती हूँ देख मैं वेश्या हूँ देख मैं वेश्या हूँ कहते-कहते तारो गिर पड़ी, उस की मुट्टियाँ भिच गयी उस की आँखें ऊपर चढ़ गयी उस का शरीर लकड़ी के फट्टे की भाँति अकड़ गया ।

पूरा डर गयी । तारो के घर में उस समय और कोई नहीं था । पूरा यह न जानती थी कि उसे क्या करना चाहिए । वह डर रही थी घबरा रही थी । वह तारा की टाँगें दबाने लगा, उस के कंधे दबाने लगी उस के तलवे सहजाने लगी ।

तारो की हाँग आ गया ।

“तू मुझे हाथ मत लगा मैं वेश्या हूँ, तू देखती नहीं तू देखती नहीं ” तारा

ऐसा हा बातें कर रही थी।

पूरा सोच रही थी कि अभी इसे होश नहीं आया है कि इतने में तारो की मा आ गयी।

‘हाय रे, मैं क्या कहूँ, एक तो हमें हमारी किस्मत ने मार डाला, अब इस की बात मार डालेगी।’ तारा की माँ निढाल-भी होकर बठ गयी। पूरा चुप रही।

‘इम ने और इम के भाई ने तो हमारी जान हलकान कर गयी है। लाहौर कालिज में पढ़ने क्या गया है बहन का भी पढ़ा पढ़ाकर बिगाड़ दिया है। देख, कैनी उलजलू बातें करती है।’ तारो की माँ ने फिर दुस्वभाव कहा।

‘अम्मा, जुल्म भी तो बेचारी पर बहुत ही हुआ है।’ पूरा ने कहा।

बेटा! हम ने लडकी दे दी हमारा मुह बंद हो गया। हम अब क्या बोल सकते हैं। वह अच्छी तरह रखे या दुख दे, मद की बात है।’ तारा की मा ने कहा।

‘मेरे मुह पर ताला डाल दिया गया, मेरे परा में बेंडी डाल दी गयी, उस का क्या बिगड़। भगवान ने उसे बाधन म न डाला। उसे बाधने के लिए भगवान जनमा हा नहीं। सागी रसिया भगवान ने मेरे पैरा में ही डाल दी।’ तारो की मुट्ठिया भिच गयी उस की टांगें फिर अकड़ गयी। उस की माँ ने उस के मुँह पर पानी के छोटे मारे, चुल्लू भर भरकर उम के मुह में पानी डाला।

पूरा ठक-सी हा गयी थी। आज उस ने पहली बार अनुभव किया था कि लडकिया इस तरह भा साच सकती हैं, लडकिया इस तरह भी बोल सकती हैं। उसे तो पूरा के मन में भी गुजार उठा करते थे पर उन्हें यक करना उस ने जाता था।

‘यह घोसा है, निरा घोसा है। मेरा ब्याह नहीं हुआ, तुम सब झूठ बोलते हो। तुम ने मुझे क्या पकड़ रखा है? परे हटो और बेसुध तारो अपने परा को धरती पर पटकने लगी।

‘तारा, हाश म जा। कसी बातें मुह से निकालती है। कोई सुनेगा तो क्या कहेगा। वह तेरा पति है जरा मुह म लगाम दे, ऐसे न बोल।’ तारा का माँ ऐसे कह रहा थी माना बेसुध पटो तारा का झिड़क रही हो, उसे उस की आप भर आयी थी।

तारो की चतना कभी लौट जाती थी, कभी वह फिर अचेत हा जाती थी।

‘कहा जाकर ऐसा पागल्पन मत बखेरना। अपनी जीभ को ठिकाने रख। वह समझे या न समझे ईश्वर तो गनाह है कि वह तुझे ब्याह कर ले गया है। तारा का माँ कह रहा थी।

मा, ईश्वर ने अगर मर ब्याह की गवाही दी है तो झूठी गवाही दी है। माँ, मरा ब्याह नहीं तारा पागलो की भाति छत की लम्बी-लम्बी कटिया का आर दखने लगी। पूरा तारो के चेहरे की आर देख रही थी, तारा जा कि सब कुछ बहने के बाद भा विवाह के इम महान असत्य से मुक्त न हा सकती थी, वरन उस की आयु

के दिवस बड़ा द्रुत गति से जीवन के सत्य असत्य का पीछ छांते आगे बढ़ते जा रहे थे ।

गांधूति की बला थी । पूरा हृदय पर बोझ लिये हुए उठ खड़ी हुई । पूरे का मन माना इस भर-पूर ससार से एवाण्क उचाट हा गया ।

पिछले कुछ दिना स पूरा अपने घर की दीवारा से परच गयी थी । रशाद की छाटी छोटी ठठालियो ने, घर के छाटे-बड़े कामकाज ने, और सब म अधिक जाबद की तोतला बोली ने मानो पूरे के उचाट मन को पतले-पतले धागा स लपेट लिया था । उस का मन कुछ टिक गया था । आज तारो की बावली बाता ने जसे पूरा के मन पर पिपट कई धागा का तोड़ लिया । उस का मन विकल हा गया । रात का राटो टुकड़ा करते समय उसे नमक मसाले का अदाज भा भूल गया दाल गुलभत्ता हो गयी, राटियाँ कच्ची-पक्की रह गयी ।

आगे के दिना म भी उस की उन्मासीनता में कुछ अंतर न पडा । फिर न जान उस ने क्या-क्या सकल्प धारण कर लिये । वह दिन में एक बार भाजन करने लगी । पहर रात रहते जाग उठती ध्यान करती और घण्टा अपना जाँखें और कान बंद किये रहती माना उस न ससार स अपना चित्त हटा लिया हा ।

पूरा का नींद कम हा गयी । उन का खाना कम हा गया । धीरे धीरे उस ने अपने लिए सूखे छानम में नमक डालकर कवल एक राटा पकानी आरम्भ कर दी । उस राटा में न वह धी चुपडती न ही उस दूध या दही क साथ खाता । उसी एक राटी के सहारे वह पूरा दिन काट लेती । कुछ ही दिना मे पूरा की आखा क नीचे नीले-नीले हल्क पड गये, उस का साग शरीर कातिहीन हो गया ।

इधर कुछ दिनी से रशीन भी बातचीत म पूरा का मन बहलान म अधिक व्यस्त हा गया था । राजा और नियम व्रत जादि का लेकर वह हँसी ठठाला करता पूरे क मन को पलटने को चष्टा करता और प्यार भी पहल स अधिक करने लगा था । किन्तु रशीद के सार जतन विफल रहे । पूरा के मन और मस्तिष्क पर रशीद के प्रयत्ना का कोई प्रभाव न पडा । पूरा के आचार-व्यवहार म कोई अन्तर न आया ।

प्रतिदिन क इस बरताव के बाव माना अब रशीद का हृदय बुझन लगा था । दिन दिन उतरता हुआ पूरे का मुँह रशाद स देखा न जाता था । उस क घर म माना वीरानी ने अपने पर दमा लिय थे । रशीद क चहरे पर भा एक वदनापूण मीन दीख पडने लगा था । दाना प्राणा घर की, समाज की शरीर की दीवारा म घिरे हुए थ पर दाना के बीच जसे अब एक भात खडी हो गयी थी ।

पूरा के यहा एक भस थी । वह नियम स दूध जमाता दही रिडवती । रशीद के खता म काम करनेवाले जब पगुजा क लिए चारा लेकर आत, तो पूरा उन का आर उन क बच्चों का गिलाम भर भरकर लस्सी दता ऊपर स भकवन क पेड भी डाल देती थी । पूरे के मुह में कुछ न पजता । रशीद का मन भी खाने-पाने स हट-सा गया

था। घर के चूल्हे में आग जलती अवश्य थी, पर घर की बोलचाल पर और जीवन की हरियाली पर जब कोहरा जम गया था।

जावेद के भोले मुख पर भी जैसे अपने माता पिता के उदास मुख की परछाई पड़ गयी थी। जावेद के लिए भी कोई विशेष लाड़ न था, यद्यपि पूरे उस के सारे काम नियम से करती थी और रशीद उसे दिल में प्यार करता था।

एक रात माने-साने रशीद को ज्वर हो गया। उस का शरीर जलने लगा। सबरे जब पूरा ने रशीद के माथे पर हाथ रखकर देखा तो रशीद का बहुत तेज बुमार चला हुआ था।

गांव के हकीम की दवा-दरू हुई। रशीद को ज्वर आये तीन दिन हा गये थे। जब हकीम ने गंका प्रकट की कि रशीद का शायद मियागी बुमार हो गया है।

रशीद का बीमारी ने पूरे के नेम धरम और बराग्य का अपनी ओर खींच लिया। पूरे दवा-दरू देती रशीद के शरीर को दवाती चीन्हे चूल्हे को देखती थी। जावेद का मुह उतरा हुआ दीख पड़ने लगा। दुपहरी चढ़ जाती, जावेद के मुँह पर फिटकार बरसने लगती किन्तु पूरे का उस की सुधि लेने का अवकाश न मिलता था। और कई रातें बीत गयी। कई दिन बीत गये पर रशीद का बुमार न हटा।

'पूरा। मेरा गुनाह क्या है। मेरा कुसूर भाफ कर। पूरा पूरा रशीद ने बुमार की तेजी में कहा। रात्रि का तीमरा पहर था। पूरे घबरा उठी। इतने दिना की लगातार चिन्ता और रातों के जागरण ने उसे पहले हा थका डाला था। वह उठकर घरामा हुई सी रशीद की छाट के पाम बठ गयी। रशीद के माथे पर हाथ फेरती रही, रशीद के पर दवाती रही पर रशीद को अपना होश न था।

"अच्छा पूरे, मैं चलता हू पूरा मेरी सह" और रशीद टूटे-फूटे गान बोलता रहा। पूरा का दिल ज़ार-ज़ोर से घड़वने लगा।

'बम कर रशीद मेरे घावा पर नमक मत छिड़क। पूरा ने जात स्वर में कहा। पर रशीद का बिलकुल होश न था, वह उमी प्रकार अस्पष्ट गान बोलता रहा। कोई-कौन बाल पूरे की समझ में आ जाती और कई बातें रशीद के कण्ठ से उठकर उम के होठ पर ही गेप हो जाती।

प्रलय-नी काला अंधकारमय रात थी। पूरे घर में अकेली थी, पर उसे ऐसा लग रहा था मानो वह इस विशाल सप्ताह में अकेली हो। रशीद के निवा उस के घावा पर पाहा रखनेवाला और कौन था।

पूरे ने रशीद के माथे पर घड़ के ठण्डे पानी में भिगो भिगोकर पट्टिया रखी। उम का माया बन्हे की इट की भांति गरम था। वह पट्टिया भिगाता नहीं। कटारे का पानी मिनटों में ही एक कान्ता-न्मा बन गया। पूरे ने पानी बदला। उस की आत्मा से आसू टुलक-टुलककर रशीद के माथे पर गिरते रहे।

सबरे पी पत्ते तक, न जाने पानी की ठण्ठ के कारण या आसुआ के गीलेपन

से, रशीद का ज्वर उतर गया। उम का शरीर धुन गया था। उम का बहाना आगम की नील में बल गया।

जब रशीद की आँखें खुलीं उमने अपना शरीर हलवा-गा प्रतीत हुआ। आज उस के माथे में पाटा की चामें नहीं थी। रशीद ने आराम का एक लम्बा सोम लेकर बरबट बाली। पुरो रशीद के मिरहाने की आर जमीन पर बटी-बटा चारपाई का सहाय लिये सो गयी थी। उम के एक हाथ में अभी तक कपड की पट्टी थी और पाँव के पाम पानी का बटोरा पक हुआ था।

पुरा को देखकर रशीद का जी भर आया। उम ने उस के चेहरा का आर लिया। उम का उतरा हुआ मुख नींद में हुआ हुआ था।

अपनी बीमारी और पुरा को टहल रशीद के मन में एक उषा-मुखा-सी भवा रही थी। पुरो के मुख में और कपड की पट्टिया से रशीद ने भली भाँति जान लिया कि बीती रात कितनी कठिन रहा होगा। रशीद ने अपना कमजोर-गा दाहिना हाथ उठाकर पुरो के मिर पर धर दिया। पुरो के कमरे के दूध बाला में रशीद की उगलियाँ घूमती रही। उस की उँगलियाँ पुरो के कानों का उम के माथे का धीरे धीरे छूती रही। पुरो का सादा शरीर निद्रा की गाँ में मग्न था। रशीद की आँखों के कानों से दुःख-दुःख कर आँसू विस्तार पर पतल रह। रशीद एक विविध से आनन्द का अनुभव करता हुआ जागता रहा।

रशीद ने पुरो के शरीर पर तो पूरा अधिकार कर लिया था पर उम की यह वामना थी कि वह पुरो की आत्मा पर भी पूरा अधिकार प्राप्त कर ले। पुरो का उदाम रहना उस माथे जाता था। इस समय पुरा तोड़ी हुई सरसों की डण्डी का भाँति रशीद की चारपाई में लगी सा रही था।

रशीद में शक्ति नहीं थी पर उस के हृदय में यह भाव आ रहा था कि वह पुरा को अपने कपड़े से लगा ले। पिछले कुछ दिनों का घोर उन्मास के कारण रशीद का हृदय अत्यन्त पीड़ित था। इस समय रशीद का पुरा के मुख पर स्पष्ट निगाई दे रहा था कि पुरा के तब मन में रशीद के सिवा और कुछ नहीं था। रशीद ने अपनी बाँह और आगे बढ़ाकर पुरो के गले से लगा दी। गायद बाँह कुछ जोर से लिपटी पुरा जाग गयी। वह काँप उठी। पर रशीद ठीक था उस का ज्वर उतर चुका था वह बनी निद्राल आँखों से पुरा को देख रहा था।

रशीद को खाट पर पड़े पूरे दम नि हो गये थे। उम का ज्वर उतर गया था। वह बहुत ही दुबल हो गया था पर उस का मन बहुत उत्त्लसित था। पुरो ने अपना सम्पूर्ण प्रेम रशीद की ओर मोड़ लिया था। रशीद के पाम बठ-बठकर पुरो ने दिन रात एक कर लिये थे। पुरा जावेद को बना सवारकर रशीद के पाम बठा देता थी। उस ने जावेद का कितने ही छोटे छोटे शब्द बालने सिखा दिये थे। जावेद रशीद के पाम-पास घुटनों चलता उम की नकल करता था माँ के मिखाये हुए गला को ताड-सोडकर

बोलता था। रशीद का मन उत्फुरल था। शरीर फूट की भाँति हलका था। वह मन ही मन अपनी बीमारी को दुआएँ देता था। उस के आगम में खुशी दुगुनी तिगुनी होकर लौट आयी थी।

पूरो का मन बगने लगा कि वह सचमच भूल जाये कि रशीद ने उस के साथ बुरा किया था। वह रशीद का बहुत प्यार करने लगे। रशीद उस का पति था, रशीद उस के पुत्र का पिता था। वम यही एक मत्त था और सब कुछ झूठ

एक और पिंजर

अगले कुछ दिना में रशीद ने एक दो फेरे अपने गांव छत्ताआनी के लगा लिये थे। उस के भाई के साथ जा साये में उस की जमीन थी, उस का अनाज दाना लेकर रशीद ने बेच लिया था। पर पूरो जिस दिन मे मक्कटआले आयी थी, उस दिन से उस ने गांव के बाहर पांव नहीं धरा था। कभी रशीद कुछ कहता तो पूरो हँसकर कह देती, 'मैं न अपनी मरजी से इस गांव में आयी थी, न अपनी मरजी से इस गाँव से जाऊंगी।

जावेद अब दौन्ता फिरता था। रशीद वैसे ही गुरू से स्वभाव का नरम था, पूरो को वैसे ही वह बहुत प्यार करता था, पर जावन पर उस का अपार स्नेह था। जावेद को चूमते, प्यार करते वह अघाता नहीं था। जावेद अब कुछ-कुछ तुतलाकर बोलने लगा था। अवा-अवा कहता रशीद की टांगा से चिपट जाता था।

पूरो चूल्हे की चिक्की मिट्टी से पोतती तो जावेद दीडा दीडा आकर गीली मिट्टी को थपकने लगता, पूरो के बने हुए चूल्हे को बिगाड जाता। पूरो लस्सी में नमक मिला कर पीने लगती ता जावेद हलकी और मिरच उस के लस्सी के बटारे में डाल देता। जावेद बिबाडा के पीछे छिप जाता, रशीद उम हँसता रहता। जावेद की इन छाटा छाटी क्रीडाआ से, उस की हँसी से रशीद मकई के दाने की भाँति मिलता रहता।

एक दिन एक स्त्री 'घुग्गू घाडे' लेकर गलियो में बेचता फिर रही थी। जावेद ने मिट्टी के छाटे छोटे खिलौना को जोर सरकण्डे के झुनझुना को देख लिया। लगा पूरो का पन्ना खींचने। पूरा न मुटठी भर अनाज और पुराने कपड़े देकर घुग्गू घाडे ले लिय। वह अभी गली में ही बठी थी कि दूर से दौडता हुई एक पागल औरत गुजरी।

स्त्रियो ने दौन्कर अपने बच्चे छिपा लिये, दरवाजे बंद कर लिये, छाटे अनजान बालक चीखने चिल्लाने लगे। पगले के शरीर पर पिण्डलियो जितनी ऊँचा एक सलवार था गले में काई कपडा न था। उस का रंग शायद धूप से झुरस गया था या फिर था ही वाला। उस के सिंग पर बाला की उलझी हुई धूल-मना लटें थी। जान पडता था गानो जय से वह जनमी थी, कभी नहायी नहीं थी। अपनी टांगा का वह अजीब तरह मरोटती थी। बाँहों को वह अजीब तरह फगती थी, चलने हुए भी दौन्ता हुई लगती

थी। उस के मुख की ओर देखते ही उस की डरावनी हँसी में बिखरे हुए दाँतों का ओर दृष्टि जाती थी। उस के सूखे हुए जले हुए शरीर से उस की जायु का कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता था। वस एक पिंजर था जो दौड़ता फिरता था।

पूरो देखती खड़ी रही। पगली दौड़ता हुई आयी और खिलौने बेचनेवाली कुँजडिन के छाज में से अपनी दोना मुट्ठिया 'धुगू घाडो से भरकर भाग गयी। उस की डरावना चीखती हुई-सी हँसी की आवाज दर तक गली में गूँजती रही।

पगली सारा-सारा दिन घूमती रहती खेतों में फिरती रहती, कपारिया में-से भी कुछ तोटकर खा लेती। कभी-कभी स्त्रियाँ एक दो राटियाँ बैठे हुई पगला के आगे डाल देती वह उन्हें चबा जाती। कभी-कभी स्त्रियाँ कोई फटा-पुगना कुरता उसे पहना देती, पगली खिलखिलाकर हसती। कुरता पहने रहती, फिर उस के बटन तोड़ डालती, फिर किसी दिन कुरते को दाता से फाड़ देती। फटी घञ्जियाँ उस के गले में लटकी रहती। फिर पगली उन घञ्जियों को भी खींच खींचकर अपने शरीर से दूर कर देती। कभी-कभी अपने शरीर पर से सब कुछ उतार फेंकता। स्त्रियाँ फिर काई फटी-पुरानी सलवार, काई फटा-पुराना कुरता उसे पहना देती।

पगली अब गांव सक्कटआली में जैसे रच-बस गयी थी। उसे प्रति दिन देखने की सब को आदत-सी पड़ गयी थी। कभी-कभी गांव के छाटे-छाटे लड़के उस के पीछे लग जाते सानियाँ बजाते पगली को दौड़ाते और खुद उस के पाछे-पीछे दौड़ते। फिर रास्ता चलता कोई सयाना आदमी उन्हें झिड़क देता। लड़कें उस का पीछा छाड़ देते।

नहे बालका ने हठ करना छोड़ दिया। माताएँ उन्हें पगला का डरावा देती थी 'पगली पनकर ले जायेगी। रोते हुए बच्चे सहमकर चुप हा जाते थे।

पगली किसी पुआल के नीचे पड़ रहती। कभी काई पानी का प्याला उस के पास धर जाता, कभी कोई रोटी के टुकड़े उस के मिरहाने रख देता। किसी दयानु ने एक फटा हुई रजाई एक पआल के नीचे धर दी थी। पगली रात को नियम से बहा जाकर पड़ रहती थी।

पगली वस दौड़ता थी और हँसती थी। किमा क बच्चे को कभी कुछ भला बुरा नहा कहती थी, किमी की चीज वस्तु को कभी हाथ नहीं लगाती थी। जमीन पर गिरे हुए रोटी क टुकड़ा को उठा लेती जमीन पर पड़ा हुई वही किमी खाने की चीज को चाट लेता थी।

कुछ हा दिना में सब ने देखा और पूरो ने आश्चर्यचकित होकर देखा कि पगली का नगा पेट उभरता आ रहा ह। सार गाँव की स्त्रियाँ जैसे लाज क मारे गड रही हो। पगली ने कुछ बालती थी, न कुछ बताती थी।

पगली का शरीर दिन दिन भरता जा रहा था।

गाँव या स्त्रियाँ का जी करता था कि वह पगली के शरीर को छूकर रहें। वह उसे किसी सह्याने में डाल दें। पगली की समझ में कुछ न आता था। वह पहले

की ही भाँति हँसती रहती थी, वह वैम ही दौड़ती रहती थी ।

एक दिन कुछ आदमिया ने मिलकर पगली का गाव के बाहर ले जाकर छाड़ दिया । अँधेरा गहरा हो गया था । उस रात किसी ने पगली को नहीं देखा । सब साँचने लगे कि पगली अब इस गाव से गया । आँख से दूर दिल से दूर, अब वह किसी दूसरे गाव चली जायेगी ।

दूसरा दिन अभी आधा भी न बीता था कि पगली ठीक पहले की भाँति गाव की गलिया में दौड़ रही थी । वह ठीक पहले की ही भाँति खेतों में हँस रही थी ।

“वह कसा पुरुष था । वह अवश्य ही कोई पशु होगा जिस ने इस जैसी पागल स्त्री को यह दुःशा बना दी ।” सब स्त्रियाँ ग्राहि ग्राहि करती थी । उन का जो पगली के ध्यान से मिचला उठता था ।

‘जिस के पास न सुन्दरता था न जवानी थी, मांस का एक शरीर, जिसे अपनी सुप्ति न थी, जो केवल हड्डियाँ का एक जीवित पिंजर । एक पागल पिंजर था चिले न उस भी नाच-नोचकर खा लिया ।’ साँच साँचकर पूरा यक जाती थी ।

पगली का पेट दिन दिन बढ़ता जा रहा था ।

पिंजर में पिंजर

वही रात के पिछले पहर का अँधेरा था जिस में पूरा नियमपूर्वक खेता का जाया करती थी । पूरा अभी बाहरवाला पगण्डी पर आधी ही थी कि एक पेड़ के तने के पास उसे एक मनुष्य का आकृति-सी गिरी दीख पड़ी । पूरा काप उठी । पर वह ऐसे बच्चे जिगरे की ओरत नहीं थी । धीरे से वह गिरे हुए शरीर की ओर बढ़ी । पूरा के लिए उस पहचानना कठिन नहीं था । पगली एक पत्थर की मूर्ति की भाँति निश्चल उस पेड़ के नीचे पड़ी हुई थी । उस के परा के पास एक नवजात बच्चे का शरीर था जिस की नाल अभी उस की आँख के साथ जुनी हुई थी ।

पूरा एक लम्बा साँस खींचकर रह गयी । उस की आँखा के आगे अँधेरा आ गया । फिर जम उस कुछ सुध न रही ।

पूरा की रीढ़ का हट्टा में एकाएक बम्पन दौड़ गया । वह उलटे पाव दौड़कर रणोद को बुला लायी ।

पूरा ने एक पटी हुई चद्दर का टुकड़ा पगली के शरीर पर डाल दिया । फिर रशाद ने पगली की नाडी टाही । नाडी भी टोहने की आवश्यकता नहीं था, पगली के मुख पर मौत की मुहर स्पष्ट लगी दाँख पड़ती थी । बाला की एक लट उस के माथ पर जम गयी थी ।

प्रकृति अपनी पूरी धडकन के साथ पगली के बालक में धक्का रही थी । बालक

के मुँह म उस का अपना दाहिना अगूठा पडा हुआ था ।

“या अल्लाह ! रशीद के मुख से निकला और चाकू स उस ने बालक का नाल का काट दिया ।

पूरा ने बालक का अपने सिरवाले पल्ले में लपेट लिया, और फिर दोनों जीव घर का लौट गये ।

प्रातः काल की धुंध की भाँति यह खबर सार गाव म फैल गयी । आ स्त्रियाँ आटा गूध रही थी, उन के हाथों से परात छिटक गयी । आ राटी बनाने जा रही थी, वे बलते तः दूर छाड छोडकर पूरा के घर जाती और बालक का देख देख जाता थी ।

रुई के गाले जसे चिटटे और निमल बालक का पूरा ने नहटाकर एक खटाली म लिटा रखा था । कुनकुने दूध म कपड का छोटा-सा टुकडा भिगा भिगाकर पूरा ने उस के हाथों से लगाया । बालक पूरी चतनता से दूध की बूदे चूसने लगा । जावेद अपने घर आये छाट-स पाटुने को झुक झुककर देखता था ।

‘रब तरा भला कर ।’ ‘तरे दक्के जिए ।’ ‘बन्ना पुण्य किया ह ।’—गाँव की स्त्रियाँ जा-आकर कहती, अनाथ बालक पर दया करने के लिए शाबाशा देती और लौट जाती ।

दा चार जादमिया ने मिलकर पगला के गब का ठिकाने लगा दिया ।

अँधेरा हो चला था । पूरा दक्के के काम-काज में लगा हुई थी । रशीद न लालटन की घंटा साफ कर क उम जलाया । बालक न अपना माटी माटी चतन आला से लालटेन की ओर दया । अभी उस की कच्ची दष्टि टिकती नहीं था । फिर उस का ध्यान किमी दूसरी जार हा गया ।

पूरा विचारों में डूब गया ।

माचने लगा, क्या था वह मद जिम ने पगली के बाले बलूट कबाल को हाथ लगाया । क्या ऐसा पगल की मरजो स हुआ था उस के साथ जोर-जबरदस्ता की गयी । उस मद का कभी भूल से भी ध्यान न आया कि उस न पगली पर कितना भारी अत्याचार किया ह । उस मद को कभी अपने बालक का भी ध्यान न आया जिसे उस ने पगली क पाम धराहर के रूप म रखा था ।

शायद पगली यह जानता ही न हागी कि उस क घर एक बालक का जन्म हागा । प्रसव की पीडा उम ने कस सहा हागी । उम पर किसा दाई का दया न जायी । रात के अँधेरे म वह चीखता रही हागी । गुला हवा के बाके उस के शरीर में शूल मारते रहे होग । ठगी भूमि पर पडी वह बिलखता रही हागी । परन्तु प्रकृति के कठोर नियम में बँधा उस का बालक दन पूरा हाने पर अपनेआप दुनिया म आया हागा भूमि पर गिर पडा हागा, और पाडा स निचुडी हुई पगला की जीवन डार टूट गयी होगी ।

फिर पूरा सोचन लगा—पगल को जीकर भी क्या लना था । वह अपने बालक को क्या दम देल कर सकती थी । अच्छा हुआ उस की जान छूट गयी । उस का

बालक कितना सुन्दर है ! टेढ़ा-मढ़ा हड्डियों के अन्तर्गत
बाजक पल गया । कभी मग-मग बोले हँसके ।

का एक छाटा-सा स्पर्श ! न जाने मन का किताबनाम

सोचते-भाचते पूरा उठ गया । पर न

रगाद उस भगाये ले जा रहा है । किन्ना बाजक

मिन रसवर रशीद न पूरा का घर में निता

गलिया में घूमने लगी है । रस के घर में एक दर

फिर एक मिन एक घर की छाया में उन न

गकल सूरत विलकुल जावन का सा है । उन का

लिए रो रहा है, पर पूरा के दूध उत्तर न

कापक पूरा जाग रहा । मान

रो रहा था । उस ने उस उठाकर छाया

मुख की ओर दसा, वह अना कुछ हा

फिर उस ने डरते डरते बाहर चूट के प

तक उस छाँकर नहीं गया था और न

वह अपने घर में सहा-मगमग था ।

घुँघराले वालावाला सुन्दर पुत्र था ।

घुट घुटकर बातें किया करता था पूरा

परिवार और बग गया था । उस क

दिया था । उस ने झुककर नम बाजक

फिर उस ने उठकर दूध

पूरा का दूध पिया था, और उस का दूध

ने यह मुना हुआ था कि सजे

छाटे बच्चे का अपन स्तन में लगा

तान दिन के बाद सचमु

देखकर अचरज करती थी ।

इतना काम

गये । पहले

भी नहीं कर

त सिर पाट

गर मुह पर

धुआ मिल

उस की

बा अच्छी

लडका ले

।

हड्डिया

का किया

जामें अब

जामें घूमती

आयी ? वह

रते । पूरे छह

मा में स दूध

या था और अपने

होकर यह विचार

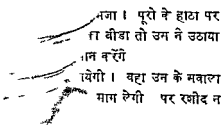
जुड़ हुए उपला में जम

रही था पगली हिंदू

दस्त-दस्त उहाने हिंदू

जस बिल्ला

पिंजर



मजा । पूरा ने हाठा पर

ता बीडा तो उस ने उठाया

न करेंगे

येगी । वहा उन के मवाला

माग लेगी पर रशीद न

पूरी भी छाटे लडक का बलेज से लगाये मकान की भातरा कोठरी में बैठा रहती थी ।
फिर भी बातें दावारा का भदकर उस के काना में पड जाती थी ।

पहले ता एक-दो हिंदू घरा में बठके होती रही ।

यह बात पक्की ह कि पगली हिंदू थी ।' काई कहता ।

हम न अपने काना से सुना ह, वह लालामूसे के एक अच्छे घराने की लडकी थी, अच्छी भली थी । जब उस की सौतन ने उस मुरद की राख खिला दा, वस तभी से वह पागल हो गयी । काई कहता ।

सुना ह उस के घरवाले न उस दरवाजा में बंद कर के रखा, पर उस के भाग्य म ता टवारी लिखी थी ।' काई कहता ।

अजी यह ता कारी बातें ह । म ने खुद उस की वाह पर आम खुदा हुआ दरा ह । काई धरती पर हाथ मारकर कहता ।

"अधेर ह, यारा, हमारे दखते-दखत मुसलमान हमारी आख म धूल शाक गये ।

' धिक्कार ह हम पर, हिंदू बालक का उम्हान मिनटा में मुसलमान बना लिया

' छाडा भी यारा, न जाने वह लडका किस की बला ह । किस की नही हम उस पिल्ले का कहा बाधते फिरेंग । काई जना बीच म यह भी कह देता ।

नालायक ! सवाज इस समय धरम का ह । इस तरह ता कल वह सारा गाव मुसलमान बना लग और तू उन का मुह दखता रह जायेगा ! एक दा व्यक्ति एक साथ ऊँचे स्वर म वाल उठते ।

कमरे की हवा ऐसी हा जाता माना बंद दरवाजा में वह घुट गयी हा ।

लडके का हम बापम लायेंगे दखते ह कौन हमारा हाथ पकटता ह ।

' असल में यही चार पैसा की बात ह न ? मट्टी को चंदा इकट्ठा कर के दे देंगे वह लडके का अपनेआप पाल लेगी । काई जाना क साथ अपना जगह से जरा आगे सरककर कहता ।

'ऐसे गये-बीते ता नही सारा गाव मिलकर क्या एक लडक का न पाल सकगा ?

' कौन वह सकता ह कि लडका भी पगली की तरह गूंगा बहरा निकलता ह या बीच में फिर काई कह उठता ।

' फिर क्या हुआ बटा हाकर धमाला म बाडू लगा दिया करेगा । दा रोटियाँ ही खायगा न ।

फिर वह एक-दूसरे क माहस पर साजुबाज करते प्रमग्न हान ।

पहले मट्टी स ता पूछ ला ।' काई कहता ।

ला देसो । क्या वह न रखगा ? पहले चादा का जूती उम के मिर पर रखेंगे,

फिर उस से बात करेंगे ।”

“अरे भई, लडके का क्या ह । धमगान्ग में तो डोर डगर का ही इतना काम ह मुफ्त में काम करनेवाला मिल जायेगा ।’

“अजी, अभी इस की बिसात ही क्या ह लटका पल तो जाये । पहले उस का ”

“अरे, तुम लाग मरे क्या जाते हो ! धरम के नाम पर इतना भी नहीं कर सकते तो अघे कुएँ में कूद मरा ।’

“तुम्हारे खेत का पानी कोई अपने खेत में लगा ले ता तुम उस का सिर फाड़ देते हो, आज तुम्हारा हिन्दुआ का लडका वह उठा कर ले गये ह ता तुम्हारे मुह पर ताला पड़ गया ह ।’

कमरे की हवा ऐसी हो जाती, माना उस म पत्थर के कोयले का धुआँ मिल गया हो ।

अब जब रशीद अपने खेता का जाता तो पास से गुजरते हुए हिन्दू उस की ओर कच्ची आग में देवने । रशीद अपने ध्यान में मग्न चला जाता ।

एक-एक बार उस ने बाता-बाता में पूरा से कहा कि भई, गाव की हवा अच्छी नहीं ह हमें इस झण्डे में पडकर क्या लेना ह । दात लम्बी हो जायेगी । वे लटका ले जायें अगर उन की यही मरजी ह । जो लडके क भाग्य में होगा हा जायेगा ।

पूरो कहती तो कुछ न थी पर उस का मन व्याकुल हो उठता था । हिड्डियो के एक छोटे-से पिंजर का दिन रात कलेजे में लगाकर उस ने छह महीने का किया था । जब वह भी जावद की भाँति गोलमटाल निकलता जाता था । उस की आँखें अब पूरो को पहचानने लगी थी, जिधर जिधर पूरा जाती उधर उधर उस की आँखें घूमती थी । वह रशीद को देखकर बाहें फैलाने लगा था

फिर पूरो सोचती, पहल दिन ही हिन्दुआ को उस की मुधि क्या न आयी ? वह उसे ले जाते पाल लेते उमे माँ की-म्मी गाद दते, उस पिता का-मा स्नेह देते । पूरे छह महीने पूरो ने रातें जागकर काटी थी, जीरा पाक-पाककर अपनी नमा में से दूध उत्पन्न किया था, उस का मल घा घाकर अपने नाग्नून घिसा लिये थे ।

फिर पूरा को ध्यान आता था कि उस ने लडके को गहद चढाया था और अपने पडोस के मुसलमाना के घरा में पजीरी बाँटा थी कि लडके का बडा होकर यह विचार न आये कि उस के जन्म पर किसी ने उस का कुछ न किया ।

एक दिन गाव के प्रमुख हिन्दुआ ने रशीद को बुला भेजा । पूरो के हाठा पर पपनी जम गयी । पूरो सोच म पट गयी । बच्चे का पालने का बीडा ता उस ने उठाया था पर वे लोग रशीद का बुरा भला कहेंगे, रशीद का अपमान करेंगे

पूरा कह रही थी कि वह भी रशीद के साथ जायेगी । वही उन के सबाला की जवाबदार था । वह स्वयं जाकर उन से लडके की भीख माग लेगी पर रशीद न

मीली हो गयी थी। पूरा कहता थी, लडका जरूर भूख से विरग्न रहा होगा, तभी तो उस की छातिया से दूध की धार बह रही थी।

रात को पूरे के यहाँ न किमी ने कुछ पकाया न किमी ने कुछ गाया।

जब जावेद महज स्वभाव से पूछता आया। हमारे कानों का वहाँ ले गये ह? या 'आ'। हमारा काना कब आयेगा? तब परा और रगाद निरुत्तर-मे जावेद की ओर देखकर रह जाते, लज्जित-से मिर झुकाकर चुप हो जाते।

पूरे की आला के आगे कम्मा का मुख फिर जाता, उस की आला के आगे रह रहकर लडके का मुख आता। पूरे सोचने लगी वह टूटे हुए फूले की क्या अपने गले से लगाकर रखती ह? टूटी हुई कलिया पर पानी छिन्नक छिड़ककर उन्हें क्या हरा करती ह? सभी पराये थे। उस का अपना कोई न बन सकता था। रगीद का मुख उसे अच्छा लगने लगा एक रगीद ने हा उस का साथ निवाहा था। यद्यपि सब से सम्बन्ध छुटवानेवाला भी वही था फिर भी वह उस का अपना था उस के जावेद का पिता था।

तीन दिन बीत गये। चौथे दिन सारे गाव में एक ही चर्चा चल रही थी 'लडका नहीं बचगा लडका तो मरन का पडा ह लडके का बुरा हाल ह बस दा घनी का मेहमान ह जो दूध की धूँ उस के अन्दर जाती ह बगी की बगी ही बाहर निकल जाती ह।'

पूरे तीव्रता से लग लगकर रोता थी। उस के स्तन दूध इकट्ठा हो जाने के कारण अकड़ने लगे थे और उधर वह बच्चा था कि दूध न मिलने के कारण उस का मुँह सूख गया था। लडके के मुँह और स्तन के दूध के बीच बड़ी दूरी पड गयी थी।

"लडके का दूध छुड़ा दिया ह लडके की आह पड जायेगी।

"अगर लडका मर गया तो गाँव भर पर 'साइसती आ जायेगा।"

मैं तो अपने आदमी से कहती हूँ कि भले आदमी बना और जहा से लडका लाये हो वही छोड आओ।

'हम तो आप बाल-बच्चेदार ह किमी की आह अच्छी नहीं हाता।

मेरा मरन ही आप मनमाना करता ह मैं तो पहले ही मना कर रही थी कि परापी आग में कूँकर तुम क्या लागे।

"कहते ह बल रात महरा ने लडके को ठण्डा दूध पिला दिया। वग तब से ही लडका कुछ का कुछ हो गया।

'भला भम का दूध इतने छोटे बालक का पच सकता ह। लडके का उलटियाँ आने लगा।

नही, जी, नही लडका हुँक उठा ह। जब मे हुआ उगी का मुँह देखता रहा, अब और किमी से परच तो बसे परच।

बचारा बचवान ह।

गाव की हिंदू स्त्रिया के मुह पर यही बातें थी। पूरा आहट लेती था, चौक पड़ती था। उस का जी करता था कि यह दोन्ने-दोन्नी धमशाला चला जाये, उन लोगों से विनती करे कि इस तरह किसी जीव का न मारा। लड़के का मेरी जाली में जल दा, वह ठीक हा जायेगा।

पर पूरा का साहस न हाता था, उस के पैर न उठते थे। पूरा का आशा नहीं थी कि मजहब के पत्थर जैसे बान उस की विनती सुन लगे।

उस के अगले दिन भी कोई बात न हुई।

फिर अचानक ही रशीद के मकान के आगन में दा-तीन आदमी जाकर खड़े हो गये।

‘यह ला, इस की जान तुम्हारे हवाला करत ह, बच सब ता बचा ला।’ और उन्होंने एक सफेद कपड़े में लिपटे हुए पीले, प्राय निर्जीव बालक का रशीद के हाथा में थमा दिया।

एक बार ता रशीद के मन में आया कि वह बसकर एक थप्पड़ उन के मुह पर मार मेरी छह महाने का सेवा के लिए तुम मुझे चार ठीकरे दते थे, अब उस के पर कम में लटकाकर मेरे हवाला करने आये हा। जाओ, जहाँ मरजी आये ले जाओ।

पूरा का उल्लसित मुस दखकर रशीद सब कुछ पी गया।

एक सप्ताह के भीतर ही सारे गाव ने देखा कि लटका पूरा के आगन में अच्छा-भला खेल रहा था।

रत्तोवाल

रहीम की दुनिया मा की जालें दिन खराब हाता जा रही थी। रहामे की एक पत्नी मात महीने की अबाध चालिका का छाड़कर मर गयी थी, दूसरी पत्नी का अपनी सास से कम बगता थी। रहामे की माँ अपनी आखा की और भी राती थी। अभी तक वह ज़ोवे के काम कर के चलती थी रुई कात कातकर उस ने दरिया से टक भर लिये थे, महीने सूत कात कातकर उस ने दुतहिया और चौनहिया से घर भर दिया था। अभी तक वह अपने बुड्डे हाथा से अनाज फटक लेती थी आटा पीस लेती था, कपास बल लेती थी, सुनह के समय मथानी लेकर दही बिलोने बठ जाती थी। फिर भी उस की बहू बुरादिया निकालती रहती थी। बुढ़िया साचती थी कि जा वह आंखा से माहताज हो गयी ता उस कोई मिट्टी के ठीकरे में भी पानी न दगा।

रहीम की माँ का यही चिन्ता दिन रात सताती थी। एक दिन उस ने पूरा से विनती करत हुण कहा कि जा वह कोई पन्द्रह दिन के लिए उम के साथ चली चले ता वह अपना आमा का इलाज बगकर देग ले, बीन जाने उस की सुनवाई हा जाये।

“अम्मा ! वह सयाना कहा रहता ह ?” पूरा न पूछा ।

‘सयाना नहीं ह, बटा । एक् बावली ह, उसे पीरो का बरदान ह । बहुत ह कि उस के पानी से राज सवर नमाज पढ़कर जाँख धोने स कुछ ही दिनों में जाँग भली चगी हो जाती ह । सुना है कि बड़यो की बन्द आँखें भी वहाँ जाकर खुल गयी । बावली की मिट्टी भी जासों को लगाते ह ।’

“अम्मा ! वह बावली ह कहा ?”

“रत्तोवाल गाव म ह । एक् साइ वहा रहता ह, आये गये मरीजा के लिए उस ने वहाँ बावली क पास तम्बू लगवाये हुए ह ।

पूरा के काना म माना किसी ने सलाख भाव दी । रत्तोवाल रत्तावाल छत्ताआनी क खता में खडे हाकर जिस रत्तोवाल को जाती हुई बच्ची सडव का पूरा चाव स दखा करती थी, जिस सडव पर स कोई पूरो का लेने के लिए घागी पर चत्कर आनेवाला था जिस सडव पर से गाँव के चार बहार पूरा की डाली ल जानेवाले थे । रत्तावाल रत्तावाल

पूरो के पावा से वह पय मल न हुआ था पूरा की आखा न वह गाव देखा न था । पूरा को एक् भूला हुआ नाम स्मरण हा आया रामचन्द रामचन्द

पूरा के भातर से एक धुआँ-सा उठा, उस के मन में उलाहने उठने लगे, एक बार उस का मुख तो देख लूँ कसा ह एक् बार उस का गाव ता देख लूँ कसा ह

‘अच्छा, अम्मा ! मैं तुम्हार साथ चूँगी ।’ पूरो क मुख से अनायास ही निज़ल गया । फिर लज्जित सी हाकर पूरा उस के मुख की ओर दखने लगी । पूरा का लगा माना रहाम की माँ ने उस क हृदय की बात जान ली हा ।

‘साइ दोर बच्चे जियें तू दूधा नहाय पूता फल । रहीमे की मा के हृदय स आशीर्वा निक्लने लगे । कौन जाने उस के मन म यह कामना उत्पन्न हुई क्या ही अच्छा होता जा मेरी बहू भी एस हा माठा बाल सक्ती ।

‘अम्मा ! जावेद क अबा का तुम मना लेना, मैं नहीं कहूँगा । पूरा ने लजात हुए कहा ।

ले देख ! वह तो मेरा बेटा है कभी इनकार कर सक्ता ह । मेरा खातिर चार दिन दुख-सुग से काट लेगा । रहीम की माँ ने अपनापा दशात हुए कहा ।

पूरा भली भाँति जानती थी कि रशीद उस की बात को कभी नहीं टालता, पर रशीद के सामने रत्तोवाल का नाम लेना ही बस कठिन था ।

उस रात पूरो क मन में परस्पर विरोधी विचार उत्पन्न हाने रहे ‘वह मग कौन लगता ह ? मैं ता उस का ओर आँख उठाकर भी नहीं देखूँगी । पराया मद मुझे उस के गाव से क्या लेना वह गाँव म रहता ह ता रहा करे, अम्मा अपना इराज बरापगी, फिर हम लौट आयेंग । तरा हा मन उम के लिए उमग रहा ह, उस को ता बुर सपने की भाँति कभी तैरा ध्यान भी न आया हागा

पूगे सोचती, उस गांव में जाकर रात पड़ते ही उग के भीतर जैसे वाई सोयी हुई बच्चा का खादगा ! उस व भीतर जम कोई गड मुरदा का उठायेगा ! इन वफना का उतारने से क्या लाभ ? वह रस्तावाल् नहीं जायेगी ! वह रस्तावाल् व रास्ते स ही न गुजरगी !

परा हा या ना कुछ न कहती थी ।

जावद अपने पिता का न छाड़ता था । रशीद ने उस माथ न भजा । दोनों स्त्रिया को पहुँचाने के लिए ग़होम के यहाँ का एक पुराना बाम करनेवाला अशरफ साथ गया । पूरा छोटे लड्डे का साथ ले गयी ।

अशरफ अगले फट्टे पर इक्कीवाले व साथ बठ गया । सारा मामान पीछे रखकर पूरा और अम्मा आमने सामने फट्टा पर बठ गया । इक्के व पहले हिचवाला स ही पूरा का लटका उस का गाना म सा गया । आगे बठ हुए अशरफ ने पूरा के लड्डे का उठा लिया । इक्का रस्तावाल् की सड़क पर चला जा रहा था ।

घांटे का टापा की आवाज जम पूरा क सिर पर हथौडा चला रहा थी । पूरा ने अपना माथा इक्के की बाह स लगा लिया । वह ऊँघ गया था । मजी हुई डाली में चादी के झन्नेवाला एक गाव-स्त्रिया मिर के नीचे रते हुए पूरा लटी हुई थी । चूड़े व बोध से उस का बाहें कठिनाई से उठता थी । हवा व एक झोके से डोरी का परदा जरा सरक गया । उस मद्धिम-स प्रकाश म उस ने दसा, पूरा के हाथा पर मेहँदी खूब खिला हुई थी । कितनी सारी मेहँदा थी पूरा की सहेलिया ने कितनी सारी धोप दी थी । यह बहार कितन बुरे ह न जाने बम चलत ह । डाला में बठे-बठे पूगे की बमर दुखने लगा थी डाली म हिचकाते भी बसे जाते ह । पूरा के गुँदे हुए सिर स उस का पल्ला सरक गया । पूरा ने हाथ उठाकर पल्ला ठीक किया । हाथ में पहने हुए आभूषणा की छन-छन सारी डोली में गूँज उठा । पूरा का जो बठा जा रहा था । बल स उस स कुछ साया नहीं गया था । पूरा की मा ने मठरिया की एक डलिया उस की पानी म डाल दा थी, पूरा का मन किया कि मठरी का एक टुकड़ा मुँह में डाल ले उस का जो ठिकाने नहीं आ रहा था

अम्मा पूरा का कंधा पकड़कर हिला रही थी "ठीक दुपहरी सिर पर आ गयी, एक्का कोर ता मुह में डाल ल ।

इक्कवाल ने इक्का खडा किया हुआ था । रास्ते म एक छाट-स गाँव के पास खाने पाने के लिए वे लाग रुके थे पूरा कापकर जाग उठी । न वाई डाली था, न आभूषण थे न मेहँदा था न चूडा था । पूरा इक्के के पिछले फट्टे पर अम्मा के सामने बठी हुई थी ।

पूरा ने रास्ते के लिए घी का हाथ लगाकर पराँठ बनाकर रख लिये थे । अम्मा ने वही गठरी खाली । अशरफ का चार पराठ दिये, इक्केवाले को दिये, मुद लिये, पूरा व आगे घर दिये ।

पूरा ने गले से वीर नहीं उतरता था। पराँठ व घी में पूरा को मिचलाहट-सी आता था।

“बोडा ही रास्ता रह गया हूँ जन्म से मिट्टा लूँ। रात का घाड़ी का सौम तिलकर मुझे रावर ही लौटना हूँ। इन्नेवाला कह रहा था। फिर सब सन्नारियाँ वम ही इन्ने में बठ गयी। पूरा ने अपना माथा इन्ने की बाहूँ से लगा लिया। पूरा ने रात भर जागकर आने का सब सामान अमदाव बाधा था उम रात भर का उनीम था।

डाली फिर हिचकाल खाने लगी। रत्तावाल का रास्ता खत्म होने में न आता था। एकाएक सज बाजा और शहनाइया का आवाज बहुत ऊँची हो गया। डाली व इधर उधर बाजे बज रहे थे। पूरा ने समझा रत्तावाल आ गया हूँ। बाज और जार से बजन लगे लडकियाँ गात गा रहा थी। एक स्त्रा न उम का धूँघट उठाया फिर किसी ने एक छाटा-मा वालक उस का गोदा में डाल दिया। वालक अपरिचित गाने में आकर रोने लगा स्त्रिया खिलखिलाने लगी रही थी, वह वालक का गमन कर रहा थी

अम्मा उस व व व का हिला रही थी आज तुझे बड़ी नीद आ रही हूँ देख लडका रो रहा हूँ।

पूरा फिर कपकपी लेकर जागा। इन्ने व पिठल फटटे पर बठी हुई अम्मा उस से बात कर रही थी।

“हमारे पास से इतना भारा बरात गुजरा हूँ मार बाज ही बाजे बज रहे थे, आप की आख नहीं खुला? अशरफ कह रहा था।

तुझे सानी का उस न लडका पकड़ाया वह भी तू न पकड़ लिया फिर भी तरी नीद नहीं टूटी, कहते रहते अम्मा हँसन लगी।

इन्ने रत्तावाल व निकट पहुँच गया था। जब बावला व पाम जाकर सब लाग इन्ने में उतरे तो मामन ही साइ का घर दिगाई दिया। तम्बुआ की जगह अब साइ ने दा-तान कच्ची कोठरियाँ बनवा दी थी जिन में दूर पार व आये हुए मुसाफिर रहत थे। बात्रला की मिट्टा बावली का पानी आखा का लगात था मनोकामना पाते थे।

साइ ने इन नय मुसाफिरो का एक बाठरी दिला दी। अशरफ ने सब सामान गठरा-वाटली बाठरी में रखा और अम्मा का लेकर साइ व पाम चला गया। पूरा न कोठरी में पनी हुई चारपाई पर दोम बिछाकर लटक का लगा दिया। फिर वह दरवाज पर खड़ी हाकर सामन खता क पार गाव के घरा का आर देखने लगी।

— मैं रत्तावाल आ गयी मुझे किसी ने बुलाया नहीं मुझ एक भी आदमी होने न जाया, किसी ने भी शहनाइ न बजायी किसी ने भा गाना न गाया, किसी न भा मेरे हाथ में चूड़ी न पहनाया एक भा बौड़ी मेरे हाथ में न छनवी मेहनी की एक पत्ती भी मेरे हाथ पर न लगा

गाव व बाहर इस बावला पर बड़ा सनान था। पूरा का जा उडा जाता था।

उम का मन बरता था कि वह दोन्कर उम गाँव में चली जाये, यहाँ से भाग जाये। रह रहकर पूरे के मन में विचार उठता बसे लाग हूँ इस गाँव के। बाई उम से नहा जाता, 'बैठ जाओ कोई उम से नहा कहता, जीती रहा। बाई उम से नहा रहता।

फिर पूरा कुछ मन्गी। पूरे का लगा वह कुछ पागल हाती जा रहा हूँ। वही वह पागल की भाँति गाँव का गलियाँ में न होने लगे, वही वह अपने राग न पाए डाँ, वही वह चिल्ला चिल्लाकर बोलने न लगे।

माँ ने अम्मा का बताया कि उन्हें वहाँ पूरा तरह दिन रहना पड़ेगा। उन का नीकर अगले दिन वापस अपने गाँव गकर आली चला गया। जाना-पाना के अपने साथ ले आयी थी। पूरा और अम्मा अपनी राग खुद पकाती थी। बसे यदि बाई चाहे ता माई की दरगाह से भी भाजन पा सकता था।

परा ने गाँव की आर मुम न दिया। फिर गाँव के वार में पूरा किश से पूछती और क्या पूछती? दिन पर दिन बातने जा रहे थे। गाँव में वह जाती भी ता किग बहाने? यदि किसी चीज की आवश्यकता होती थी तो माई के नीकर-चाकर वही ला दते थे। यह साचकर पूरा का दिल व्याकुल हो उठता था कि वह गाँव का दहलीज तक आकर लौट जायेगा पर गाँव न दग मक्की। पूरे के मन में आता था कि किसी न किसी तरह वह जाकर सारा गाँव देग आवे उम का घर भी देग आवे उम भी देग आवे पर उगे बाई न जान सके फिर परा साचती, पूरा को बस मालूम होगा कि उम का घर कौन-सा हूँ, वह किसी से पूछे भी ता बस, फिर घर को भीतर से बसे देखेगी फिर पूरे साचती, उम के घर का देखकर भी क्या लेता हूँ उम का उम घर से सम्बन्ध ही क्या हूँ क्या उम के मन में ऐसी बात उठती हूँ।

पूरे का जो ठिगाने न आता था। एक के बाद एक वर के दिन बीतते जाते थे। बैठ-बैठे पूरा को एक भूरा हुआ गाना या आ गया।

जये आये तय दुःख चले

साँडे आयाँ दा बदर नयी

हाय रखा साँडे आयाँ दा सबर पवी।

वित्तनी ही बार परा की आँखों में आँसू भर-भर जाने, वह उन्हें पी जाती। लखे को अम्मा के पास लिटाकर वह खता से घूम आती।

पूरा साचती एक बार देखू तो पहचान ता हूँ।

फिर पूरे साचती, इतने बरस हो गए हूँ कौन जाने कभी मूरत हो गयी हो। अगर मेरे पास से भी गुजर जाये तो मैं क्या पहचान सकूँगी।

खता में लिखता हूँ कभी-कभी पूरे पूछ लेती, 'माई! ये खेत किस के हूँ, दो गाजर लनी थी हम तो मुसाफिर हूँ।' लिखा कभी किसी का नाम लेते, कभी किसी का, रामचन्द का नाम का न लेता।

अगले दिन किमा ने मचमुच रामचन्द का नाम ले लिया। पूरे के पाँव ठेमे हो

गये मानो घरती में गए गये हा ।

पूरा का सिर चराराने लगा । उमे लगा वह उगी मिट्टी पर गिर पड़ेगी, वह उसी मिट्टी पर मिट्टी हा जायगा

पूरो उगा काँवर के नीचे सड़ी की सड़ी रह गयी । उम के पैरा म मे जम मिगी ने गति खींच ली हा । उम के पर तम जमकर बर्फ के ठले बन गय हा । उम मिट्टी न जमे पूरा का उमरर अपना लफट म ल गिया हो

पूरा को जान पना वह सड़ी की सड़ी अनार का पेड़ बनार उम आयी थी जिग के लाल अनारा रा जम भी कोई ताँने लगता वह अगर बनकर धरती पर गिर पडते उम के लाल अनारा रा जम भा रामचन्द्र ताँता, अनार व लाल दान लट्टू की घुँटें बनार उम ने दुःख पर गिर पडते और उम अनार व पर में मे एत आराव गुनार दता

मैं पूरा उगी होई जाँ

मैं न मुगनी मोयी हा ।

मिगान ने रात ह्वा चोपा का गटर बनारर मिर पर धर गिया । पूरा का घ्यात टूटा । उमे यात जाया वि जो राजकुमारी अनार का पीया बनकर उगी थी उस की कहानी उस न जम छाता थी मुनी थी । परा जभा तक न राजकुमारी बनी थी, न अनार का पीया ।

मास्त्रि आ रता ह वहने ह्वा विमान तने का गटर लेकर चुप की जार चल गिया ।

पूरो की आत्मा मे जामू बहने लगे । रामचन्द्र जब पूरो के पास मे गुजरा उम की आँख परा की जोर उठी । पूरा का मह आमुआ से भीगा हुआ था ।

पूरो को न कीबर की जोर हाता यात रहा न अपन पाले मे आँसू पाछ लेना । शायद जामुआ के बहने के कारण उमे रामचन्द्र का मुँह भी गिगई नही दे रहा था ।

‘तुम कौन हो बाबी ? तुम्हें क्या हुआ ह ?’ रामचन्द्र के पर रक गये ।

पूरो कुछ न बोल सकी ।

‘तुम्ह कोई तकलीफ ह बाबी ? पूरा के काना में फिर रामचन्द्र की आवाज आयी । पूरा की जीभ जमे किसी ने पीछे खींच ली थी वह मूर्ति की भाति राडी रही । पूरो के मा म बालन्सी उता पर उम के मुँह मे एक शब्द भी न निकला ।

रामचन्द्र ठिठक गया । उम ने इधर उधर देखा । शायद वह किसी विमान को सहायता व गिग बुलाना । उसी समय पूरो के पैरा म गति लौट आया और वह चुप की चुप गुम-मुम खेता मे बाहर चली गयी ।

पूरो चुपचाप आकर अपनी कोठरा म पड रही । उमी शाम सक्काली से अगारफ जा गया था । जगले तिन तक ही उन सय का अपने गाव लौटना था ।

उस रात पूरा की जान न लगी । एत शब्द भी मैं ने उम से न कहा पूछता

था, तूम कौन हा, धीवी । मैं उसे क्या बताता मैं कौन हूँ । मेरी व्यथा का बालक कौन बता सकता है । कभी सोते उठते बैठते उस मर रोते हुए मुख का ध्यान आयगा तो वह सोचेगा कि वह कौन थी फिर कौन जान उस काइ बिमरी हुई कहानी याद आ जाये उस की मरी हुई पूरा उस याद आ जाये फिर गायन उस की आँखा न दाग्न आँसू गिर पड़ें ।' फिर पूरा साबती यदि म भा उस राजकुमारी की भाँति अनार का पीघा बन सकता, उस के खेता म उग आती, वह मर अनारा का ताड़ता, फिर मैं अनारा म स बोलती न जाने यह सब किस युग की बातें हैं आजकल ता का मनुष्य पीघा नहीं बनता ।'

रात का पिछला पहर अभा भार नहीं बना था कि जिस किसी न पूरा का हाथ पकड़कर उस चारपाई से उठा दिया । पूरा बाहर खेता का चला गया । रात के अँधेरे में भी पूरा ने उस जगह का पहचान लिया, उस कीकर का पहचान लिया जहाँ कल सात की रामचन्द उस के सामने खड़ा था । झुककर पूरा ने उस स्थान पर म उस के चरणों की धूल उठा ली और अपना आँख बन्द कर के एक चुटका अपनी आँखा स लगा ली ।

आँखा स लगे हुए पूरा के दाता हाथ किसी ने अपने हाथा म ले लिये । पूरा ने चौंकर देखा, रामचन्द उस के सामने खड़ा हुआ था ।

"क्या तू पूरा है ? रामचन्द पूछ रहा था, "सारी रात यहाँ एक नाम मेरे शिमाग में चक्कर लगाता रहा, सच-मन्त्र बता तेरा नाम पूरा है ?'

पूरा का हृदय कहता था वह रामचन्द के पंरों पर गिर पड़ बैठ जा भरकर राखे और कहे कि वह पूरा है चीख चीखकर बताये कि वह पूरा है वह उमी की पूरा है जिस लेने उसे धानी पर चक्कर जाना था जिस के साथ उस की भाव्य पत्नी थी । वह वही पूरा है जिस उस के घर गली चक्कर आना था वहाँ पूरा है, पूरा ।

पूरा की जीभ का आज भी किसी ने खींच लिया । पूरा एक भी शब्द न बोल सकी । रामचन्द के हाथा से उस ने अपने हाथ छुटा लिये । पूरा वसे की बैगी, गुमसुम, वहाँ से लौट चली ।

"जा तू पूरा है ता मुझे एक बार बता जा ।' रामचन्द ने पूरा के पाछे तेज कदम बढ़ाते हुए कहा, 'मैं सारी रात इन खेता में घूमता रहा हूँ । पता नहीं क्या मेरा दिल गवाही देता था तू फिर आयगी, मेरा दिल गवाही देता है तू पूरा है ।'

"पूरा ता कब की मर चुकी है ।' न जाने कब पूरा के मुँह से निकल गया । उस ने पीछे मुड़कर भी न देखा वह जागे बन्ती गया ।

अम्मा ने बाबली के सान को मिठाई का थड़ावा चढ़ाया । अम्मा और उस के बाबू साधिया से लग्न हुआ इक्का धूप चढ़ने से पहले सनकडाली का सडक पर पड़ गया ।

एक आग

एक एक कर के कई दिन बात गये तिन दिन कर के महीने, और महीना महीना कर के कई बरस बीत गये ।

दूध का भरी हुई बाल्टी को जब पूरा चूल्हे पर कान्ने के लिए रखते समय मुखे कण्डे जागती और मारा तिन जलन के लिए कण्ठ में धामा धीमी आग सुलग जाती, तब पूरा का लगता कि उम की छाती की भीतर वाला तह में कायले की एक चिनगारी पड़ी हुई है जिम में न जाने कितने तिनो में उम के अतस्तल में कुछ आग भी सुलग रही है ।

कभी परा साचता कि आजकल उस का माया पिया उम की छाती पर ही धरा रहता है । उस अपने गले में कुछ अडा हुआ मानूम हाता । दा-तीन बार बासी पानी के साथ उम ने चुटकी भर भरकर अजवायन भा फाकी थी । कभी पूरो सोचती, मेरे अंदर गरमी हो गयी है उस न तीन बार तिन कच्ची लस्मी के कटारे भर भरकर पिये । कभी पूरो साचता था कौन जाने माँ का जी क्या है । पता नहीं क्या उस के मन में ऐसे विचार उठने थे ।

इन्हा दिना एक दिन जब रानी पर आया उस का मुह इतना उतरा हुआ था माना वह महीना का रोगी हो ।

रशीद ने घर में कुछ न कहा । पूरा ने बातें करता रहा जावेद से मदरस की बातें करता रहा, छोटे लम्बे के साथ हँसता-खेलता रहा । खाना खाते समय पूरो रशीद के मुख को देखती रही । उस लगा मानो कौर रशीद के गले से नीचे नहीं उतर रहा है । पानी के घूँट के साथ रशीद ने कुछ कौर नीचे उतार लिये । रशीद के मन की दशा पूरो से छिपी न रह सकी ।

पास-पास पड़ा हुई चारपाइया पर लेटन के बाल पूरो ने रशीद के जी का हाल पूछा ।

“आज मेरे गांव से एक आदमी आया था हमार अपन खेतों पर काम करता है । रशीद ने एक पल चुप रहकर कहा ।

छत्तोआनी से ?

हाँ ।

फिर ?

“वह कह रहा था कि हमारी बटी हुई फमल के ढेर लगे हुए थे मनो अनाज ढेरा का ढेर पड़ा हुआ था

फिर ?

“किसी ने रातारात आग लगा दी ।’

“हूँ ।”

‘सारी फसल में से एक दाना भी नहीं बचा ।’

“किसी ने जान-बूझकर लगायो ?”

‘शक तो ऐसा ही है ।’

“ऐसा कौन था ?

‘वह आदमी कह रहा था जाग की लपटा सारा आममान लाने ला गया था ।’

‘फिर अब ! हमारा जा हिस्सा था सा तो था ही व उचार क्या करेंगे ?’ उन बेचारा से पूरो का अभिप्राय रशीद के भाई उस के चाचा-ताऊआ से था जिन का फसल में साक्षा था ।

रशीद चुप हो गया । पूरो भा जैसे सोच में पड़ गयी । वच्चे ता सा गये थे पर रशीद और पूरा की आँखा में नींद नहीं थी ।

‘पर हमारे का घर फूँककर किसी को क्या मिला ? पूरा ने कई बार रह रहकर अपने मन में साचा । रशीद चुप रहा । पूरा देखती रहा, कभी रशीद दाखी करवट लेता है कभी बायी करवट लेता है फिर सीधा लट जाता है । कभी-कभी वह अपनी आँखें माचकर भा लेटा रहा पर नींद उस के पास न पड़ता थी । कई बार उठकर रशीद ने पानी भी पिया ।

“लडक का अलग चारपाई पर लिटा द मुझे आज इस के पास नींद नहीं आती । रशीद ने कहा ।

जावेद सदा अर्द्धा क पास साता था और छोटे लडके का पूरा अपने पास सुलाती थी । पहले कभी रशीद ने यह बात न कही थी । परा को आश्चर्य तो हुआ पर उस ने चुपचाप जावेद को उठाकर अलग चारपाई पर लिटा लिया ।

फिर भी कितना ही समय बात गया । रशीद करवटें हा बदलता रहा, पर नींद उस का आँखा क पास न आया ।

‘एक उठती उठती बात सुना है पता नहा, सच है या झूठ !’ रशीद ने लट लेटे कहा ।

‘क्या ?’ पूरो ने चौककर पूछा ।

रशीद फिर चुप हो गया माना वह अपने मन में निणय कर रहा है कि वह बात पूरा को बतानी चाहिए या नहीं ।

रशीद बड़ी देर तक चुप रहा । पूरा अपनी चारपाई से उठकर रशीद की चारपाई पर जा बैठा ।

‘सुना है कि गांव में एक अपरिचित जवान आया था । वह किसी से बहुत मिला-जुला नहा । गाँव के लोगो को शक है कि शायद वह वह तेरा भाई था ।’

‘मेरा भार ? परा मानो अनायास बाल उठी ।

कुछ कहा नहीं जा सकता । मुझे ता शीव गये भा बितने दिन हा गये हैं । यह जा जान्मा आया था, वह यह सब बातें बता रहा था ।’ वहकर रानीद फिर चुप हो गया ।

परा व फिर मैं जग चकरार आने लगे ।

मेरा भार ? मेरा भार अब जवान हो गया हागा । मुझ उम की मूरत देने दग-वारह बरस तो हा हा गय ह । बीन जान अब दमने में बगा लगता हा । उसे अचानक लग है तो गायन पहचानू भा नहीं । मझे भीगने लगे हागा । नौ-दम बरस का तो यह जान हा हान आया । पूरा व मन में अनेक विचार उठने लगे ।

रानीद न उम बेचल स्तना और बताया कि पूरा व पुराने मवान के सम्बन्ध में उम ने किसी आत्मीय म पूछा था कि यह घर किस का ह । पर अपने सम्बन्ध में अपने मुँह म उम न किसी का कुछ कहा बताया । लगे को बसल तब ही ह । किसी न अपने बाना मे कुछ कहा मुना ।

‘क्या गचमच वह शीव आया हागा ? उमे मग ध्यान आया हागा, उम की बहना, उम का अपना बहन उम की गगा मौ-जायी बहन । पूरा व मन में उधल पुथल होने लगी उम की आँगा में आँसू आ गय ।

फिर उम आग लगने का दुग भूल गया जे हूण गहूँ की राग में म मौ-जाये भाई-बहना का साह सम्भरो लगा । प्रेम का एक उज्ज्वल चिनगागा उम के हृदय में गमकने लगा ।

बीन जाने उम ने आग लगायी हा गायन अपने नर लाल दिव का गुबार निवानन व फिर दुग प्रवार बसल लिया हा । उम का जवान बाया म गया लड़ पन्ना हागा । बीन जान उम बदन व दुग का ध्यान व्याकुल करता हा । मैं एक बार उम का मुँह लगे लगी । बीन जान मेरे भाग्य में क्या लिखा हुआ ह । एम ही पूरा गावनी रहा ।

फिर उम व मन म विचार आने लगा । एक घण्टा पहले पूरा का सम्बन्ध उम व माय था किन का मना अब उज्ज्वल राग हो गया था और एक घण्टा बाद पूरा का अनायास उम व माय हो गया था किन ने गायन उम अब का जगत्तर राग कर लिया था ।

‘आग लगावना वहीं यह हा न हा ।’ क्या आग किसी और ल लगायी हा और लाल-लबों में यह पदमा जय । पूरा का चिन्ता बढ़ा लगी । कुछ भी हा यह ध्यान भा का कुछ बातें थी । यह गावनी था बीन जान उम व भाई के हृदय में दुग और प्रेम का काँ आग जल रहा हा, उगा जलता आग में म उम न एक चिनगागा राग का लगा ला हा । गायन उम व भार का यह भी पता हागा कि गायन लगावना में नहीं रहता ।

पूरो निढाल हाकर अपनी चारपाई पर लेट गयी । विचार उस के मन में डूबते-उतराते रहे ।

जब पूरा की आँख लगी—उस के सामने आग ही आग लगी हुई थी नीचे धरती पर घाम के तिनका से लेकर पीपल की-सी ऊँचाई तक सब कुछ जल रहा था । फिर पूरा ने सपने में देखा एक सुन्दर नवयुवक आग की ऊँची उठती हुई लपटा के पास बठा अपने हाथ ताप रहा है ।

पूरो चौककर जाग उठी । पूरा का जाड-जाड दुख रहा था ।

पूरा को लगा, इतने दिना से उस की छाती में जा धुक्धुकी-सी लगी हुई थी, जिस क लिए वह कभी अजबबयन फावती थी कभी कच्चा लस्सी पीती थी, आज उस में स लपटें निकल निकलकर उस के शरीर का जला रही थी । पर पूरा की समझ में नहीं आता था कि इस आग में उस के शरीर को सेंक लग रहा था या कि उस के भाई के स्नह की ज्योति उदीप्त हो रही थी ।

१९४७

जिन तरह खरबूजा फाँक-फाँक हो जाता है, उसी प्रकार शहरा में, गाँवों में मनुष्या से मनुष्य फटते जाते थे ।

जैसे हवा के साथ उड़-उड़कर धूल आता है, वैसे ही आसपास के कसबों से खबर आती थी । आदमी पर आदमी मारे जा रहे हैं घर के घर जल रहे हैं । पड़ोसी को पड़ोसी मार रहा है । राह चलते को राह चलता तलवार के घाट उतार जाता है । लागा की जान सुरक्षित नहीं थी उन का माल सुरक्षित नहीं था ।

पूरो सब कुछ आँखा से देखती थी, कानों से सुनती थी । उस क अपने गाँव में और आसपास के गाँवों में भी लोग लाहा इकट्ठा कर रहे थे लोहे पर शान धर रहे थे, अपने घरों की छता पर डटें इकट्ठी कर रहे थे, भाले और बरतिया सभाल सभाल-कर अपनी कौठरिया में रख रहे थे ।

‘यहाँ हमारा अपना राज होगा, यहाँ हमारी हुकूमत होगी हरेक यही कहता था । यहाँ हम हिन्दू का बीज भी रहने नहीं देंगे’ लोग चौराहों पर खड हो-होकर कहते थे ।

कभी ऐसा हाते भी सुना है । पूरो बार-बार सोचती । ‘भला इतनी सृष्टि जायेगी कहाँ ?’ पूरा रह रहकर सोचता ।

‘लोगों को झूठमूठ एक जूनन आता है’ पूरो कहती ‘चार दिना की आँधा है, आयेगी और चली जायेगी ।’

पर लोग ये कि माना पागल हो गये थे बस बुरी-बुरा बातें ही करते थे । कही

से भा भली खबर न आता था । फिर पूरा ने सुना गहरा में गलियाँ लूट स भर गया है, बाज़ार के बाज़ार मुरदा स पट गये ह गडती हुई लागा से बन्नु उठने लगी ह उन्हें कोई जलाता पूँवता नही, कोई उह दगाता-गायता नही । लाग कह रहे थे, इतन मुरदा की सडौध म मार दग में बीमारी फग जायगी ।

फिर उस वष का पन्द्रह अगस्त बीत गयी । गाँव म ढाल बजे, चाँद और तारा वाले हरे रग के झण्डे लगे । प्रतिदिन मसजिद में लाग डकटटे हाने थे । गाँव क हिन्दुओं के मुग पर माता बिगा ने हलती पर दी थी ।

फिर पूरा ने सुना कुछ शहरा में नीमाणें बना दी गया थी । इन के एक आग मुसलमान रह गये थे दूसरी आग सार हिन्दू चले गये थे । फिर पूरा न सुना उधर दूसरा ओर से मुगलमान मरते-कटत चले आ रहे थे बहुत-से वही मर गय थे, बहुत-स रास्ते म खतम हा गये थ बहुत-स इधर पटुचकर मर रहे थे ।

पूरा के वान मुन-मुनवर जमे फट चले हा ।—पूरो ने सुना मुगलमान हिन्दुआ की लडकिया का और हिंदू मुसलमाना की लडकिया का उठाकर ले गये हैं । कइया न उन्हें अपन घरा में डाल लिया ह कइया ने उन्ह जान मे मार डाला ह और कइया का वह नमा क के गलिया और बाज़ारा म घुमा रहे ह ।

गुजरात ज़िल के उन गाँवा म जा परो के गाँव क आस-पास लगे हुए थे मघ से पीछे उपद्रव हुए । पूरो के अपने गाँववाले, उन की अपना विरादरीवाल पूरो के अपने रसीद का छाडकर, रसीद के सारे सम्बन्धी-मुटुम्बी भी, वहशी बन फिरते थे । पूरो को साहम न हाता था और न रसीद के वग की बात थी कि बिमी को कुछ समझावें-बुझावें ।

उन के आस पास के गावा के हिन्दू भागने लगे । उन की गाँवें अपने खूँटा स बँधी रह गयी, उन की भसैं भाँ भाँ डकारने लगी—उन के भरे भराये घर पीछे छूट गये, उन के खेत मालिका क मुह ताकते रह । वे रातारात भागते व गावा की सीमा पर मारे जाने वह बीसिया काम चलने रहने के बाट मरे हुए मिलते ।

पूरा के गाँव के सार हिंदू अपनी एक बडी हवेली में चले गय थे । यदि कोई खिडकी या दरवाजा खोलकर बाहर आ जाता तो तुरत मृत्यु उमे अपने झपेटे म ले लेती थी । कहते थे कि हवेली म उहाने अनाज डकटठा किया हुआ था । कोई हिन्दू बाहर देखता नही था । कोई हिंदू स्त्रा बाहर जाकती नही थी ।

पूरो के गाव म केवल मुसलमान रह गये थे । गाँव में हिन्दू पगुजा का भाँति हवली में फँसे हुए थे । एक दिन उस के गाववाला ने मिलकर हवली पर हमला किया । उन्होने निश्चय किया था कि वह हवेलीवाला का नाम मिटा देंगे । उन्हान बाद घरा के ताले तोड डाले, अलग अलग घरा के मालिक बन धठे । यदि कभी रात विरात कोई हवेली से नीचे उतरता, अगले दिन पूरा गाँव में उस की लाश पडी देख लेती थी ।

एक दिन उन्होने न जाने किस तरह हवेली के दरवाजा और खिडकिया पर तल

ढाला और तेल से भीगे हुए दरवाजा और सिन्कियों में आग भी लगा ली थी, जब हिंदू मिलिटरी व ट्रक उन के गांव में पहुँच गये।

हवेली के भीतर में आग की लपटा जितना ऊँचा चीखें भी निकल रही थी जब कि मिलिटरी ने जाग बुझायी और भीतर से आदमी निकाला। उन घरवाले हुए लागा का उन्होंने लारिया में बठा दिया। आधे जले हुए तीन आदमी भी निकाले गये जिन के शरीर में चरबी बह रही थी, जिन का मांस जलकर हड्डियाँ से अलग-अलग लटक गया था। कोहनिया और घुटना पर म जिन का पिंजर बाहर को निकल आया था। लागा के शरियो में बटते-बँटते उन तीनों ने जान ताड़ दी। उन तीनों का लाशा का बही भूमि पर फक्कर लारिया चल दी। उन के घरवाले चीयन चिल्लाने रह गये, पर मिलिटरी व पाम उन्हें जलाने फूँकने का समय नहीं था।

पूरो का गांव खाला हा गया था। पराया कौम का कोई आदमी भी बाकी नहीं रह गया था। केवल तीन लोगों हवला व बाहर पड़ी हुई थी जिन व पिंजर पर बचे हुए मांस का दिन में ही गांव के कुत्ता और कौबो ने नोच लिया था।

पूरो की आँखा में जस किमी ने सीसे के ककड डाल दिये हा। एक दिन पूरो ने दम बारह मनचले नवपुत्रों का एक नगी जवान लटकी को अपने आग कर के, दोनों हाथा से ढोल-ढमके बजाते अपने गांव व पाम से गुजरते देखा। न जाने वे किस गांव से आये थे और किस गांव का चले गये।

पूरा का लगता माना इस समार में जीना दूभर हा गया हा माना इस युग में लटका का जन्म लेना ही पाप हो।

उसी दिन सन्ध्या के समय पूरो का गन्ने व खेत में छिपी हुई एक लडकी दोन पची जिमे रात के घोर जबरकार में वह अपने घर ले आयी।

उस लडकी ने पूरा को बताया कि पाम के गांव में एक बम्प खुला हुआ था जहाँ गांव के हिंदू इकट्ठ हा गये थे और प्रतीक्षा कर रहे थे कि मिलिटरी उन्हें यहाँ से निकालकर कब दूसरी आर हिंदुस्तान के जायेगी। इस आर की फौज बम्प की रखवाला करती थी। पर प्रतिदिन रात का कुछ मुसलमान घारी छिपे आकर बम्प की जवान लडकियों को उठाकर ले जाने थे और जगले दिन तडके ही उन्हें वापस छोड़ जाते थे।

उस लडकी ने पूरो को बताया कि पूरी नी रातें हा गयी थी उसे रोज रात को नये-नये लागा के घरा में जाना पडा था। पिछली रात वह किसी प्रकार अपने ले जाने वाले को धोखा देकर भाग गयी थी। दौड़ते दौड़ते वह इस गांव में आ पहुँची थी। जब सुबह के समय उजाग होने लगा तब वह निश्चय न कर सकी कि किधर जाये। उस ने दिन का सारा समय ईश के खेत में लुके छिपे पडे रहकर बिताया

पूरा यह सब सुन सुनकर विक्षिप्त-सी हा गयी थी। उस से और न सुना जाता था। पूरो को जम इन बातों का विश्वास न होता था। पूरो ने उस लडकी का अपने

घर की पिछला बाठरी में रग लिया। वहाँ पूरा के घर का गेहूँ पड़ा था, भस का गली भूसा पड़ा हुआ था।

दूमरे दिन दा आदमी दौड़े-दौड़े आये। उन्होंने सारे गाँववालों को पूछा कि किमी ने एक लट्की देवा है? व गाँववालों के आँगना में भी चाँक-चाँककर दग गये, पर लटकी का कुछ पता न चला।

पूरो के मन में कई प्रकार के प्रश्न उठते पर वह उन का कोई उत्तर न सोच सकती। उस पता नहीं चलता था कि अब इस धरती पर जो कि मनुष्य के लहू से लयपय हा गयी थी पहले की भाँति गेहूँ की सुनहरी दालियाँ उत्पन्न होगी या नहीं इस धरती पर जिस के खेतों में मुरद पत्त सट रहे ह अब भा पहले का भाँति मकई के भुट्टा में से सुगन्ध निकलेगा या नहीं क्या ये स्त्रियाँ इन पुरुषों के लिए अब भी मतान उत्पन्न करेंगी जिन पुरुषों ने इन स्त्रियों की अपनी बहनो के साथ ऐसा अत्याचार किया था?

हिंदुस्तान जाता हुआ एक काफिला पूरो के गाँव के पास जाकर रुका। पुरुष और स्त्रिया, झुण्ड के झुण्ड पल्ल चलते थे। बग़ाडिया में उन्होंने बच्चा का भर दिया था। कुछ सिपाही काफिले के आगे थे और कुछ पीछे। यात्रियों की आँखें भारी हो गयी थी। रास्ते की धूल दुर्दैव का भाँति उन के मुँह सिर पर मेंढराकर अब वही जम गयी थी।

पूरा के गाँव पहुँचते-पहुँचते काफिले का रात पड़ गयी। उस वही खना पड़ा।

पूरो का चित्त याकुल था। उस रह रहकर एक ही विचार आता कि वह सड़क रस्तावाले से आती है इस काफिले में अवश्य उस का रामचन्द होगा एक अन्तिम भेंट उस एक बार अन्तिम बार उस के बाद वह इस देश में ही नहीं रहेगा उस के बाद फिर कभी भी वह उस का कुशल न सुन सकेगी उस के बाद फिर कभी भी उस के गाँव की हवा भी इस आर न आयेगी

काफिले वाले अपने बच्चे-सुबे गहने और रुपये दवर रास्त के गाँव के लागा से अनाज मोल लेते थे। गाँव के कुछ स्त्री-पुरुष जाकर उन से सौना कर लेते थे और पहरेवाले सिपाहियों की दल रख में अपना मकई-बाजरा सोन के भाव बेच देते थे। इसी बहाने जाकर पूरो ने काफिले पर एक नजर मारी

पूरा ने काफिले में बठे हुए रामचन्द को देखा। रामचन्द ने रस्तावाले के खेतों में खड़ी हुई आसुआ से भीगे महवाली पूरो को पहचाना।

रस्तावाले के खेतों में पूरो का मुँह उस के डूबते हुए साहस में बंद कर दिया था, आज उस का मुँह पाम खड़े हुए पहरे के सिपाहियों ने बंद किया हुआ था। पूरा कुछ कह न सका।

“तुम्हें अनाज-दाना कुछ चाहिए? उस ने रामचन्द की आर मुँह कर के कहा।

“हाँ”, रामचन्द की आँखें पूरो के मुख पर से न हटती थी, शायद अब भी वह उस पहचानने की चलावर रहा था।

“अच्छा, रुपये तयार रखना, मैं रात को पहुँचा जाऊँगी।” पास खड़े हुए सिपाही का ओर दखकर पूरो न फिर रामचन्द की ओर देखा और फिर लौट आयी।

पूरा ने रशीद से कहा कि उमे घर में छिप। हुई लडकी को काफिले में पहुँचाना ह और वह आटे और मिट्टी के पुरखे म रखे हुए थी जो कपडे में बांधकर और लडकी का साथ लेकर रात के अँधेरे में साये हुए काफिले की ओर चल दी।

दिन दिन भर चलने से लाग थके हुए पडे थे। हर समय का भय चाहे शमसादा की तरह उन क सिर पर मँडरा रहा था पर फिर भी वे घोड़े बैचवर साये हुए थे।

“मैं रात को पहुँचा जाऊँगी। रामचन्द के बाना में पूरो की आवाज शाम से ही गूँज रही थी। रामचन्द रात की निस्तानता में किसी के पैरो की आहट ले रहा था।

सिपाही घूमकर पहरा द रहे थे। पूरो पजो पर चलकर काफिले में जा पहुँची।

सिर से गठरी उतारकर उस ने रामचन्द के आगे रख दी, और लडकी से बैठ जाने को कहा।

‘तू पूरो ही ह न?’ आज भी रामचन्द ने वही रक्तोवाल के खेतोवाल प्रश्न किया।

अब भी पूछना बाकी ह? पूरो ने उलाहने से कहा। अपने जीवन में रामचन्द का उस का यह पहला और अन्तिम उलाहना था। रामचन्द ने मिर झुका लिया।

मेरे माता पिता की कोई खबर? पूरो ने एक गहरा श्वास लेकर पूछा।

“वे ता जब के ब्याह कर के गये ह लौटे ही नहीं पर ’ रामचन्द कहते-कहते रुक गया।

‘ब्याह? किस का ब्याह?’ पूरा ने पूछा।

“तेरे खो जाने के बाद उन्होंने एक रात चुपचाप तेरी छाटी बहन के फेरे मुझ म कर दिये और तेरे भाई के साथ मेरी बहन के फेर हा गये। तब से वे गाव नहीं लौटे ह। आजकल सिपाम ही ह। पर ’ रामचन्द कहता-कहता रुक गया।

“मेरी बहन फिर ता वह भी काफिले में होगी?’ पूरो क लिए रामचन्द के साथ उम की बहन क ब्याह का बात विलकुल नयी थी।

“नही, पिछले दिना तेरा भाई आया था वह अपनी औरत को मामके छाड गया था और बहन का अपने साथ ले गया था। जो वह यहा होता ता वह भी ।” रामचन्द का आखा में आसू छलछला आये।

‘वह भी क्या हुआ किमे ’ पूरा की समझ में न आया था।

“पता नहीं लगा, किस समय मेरी बहन का उठाकर ले गये। जब हम घर से निकले वह साथ थी। मैं बुनिया माँ का पीठ पर उठाये काफिले में जाया हूँ तब तक वह मेरे पीछे-पाछे चली आ रही थी। पर अब काफिले में नहीं हूँ।” रामचन्द ने गले से जोर से निकलने की चेष्टा करते हुए स्वर को रोक रोककर कहा। उस को रलाई आ रही थी, पर उस ने अपनी पगड़ी को अपने मुँह में डाल लिया। “मेरा माँ का पीठ पाठकर अपने शरीर को नीला कर लिया हूँ।” रामचन्द ने कहा।

पूरो की अँतड़िया में एक अँतड़-भी पड़ने लगी।

‘कोशिश करना, कुछ पता लग जाय। न जाने जीती हूँ या मर गयी।’ रामचन्द ने फिर से कहा।

अँतड़िया में उठती हुई पीडा के कारण पूरा कुछ बोल न सकी।

“उस का नाम गायल लाजो हूँ?” पूरो को याद आया। अपना सगाई के समय उस ने अपने भाई की मंगेतर का नाम सुना था।

‘हाँ उस की बाह पर भी उस का नाम मुद्रा हुआ हूँ। रामचन्द ने बताया। सिपाही घूम घूमकर पहरा दे रहे थे। साये हुए रोगा के बीच में बठे हुए रामचन्द और पूरो धीरे धीरे वारें कर रहे थे।

इस बेचारी का मैं तुम्हें सौपने आयी हूँ। इस अपने काफिले में ले जाओ। हिन्दुस्तान जाकर पता कर लेना जो इस का मा-बाप मिल गये तो पूरो ने लंकी की बाह रामचन्द के हाथ में पकड़ा दी।

मेरा भाई यहाँ जाया था, चाहती थी उसे एक बार दख लेती।’ पूरो ने अपनी कामना प्रकट करते हुए कहा।

‘पिछले दिना जब तुम्हारे छत्तीआनावाले खेतों में आग लगी थी, याद हूँ रामचन्द कह रहा था।

‘आग? हाँ आग लगी थी। क्या यह बात सच है कि मर भाई ने ही आग लगायी था?’ पूरा को उस दिन ध्यान आ गया जब रसीद ने एक अपवाह सुनायी थी।

हाँ उसा ने आग लगायी थी। तैरा तो उसे पता माटूम नहीं था कि तू कहा रहती हूँ। गुस्से में आकर उस ने रसीद के खेत जला डाल।’

पूरा को रागाच हो आया। उस का भाई अब जवान हो गया था उस के हृदय में बदले की उष्ण घण्टा रही थी उस के दिल में बहन की याद थी। साथ ही उसे उस दुष्टता की याद आयी उस के भाई की स्त्री गुम हो गयी थी किसी ने उसे जबरदस्ती उठा लिया था न जाने वह किस हाल में थी वह उस के रामचन्द की बहन”

मुझे यहाँ सक्कड़आली के पत्त से चिट्ठी लिखना अपना पता भी लिखना जो लाजो का कुछ पता लगा तो मैं लिख भेजूंगी पूरो ने कहा।

रात का अँधेरा हल्का होता जा रहा था। सिपाही काफिलेवालों को जगा रहे

थे। काफिले को आगे घटना था। पूरो उठ खड़ी हुई।

पूरो ने रामचन्द को हाथ जोड़े। वह कुछ बोल न सकी।

पूरो ने काफिले से बाहर पाव धरा ही था कि एक सिपाही ने उस पर लाठी तान ली, "तू कौन है? कहा चली है?"

"मैं अनाज बेचने आयी थी।"

"कितन का बेचा है? पैसे दिखाना।" सिपाही ने चिल्लाकर कहा।

पूरो न चादर में हाथ डालकर अपनी चादी की बाक उतार ली और सिपाही का दियाकर तेज कदमा से गाव का लौट गयी।

सिपाही ने शायद यह न साचा कि हिन्दू चादी के आभूषण प्रायः कम ही पहनते हैं, इस औरत को अनाज के बदले चादी की बाक कहा से मिल गयी।

पूरो की भाभी

रात का चारपाई पर पड़े-पड़े पूरो छत के बाले शहतीरा को देखती रहती। पूरो का मन उन लाजा की बंद काठरिया के चक्कर लगाता रहता जिन के भीतर लोगो ने औरत की लड़किया, बहना और स्त्रिया का ज़रूरदस्ती डाल रखा था। उन्हीं में एक लाजा होगी। लाजा, रामचन्द की बहन, उस की अपनी भाभी। लाजा का अनदेखा मुग्न पूगे की आत्मा के आगे आ जाता था। टूटे हुए पत्ते जमा मुँह, झड़े हुए पत्त जमा चेहरा।

पूरो सोचती थी, लाजा व्याही हुई है शायद उस के बाई बाल-बच्चा भी है। उस के दिल पर न जाने क्या-क्या धोता होगा उस के शरीर पर क्या गुजरी होगी। न जाने वह इस समय कहा है। मैं उसे कैसे खोजूँ? मैं उसे कैसे पहचान सकती हूँ? उस दिन ईश्वर में ठिपी हुई यह लड़की लाजा ही निकल आता, मैं उसे काफिले में मिला आती मैं उसे रामचन्द के हवाले कर आती

पूरो ने सप्त रात रशीद को बताया और उस के पाव पर गिर पड़ी।

'जैसे भी हो मुझ पर दया करा। मैं ने सारा उमर तुम से कुछ नहीं माँगा। मुझे लाजा का पता ला दो, जमे भी है। पूरो की आँखों के आसू नहा सकते थे। रशीद ने पूरो से प्रतिज्ञा का कि वह अपना ओर से बाई बसूर न रहने देगा।

रशीद बहुत सोचने के बाद इसी निश्चय पर पहुँचा कि हाँ न हो लाजा है रत्तोवाल में ही। वह घर से अपने भाई के साथ निकली, पर काफिले में मिली नहीं। काफिले में झट्टे हानेवाले लोगो की आपाधपपी में ही वह किसी के हाथ पड़ गयी होगी।

रशाद ने रत्तोवाल के दो चक्कर लगाये, पर वह लोगो के भवना में कैसे याँव

सकता था । उस ने गांव का नितनी ही दुकाना से सौदासुलुष मरीजा, पर उस लाजो का कोई सुराग न लगा । इतना उस ने अवश्य सुन लिया था कि गांव के कुछ लड़वा ने जाते हुए काफिले में से दो-चार लड़कियों का उठा लिया था । रशीद को पूरा निश्चय था कि लाजा भी उन्हीं में ह ।

उस गांववाले रशीद से परिचित नहीं थे, न ही उस गांव में रशीद का कोई सम्बन्धी रहता था । वह किस के पास चार दिन रहता, किस से वह गांव के हाल-चाल लेता ।

पूरा ने रशीद के साथ एक चाल निवाली । बागलीवाले साहब को वह जानते थे । वे दोनों बच्चा का लेकर माइ की एक काठरी में जा टिक् । वने भी दिन रात की चिन्ता के कारण पूरा की आँखें धुन्नी-भी रहने लगी थी । पूरा रोश सवरे नमाज पढ़कर बागला के जल से अपनी आँखें धोती साहब को मिठाई चटाती और तिन में धारे खेसा की गठरी बाबबर गांव में बेचने चला जाती ।

उस समय गांव के मज्द खेता पर हाते गांव की स्त्रियाँ घरा में अपने गृहस्थी के काम-बाज में लगी होती । पूरा हर घर में जाकर पूछती । पूरा खेमें के दाम इतने अधिक बताती थी कि उस का सौदा कठिनाई से पड़ता था । वसे भी गांवो में लागा के पास अपनी ही बनायी हुई दरियाँ और खेस बहुतर होते ह फिर उन्हें लूटमार से भी बहुत कुछ मिल गया था । पूरा से खरीदने की किसी को आवश्यकता न थी पर पूरा छोटा की भाति उन के आगनों में जा बठती भीतर-बाहर आकती स्त्रिया का बातों में लगा लेती गांव की लूटमार की बातें छेड़ देती उन से हँस-हँसकर पड़ता कि किस के हिस्सा क्या-क्या आया था । फिर हिन्दुआ के छोड़ हुए मराना की बात छेड़ देती । पूरा रामचन्द का घर पहचानती न थी, पर गांववालो से बातचीत कर के उस ने रामचन्द के मकान का पता लगा लिया था । रशीद और पूरा को शक था कि हा न हो जिस ने लाजो का उठाया ह उस ने शायद लाजो के मकान का भी सँभाल लिया है । परो ने उस मकान का भा एकाध फेरा लगाया, पर हर बार एक बुडिया उस बाहर की ज्वाली से ही लौटा देती थी, कह देती थी कि हमें कुछ नहीं लेना ह ।

जैसे कोई किसी के घर में जबरदस्ती घुमता ह, वैसे ही एक दिन पूरा भी उस मकान के आगन में चली गयी ।

‘अम्मा, तुम लेना कुछ नहीं, पर देख ता ले । मैं तुम से देखने के दाम तो नहीं मागती ।’ और पूरा ने खेसा की गठरी धरती पर बरकर खेस इधर-उधर बखेर दिये । आगन में उस बुडिया के अतिरिक्त और कोई नहीं था ।

‘अल्ला खर करे ! मुझे एक घूट पानी पिला दो, सवरे से प्यासी हूँ ।’ पूरा ने साहस कर के बुडिया से कहा ।

‘अरे, पानी छाड़ तू लस्मी पी ले पर जो तू चादर और खेस बेचना चाहती ह तो किसी शहर जा । वहाँ न लोग मूत कातते ह, न कपड़ा बुनते ह । गावा में किस

व पास खसा का घाटा ह ।” बुढिया ने पूरो का सलाह दी और भीतर कोठरी की ओर मुग कर के उस ने आवाज दी, ‘आ नेकवत्त, एक कटारा लस्सी तो भर के ले आ ।”

पूरा का जी धडकने लगा । भीतर से आनेवाली लडकी का चेहरा सचमुच स्टे हुए पत्ते की भांति था, बड़े हुए पख की तरह था । पूरा का माथा ठनका, हो न हा यही लाजो ह ।

जब तक पूरो का लाजा के किमी जगह हाने का शक नहीं पडा था, तब तक उम के मन में एक लगन थी कि वही लाजा दीख जाये । जब उमे शक पड गया था कि लाजा उसी घर मे ह पर जय उस की समझ में न आता था कि अपनी शका का समाधान कस कर ।

“यह तुम्हारी लडकी ठाक ता ह ?” पूरा ने बुढिया मे बडी सहानुभूति स बहा, और लडकी के हाथ से लस्सी का कटारा ले लिया ।

‘ठीक हो ह ऐसे हो कुछ बुढिया ने बात आया-गयी कर दी ।

“योग नमक देना लस्सा में मिला लूँ । पूरो ने लस्सी का एक घूँट भरकर कटोरा हाथ में लिये रखा ।

लडकी ने चुपचाप नमक लाकर पूरा के आगे रख दिया । उम के हाथ स नमक लेते समय पूरो ने उस की एक उँगली को दबाया । नवयुवती ने जरा चौंकर पूरो की ओर देखा पर न तो उस क हाथो पर हँसी की रेखा आयी न उस के मुह से कोई शब्द ही निकला । लडका हम के छिलके की भांति पेरो हुई दीख पन्ती थी ।

पूरा को और भी विश्वास हा गया कि यह लडकी लाजो हो या न हा, पर बाई जरूरदस्ती भगायी हुई लडकी अवश्य ह । घर के सम्बन्ध में पूरा को पता लग गया था कि यह रामचंद का घर था । और पूरो का यह भी पक्का विश्वास होता जाता था कि हो न हा यही लडकी लाजा ह ।

लस्सी पीकर कटोरा घरती पर रखते हुए पूरो ने उम युवती की बाह पकड ली ।

‘इधर आ, मैं तेरो नाडी देखूँ । रग तो तेरा हलदी जसा हा रहा ह ।” कहते कहते पूरा ने एक हाथ से उम की बांह पर से कुरता जरा पीछे को हटा दिया । नवयुवता की बाह पर हिंदी में उस का नाम गुदा हुआ था लाजो । फिर भी वह कुछ न बोली चाली । उम क होठो पर पूम माघ क बाहरे की भांति चुप्पी जमी हुई था ।

“बाई गण्डा बाय द न । लडका घर स परच जाये । लडके मे भी कुछ नही बोलती चालती । बुढिया ने उत्तम मुग्य मे कहा ।

पूरा को स्वयं का सँभालना कठिन हा रहा था, फिर भी उस ने जल्दी से उत्तर दिया, ‘मेर पास जमा जतर ह उस से यह कुछ ही दिना में मकई क दाने की

भाँति गिर उठी।”

“तू जो मागेगी तुम दूंगा, मुझे वह जन्तर ला द।” बुनिया ने पूरा की चार पन्ड ली।

“यह कौन बड़ा बात है मैं बल ही ल आऊँगी। अल्ला ने चाहा तो” कहते-कहते पूरे ने खेतों की गठरी बांध ली। नययुवती गूँगे-बहरे बुत की भाँति उस की ओर देख रही थी।

मेमा की गठरी के भार से आज पूरा की कमर टूटती जा रही थी। बनी कठिनाई से पूरे अपनी बावलीवाला काठरी में पहुँचा।

‘अज जाने, तू जाने तरा काम जाने। पूरा ने रगीद का सारी बात बताकर कहा।

काई ऐसा बात बने ‘ रगीद माचने लगा।

‘जस मुझे घाड़ी पर उठा लाया था बने ही अज भी हिम्मत कर ” पूरा ने रगीद के एक चुटका ली और हँस पड़ी।

फिर पूरे और रगीद ने कई मुक्तियाँ माची, पर काई भी उन्हें जँचती नही थी। रगीद कहता था कि यहाँ से उसे भगाकर ले जाना तो कठिन नहीं है पर उस आगे कैसे पहुँचायेंगे ?

पूरा के मन में एक विचार आया जा अब तब कभी न आया था—भरे माता पिता ने मुझे अपनी बेटी का तो वापस वतूल नही किया क्या अब अपनी बहू को स्वीकार कर लेंगे ? उन्होंने यदि वापस लन से इनकार कर दिया तब क्या होगा ?

रगीद ने पूरा का बताया कि उन की मरवार की आर से मचनाएँ निकाल ह कि जबरदस्ती ले जाया गयी लडकियाँ का राज-खाजकर लौटा दा क्याकि उन के बदले में दूसरी आर से इसी प्रकार खाली हुई लडकियाँ मिलगी। लडकियाँ के माता पिता उन्हें वापस ले लगे।

पूरे के हृदय में एक कसब सी उठी, उस की बार दुनिया के सब धम उस के रास्ते में काट बनकर बिछ गये थे, उस के माता पिता ने उसे स्वीकार नहीं किया उस के समुरालवाला ने उसे स्वीकार नहीं किया। आज सब मजहून के मान टूट चुके थे, आज

अपने विषय में साचना पूरा ने छाड़ दिया। वह लाजा के सम्बन्ध में सोचने लगी।

वह रात पूरा ने तार गिन गिनकर काटी। सबरा हाते ही वह दस टोह में लग गया कि लाजो के घरवाला बुनिया अपने बेटे के लिए राटी लेकर खता को कब जाती है। उस ने फिर दा एक कोर खेम सिर पर रखे और कपड के एक टुकड़े में थोड़ी-सी राख बाँधकर च दी।

लाजो के घर के भिड़ हुआ दरवाजे को अपने हाथों से खालते समय पूरा ने

सारे पीर-फकीरा का ध्यान किया। एक समय से भूले हुए देवी देवता उसे स्मरण हो आये। पहले प्रायः रत्न और खुदा का नाम रूते समय पूरा कहा करती थी कि रब उस का सौतेला पिता था और खुदा की वह सौतली बेटा थी। काँद भी रब या खुदा उस का दुख दद की परवा न करता था। पर आज पूरा के हृदय पर एक प्रकार का भय छा गया, पूरा ने झिपकते हुए किसी भी रब रहीम न प्रार्थना की कि किसी प्रकार लाजो से आज उस की भेंट अकेले में हो जाये।

पूरा का लाजा व घर पहुँचते-पहुँचते भी दापहरी का समय हो गया। बुनिया अपने बड़े का राटा देने गयी हुई थी। लाजा अकेली ही आँगन में बिना बिछानन की खाट पर पड़ी थी।

“अम्मा कहा ह ? पूरा ने आँगन में पैर धरते ही पूछा।

‘खेत गयी ह।’ लाजा ने कल की खेस बेचनेवाली की ओर देखकर कहा। लाजो के हृदय में समझावली की ओर नया जागा हुआ आकर्षण उस के मुख पर स्पष्ट दीप्ति पड़ रहा था। लाजा उठकर खाट पर बठ गयी।

एक क्षण में ही पूरा को लाजो की मुखाकृति में अपनी मा, अपनी बहन और अपनी भाभी के मुख दीप्त पड़े। वह उस के गले से चिपट गयी।

पूरा का लगा कि वह रो उठेगी इतने ज़ोर से कि उस का राना दीवारा को फाड़ देगा उस का रोना खेता को पार कर जायेगा उस का रोना गाँव को लाप जायेगा, उस का रोना शहर से भी जागे निकल जायेगा उस का राना

पूरा ने अपने गले को गले व बाहर न निकटने दिया।

‘तू लाजा ह मेरी भाभी’ पूरा ने अपने हृदय में उठने हुए तूफान का दबाकर कहा।

“तू पूरा है ?” लाजो ने ज़रा उस की छाती में हटकर उस का मुख देखा। पर लाजो ने पूरा को पहले कभी न देखा था जो अच पहचानती, फिर भी लाजा का पूरा का मुख बिल्कुल उस के भाई जमा ही लगा, अपने पति जमा लाजा के हृदय में एक लाज-सी उत्पन्न हुई मानो वह अपने पति के मुख की ज़ार आग उठाकर न देन सकता हो। लाजा पूरा की गाँद में गिर पड़ी।

लाजो के अन्तर्गत में उस समय जो कुछ बीत रहा था, शायद वह पूरा की तला में प्रवेश करता जा रहा था। पूरा का कुछ भी पूछने की आवश्यकता न थी। पूरा ने लाजा का कलेज से लगाव रखा।

“बाई आ जायेगा, लाजो। मेरी बात सुन।’ पूरा का बातने समय का ध्यान आया। लाजा की सिमकियाँ न गवती थी, उस की साँस ठिठाने न आती थी।

“वह सब तक लौट आती ह ?’ पूरा न पूछा।

“मुझे कुछ पता नहीं। मुझे अपने पाम ले चल। लाजो सीधी ग हाती थी पूरा का गाँद का न छोड़ती था।

“तुने लेने तो आये ही हूँ, और क्या करने आये हूँ। मेरी बात सुन।” पुरो ने राजा का कंधे से पकड़कर उठाया।

हाय, मुझे ले चल।’

“पर तू सँभलकर बठ बार्द आ जायेगा।”

‘मुझे लेकर भाग चल। मैं गारा उमर तेरी बाँधी बनकर रहूँगी।’

पागल न बन। ऐसे भागकर मैं वहाँ ले जाऊँ? मेरी बात ता सुन।’

‘हाय। मैं वहाँ जाऊँगी, मैं वही तटप तपकर मर जाऊँगी। राजा रोये जा रही थी। पुरा का डर था कि बात भी न हो गयेगा और बुझिया आ जायेगी। पुरा ने अपने पाले स राजा का मुँह पाछा और समया-बुझाकर उग चुप कराया।

कभी ता घर से बाहर निकलती हूँ?

नहीं।

पर सबर तो सेता को जाती होगी।

‘यह साथ होती हूँ।’

‘आज सयाग स अमावस हूँ आज रात को जो तू बाहरवाले कुर्छे क पाग आ सके तो वहाँ तुने रानीद घोड़ी लिये तयार मिलेगा।

राजा जमे सँप गयी। रात का अकेले कुर्छे के पास पहुँचना उस अत्यन्त कठिन लग रहा था। फिर वह राजा का भी नहीं जानती थी। और यदि किसी ने देव लिया तो फिर किसी की जान भी सलामत न थी।

‘मैं घर से बाहर कब निकलूँगी?’

रात को जब सब सो जायें तब दाँवें लगाकर निकल जाना।”

‘वह तो दाँव भी पीता हूँ। रात को उस से कर क दाँव चार घूट दिया दे दूँगी, पर बाहर के आगन में बुझिया।’

‘बुझिया कुछ अलीम उफीम नहीं ग्यती?’

मैं ने तो खात नहीं देखा।

‘एक बार ओ तू वहाँ पहुँच जाय

‘पर वहाँ मैं उमे जानती भी तो नहीं। जा वहाँ पर तू मिल जाये।”

वह तो रातोगत पंडा मार लेगा और जा मैं भी साथ हुई तो फिर ता हम दानो ही रह जायेंगी।

मैं ने तो उसे कभी देखा ही नहीं।

‘तू मुझ पर गारा कर। तेरा तसल्ला के लिए यह कर दूँगी। यह रूप मेरे हाथ की यह जगूड़ी उस के हाथ में पड़ी होगी, दग लीजो।

आज रात दाँव न लगा तब

फिर कुछ रात वह पूरी तीन रातें तेरी राह दखेगा।’

‘गली म से आहत आ रही हूँ शायद बार्द आ रहा हूँ।

पूरा खाट से उठकर नाचे बठ गयी। खाट के पताने खेसा को रखकर पूरा ने पहले म बंधी हुई रास की पुटिया को देगा कि यदि बुढ़िया आ जाये तो उसे वह जतर और भस्म द सके।

पर बुढ़िया अभी नहीं जाया थी।

‘जा तू मुझे इस जतर के बहाने राज किसी बागली या कुएँ पर ल जाय और फिर एक दिन। राजा ने अपना स्वर पहले स भा धीमा कर लिया।

‘इस तरह मेरे ऊपर पूरा गक हो जायेगा। मैं चाहती हूँ कि वह तुझे लकवा गाव से निकल जाये और म बाद म भी दा तान दिन गाव म फेरा लगाती रहूँ। मेरे ऊपर कोई उँगली न उठा सके।

‘मुझे डर लगता हूँ वही काँड़ रास्त म हो न पकड़ ले।’

‘फिर जा किस्मत म लिखा हूँ वह ता हागा ही। आगे कौन-म करम मीधे हूँ?’

‘पर मैं सारी ऊपर तर ऊपर भार बन जाऊँगी।’

‘यह बातें फिर करेंगे इन के लिए यह समय नहीं हूँ। मेरी सलाह हूँ कि मैं अब चली यही अच्छा हूँ। आज बुढ़िया मुझ न देख ता।’

हाय। मुझे भा ले चल। पूरा उठने लगा ता राजो वच्चा की भाति उस से चिपट गयी। पूरा ने दरवाजे का आर दखत हुए राजो का कसकर अपनी छाता से लगा लिया और बोला, ‘आज रात आधी रात का कल पर मत डालना। और फिर वह खेसा का संभालकर घर से बाहर निकल गयी।

बान की खाट पर राजा दोना पर पसारकर लेट गया। आज उस अपने गरीर के अग-अग म एक प्रकार की प्रफुल्लता का अनुभव हा रहा था। फिर जस राजा का मकान की दीवारा म से आवाज जाता सुना दो ‘आज रात आधी रात का। राजा ने दालान की एक एक डट को देखा। यही मेरा घर था। यही मैं पैदा हुई, यही पला। यही मैं बड़ी हुई। इस घर स मेरी टाला निकली। यही लौटकर मैं मायके आयी। सब इस घर से चल गये पर मेरा मुरदा यही पड़ा रहा। मैं अपने हा घर में परदेगा बन गयी। इसी घर ने मुझे पैदा किया, इसी घर ने मुझे खा लिया। राजा घर की चहारदीवारा का देखने लगे। ‘इन दावाग का भा राज न आया इन्होंने मेरा सत्यानाग होने देता, इन्होंने मेरा मर्यादा लुटती देखी, पर आज, आज रात आधी रात का सभी दावारें टूट जायेंगी, सभी चौखट गिर पड़ेंगी मैं।’

बुढ़िया बाहर का भिटा हुआ दरवाजा खालकर आगत म आ गयी था।

‘बट अच्छे समय गयी हूँ।’ राजा ने मन हा मन कहा।

आज वह खेसावाला आनेवाली थी अभी आयी ता नहीं?’ बुढ़िया ने आन ही यह पहली बात पूछा और हाथ का माग भाजा का बरतन घरता पर रखकर राजा वाला खाट का पट्टी पर बठ गया।

खेसावाला का नाम मुनकर राजा के मुख पर एक चमक सा आ गया। राजा

ने मिर हिलाकर कहा "नही।" और फिर माचने लगा, 'पूरो को यह कैसे पता लगा कि मैं यहा रह रही हूँ ? वह मुझे क्या खूने जाया ? वह किस गाँव में रहती है ? मैं ने उस में कुछ भी न पूछा। पूछने का समय भा कहा था। — आज रात आधी रात का फिर यह ध्वनि राजा के कानों में उठकर उस के कानों में ही समाने लगी।

मैं ने कहा एक मुट्ठी माठ गिरकर बटगोड़ में चावल चढ़ा द। मैं तो थक गयी। कत्ते-कहने बुढ़िया चागपाई पर निश्चल रह गयी।

जिस प्रकार अंतिम बार के काम का कोई जल्दी जल्दी निवृत्ताता है उसी प्रकार राजा ने उठकर माठ बीन चावल बाने जोर चूल्हे में चार लकड़ियाँ लगाकर चिचड़ी पकने पर दी। पहले प्राय बुढ़िया आटा गूँवती था पर आज स्वयं ही राजा ने आटा छाना और गूँव लिया।

आज का दिन ठूँसे हुए जूने की भाँति बरता हा जाता था। मुरिकल में कर के रात आयी। आज अब बुढ़िया का लडका घर आया तो राजा का बहुत बड़बोहट न चली। पहले राज जब राजा उम देवता थी उसे लगता था माना मकड़ा ठीकरे उस के माथे पर टूटन लगे हा।

बटगोड़ में बड़छी घुमाते हुए आज तीस बार राजा के हाथ से बड़छी छिटकी। दो बार उस के हाथों में बेलन छूट गये। एक-दो बार तो उस के हाथ में काँसे का बटोरा भा छूट गया।

दम में काम कर। एक-एक बार बुढ़िया ने खिजलाकर कहा।

'आखें हूँ कि बटन। बुढ़िया के बेटे ने भी उम टाका।

पर आज राजा को बुढ़िया का एक बात भी कुबाल न लग रहा था। बुढ़िया के बेटे की बात आज जमे वह मुन ही नहीं रहती थी। उसे लग रहा था माना घर का सब माल-असबाब भी आज बुढ़िया और उस के बेटे का मुँह चिढ़ा रहा हो।

राजा में आज अपूर्व साहस आ गया था। न उस का जा रहता था, न उस के मन में कोई चिन्ता आती थी। बस एक निश्चिन्त समय जम निकट और निकट आता जा रहा था। अभी रात पड़ जायेगी अभी सब सा जायगे और जमे मावुन लगे हाथ में स चूनी निकल जाती है, वह इस घर से निकल जायगी।

पहले राजा जठ्ठी-कुत्ती उठकर गराब की बातें बुढ़िया के बेटे के आगे लाकर घर नेता थी पर आज राजा स्वयं ही भातर से वह गराब की बातें निकाल गया जो बुढ़िया के बेटे ने इलायचिया डठवाकर दुमुना आँच की खिचवायी थी और पुरानी और तेज होने के कारण अग्न्य रखी हुई था।

बुढ़िया का बेटा मोच रहा था आज राजा ने माठ की चिचडा भी मगाई जसी बनायी है आज राजा दारू की बातें भा मरय निकाल लाया है आज राजा खुश है आज ।

बुढ़िया अपकियाँ ले रहा थी।

“आगन म ठण्ड हा गयी ह म ने तेरी खाट भीतर डाल दी ह, जा भीतर जाकर लेट ।” राजा ने घर की मालकिन का भाति बुनिया से कहा । एक बार बुनिया ने आखें फाटकर राजा की आर दखा ।

आज ता जम तिन ही पलट गये ह । आज ता मैं व्से जतर पहनानवाली था यह तो पहले ही असर हा गया दीखता ह ।’ बुनिया ने अपने मन ही मन माचा और भीतर जाकर लेट गयी ।

रात का अधकार पलभर गहरा हाता जा रहा था । बुनिया का वेटा शराम में धुन होकर राजा की बाहें खींच रहा था ।

रात का पहला पहर कब का बीत गया था । बुनिया का उंटा शराब म सुत होकर खाट पर सा रहा था ।

उम घर की दीवारा न, उस घर की कडिया ने जहा पहर इतन परिवर्तन देखे उस आधी रात का यह भा दवा कि राजा दबे पाव टपोटा का दरवाजा खालकर उस घर की देहला से बाहर निकल गयी ।

राजो थोड़ी दूर चलती, उस डर गगता, शायद काई उस क पाछ-पाछ आ रहा ह किसी ने उसे कचे से पकड़ लिया ह किमी ने उम गरदन से नाप लिया ह । जाडे की आधी रात की ठण्डे म भी राजा के माथे पर पसीने की बुँद जा गया था ।

यद्यपि अमावस का रात थी फिर भा आकाश पर छिटक टुए तारा का प्रकाश भी राजा को सोखा लग रहा था । अपने घर की दीवार लाघने क बाद अगल घरा के रास्ते पर बगते हुए राजा एकाएक ठिठक गया । राजो न गरदन धुमाकर अपने घर की लम्बी दीवार की आर दखा । कोहर की भाति सारी गला में चुप्पी जमा हुई था । फिर भी राजा ने गग का सीधा रास्ता छाटकर घरा क पिछली ओर वाला लम्बा रास्ता पकड़ लिया ।

घरा की पक्ति समाप्त हा गया । बाहर क कुएँ तक पहुँचने क लिए एक लम्बा बौटा मगान पड़ता था । यहाँ राजा के नगे पैर म एक कम्पन उठकर उम के माथे की नमा में पल गया । राजा न पाछ मुड़कर कन्ना की भाति मान हुए घरा को दखा । अमा तब प्रलय नहीं हुँद था, अभी तक कन्ना म स काई मुरदा नहीं उठा था । राजा को अपनी माँम की आवाज भी सुनार की धौकना का भाति सुनाई द रहा थी । पर राजा के पाग विचार म डूबने क लिए समय ही कहाँ था । राजा ने एक दान तारा क पुँपल प्रकाश का दखा और मगान में आगे बढ़ गया ।

राजा क तिल का एक यह घटका था कि मदान में स जान समय उम दूर स काई भी दग मक्ता था । राजा क गराग पर कपड़ भी कुछ मफेद हा व उम मल अधकार में अपने कपड़ की मफेद म भा डर लग रहा था । पर अब ता राजा न पूरा मगान पार कर लिया था । उम ने धूमक पाछ दखा । सारा मगान खाला था । कुएँ का आर दगने ही राजा का जा धक्का उठा । कुएँ पर काई नहीं था । रगान नहीं

न मिर दिखाकर बहा, "नही।" और फिर गावने ग्या, 'पूरा को यह बने पता लगा कि मैं यहाँ रह रहा हूँ ? वह मुझे क्या बूझने आयी ? वह किस गाँव में रहती ह ? मैं ने उस से कुछ भा न पूछा। पूछने का समय भा बही था। — आज रात आयी रात को ' फिर यह स्वनि राजा के बाना म उठकर उस के बाना म ही ममाने ग्या।

मैं ने कहा, एक मुठ्ठा माठ डालकर बटगाइ म चारउ चगा । मैं तो बक गयी। बहने-बहने बुनिया चारपाई पर निद्रा ले गयी।

जिस प्रकार अन्तिम बार के काम का बाई जग जग निरगता ह उसी प्रकार राजा ने उठकर माठ बान चारउ बाने और चूहे म दा चार चकटियाँ गगाकर बिचडी पकने घर गी। पहले प्राय बुनिया जाग गूँघती था पर आज स्वय ही राजा ने आटा छाना और गूँघ लिया।

आज का दिन ठूठे हुए जूने का भाँति बढता हा जाता था। मुक्किल मे वर के रात आयी। आज जब बुनिया का लडका घर आया ता राजा का बहुत बन्वाहट न चनी। पहले राज जब राजा उस दगता था उसे लगता था माना मकडा ठाकर उस के माँसे पर टूटने लग हा।

उठतेई में अच्छी धुमाते हुए आज तीन बार राजा के हाथ म बन्छी छिन्की। दो बार उस के हाथ स बेलन टूट छूट गया। एक-एक बार ता उस के हाथ म कामे का बटोरा भा छूट गया।

'दग म काम कर। एक-एक बार बुनिया ने बिजलाकर कहा।

आँखें ह कि बटन। बुनिया के बेटे ने भी उस टाका।

पर आज राजा का बुद्धिया का एक बाल भी कुबाल न उग रहा था। बुनिया के बेटे की बात आज जमे वह मुन ही नहीं रहा थी। उसे लग रहा था माना घर का मय माल-असवाव भी आज बुद्धिया और उस के बेटे का मुह चिंग रहा हो।

राजो में आज अपूर्व माहम आ गया था। न उस का जा करता था, न उस के मन म कोई चि ता आती थी। वम एक निश्चिन समय जमे निवट, और निवट आता जा रहा था। अभी रात पड जायेगा अभी सब मा जायेंगे, और जमे साबुन लगे हाथ में से चूड़ी निकल जाती ह, वह इस घर मे निकल जायेगी।

पहले राजा जहती-कुत्ती उठकर गराब की बातल बुनिया के बेटे के आगे लाकर घर लेती थी पर आज राजा स्वय ही भातर से वह गराब का बातल निकाल लायी जो बुद्धिया के बेटे ने गलायचियाँ डगबासर दुमुनी जाँच की बिचवायी थी और पुरानी और तेज होने के कारण अग राखी हुई था।

बुनिया का बेटा मोच रहा था आज राजा ने माठ की बिचडी भा मगाई जमी बनावी ह आज राजा दोर की बोलल भी स्वय निकाल लाया ह आज राजा खुश ह आज।

बुनिया अपकियाँ ले रही थी।

‘आगन म ठण्ड हा गया ह मैं ने तेरी साट भीतर डाल दी ह, जा भीतर जाकर लेट ।’ लाजा ने घर की मालकिन की भाति बुटिया म कहा । एक बार बुटिया ने ओंखें फाटकर लाजा की आर दखा ।

‘आज ता जमे दिन ही पलट गया ह । आज ता मैं इस जन्तर पहनानवाली था यह ता पहले ही बसर हा गया दीयता ह ।’ बुटिया ने अपने मन ही मन मावा और भीतर जाकर लेट गयी ।

रात का अन्धकार पल-पल गहरा होता जा रहा था । बुटिया का बेटा गगन में धुन हाकर लाजा की बाहें खींच रहा था ।

रात का पहला पहर बच का बीत गया था । बुटिया का बेटा गगन म धुन हाकर साट पर सा रहा था ।

उस घर की दीवारा ने, उस घर की बडिया ने जहा पहले इतन परिवर्तन दखे थे उस आधी रात का यह भाग्ना बि लाजा दबे पाव ट्योटा का दरवाजा खोलकर उस घर का दहला म बाहर निकल गया ।

लाजा थाने दूर चलता उस डर लगता गायद कोई उस क पाछे-पाछे आ रहा ह, किसी ने उस बन्ध म पकड़ लिया ह किसी न उस गरदन स नाप लिया ह । जाड की आधी रात की ठण्डे म भी लाजा के माथे पर पनान की बूद आ गया थी ।

यद्यपि अमावस की रात थी फिर भा आकाश पर छिटके हुए तारा का प्रकाश भी लाजा का तीखा लग रहा था । अपने घर की दीवार लाघने के बाद अगले घरा के रास्ते पर बन्त हुए लाजा एकाएक ठिठक गयी । लाजा न गरदन धुमाकर अपने घर की लम्बी दीवार का आर दखा । बाहर की भाति सारा गला म चुप्पी जमा हुई थी । फिर भी लाजा ने गली का साधा रास्ता जाटकर घरा क पिछली ओर बाग लम्बा रास्ता पकड़ लिया ।

घरा की पत्ति समाप्त हा गया । बाहर क कुएँ तर पहुचन क लिए एक लम्बा चौडा मगान पडता था । यहाँ लाजा क नगे पैरा म एक कम्पन उठकर उस क माथे की नमा में पड गया । लाजा ने पाछे मुडकर कन्ना की भाति सात हुए घरा का दखा । अभा तब प्रलय नही हुद था अभा तब कन्ना म स बार्न् मुरदा नहा उठा था । लाजा की अपनी गाँग की आवाज भी मुनार की धौबनी का नाँति मुनाई द रहा था । पर लाजा के पाम विचारा में खने क लिए समय हा कहीं था । लाजा न एक बार तारा क धुँपल प्रकाश का दखा, और मगान में आगे बन् गया ।

लाजा के जिल् का एक सह घन्का था कि मगान म स जान समय उमे दूर स बार्न् भा दग सकती था । लाजा क गरीब पर कपड भा कुछ गफेद हा थे उम मन् अधिकार म अपन कपडा का सफेता म भा डर लग रहा था । पर अब ता लाजा ने पूरा मगान पार कर लिया था । उम ने धूमकर पोछे लगा । सारा मगान खाला था । कुएँ का आर दगन हा लाजा का जी धवरा ग्य । कुएँ पर काँटी सहीं था । रागाद नही

आया जब वह कही सी न रही। गाँव लौटने का विचार लाजा के लिए असह्य था। उस ने कुछ का एक चक्कर लगाया, मानो अपने मन में धार लिया हो कि यदि अब इस समाज में उस काई जगह न मिला तो वह इसी कुर्छे में दूब जायेगा।

चात्त्र में स्वयं का टपटे हुए एक 'यक्ति' पाम की आड़िया में से निकला—
वहाँ क्या तू लाजा है? उस 'यक्ति' ने लाजा के पाम आकर चादर में से अपना मुँह निकाला।

भाई मेरी निगानी दिया द। लाजा ने रंगीत का आर एक नष्टि दखा। रसीद के चेहरे पर मानो कण्ठा का माहुर लगा हुई था। लाजा का चित्त स्थिर हुआ। रसीद ने अपने हाथ की अगूठी लाजा के आगे कर ली।

तुझे पहुँचाकर क्या या परमा पूरा को ले जाऊंगा वच्चे उम्मी के पास ह। रंगीत कुछ के धर से उत्तरकर आड़िया के पोछे बधी हुई घाटा खाल लाया।

या जल्दा! रसाद ने एक बार कहा जोर लाजा को बाह का सहारा देकर घाटा पर बठा लिया।

घाटी का पहली एंड उगाते हा रसाद का वह समय याद आ गया जब उस ने पूरे को छत्तोनाना के कच्चे रास्ते में उठाकर अपनी घाटा पर डाक किया था। रसीद आज हरान था तब फिर एक बार अपना घाटी दौड़ाना पडा। गाव की एक और नवयुवता फिर एक बार भगानी पड़ी। जवाना का वह उत्साह आज रसीद की बाहो में नहीं था। पर रसाद माच रहा था पूरे को उठाने के बाद ज्यो-या वह अपनी घाटी दौड़ता जाता था मना भार का एक परियर जम उस की आत्मा पर बठता जाता था। कई वर्षों में वह बाँध उस की आत्मा पर पन रहा था। आज ज्यो-या रसीद की घोड़ी रत्तावाल की सीमाओं का दूर छाँता जाता थी रसाद का लगता था कि उस की आत्मा पर पडा वह भारा बाँध मरकता जा रहा ह। घाटा का माना पँख लग गये थे।

हमीदा

भार के फटने हुए प्रवाण के माथ ही लाजा के गुम हा जाने का खबर गाव भर में फल गयी। अभी दही में मथनिया पड़ी हा हुई थी कि हर घर में लाजा की चर्चा होने लगी।

आमपाम के गावा में किसी हिन्दू का नाम निगान तब नहीं था, और काई मुसलमान यह काम क्या करता। लोग हरान-परशान थे।

प्रवाण जल्दा जंगी धक्कर चली हुई धूप बन गया था। उपला के चून्हा में दाल पत्र चुकी था म्त्रियाँ अभी तन्दूर गरम कर रही थी जिन में से जगती हुई

छिपटिया की सुगन्ध और धुएँ की लपटें निकलकर सारे गाव पर छा रही थी। तभी पूरा ने गाव में प्रवेश किया।

आज लाजो के घर का दरवाजा किसी मृत पशु के मुँह की भाँति खुला हुआ था। पूरा ने जब उस घर के दरवाजे के भीतर पैर धरा, आगन में बिपरीत हुए रात के जूठे बरतना पर मकिया भिनक रही थी। पूरा ने देख लिया कि आज मकरी से किसी ने कुछ चाया पिया नहीं है।

“जरा, तू ने कही उस बलमुँही को दखा ? बुनिया के माथे पर इतना तेवरिया चढ़ा हुआ था कि जान पड़ता था जने किसी ने मिट्टी की हाड़ी उस के माथे पर फोड़ डाली हो।

“कौन अम्मा ? पूरा ने अपने मिर पर से खेत उतारकर आगन में धरते हुए पूछा।

“जरी, वही चाण्डाल, अल्ला उस से समझे। बुनिया ने फिर अपनी सारी घणा अपने माथे के बला में भरकर कहा।

हाय हाय, कौन ? बहू कहा है ?

‘वही जलजाना तो भाग गयी है।’

हाय-हाय, किस के साथ ? मैं तो उस के लिए जतर और भस्म लेकर जायी हूँ।”

“चूँहे में जायें जतर और भस्म ! उसे तो न जाने जिन ले गये या भूत।”

क्या कहती है अम्मा ! गाव में कौन है जा ले जायेगा ! बाहर खेता में गयी हागा आ जायेगी अभी।

‘लो मुना ! खेता में गया है। बूँप सिंग पर आ गयी और

पर अम्मा ! वह कोई राटी का टुकड़ा तो नहीं जिस को उठा कर ले गये।”

“यही तो मैं कहती हूँ। क्या जाने किसी कुएँ में डब मरी है क्या जाने किसी जाहड़ में गिर पड़ी है। मैं तो पहले दिन से ही उस पर भरासा नहीं करती थी। पर यह लडका ही उस के चोचले किया करता था कहता था, अम्मा ! अब यह कहाँ जायेगी, इस का कोई मगा न पराया।’

‘क्या, अम्मा ! उस के माँ-बाप किस गाव के हैं ?’

“भाऊ मैं जायें माँ-बाप। मैं ने तो पहले दिन ही कहा था ऐस परायी इटा में घर नहीं बसत। पर उस का तो जिज जो आ गया था बुडिया की कौन सुनता था। ले अब तुझ में क्या छिपा है सारा गाँव जानता है, यह हिन्दुजा की बेटी थी। जय गाँव से हिंदू भागन लगे, यह लडका दूमे कही से ले आया। अल्ला जानता है मैं तो पहले दिन में ही कह रही हूँ बटियाँ-बहूएँ मर के हाता हैं। अलादित्ता नाहक इस पाप का गठरी उठा लाया है। न जाने कौन-से दिन यह पाप मिर से उतार सकेंगे।’

“अच्छा, यह बात थी ! तभी, अम्मा, वह पेरी हुई लगती थी। पर भागकर

जायेगी कहा ? यहाँ उस का कोई आमपास का तो ह नही । कौआ स बचगी चीला म फेंसेगी । म समयतो हूँ वह किसी कुएँ-न्वाइ म गिर गिरा पडी ह, चाहे वह जानकर मरी है, या फिर उस की ऐसे ही आपी हुई थी ।

हम पर से कलक ता हटा । पर लडके ने मेरी जान खा रखी ह । कहता ह तू अन्धी थी जो तुझे पता न लगा वह काई चिडिया का बच्चा ता नही ह जा किसी ने उसे अपना जेब में डाल लिया ।

“पर अम्मा वह पहले भी कभी घर क बाहर अकेली जाती थी ?

कहा । उमे क्या मरों के पास जाना था । पहले पहले ता जब मैं लटक को रोटी देने जाती थी ता बाहर से ताला लगा जाता थी । फिर लन्के न भा कहा और मैं ने भी साचा कि यह बेचारा जायेगा कहाँ । जा किसी क सिर पर आठा पहर सवार रहो ता उस का जी घर म भी नही लगेगा । वह दोपहर का हा घडा दश घडी बस घर में अकेली रहती थी । कल भी मैं राटी दकर आयी हूँ अच्छी भली महा बठी हुई थी । मोठ डालकर रात का बिचडी बनायी वधुए का साग पतीले में पकाया रोटियाँ सेंकी हम मा दटा का खिलायी खुद खायी फिर मेरी चारपाई भीतर डाल गयी वह अम्मा आँगन में अब टण्ड हो गयी ह लडके ने जरा दाए पी फिर म ता ना गयी । फिर पता नही कसी होना किम समय हो गयी । सबर उठी हू तो मैं ने आवात्रे दी पर कोई हो तो बोले

“मैं ने कहा कुएँ-जाहड दिखवाये ह या नही ? वह किमी क माय निकल जानेवाली ता दिवायी नही देता थी ।’

जाना भी किस क साथ था । बुडिया ने अपन सिर का अपने घुटना पर रख लिया ।

बडे अचरज की बात ह । मास की बाटी ता थी नही कि कुत्ते बिरली न उम गेह में डाल लिया । गाव तो तुम ने हुँडवा लिया हागा ?

“हाँ सवेरे मे गाव का एक एक आदमी यहा आ चुका ह । ठोपा न चप्पा चप्पा भूमि छान मारी ह । उस समय ता मेरा अल्लाहिता और गाव क कुछ लटक कुएँ पर गये हुए ह । जा कही मरी हुई की लाश भी मिल जाय ता लडके के मन में यह तो न रह जायेगा कि न जाने कहा गयी । लटक का जान सलामत रहे, औरतें और बहुतेरी

जब तक पूरो क मुख पर हय और शोक क भाव उतरत चत रहे थ अब दा-तीन आदमा बाहर से आ गय ।

हम तो सारे कुएँ-न्वाई देख आय ह उस की ता कही हडडी-पसली भी नही मिलती । कहकर तीना आगन में पडा खाटा पर बठ गये ।

“खाये अपने मा-बाप को । तू न क्या अपनी जान का राग लगा लिया ह । उठा लिया हागा भूत प्रेता ने । बुडिया ने अल्लाहिता की जार मुन्व कर के बडे प्यार स

कहा। पूरो ने ममझ लिया, यही अल्लादित्ता है।

पूरो का लाजा का उतरा हुआ चेहरा याद आ गया, और उसे लगा कि माना लाजा का मुँह उस चिटिया के पिंजर की भाँति है जो इस गलीज चील के पंजों में कई दिन तक फँसी रही हो।

“मेरी ममझ में तो वह रात विरात उठकर बाहर गयी है, और उसे कोई जानवर उठा ले गया है।” उन में से एक ने अल्लादित्ता की आर मुँह कर के कहा।

“यह तो कोई गोदड़, लामड़ी भले ही फिरता हो, और इस गाँव के पाम कौन-सा जानवर आया होगा! हमारे ने पाम घेरे हुए कहा।

“हमारी तरफ से खोर ले गये ले जाये। तू उठकर दा कौर ता मुँह में टाल। बुढिया ने अपने पुत्र का दिलामा देने के लिए कहा और उठकर रोटी टुकड़े का प्रयत्न करने लगी।

‘अच्छा, अम्मा! अल्ला तेर जी का शान्ति द, मैं चलती हूँ।’ पूरो ने खेसा का बेंधी-बेंधाई गठरी सिर पर उठा ली।

‘मैं ने कहा तू कौन है? अल्लादित्ता ने पूरा का आर घूरकर देखते हुए कहा। अब तक पूरो का गाँव का हा कोई स्त्रा समझते हुए अल्लादित्ता ने ध्यान नहीं लिया था, पर खेसा की गठरी उठाते हुए उसे देखकर अल्लादित्ता ने उस से धुडक-कर पूछा।

“यह कौन है। खेम बेचती है और कौन है। पास से ही बुढिया ने उत्तर दिया।

‘मैं ने पहले तो तुझे कभी नहीं देखा गाँव में?’ अल्लादित्ता ने मदह-पवक पूछा।

“कितने दिना मैं ता बेचारी यहाँ बेचता फिरती हूँ।” बुढिया ने फिर लड़के का डाँटते हुए कहा।

“पर तू किस गाँव में आयी है? अल्लादित्ता ने पूरा का आर मुख कर के कहा।

‘दा वाला मेरी गान्नी में है गाँव में घूम घूमकर दा-चार पैस कमा लेता हूँ। पूरो का मन कर रहा था कि किसी प्रकार पक लगाकर वहाँ से उड़ जाये। क्या वह गाँव में रह गयी? रात का वह भी साथ चला जाता तो कौन उस का पना लगा सकता था।

पर तू हिंदू है कि मुसलमान?’ अल्लादित्ता का जब अभी तक दूर नहीं हुआ था। उस के गाना साथ मुसकराने लगे।

‘क्या भाई क्या मलाह है? क्या अब इसे घर में डालागे?’ अल्लादित्ता का जब साथी ने उसे चुटका काटते हुए कहा।

क्या कहने हो, भाई! मैं यहाँ हिन्दू वहाँ से आयी? और पूरा ने परे पड़ी

हुई जूती का अपने पाँव में अनाया और गठरी सँभालकर बाहर जाने लगा ।

‘हिन्दू का नाम उम के माथे पर तो लिखा हुआ नहीं होता । अरलादिता फिर जोर से कहा ।

“तरा तो भाई गव दूर ही नहीं होता यह दस मेरा नाम हमारा ह । और पूरा ने दलहीज में खड़े-बड़ अपना बायो बाह पर गुदा हुआ नाम दिखा दिया ।

‘जा, भाई जा इस का तो सिर फिरा हुआ ह ।’ बुढ़िया ने कहा ।

मुझे अगर कुछ पता चला तो मैं खुद जाकर उताऊंगी, अम्मा ! कहते-कहते पूरा तब ब्रह्मा स गंगी म हा ली । बावगीवाली काठरी में पूरा न अपने दाना बाल ठाड़े हुए थे । जावेद अब मयाना हो चला था वह छोटे लड़के को घुल्लाये रखता था ।

पूरा ने वह रात घटिया गिन गिनकर काटी । दूसर दिन सबेरे रणाद राजा व सक्कडआली अपने घर छाड़कर पूरा के पास लौटकर जानेवाला था । वही रात रत्तोवा में पूरा का अन्तिम रात था । पूरा तारे गिनती दाना बालका का लेकर चारपाई प पड रही ।

आज रत्तोवाल में पूरा की सारी मनाकामनाएँ पूरी हो गयी थी । पूरा व पिछला वार रत्तोवाल जाने का ध्यान आया खेता में बगारिया में अपना धूमना था आया । फिर अन्तिम गिन रामचन्द्र का खेत में मिलना याद आया पिछला वार पूरा ने रामचन्द्र के खेत देखे थे इस वार पूरा ने रामचन्द्र का वह घर वह आगन भी देख लिया जिसे देखने की लालसा उसे वर्षों से थी । पूरा मोचन लगी इस घर म उम व घर की बहू बनकर आना था इस घर में उस की बहन व्याह कर आयी । इस घर उस का भाई बरात लेकर आया पर उम ने इस घर का मुँह कब दखा जब कि इस घर में घरवाला की छाया भा शेष न रही । इस घर व जवडा में उस ने केवल राजा का पिंजर देखा गुक्र ह लाजो की बंद अब खत्म हो गया थी । पूरा फिर सोचने लगी आज ता वह स्वय ही उम घर के पिंजर म फँसी हुई थी हमदा नाम ने उस बचा लिया ।

पता नहीं किम समय पूरा की आस लगी और रात का जघकार धीरे धीरे सबेरा बन गया ।

सक्कडआली मे

आने-जाने का पूरा इक्ता कर व रणाद रत्तोवाल आया और पूरा का लेकर सक्कडआली लौट गया ।

लाजो की दोना बड़ी-बड़ी आख मानो बंद दरवाजे पर ही लगी हुई था, उस ने पूरा के पहुँचने के पहले ही खडाक स बंद दरवाजा का कुण्ण माल लिया । रसी

ने एक ताला बाहर स लगा लिया था जिस स गाव के लोगो को शक न पड़े । ड्योटी का दरवाजा अंदर से बन्द कर के पूरा, लाजो और रशीद अपने मकान का सब स पिठला कोठरी म एक बार ता ऐस बठ गये माना शेख स ठरे हुए हिरना की डार का कोई नयी खाह मिल गयी हा ।

लाजा और पूरा—दाना का लगा मानो वे साथ खेला हो साथ पत्नी हो दा । एक दूसर की आत्मा हा, पर समय के फेर के कारण वर्षों के लिए बिछुट गयी हा और आज किसी तूफान के बाद, किसी आधी के बाद दोना फिर अपनेआप मिल गयी हा, वर्षों के विरह और जीवन की कहानिया दोना क हाठा पर जमकर रह गयी हा । दाना ही अपनी-अपनी कहने को व्याकुल थी दाना ही एक दूसरे का सुनने का व्याकुल थी ।

खाने-पीने स निबटते निबटते दिन अच्छी तरह चढ गया था । रशीद यह बात समझता था कि दाना का अकेल में बठकर एक दूसर स अपन दिल की कह-सुन लेनी चाहिए । वास्तव म आरम्भ स ही रशीद दिल का छोटा नही था । वह साबता था, पूरो के साथ उस के कुछ लेने देने क हिसाब थे, नही ता वह इतना बुरा आदमी नही था कि रास्ता चलती किसी का गरीफ बहन-बेटी का अवगदस्ती अपने घर म डाल लेता । पूरो को अपना स्त्री बना लेने के बाद रशीद ने कभी जास उठाकर किसी की बहन-बेटी को नही दया था ।

दोना बालका को लिटाकर दाना जनी भातरवाली कोठरी में खाट टाककर लेट रही । रशीद उस दिन साथ क बरामद में साया ।

‘रतोवाल का काफिला इसी गाव म गुजरा था ।’ पूरा ने ही बात चलायी ।

‘तू ने दखा था ?’ लाजो और पूरा अभी तक मिलकर नही बठ सकी थी । लाजो का कुछ पता न था कि पूरा ने उस क्या जोर कमे हूँ निवाला ।

‘मैं तेरे भाई स मिला थी, तभी ता मुझे तेरा पता लगा ।

‘ह ?

‘हा । जोर काफिले क दिनवाला रामचंद का मुख पूरा की आखा के सामन आ गया ।

तू न उम कमे पहचाना ? तू ने ता उम कभी दखा भी न था ।’ लाजा के मन म अनेक बात उठ रही थी कमे पूरो की उस क भाई के साथ मगाई हुई थी, कसे उस के भाई का विवाह रचा जानेवाग था, कस फिर पूरा एकाएक गुम हा गयी थी फिर पूरा का छाटी बहन उम के भाई को व्याही गयी थी ।

‘मैं ने उम एक बार पहल भी दखा था । पूरो ने रतोवाल क खेतावाली बात लाजो का सुनायी । पूरा न यह भी बताया कि उम समय तक उम यह पता न था कि रामचंद उस का बहनंद बन चुका ह ।

‘मुने कभा भी काई घर-खवर नही मिली । बवल जिम दिन काफिला इधर स गुजरा भर हुआ का भी लाग याद करते ह, उन के नाम से श्राद्ध खिलाते ह, कभी

पिनर

कभी घर में कोई मेरा नाम भी ले लेता होगा ? पूरो का गला भर आया ।

लाजा ने उसे बताया कि उस का पिता दा माल हुआ मर चुका था उस की माँ बड़ बार उस का नाम ल-लेकर रो लेती थी ।

मेरी मा के करम बेटी भी उस की जीते जा मर गयी और बहू भी ।” पूरा ने कहा, और पूरा और लाजो नानो रोने लगी ।

बूचड़ाने का गाया की भाँति नाना अपनी चारपाइया की पट्टियाँ स लगी पड़ी रही ।

“तू जब बहा जायेगी, मेरी माँ मैं मिट्टेगी ता उस से कहना कि एक बार मुझ जीती का मुह तो देख ल पूरो ने और भा गकर कहा ।

‘मैं मैं बहा कहीं जाऊँगा

‘तू अपने घर जायेगी, अपने पति के पाम अपने भाई के पाम ।

मैं ता जीती मर चुकी हूँ, मुझे अब कौन बचल करगा ।’

नही, लाजो मैं अपने जीते यह अयाय न होने देंगी । तू अपन घर जायेगी । तेरा इस में क्या दोष ह ?

‘पर तेरा ही क्या दाप था ? तुझे आज तक घरवाला ने न बुलाया ।’

‘मेरी बात और थी, लाजो ।

‘तरी बात जीर कैसे था ? तू क्या अपनी मरजो स आया थी ? तू भी तो

‘हाँ लाजा ! पर तब मैं अकली थी । मेर माँ-बाप का माहम न हुआ कि बे नेगा की बातें सुन सकें और उन्हाने अपनी ममता को अपने से अलग तोडकर फेंक दिया । अब किसी एक को नही, सब के कलेजे पर लगा ह ।’

नहा, पूरो ! मेरी किस्मत अच्छी होती तो पहले ही मेरे माथ यह अत्याचार न हाता । मैं जानती हूँ मुझे कोई लेने नही आयेगा ।

मैं कहता हूँ तेरे भाइ का पत्र जरूर आयेगा । हम तेरा पता देंगे और वे तुझे लेने जरूर आयेंगे । अच्छा यह ता बता, मेरा भाई दखने में क्या लगता ह ? पूरो ने लगाव स पूछा ।

लाजो को अपने पति का ध्यान आ गया । वह बने उस का मुख देख सकेगी वह कस घरवालों के सामने पड सकेगी—लाजा साचने लगा । पर उस के दिल में माना विश्वास था कि उस लेने कोई नही आयेगा बमे मन के लड्डू वह चाहे जितने मन में फाड ले ।

‘नही लाजा ! कोई न कोई तुझे लेने जरूर आयगा । आज किसी को किसी से शिकायत नही सब अपनी बेठियो बहना को ल जा रहे ह । रसीद कहता है उधर से भी दूँड-दूँडकर लोग अपनी स्त्रिया को वापस ला रहे ह बड्या के तो बच्चे भी हा गये हैं ।’ और फिर दाना को दोनों गुमगुम होकर स्त्रिया की इस विवशता पर विचार करने लगी ।

लाजो साचने लगी, आज तक उस के घर कोई बाल-बच्चा नहीं हुआ था, पता नहीं उस में क्या दोष था। आज यहा दाप उसे फला, नहीं तो न जाने उस की क्या दुदशा होती।

“जहा वे एक के लिए राते ह, अब दा के लिए रा लेंगे। म कही नहीं जाऊंगी, पूरा। मैं क्या मुँह लेकर जाऊँगी। मैं तरे बालका की टहल कर के रोटा खा लूँगा।”

“ऐसे क्यों कहती ह, लाजा। मेरे घावा पर नमक मत छिटक। यह तेरा अपना घर ह। पर लाजो। वे तुझे जम्बर ले जायेंगे। मैं सारा दुनिया का वास्ता दकर उन्हें मना लूँगी।

पूरो ने लाजा का अपनी बाहा म कस लिया।

“तू अपने घर मजे में है, पूरा ?

“रशीद का पीठ-पीछा ह। पहला गुनाह जो उस ने किया सा ता किया, पर उस के बाद उस ने मुझे कभी बुरा भला नहीं कहा। वह मेरे साथ न होना ता मैं तुझे खोजकर कस ले आती ?

‘मुझे ले आने म उस ने अपनी जान बग जाखिम में डाली। जो कही उस रागस का पता चल जाता ता वह मेरी हड्डिया का फूँककर ही पानी पीता ’

‘वे कहीं फूँकने ह, बाबली। वे लाग ता गाट देते ह।’

‘कुछ सही पर पूरा कही वह इस गाव का पता तो नहीं लगा लेगा ? मेरा ता जो डरता है, कही तुम्हारा बसा हुआ घर न उजाड दे।’

“अभी तक ता उन्हें तेरी पगछाइ का भी पता नहीं लगा है। और पूरा ने लाजो के खो जाने के बाद दुनिया जोर दुनिया क बेटे से अपने मिलने की सारी बात कह सुनायी।

“पहले भी इसा पिछली कोठरी म कई दिन तक मैं ने एक हिंदू लटकी छिया कर रखी थी। किमी का उस का हुवा तक न लगने दा। फिर उस दिन मैं उसे बाफिले में छोड आयी। तुझे भी यहा भातर चोरी-चोरी रखूँगी ताकि गाँव में कही कुछ बात न उड जाय। जिस दिन स्वतन्त्र आ गया तुझे चुपके म ले जाकर लाहौर छाड आयेंगे। किमा को कानाकान खबर भी न हागी।

‘और जा उन का पत्र न आया ’

“मेरा दिल गवाही देता ह लाजो ! तेरा भाई अवश्य पत्र डालेगा।’

हिचकोले

दिन पर दिन बातन गय, भार हाता, साँझ हाता। न लाजा की खबर घर के बाहर निबली, न लाजा क घरवाला की कोई खर-खबर आया। कम पूरा और लाजा हर

घड़ी माय रहता थी। रात को जब उन की आँखा म नोद घुल जाता, दोना की आँखा में सपने ही सपने बिखर जाने थे। मुँह अँधेरे उठकर व बातें करने लगती, सपना के गडुन-अपगडुन विचारती। कभी उन का मन चक्कर में पड़ जाता, कभी उन का मन स्थिर हो जाता। रितनी ही बार राजा बाग़वा की भाँति चूल्हे में से कायला निकालकर धरती पर लकीरें मीचने बैठ जाती। कभी गडुन गुम निकलता कभी अगुम। कभी बातें करते राजा की आँखा से आँसुआ की धाराएँ बह निकलती कभी वह पूरा के बच्चा के माथ खेल्कर अपना जी बहला लेती। वम राजा के मन म पाय निराशाजनक बातें ही उठा करती थी। उमे आगा नहीं था कि कभी कोई उम की खबर लेगा। पर पूरे के मन का अदर स न जाने कौन बग़ाव दता था कि किसी दिन चुपके स कोई आ पहुँचेगा किमी दिन अचानक ही कोई खत-पत्र आ जायगा राजा के दिन फिर जायेंगे। पूरा ने अपना आर से राजो का आतिथ्य-मत्कार करने म कोई कसर न उठा रखी थी। वह माचती थी कि राजा थोड़े दिना के लिए धराहर के रूप में उस के पास ह फिर शायद वह उम से कभी न मिल सकेगी, उसे कभी न देख सकेगी मग़ो के मुख भी उस समय बवल राजो का मुनाक़त म ही दीख पड़ते थे। कौन उस के घर रहने के लिए आयेगा कौन उम मिलने के लिए आयगा। उम के अपन सम्बन्धिया में स राजा हा उस के घर की प्रथम तथा अन्तिम अतिथि थी।

दिन के प्रकाश में राजो ने कभी ट्यागी न लाँघी थी। रात के अन्धकार ने राजो का भेद बड़े ही ध्यान से मुरझित रखा था। पर गाँव क शकिये ने तीन पसवाला बाड भी उम के आँगन में न फका।

राजा और पूरा के मुम पर चिन्ता की रखाएँ दीखने लगी। राजो के मन को केवल एक यह मन्तोप अवश्य था कि पूरा और रशीद ने कभी उसे जी छोटा करने न दिया। पर सारा मारा दिन छिमे हुए दुबके हुए राजा साचता कि पहाड जैसी उमर उस के सिर पर लटक रही है, वब इम प्रतीक्षा के दिन पूर हाने।

पूरा का किमा के यहाँ बसुत आना जाना नहा था। राजो पिछली कोठरी में ही उठती-बठती थी। दोपहर का कभी-कभी दाना जना बाहर का कुण्डा लगाकर चरखा कातने बैठ जाती थी। दिन बीत जाता था, पर साचें स्वम हाने म नहीं आती थी।

जाडा बीत चुका था। पागुन भी बीतने का था। पानी म ठण्ड न रही थी। एक तिन ढलती दोपहरी क समय जब रशीद खोन्ती लाँघकर घर आया तो राजो और पूरा को देखते ही उस की आँखें डबडबा गयी।

सहमी हुई दानो उस के पास आयी। कई मिनट तक वह कुछ न बाल सका। राजो को लग रहा था, कोई उस के कलेजे को बाहर खींच रहा ह। उसे एक यही डर था कि कही रस्तावाल की बुनिया और उस के बेटे का राजो का पता लग गया ह वे उसे जबरदस्ती घमोटकर ले जायेंगे पता नहीं पूरा पर क्या बीते।

रशीद चारपाई की पट्टी पर बैठ गया, कुरते की बाह म दानो आँखें पाछकर

उम ने लाजो की पीठ पर प्यार से थपकी दी। उस के हाया म वही प्रम था जो एक बुजुग पिता का लडकी का समुराल भेजते समय होता ह। रशीद का दिल भर आया था। उस ने अपने मन का स्थिर कर क कहा, “आज रामचंद आया ह।”

‘यहा?’ लाजो और पूरा एक साथ बाल उठी।

हा, माथ म हिंदुस्तान पुलिस के कुछ सिपाही ह, कुछ पाकिस्तान के। लोग इमा तरह गावा और शहरो म खोयी हुई लडकिया को ढूँढ रहे ह। रामचंद मुझे अकेले में भी मिला था।” रशीद कह रहा था।

“सचमुच मुझे ठेने जाये ह?’ लाजा के मुख स अकस्मान ही निक्कल गया, पर फिर वह स्वय ही लज्जित-सी हो गयी।

‘पगली बही की, और वह यहाँ क्या करने आये ह?’ रशीद ने कहा।

पूरा अभी तक चुप बैठी थी। उस अपने अन्तस्तल में एक अपूव प्रसन्नता का अनुभव हा रहा था, क्योंकि उम का विश्वास सत्य सिद्ध हुआ था। वह जानती थी रामचंद आयेगा वह जानता थी उस की भाभी अपने ठिकाने पहुच जायेगी। लाजा तो व्यथ हा दिल हार बैठी थी। जिन दिन रशीद भी निराश-सा हो जाता था, पूरा के मन में मानो कोई गवाही दता था कि रामचंद अवश्य आयेगा। सो आज वह दिन आ गया था। रामचंद सचमुच ही आ गया था।

“क्या अकेला आया ह?” लाजो न पूछा।

रशीद समझ गया कि लाजा के इस प्रश्न का क्या अर्थ ह। बोला “हा, अभी ता अकेला ही आया ह। पर नू चि ता न कर। तेर घर के सब के सब तुझे सिर-आखा पर बिठलाकर ले जायगे।

लाजो के मन का कुछ सन्ताप हुआ।

“तेरा नाम सुनकर तेरी खबर सुनकर रामचंद रोता ही रहा, उस क आसू किसी तरह धमते न थे। उसे देखता था तो मेरा जी भी भर भर आता था। रशीद की आँखें फिर भर आयी। लाजा और पूरा राने लगी।

“मैं ने उन्हें अच्छा तरह समझा-बुझा दिया है। आज तुझे यहा पर इसी तरह दे देने से सारे गाव को खबर हो जाती। कौन जाने बात रत्तावाल तक भी पहुच जाती। मैं ने उन से कहा ह तुम वापस लाहौर चलो, मैं लडकी को लेकर लाहौर पहुँचता हूँ, वहा तुम्हारे हवाक कर दूँगा।”

यह अच्छा किया। पूरो ने कहा।

‘हम वहाँ आज मे पाचवें दिन पहुँचेंगे। तब तक वह अमृतसर स पूरा के भाई को भी बुला लेंगे। म ने माँचा, एक बार पूरा भी अपने भाई स मिल लेगा। रशीद लाजा की पीठ पर प्यार म हाथ फेरता हुआ कह रहा था।

पूरा की बिधी हुई फ्लाई निकल गयी। लाजा ने पूरो की गानी में सिर रखकर उमे अपने से चिपटा लिया। दोना एक-दूसरे में खोयी हुई था। दाना एक-दूसरे के दुख

की साक्षादार हो गयी थी, दोनों के आँसू आपस में मिल गये थे ।

लाहौर का रास्ता मुश्किल से काई डेढ़ दिन का था । यहाँ स चलन में अभी पूरे तीन दिन रहते थे ।

अगले दिन पूरो ने बेमन मँगवाया, झटका दिया हुआ भैंस का मक्खन निकाला, बादाम और मेवा डालकर पूरो दिन भर लड्डू बनाती रही । जस लडकिया को समुराल विदा करते समय दिया जाता है पूरो ने एक रसमी जोड़ा निकाला । राजा का वह बार बार अपने गले स लगाती बार-बार उस स मिलकर रोती ।

तीसरे दिन दाना वालका का साथ लेकर पूरो राजो और ग्नीद मुँह-अँधरे ही गाव से निकलकर रलगाडी पर सवार हो गये ।

पिछले चार दिना से पूरा के हृदय में अनेक प्रकार के विचार उठते रहे थे, उस की रातें सोचते-सोचते बीती थी । पूरो अपने मन में निश्चय करती मैं राजो स कहूँगी, मेरी माँ स जाकर यह कहना मेरी माँ को जाकर यह बताना उस से कहना एक बार मुझ जीती का मुँह तो देख ले ' सोचत-सोचत पूरो का गला भर आता, सोचते-साचते पूरा का कहने के लिए बहुत कुछ सूझता सोचते-माचते फिर पूरा के मुँह से एक बात भी न निकलती थी ।

राजो का अपने भाई और अपने पति का मुख देखना बड़ ही अचरज की बात जान पड़ती थी ऐसी ही जम कोई मरकर अगली दुनिया में बिछुड हुए लामा से मिलने की आशा रखता हो । यद्यपि राजो को अपने घरवालो स बिछुड हुए पाच छह महीने ही हुए थे, उस को लगता था कि वह एक बार मरकर इस धरती पर जीवित हा गयी है ।

सारे रास्ते होना का मन हिचकोले खाता रहा ।

एक घडी

पुलिस के पहरे म जब वे मिले राजो से अपनी पल्लवें उठाये न उठनी थी । पूरा ने अपने भाई के मुख की आर देखा । मिलन की इस एक घडी के एक आर चिरकाल का बिछोह था मिलन का इस घडी के दूसरी ओर असीम बिछाह दृष्टिगावर हो रहा था । किसी के भा आसू थमने में न आते थे ।

मरद मानसा का जिरा भी टूट गया था । होना का जा यह पहाड उन पर टूट पडा था उस क आगे किसी का किसी से कुछ पूछना न रह गया था । रो रोकर उन्होंने अपने हाथ भिगा लिये रो राकर उन्होंने अपन कपडे भिगो लिये ।

' सुनना जी ' कभी भूल से भी राजो का निरादर न करना । सब स पहल पूरो वाली ।

लाजो के पति का मुँह नीचा था, लाजो के भाई का मुँह नीचा था ।

‘पूरो हमें गज्जित न कर ।’ लाजा के भाई ने कहा ।

लाजा का पति कुठ न बोल सका । गायद वह कुछ सुन भी न सका था । आज उम ने केवल अपनी खोयी हुई पत्नी ही नहीं दखी थी बल्कि अपने हाथ सँभालने से पहले की खोयी हुई अपनी बहन का दवा था । वर्षों से उम के हृदय में एक आग सुलगती रही थी जिस की एक चिनगारी उस ने रशीद के खत में लगा दी थी जिस से सब कुछ जलकर राख हो गया था । अनेक वर्षों से वह उम गजकुमारी की कहानी के मन्वच में मोचता रहा था, जिसे एक दत्त चुराकर ले गया था और फिर पूव देग का एक राजकुमार उसे अपने जादू के तीरा के बल से छुटाकर लाया था । छुटपन में उम ने कई बार साधु-मन्ता से जादू के वह तीर मागे थे । बड़े हाँसे पर पूरो के ध्यान से वह ‘याकुल’ हो उठता था । आज वर्षों की खापी हुई पूरा उम की आँखा के सम्मुख बठी थी । इस घड़ी वह भूल गया था कि रशीद ने उस की पता को बचाया है, इस घड़ी उमे केवल यही याद था कि रशीद उस की बहन को उठाकर भाग गया था ।

पुलिस की लारी तयार हो गयी । हिन्दुस्तानी पुलिस के सिपाहियों ने आवाज दी, ‘उधर जानेवाले हिंदू एक ओर हो जायें, लारा तयार है ।’

रामचंद ने रशीद का बार-बार अपने गले में लगाया और बार-बार कहा, ‘भाई तेरी बड़ी कृपा है, मैं तेरा उपकार कभी नहीं भूलूँगा ।’ रशीद के मुख पर यह उपकार करने का प्रसन्नता ता थी, पर उम की आँखें लाजो का बचाने के बाद भी लज्जित थी । उस पूरो को उठाकर भगा लाना याद आ रहा था । फिर भी उसे लग रहा था कि उम के सिर पर चढ़ा हुआ ऋण कुछ न कुछ कम हो रहा था ।

आवाज फिर आयी ‘उधर जानेवाले हिंदू एक ओर को हो जायें ।’

पूरो ने वह रेगमी जाड़ा और बेसन के लड्डूआ की गठरी लाजा के हाथ में थमा दी, लाजो का कमकर अपने गले में लगाया और फिर अपने भाई से अन्तिम बार मिलते हुए उम के गले से लिपट गयी ।

‘पूरा ।’ पूरो का भाई केवल इतना ही कह सका और उम ने पूरो की बाँह को कसकर पकड़ लिया ।

“मेरी बात सुन, इस समय ’ पूरा के भाई ने साहस बर के कहा । पूरो अपने भाई की बात समझ गया । पूरा का मन भी एक बार रीम उत्पन्न हुई जो मैं इस समय कह दूँ मैं एक हिंदू स्त्री हूँ तो मुझे अवश्य ही वह इन सब के माय लारी में बिठाकर ले जायेंगे । मैं भा लौट सकती हूँ, मैं भी लाजो की भाँति दश की हज़ारा गडकिया की भाँति

पूरा की आँखा में रोवे हुए आँसू उभर आये । उम ने धीरे से अपने भाई के हाथ में अपनी बाँह छुड़ा ली और परे खड़े हुए रशीद के पास जाकर अपने लड्डूके को उठाकर अपने गले से लगा लिया ।

न बोली ।

करीब आधे घण्टे के बाद कुमार ने मेज से सिर उठाया । जब वह बहुत थक जाता तो उस के माथे पर एक नाड़ी उभर आती । इस नाड़ी का कसाव उस की आँखें भी महसूस करती । उस ने एक मिनट आँखें बंद की, और फिर माथे की नाड़ी को अपनी पोरो से सहलाने हुए उस ने अलका की ओर देखा, “काँफा का एक प्याला मिलेगा ?

अलका ने स्टूल पर रखे हुए प्याले को उठाया और कमरे से सटे हुए छोटे बरामदे में चली गयी । रसोई कुछ दूर पड़ती थी, इसलिए कुमार ने चाय बनाने का सामान बरामदे में रख छोड़ा था । चूल्हे पर पानी रखकर अलका ने प्याले की ठण्ठा काफी का गिरा दिया और प्याला घोने लगी ।

गरम काफी का प्याला लेकर अलका जब लौटकर कमरे में आयी तो कुमार मेज पर के कागज को ध्यान से देख रहा था ।

‘आज इतनी खुशबू कहाँ से आ रही है ?’ कुमार ने इस तरह पूछा जब वह खुशबू को नज़र गड़ाकर ढूँढ़ रहा हो ।

अलका ने भी तसवीर की आर गरदन घुमायी, और फिर तसवीर की लकड़ी के बाला में टँगे हुए फूल की ओर देखती हुई कहने लगी, ‘इन फूलों से आ रही होगी ।’

अलका के हाथ से काफी का प्याला पकड़ते हुए कुमार खिलखिलाकर हँस पड़ा, ‘अभी मैंने अपना होश इतना नहीं खोया कि कागज पर बनाये हुए फूलों से मुझे खुशबू आने लगे ।’

अलका चुप साधे रही । उस ने दीवान के पाये के पाम पड़ी हुई चौकी की ओर देखा जसे वह रही है कि इतना होना जरूर जाता रहा है कि कमरे में पड़े हुए ताजे फूल अभी तक निखाई नहीं दिये थे । ये फूल अलका ने सुबह आने ही कमरे में लगा दिये थे ।

ओह ” कुमार ने होश में होने का दावा वापस ले लिया और काफी का गरम घूँट भरते हुए कहने लगा, ‘पर यह आलस नहीं डालनी चाहिए थी ।’

‘कसी आदत ?’

‘काफी की आलस फूलों की आदत

और ?’

‘पैसे की आदत शहरों की आलस औरत की आलस ”

‘और अपने आप की आदत ?’

“क्या मतलब ?

‘अपने-आप की आलस भाँ नहीं डालनी चाहिए । कभी किसी माइनेल ऐंजेलो को माइनेल ऐंजेलो रहना चाहिए और कभी उसे बाज़ार का एक काने में बठा हुआ हलवाई भी बन जाना चाहिए । कभी नमक-तेल बेचनेवाला बनना और कभी पान

बीड़ी बेचनेवाला ”

कुमार हँस दिया, “तुम समझ नहीं पाया हो अलका ! एक अपने-आप की आदत भर के लिए बाकी कोई आदत नहीं डालनी चाहिए । मैं सोचता हूँ कि अपने-आप की पूरी आदत केवल तभी पड़ सकती है जब आदमी बाकी आदतों से मुक्त हो जाये ।”

“यह मैं मानती हूँ । पर मेरे विचार में ग़ाहरत और औरत में बहुत फ़क हाता है ।

“किसी आदत और आदत में कोई अन्तर नहीं हाता मैं एक बार ”

“चुप क्यों हो रहे ?”

“तुम्हारी जगह अगर कोई दूसरी लड़की हाती तो मैं शायद चुप रहता । किसी को भी कुछ बताने की मुझे कभी जरूरत नहीं पड़ी । जरूरत अब भी कोई नहीं । पर शायद बताने में कुछ हरज नहीं । तुम मुझे ग़लत समझोगी ।”

“मुझे भी खुद पर भरोसा है ।”

“मैं यह बताने चला था कि एक बार मुझ में ऐसी भूख जगी कि मैं कई दिन सो न सका । वह सिर्फ जिस्म की भूख थी, एक औरत के जिस्म की भूख । पर मैं किसी भी औरत के साथ अपनी जिंदगी के साल बाँधने के लिए तैयार न था, कभी भी तैयार नहीं हो सकता । इसलिए कुछ दिन मैं ऐसी औरत के पास जाता रहा जो रोज़ के बास रुपये लेता थी, और मेरी स्तब्धता का कभी नहीं मागतो थी ।”

अलका ने कुछ नहीं कहा । सिर्फ नज़र गड़ाकर उस ने कुमार के चेहरे का ज़ार देखा ।

“तुम मेरे मन की बात समझी हो क्या ?”

“हाँ ।

“या तुम सोचती हो कि मैं एक अच्छा आदमी नहीं हूँ ?”

“नहीं, मैं यह नहीं साचती ।

“पर तुम कुछ साच रही हो ”

“हाँ ।”

‘क्या ?’

“ कि मैं यह औरत हाती जिस के पास आप राज बीस रुपये देकर जाया करते थे ।”

“अलका ।”

कुमार के हाथ में पकड़ा हुआ बाँकी का प्यान्ग बाँप गया । पर अलका उसी तरह निष्कम्प खड़ी रहा, जिस तरह वह पहले खड़ी थी । कुमार धनराकर दीवान पर बैठ गया ।

‘ मैं कह रही था कि ग़ाहरत और औरत में बड़ा फ़क हाता है ।’

‘ मैं समझा नहीं ।’

‘शोहरत किमा का अपने आप का समझने में मदद नहीं करती, और न हा पसा करता है। पर औरत किसी का अपने आप का समझने में उसी तरह मदद करता ह, जिस तरह किसी की कला उस की मदद करती ह।

‘कन व्यक्ति का ही एक अंग हाती ह—जमे बाजू या हाथ-पाव।’

‘मुहब्बत भी अपना ही एक अंग हाती ह। अपनी आखा की तरह या अपनी जवान की तरह। शायद इस से भी अधिक। ये आखें नहीं, आँखा की नजर होती ह। नजर भी नहीं—एक नुक्ता नजर हाता ह

‘मेरा नुक्ता-नजर बिल्कुल अलग ह अलका।’

‘वह मैं जानती हूँ।

‘यह तुम्हारे नुक्ता-नजर से कभी मल नहीं खा सकता।’

शायद।

‘शायद नहीं यह सच ह।’

‘मैं ने यह नहीं कहा कि यह कभी मल खा जाये’

‘फिर’

‘मैं ने कुछ नहीं कहा।’

पर तुम ने यह क्या कहा कि तुम’

“कि मैं वह औरत हाती जिस क पास आप बास रुपये राज देकर जाया करते थ?’

‘तुम ने यह क्या कहा?’

‘रुपये कमाने के लिए

इस बार अलका हम पड़ी पर कुमार की हसी उम के गले म ही सक्पवा गयी।

‘क्या, यह ठीक नहीं? बीस रुपये राज के कम ह क्या?’

‘तुम-मी गम्भीर टडकी’

‘मैं सचमुच ही बड़ी गम्भीर हूँ।

‘हा अपने काम म तो सच ही

‘मैं जिदगी में भी बसी ही हू।

‘फिर तुम ने यह बात कस कही।

‘इसलिए कि मैं बहुत गम्भीर हू।

‘वह गम्भीर बात ह?’

‘इतनी कि इस स अधिक गम्भीर बात बाई और नहीं हा सकती।’

‘मैं इसे या नहीं समझ पाऊंगा अलका। नहीं तो म गिल में दुखी हाता रहूंगा।’

फिर भूल जाइए कि मैं ने यह बात कही थी।”

"तुम भूल सकोगी इस बात को ?"

"मैं कभी याद नहीं दिलाऊँगी।"

"हम राज धम ही काम करेंगे जम पहले करते रहे हूँ ?"

"हम राज धम ही काम करते रहेंगे जैसे पहले करते रहे हूँ।"

"हम कभी व्यक्तिगत बातें नहीं करेंगे।"

"हम कभी व्यक्तिगत बातें नहीं करेंगे।"

"हम सिर्फ अपने काम से वास्ता रखेंगे ?"

"हम सिर्फ अपने काम से वास्ता रखेंगे।"

"तुम मेरी जिन्दगी में कोई दखल न दागी ?"

"मैं आप की जिन्दगी में दखल नहीं दूँगी।"

"विशेषकर मुहब्बत की बात नहीं करागी ?"

"विशेषकर मुहब्बत का बात नहीं कहूँगी।"

"अल्का।"

"जी।"

"तुम या बालती जा रही हो, जम काई बच्ची मास्टर के सामने 'दा दूनी चार' का पहाड़ा पढ़ रही हो। तुम सीरियस क्या नहीं हो।"

मैं विलकुल सीरियस हूँ। मैं सारे बचपन को इस तरह दोहरा रही हूँ जैसे गुरु से मन्त्र लेते समय कोई गुरु के शब्दों का दोहराता है।"

कुमार ने अपने माथे की उभरी हुई नाड़ी का उँगलियों से मला और कहने लगा, 'मैं तुम्हें विलकुल नहीं समझ सकता, अलका।"

"पर मैं अपन-आप का समझ सकती हूँ।"

कुमार ने अभी तक भ्रम की वृत्ति नहीं बुझायी थी। उस ने एक बार भ्रम पर पड़ हुए कागज की आर दमा, और फिर भ्रम की वृत्ति बुझाकर छत की वृत्ति को जला दिया।

छत की वृत्ति की राशनी पीतल के मुरासा में पतली-पतली धाराओं में बहकर बहने लगी। कमरे का दीवारा और फर्श पर राशनी छितराने लगा। पर कुमार का राशनी से भीगे हुए फर्श पर पाँव रखने हुए लगा, जैसे इस गाले फर्श से उस का पाँव फिसल जायगा।

२

आज से पहले कुमार का जब किमा औरत का सपना आया था, वह औरत हमेशा ऐसी हार्ती थी जिस का सपना रहने योग्य बाद चहरा नहीं होता था। जिस औरत का कोई नाममणि

चेहरा न हो, उस औरत की कोई पहचान नहीं होती। जिस औरत की कोई पहचान न हो, उस औरत की कभी तलाश नहीं होती। और जिम औरत की तलाश न हो, उस के लिए दिल में कोई दर्द नहीं होता। कुमार का इस तरह का कोई बेमिर पर का सपना हमेशा तभी आता था, जब उस के जिस्म में औरत के जिस्म के लिए भूख जगती थी। और यह भूख कुमार के जिस्म में कभी कभी भी जगती थी। इसलिए जब कभी भी कुमार को यह सपना आता था, बाद में इस की याद कुमार का विस्मृत हो जाती थी।

पर आज रात कुमार का जो सपना आया, उस की याद कुमार का साल रही थी। इस सपने में उस ने औरत का चेहरा देखा था, चेहरे को पहचाना था और उस डर था कि कहीं यह पहचान उस की तलाश न बन जाये। तलाश हमेशा रिश्ते बांधती है। और वह अपनी कला के सिवा किसी चीज से कोई रिश्ता नहीं बांधना चाहता था।

रात अपने आखिरी पहर तक बजरा आयी थी। कुमार ने पहले छत की बत्ती जलाया। पर फिर रोगनी की सड़क धाराओं से घबराकर उस ने बत्ती बुझा दी। वह एकाग्र होना चाहता था—एकमन होना चाहता था। उस ने अपनी मेज की बत्ती जलायी। चाहे उस ने मेज पर अभी कोई काम नहीं करना था पर मेज की बत्ती की राशनी उसे अच्छी लगी। पीतल के एक छोटे-से ढक्कन की आड़ रोगनी का बिखरने से बचाकर एक स्थान पर केन्द्रित कर रही थी।

‘कितनी साधारण-सी बात है—मैं या हा घबरा रहा था। मन के विचारों का भी एक जगह केन्द्रित करने के लिए एक छोटे-से ढक्कन की जरूरत होती है—एक छाटी-सी आड़ की जरूरत होता है। और कुमार के मन में एकदम यह खयाल आया कि कला ही राशनी होती है, और कला ही उस की आड़।’

कुमार ने अपने लिए चाय का एक ग्याल बनाया, और अपनी कुर्सी पर बैठ कर बरत से पहले हा काम करना शुरू कर दिया।

सूरज की पहली किरण निकलत ही कुमार का अलका का खयाल आया। गायद इसलिए, कि जया-जया दिन चढ़ रहा था, अलका के आने का समय हो रहा था।

‘मेरा खयाल है कि मेरे जिस्म में फिर से कोई भूख जग रही है—मुझे औरत का सपना इस भूख के बिना नहीं आ सकता। और कुमार ने सोचा कि वह कुछ दिनों के लिए अपना स्टूडियो बदल कर के किसी शहर में चला जाय। दस दिन शहर में रह कर वह अपनी इस भूख का मिटा आये। फिर लौटकर अपने काम में उसी तरह डूब सकेगा जिस तरह वह पिछले कई महीनों से डूबा हुआ था। कुमार की यह जमान और उस का स्टूडियो बाँगडा बादी में पपरीला स्टेशन से करीब डेढ़ मील के फासले पर था।

कुमार अपने कागज और कपड़े-लत्त सँभाल रहा था कि अलका ने दरवाजा खटखटाया।

“मैं कुछ दिना के लिए शहर जा रहा हूँ।”

“पठानकोट या अमृतसर ?”

“शायद पठानकोट तक। तुम इतने दिन यही अकेली रहना चाहोगी या अमृतसर जाना चाहोगी—अपने पिताजी के पास ?”

“मैं यही रहूँगी।”

“मुझे शायद ज्यादा दिन लग जायें।”

“सो ठीक है।”

“शहर से कुछ लाना हा तो मुझे बता दो।”

“अपने रंग और कागज देख लीजिए। कम हा तो लेते आइएगा।”

“अभी पीछे मँगवाये थे—कम से कम छह महीने जरूरत नहीं पड़ेगी।”

‘मुझे काफी काम समझा जाइए। पीछे करती रहूँगी।’

“जितनी भी मेहनत करोगी कम है।”

कुमार अल्का से बातें भी कर रहा था और सूटकेस में कपड़े भी सँभाल रहा था।

“मैं रख दूँ कपड़े ठीक से ? नहीं तो सारे सूटकेस में नहीं आयेंगे।”

“अच्छा, तुम ये कपड़े रखो। तब तक मैं अपनी पट ले आऊँ। कल प्रैस करने के लिए दी थी।’

‘इस में कुछ भन्ने कपड़े भी पड़े हुए हैं। इन्हें धो डालूँ ? दो घण्टे में सूख जायेंगे।’

‘रहने दो ! मैं गहर से धुत्वा लूँगा।’

“पर गाड़ी तो दापहर को छोड़ेगी न ? अभी काफी देर है।”

‘अच्छा धो डालो । पर तुम खुद क्या धो रही हा ! अभी हरिया आयेगा। उस से धुत्वा लेना।’

अल्का ने कोई जवाब न दिया। कुमार पट लेने के लिए चल दिया।

घासी पेने का आमपास कोई आदमी नहीं था। कुमार ने बैजनाथ का जाती सत्क पर चाय की दुकान वाले पहाडिये को शहर से लाहे की प्रस ला दी थी। वही समय-असमय कुमार के कपड़े धोकर उन पर प्रैस कर दिया करता था। कल जब कुमार ने वहाँ अपनी पट दी थी तो उसे गहर जाने का खयाल तक न था। अर जब वह पट लेने के लिए गया तो पट घुल चुकी थी, पर उसी तरह सिलवन्-सहित पड़ी हुई थी। बायले दहकते और प्रग गर्म करते हुए कुछ देर हो गयी। इसलिए कुमार जब पैट लेकर वापस आया तो अल्का ने उस के भन्ने कपड़े धाकर सूखने लगा दिये थे।

“हरिया नहीं आया ?

आया था। घडा ले गया है भरने को।’

कुमार को रात के अँधेरे में गहर की आकस्मिक तैयारी जितनी स्वाभाविक

लगी थी, तब वे उजाले में वह उतनी स्वाभाविक नहीं लग रही थी। हाथ की पट अलका को दते हुए उसे सखात जाया कि अलका उस की इस तयारी के बारे में कोई सवाल क्या नहीं पूछ रहा थी। और उस ने चाहा कि अलका कुछ पूछे। चाहे कुछ ही पूछ। सिर्फ इतना ही कह दे कि पीछे गांव में इतने तब अकेले रहते उसे डर लगता है। चाहे वह कुमार के स्टूडियो में पहुँचे भी नहीं रहती थी। उस ने आधा मील के फासले पर एक घर में ऊपर का चौकड़ा किराये पर ले रखा था। फिर भी उसे कुमार की उपस्थिति का सहारा था। और कुमार के मन में आया कि अगर अलका अचानक रहने की बात चला दे तो वह एक न बार उसे समझाकर अपना शहर जाना स्वीकृत कर देगा। शहर जाने के लिए उस के दिल में कोई उमंग नहीं थी। किसी तरह की भी जिस्मानी भूख उस में नहीं जगी हुई थी और अलका जैसा जमे सूटकेस तयार करती जा रही थी उसे लग रहा था जैसे उस जब्तदस्ती शहर भेजा जा रहा हो।

“तुम पीछे डराती नहीं? कुमार ने खुद ही कुछ देर बाद पूछा।

“डर? मुझे। मुझे बाह्य का डर है? अलका ने जवाब दिया और सूटकेस को बंद कर के चाबी कुमार का दे दी। चाबी पकड़ते हुए अलका ने सो-सो रुपये के दो नोट भी कुमार का दिये।

“यह क्या?”

“दा महाना के रुपये आप एक साथ ले लीजिए। शहर में जरूरत होगी।”

“मुझे क्या जरूरत पड़ेगी? सब भर के लिए भरे पास होंगे।”

“सूटकेस में वह की पामचुक् रखते हुए मैं ने पासपुर्क देखी थी। सिर्फ सौ रुपये हैं वह मैं।

“इतने ही काफी हैं। जाने का किराया तो है ही। बापसी में वह से सौ रुपये निकलवा लूँगा।”

पर वहाँ जरूरत पड़ेगी। दम तब भी है ता बीस रुपये रोज के हिमाव”

“अलका।

कुमार के माथे पर पमाने की वृद्धे उभर आयी। उसे लगा कि अलका की माटी मोटी और चुपचाप आँखें पारदर्शनी हैं। उस ने कुमार के मन में रगते सारे खयालों का देख लिया था। उसे अलका की आँखों पर भी गुस्सा आया पर क्यादा गुस्सा उसे अपने खयालों पर आया जो केंचुए का तरह उस के मन में रग रहे थे। केंचुए की तरह जा किसान का कुंठ नहीं बिगाड़ते पर उन का सुस्तायी चाल से चिढ़ आ जाती है। कुमार को खुद ही अपने खयालों से चिढ़ आने लगी।

किसी भी केंचुए की अगर तिनका छुआ दें तो वह कुछ देर के लिए इस तरह निर्जीव हो जाता है जैसे कभी उस में कम्पन न आया हो और वह गुरु से ही एक रस्सा का टुकड़ा हो। कुमार को भी लगा कि उस के मन में डर का जा केंचुआ रेंग रहा था, अलका के होने से रस्सी का टुकड़ा बन गया था।

“अगर तुम ने यही साचा ह कि मैं शहर इसी लिए जा रहा हूँ, तो नहीं जाता ।”

कुमार ने मन में छिपे हुए डर को रस्सी के टुकड़े की तरह हाथ में लेकर कहा ।

“हम ने इक्कार किया था कि हम कभी व्यक्तिगत बातें नहीं करेंगे । मैं उस इक्कार पर कायम हूँ ।” अलका ने कहा । उस ने शहर जाने या न जाने की बात का कोई जवाब न दिया ।

कुमार मिनट भर को चुप रहा । पर वह चुप्पी वालने से भी अधिक पैनी थी । बोलने से चाहे व्यक्तिगत बातें न करने का इक्कार टूटता था, पर कुमार को लगा कि इस चुप्पी से तो बोलना आसान था ।

“पर तुम ने खुद ही बात छेड़ी थी ।”

“मैं ने सिर्फ रुपये दिये थे, बात नहीं छेड़ी थी !”

“पर वह बात तुम्हारे मन में थी । वह तुम भूली नहीं थी ।”

“मैं ने कोई बात भुलाने का इक्कार नहीं किया था । सिर्फ चुप रहने का इक्कार किया था ।”

“पर वह बात याद रखने का तुम्हें कोई हक नहीं ।”

“अपनी याद पर सब का अपना हक होता है ।”

“पर अलका—आखिर तुम उस बात को याद क्यों रखना चाहती हो ?

इस ‘क्या के सवाल’ में मत पड़िए । इस का अन्त कहीं न हागा । अच्छा ही, अगर हम अपने उनी पहले इक्कार पर कायम रहें, कि हम कभी व्यक्तिगत बातें नहीं करेंगे ।”

कुमार ने चुप रहने का जो इक्कार अलका से चाह कर लिया था, वही इक्कार कुमार का लगा, एक ऐसा अंधेरा था, जिस में हर चीज डरावनी लगती है । कुमार किसी चीज से डरना नहीं चाहता था । इसलिए उसे लगा कि इस इक्कार ने एक अनचाहा अंधेरा भरकर बड़ी मासूम बातों को भी भयानक बना दिया था । मारो बाता का उन की मासूमियत में दखने के लिए कुमार ने सोचा कि वह अलका के साथ चुप न रह कर बातें करेगा । आखिर अलका एक मुल्की हुई लकी थी ।

“यहाँ मेरे पास बठ जाओ, अलका ।”

“जी ।”

“सब बताओ, मुँह मे डर लगता है ?”

“बात उलझाकर मत पूछिए ।

‘उलझाकर ?’

‘आप जानते हैं कि मुझे आप से डर नहीं लगता । डर वास्तव में किसी को भी किसी से नहीं लगता । डर हमें अपना इनमान को अपने स लगता है ।’

“तुम्हारा मतलब ह, मुझे खुद से डर लगता ह ?”

‘जी ।’

“अलका !

“जी ।’

‘तुम मुझ पर यह इल्जाम किन तरह लगा सकती हो ?’

‘मैं ने इल्जाम नहीं लगाया । सिर्फ एक बात कही ह ।’

“पर यह गलत ह ।’

‘अगर गलत ह तो आप अचानक शहर किस लिए जा रहे ह ?’

“शहर जाने के लिए मुझे कई काम हो सकते ह ।”

आप जानते ह, कि आप को कोई काम नहीं ।’

चलो मान लिया कोई काम नहीं । गायन यही काम ह। कि मैं अपनी जिस्मानी भूख बुझाने के लिए शहर जा रहा हूँ पर यह भी तो एक काम ह ।

‘इस काम के लिए शहर जाने की क्या जरूरत ह ?’

“पर यहा ’ कुमार के गले में उस की सांस अटक गयी । पर अपने जटके हुए सांस को खींचकर उस ने कहा यहा शहरो जसा कोई इन्तजाम नहीं ।

“मैं हर तरह स उस ाडकी से अच्छी हूँ जा बीस रुपये रोज लेकर अलका ।’

“जी ।

‘तुम्हें क्या हो गया ह, अलका ! तुम एक शरीफ लम्बी हो शरीफ मा-बाप की बेटी ।’

‘इस में शराफत का खयाल कहा से आ गया ?

‘रुपया लेकर जिस्म देना शराफत नहीं ह ।’

“क्या ?’

क्याकि यह शराफत नहीं ।

फिर इस हिमाय से रुपये देकर जिस्म को लेना भी शराफत नहीं ।”

कुमार चुप ह। गया । अलका फिर बाली, अगर आप अपने लिए शराफत को जरूरी चीज नहीं समझते तो मेरे लिए क्यों जरूरी समझते ह ?’

‘मेरी बात और ह अलका ।

सिर्फ यही, कि मर्दों के लिए एक वह चाज भी शराफत हाती ह जो औरत के लिए नहीं हाती ।

यह बात नहीं, अलका ।

“फिर ?

मैं कभी किसी एक चीज के साथ अपने-आप को नहीं जाडता इसलिए मेरी कीमतो का असर सिर्फ मुझ पर पडेगा । पर बल तुम्हारा विवाह होना है । तुम्हारा

वास्ता सिफ़ तुम मे नहीं हागा, किसी दूसरे से भी होगा । उस की कीमतें वे नहीं हागी, जो मेरी और तुम्हारी कीमतें हा सकती हैं ।”

“इस का जवाब मैं इस समय सिफ़ दतना ही दूंगी, कि मेरी अभी लडकी सिफ़ अपनी क्रीमता का ही स्वीकार कर सकती ह, किसी और की कीमतों को नहीं ।”

“यह भी मान लेता हूँ ! चाहे मैं जानता हूँ कि यह बात तुम्हारे बस की नहीं । तुम क्या, किसी के बस की भी नहीं ! पर मेरी मुश्किल दूसरी ह ।”

‘मैं आप का मुश्किल को जानती हूँ ।’

“नहीं तुम नहीं जानती ।”

“जहरत पटने पर आप सिफ़ उस औरत के पाम जाना चाहते ह जिस औरत का काइ चेहरा न हा और जिस औरत का कोई नाम न हो । क्याकि चेहरे और नाम से पहचान तक बात आ जाती हैं, और यह पहचान कभी मन में कोई सम्बन्ध जाड़ देती ह ।”

“हा, अल्वा ।’

ए फेमलेस वूमन, ए नमलेस वूमन ।’

‘हा, अल्वा ।’

“मैं अपने-आप को फेमलेस भी बना सकती हूँ, और नेमलेस भी ।”

‘पर, अल्वा ! क्या ? क्यों ?’

इस ‘क्या’ का जवाब मैं नहीं दूँगा ।’

‘क्योंकि इस का कोई जवाब नहीं ।’

“इस के कई जवाब हा सकते ह ।’

‘मसरत ?’

ममलन यह कि शायद मुझे रुपया की जरूरत हा ।’

“यह जवाब गलत ह । तुम मुझे काम सीखने के सौ रुपये देती हो । सौ रुपये महीन कम नहीं । फिर तुम अपने रहने का, पहनने का, खाने का खच भी खुले हाथों करती हा । तुम्हारे पिता अमीर ह ।’

फिर हा सकता ह कि यह मेरी जिस्मानी जरूरत हो ।’

“यह जवाब भी गलत ह ।’

‘क्या ?’

‘मेरे पास इस का कोई सनूत नहीं । पर मेरा दिल बहता ह कि यह जवाब गलत है । तुम खुद ही बताओ कि क्या यह गलत नहीं ?’

हाँ यह जवाब गलत ह ।”

“फिर ?’

‘मैं ने कहा था कि मैं इस का जवाब नहीं दूंगी । इसलिए चुप हूँ ।”

“पर मैं इस का जवाब जानना चाहता हूँ ।’

“आप नहीं समझेंगे। मैं बता भी दूँ, ता भी आप नहीं समझेंगे।”

“क्या ?”

“क्याकि बहुत-सी बातों पर हमारा नुक्ते नज़र अलग ह। आप ने खुद ही कहा था कि हमारे नुक्ते-नज़र आपस में कभी नहीं मिल सकते।”

“मैं ने कहा था पर मैं काशिश करूँगा, कि तुम्हारा नुक्ता-नज़र समझ सकूँ। समझकर भी शायद मान न सकूँ, पर समझने की कोशिश जरूर करूँगा।

‘समझाने और मनाने में मेरा कोई विश्वास नहीं।’

‘फिर ?’

‘समय खुद समझा लेगा। मना भी लेगा।’

“किसे ? मुझे, या तुम्ह ?

“इसे भी समय के फसले पर रहने दीजिए।’

अलका के कहने पर जब कुमार ने सब कुछ समय के फसले पर छोड़ दिया, ता अलका को दो सौ रुपये लौटाता हुआ कुमार वाला, ‘ये रुपये ले लो। अभी मुझे नहीं चाहिए।

‘और चाबी ?’

कुमार हँस पड़ा— चाबी भी ले लो। सूटकेस खाल दा। मैं शहर नहा जा रहा।’

और शहर जाकर जो काम करने थे ?

मुझे कोई काम नहीं।’

‘वह बीस रुपये राज का काम ?

‘काई जरूरी नहीं।

डर की बात को बालकर निडर हाने का जो तजरबा कुमार ने किया था, उसी तजरबे के जोर का आजमाने के लिए कुमार ने कुछ देर बाद अलका से कहा ‘अगर कभी मुझे जरूरत पड़ी तो तुम से कह दूँगा।

अच्छ।

‘तुम मेरे लिए उस औरत की तरह हागी, जिस का काई नाम नहीं होता, या उस का कोई भी नाम हो सकता ह।

“यह तो बहुत बड़ा दर्जा ह।’

क्या मतलब ?

खुदा का भी काई नाम नहीं होता, और उस का काई भी नाम हो सकता है।’

“छाटी बातों को खुला स मिला दें तो वे बड़ी नहीं हा जाती।

“कई बातें ऐसी भी हाती ह जा छाटी होने या बड़ी होने से बेनियाज होती ह।”

‘जिस चीज की कीमत बीस रुपये से ज्यादा हो सकती हो, वह बात हमेशा छोटी ही रहेगी, बड़ी नहीं हो सकती।’

कुमार की पसलियों में आग की एक लपट-सी दौड़ गयी। उस ने अल्का को अपनी दाग बाहों में बसकर उस के हाथ से एक लम्बा घूँट इस तरह भरा, जैसे वह दा हाठा से उस की सारी जान पी जाना चाहता हो। आग की लपट की तरह कुमार के जिस्म में कुछ सुलगा, और जिस समय कुमार ने अल्का के अंग प्रत्यंग का अपने से लगा लिया, ता उस लगा कि उस ने अल्का को अपने जिस्म से नहीं,—आग की लपट में लपेट लिया था। यह अल्का का ताड़ देने की ज़िद थी।

कुमार जब अल्का से अलग होकर एक तरफ खड़ा हो गया तो अल्का ने अपने जिस्म से ढलक हुए कपड़ा का खींचकर एक सलबटों चादर की तरह अपने पर ओढ़ लिया, और कुमार से कहा, ‘मेरे रुपये?’

कुमार ने पट की जेब से बीस रुपये निकाले, और अल्का ने हाथ बढ़ाकर रुपये ले लिये।

“सिर्फ बीस रुपये। कुमार हँस पड़ा। पर उस की हँसी जाने क्या थी, वह खुद ही अपनी हँसी से ढरकर दावाग की आर दगने लगा।

“सने का कलश चटाकर भी कोई ईश्वर को नहीं खरीद सकता। पर कोई पूजा का एक फूल चटाकर भी ईश्वर का खरीद लेता है।” अल्का ने कहा और वह एक एक कर के कपड़े पहनने लगी।

“क्या मतलब?”

कुछ नहीं।

“इस तरह बीस रुपये कमानेवाली औरत का क्या कहा जा सकता है?”

‘औरत।’

‘अल्का।’

‘मैं एक वेश्या बनने का दावा भी उसी आसाना से कर सकती हूँ, जिस आमानी से बीबी बनने का।’

“मैं तुम्हें बिलकुल नहीं समझ सकता, अल्का।

“पर मैं अपने-आप को समझ सकता हूँ।”

कमरे की दोनों बस्तियाँ बुझी हुई थी। पिडकिया पर नीली और काला धारियों वाले माटे परदे लटक रहे थे। पर बाहर से सूरज की रोशनी परल की चिलमिली से छतकर कमरे की दीवारों पर और फश पर बिखर रही थी, और रागनी से भीगे हुए फग पर पर रखते हुए कुमार को लगा जैसे इस गोले फश से उस का पाव फिमल जायेगा।

पाँच मिन गुजर गये । अलका राज नियमपूर्वक आती और बाम करती । उस घटना की छाया भी उस के साथ कमर म न आती । छठे दिन सुबह ही अलका आयी ता कुमार अपना तौलिया तह कर के चमड़े के एक बग में रख रहा था ।

आज फिर गायद जाने की तयारी ह ?”

‘वह तयारी छानी थी यह तयारी बड़ी ह । तुम भी मेर साथ चलागी । हरिया नास्ता तयार कर रहा ह, उसे कह दा कि कुछ खाना बना ले ।

“कितने दिन के लिए ?”

एक ही मिन के लिए ।

कुमार और अलका जब पगडण्डी पर चलत हुए सामने पहाड के बगल म पहुँच गय ता एक पहाडी नदी क किनारे सडे हाकर कुमार ने हाथ का बग एक पत्थर पर रख दिया ।

‘नहाआगी तुम ?

‘मैं अपने साथ काई कपडा नही लायी ।’

इस बग म एक नीला चद्दर रखी ह ।’

नदी का पानी, जा सारी रात डर हुए पत्थरो स बाते करता रहा था, अब सूरज की किरणा से छल रहा था । अलका ने बग से चद्दर निकाल ली और पत्थर की आड में आकर कपड उतारन लगा । नीली चद्दर को बदन स लपेटकर जब उस न पाना म पर रसा जगली फूला की एक टहनी पानी म तरती हुई अलका के पास आ गयी । अलका ने टहनी के जागे का हिस्सा साडकर अपने बाला में लगा लिया ।

कुमार अलका की बायी जोर के पानी म नहा रहा था । अलका ने एक नजर कुमार को देखा और फिर पानी म जाहिस्ता-आहिस्ता चलती हुई कुमार के पास से गुजरी, और काफी दूर आकर उसकी सोध में ठहर गयी । पानी बहुत गहरा था । खड रहते पाना कमर से छूता था । अलका घुटनो के बल पानी म बठ गयी ।

अलका ने हाथा में हर काच की पाच-भाच चूडियाँ पहनी हुई थी । पानी म डूबी हुई कलाइया पर चूडिया एस लग रही थी जसे उस न बाहा पर हरे पत्त लपटे हुए हो । अलका बाहें फलाकर पानी काटती तो चूडियाँ खनक उठती ।

अलका ने कई बार अपनी ठुड़ी जोर आधे मुख को पानी में डुबोकर पानी को अपनी आखो से छुआया । अलका पाना का उतराई की जोर थी और जो पानी अलका के बदन का छूकर निकलता था वह दूर से कुमार के बदन का छूकर जा रहा था । अलका का आखें बडे जदब से इस पानी का छूती रही ।

अलका की चूड़िया की खनक चाहे ऊँची नहीं थी, पर इस गहरी खामोशी में वह कुमार के कानों को सुनाई दे रही थी। कुमार इस खनक से बचने के लिए कई बार सीध स हटा। एक बार वह बिल्कुल ही पानी के बायें किनारे तक चला गया। अलका ने वही सीध ले ली। कुमार किनारा बदलकर पानी के दायें किनारे पर आ गया। अलका ने फिर सीध बदल ली। जितनी देर, और जो भी पानी कुमार के बदन को छूकर आ रहा था, अलका उसे अपने अग-अग में भर लेना चाहती थी।

कुमार ने शायद अलका के इस खिलवाड़ का भाप लिया, और इस खिलवाड़ को तोड़ने के लिए वह पानी से बाहर आ गया। अलका भी पानी से बाहर होने लगी, तो कुमार फिर पानी में उतर गया और तेजी से तरता हुआ अलका तक आ गया।

झपटकर कुमार ने अलका का हाथ पकड़ा और झल्लाकर अलका के बदन से लिपटी हुई चद्दर खींच ली। चद्दर की तरह ही उस ने अलका की अपनी दाहा में बस लिया और फिर खींचते हुए हाठा से उस ने अलका के होठों का इस तरह पिया जमे वह अलका की सारी जान के साथ इस पहाड़ी नदी का पानी पी जायेगा।

कुमार ने दूटकर जब अलका को छोड़ा तो अलका के होठ उसी तरह साबुत थे, अलका की छाती उसी तरह साँस ले रही थी, और नदी का पानी उसी तरह वह रहा था। कुमार का लगा कि न वह अलका का साँस पा सकता था, और न नदी का पानी। वह किनारे के पत्थर पर इस तरह जा बठा जैसे सबड़ा पत्थर में एक पत्थर और बढ़ गया हो।

अलका ने किनारे पर आकर कपड़े पहन लिये और नीला चद्दर को निचाड़कर सूखने के लिए एक बड़े पत्थर पर फैला दिया।

‘नास्ता डाल दू?’ अलका कुमार के पास आकर खड़ी हो गयी, और नाश्ते का टब्बा खोलकर प्लेट पाछने लगी।

कुमार काफी देर तक अलका के पैरों की ओर देगता रहा, और फिर लपक कर उस ने अलका के पैरों को मरोड़ा।

‘ये पर इस तरह नहीं, इस तरह हाने चाहिए ये।’

‘किस तरह?’

‘एडो आगे हानी चाहिए थी, और उँगलियाँ पीछे।’

‘क्यों?’

‘क्या बिजनी के पाव उल्टे होते हैं?’

‘जिनी क्या होती है?’

‘भूत प्रेता का जाति की जिना।’

‘हर जिनी के पैर उल्टे होते हैं?’

‘मैं छोटा मा था। हमारे पटास में एक घूटा रहता था। वह मुझे जिनीया के बिम्मे सुनाया करता था।’

“उस ने जिनी देम रही थी ?”

“वह कहता था कि उस ने अपनी जवानी में एक जिनी पकड़ी भी थी।”

“फिर ?”

“वह बताया करता था कि जिनी का पकड़ना बड़ा मुश्किल होता है। कई कई रातों इमशान में जाकर बठना पड़ता है। वह पहले बहुत डराती है अगर आदमी डर जाये तो वह खुद पकड़ी न जाकर उस आदमी को पकड़ लेती है।”

‘ फिर उस ने जिनी कैसे पकड़ी ?’

“उस ने उसे पाँवा से पहचान लिया था। वह कहता था कि हर जिनी का नाक मुँह वसा ही होता है उसे किसी साधारण औरत का। जिनी के मुख की जोर कभी नहीं देखना चाहिए, क्योंकि उस के पैर उल्टे होते हैं और उसे पैरों से पहचान कर पकड़ लेना चाहिए।

“पर पकड़ने का फायदा ?”

‘ वह बूढ़ा कहा करता था कि अगर एक बार जिन्नी पकड़ में आ जाये तो सारी उमर कोई फिक्र नहीं रहती। जब आप का दिल हल्ला खाने का हो वह हल्ला ला देती है जब आप का दिल मये कपड़े पहनने का हो तो वह कपड़े ला देती है। वह तरह-तरह का खाना ला सकती है। वह हरान कर देनेवाली चीजें आप के कमरों में लाने रख सकती है।’

“फिर उस बूढ़े ने जिनी छोड़ क्या दी ?”

“वह कहता था कि रोज रात को उसे जिनी से मेनका का नाच देखने की आदत पड़ गयी थी। रात को जिनी मेनका के कपड़े पहनाकर जोर परो में घुँघरू बाँधकर मेनका का वह नाच दिखाती जा सिर्फ इत्र के दरबार में होता है।

‘ फिर ?’

जाम-पडोस में शोर मच गया कि रात को यहाँ घुँघरूओं की आवाज आती है। दून लिए लागो से तग आकर उस ने जिनी का छोड़ दिया।

“आप ने उस बूढ़े से जिनी पकड़ने का तरीका पूछा था ?”

‘जब मैं छाटा था तब मैं उस बूढ़े से जिन्नी पकड़ने का सारा ढंग पूछकर एक बार जिन्नी पकड़ने के लिए गया था।’

‘ फिर ?’

“अमावस की रात थी। उस ने बताया था कि जिनी सिर्फ अघेरी रात में ही पकड़ी जा सकती है।”

‘ फिर ?’

“मुझे बड़ा दिलेर समझा जाता था। कुछ अपनी दिलेरी से और कुछ मशहूरी की झेंप में मैं आधी रात को चल निकला। अभी इमशान तब पहुँचा था। बाहर के पड़ा के पाम ही मुझे डर लगने लगा। एक घन पेड़ में मे कोई जानवर होगा और मैं

उलटे पाँव भागा ”

“शायद वह जिन्नी हा जो पड पर चढ़कर बोली हो ”

“उस बूढ़े ने मुझे बताया था कि सब से पहले जिन्नी के परा में बँधे हुए घघरओ की आवाज सुनाई देती है ।”

“इम का मतलब ह कि हर जिन्नी का नाचने की कला जाती ह ।

“शायद ।”

“पर मुझे तो यह कला नहीं आती ।”

तो तुम ने यह मान लिया कि तुम जिन्नी हो ?

“पर सीधे पैरावाली जिन्नी, और सीधे रास्तावाली ।”

“यह सीधा रास्ता ह ?”

“आप इन्हे उलटा भी कह सकते ह, क्योंकि अगर बाई तसवीर को उलटी आर से देखे तो उसे वह उलटी ही दिखाई देती ह ।

“मैं उलटी ओर खटा हूँ ?”

“हम ने कल सोचा था कि हम किसी बात का फगला नहीं करेंगे, हमारी हर बात का फैसला समय करेगा ।”

कल की तरह आज भी कुमार ने अलका की बात मान ली और सारी बात समय के फमले पर छोड़ दी । उस ने चुपचाप अलका के हाथ स प्लेट पकड़ ली, और नमकीन पराँठे का एक कौर तोड़कर शहद की कटोरी में डुबोया और दायें पैर के अँगूठे से जमीन को खरोचने लगा ।

अलका न धमस की काफी प्याले में टाली और प्याला कुमार की तरफ बना दिया ।

‘मैं सोच ही रहा था कि अगर हम चाय या काफी भी ले आते एक बात उस बूढ़े ने ठीक कही थी ।’

“क्या ?”

“कि जिन्निया कई तरह के खाने सजाकर अब भी चाहें आप के लिए परोस सकती ह ।

“पर आप उस बूढ़े से एक बात पूछनी भूल गये ।’

“क्या ?”

आप ने जिन्नी पकाने का तरीका पूछ लिया, पर जिन्ना से अपने-आप को छुड़ाने का तरीका नहीं पूछा ।’

“वही तरीका मैं सोज रहा हूँ । सोज लूँगा ।”

‘आज इम नदी पर यही तरीका ढूँढ़ने आय थे ?’

‘अगर सच पूछो तो, यही तरीका ढूँढ़ने आया था कल रात ”

‘कल रात कोई तरीका सूझा था ?’

“कल रात सपने में मैं ने यह नहीं देखी था ?”

“मैं भी नदी के किनारे बैठी थी, या नहीं ?”

“इसी तरह नीली चद्दर लपेटकर तू इस नदी में नहा रही थी ।”

‘और मेरे बालों में फूल भी लगे हुए थे ?’

‘मैं ने पूरा की यह टहनी तोड़कर पानी में या ही नहीं पेंकी थी । तुम्हारे ,
बालों में लगाने के लिए ही मैं ने पानी में रखी थी ।’

‘फिर ?’

“सपने जब तब सच नहीं बनते, ये इन्सान के पाछे ही रहते हैं ”

‘और आप ने पीछा छुड़ाने के लिए इस सपने का सच कर के देस लिया ?’

‘हां ।’

“एक रात का मुझे भी सपना आया था ।’

“इस नदी का ।’

नहीं ?’

“फिर ?”

‘मैं ने देखा कि मैं आप के काम करने की मेज पर बागज रखकर उम पर
इचों के निशान लगा रही हूँ ।

“फिर ?’

‘निगान लगा-लगाकर मैं घर रही पर यह बागज जादू के जार से जसे बढ़ता
ही गया ।’

“फिर ?”

“फिर मैं ने उस बागज से पूछा कि वह मेरे साथ इस तरह क्या कर रहा था ।’

‘फिर ?’

“अजीब बात है ! जब मैं बागज से बातें करने लगी तो वह बागज भी मेरे
साथ बातें करने लगा ।’

“यू डैम !

“उम बागज ने मुझे बताया कि वह मेरे सपनों का बागज था और मैं चाहे
सारी उमर उस पर इचों के निशान लगाती रहूँ, वह कभी खत्म नहीं हो सकता था ।’

“यू डम

जिन्नी उफ डविल !

‘चल अब नाश्ता कर के लौट चलें । आज सवेरे से कोई काम नहीं किया ।”

चलो कुछ घण्टे काम कर लें, क्या पता, कल सवेरे फिर आना पड़े ।

“यहां ?’

“यहां नहीं । शायद उस पहाड़ की चोटी पर जाना पड़ेगा ।’

‘क्यों ?’

“क्याकि सपने हमेशा बढते रहत ह । चेतन प्रयास के पर चाहे उलटे हा पर सपना के पैर सीधे हाते ह । आज के इस नदी तब आये थे, बल पहाड की चोटी पर चढ़ेगे ”

कुमार भौचक्का होकर अलका की ओर दखने लगा । उसे लगा कि वह स्वतंत्रता के जिस गिखर पर खड़ा था किमी दिन यह अलका उसे वहाँ से इस तरह खीचेगी कि वह गिखर से पिसलकर मुहब्बत की गहरी साईं में जा पड़ेगा ।

४

‘प्रयास के पैर चाहें उलटे हा, पर सपने के पर सीधे हाते ह’ अलका की यह बात कुमार के कानों में एक बाटे की तरह बई दिन चुभती रही । और फिर एक रात कुमार को सपना आया कि वह एक गद्दी मद की तरह अपनी कमर से एक लम्बा और काग रस्सा बाधकर जंगल में भँडें चरा रहा था । भँडों को चराते-चराने उस बड़ी भूल लगी । पर आमपास के चरमे के पानी के सिवा कुछ न था । पानी की उम ने दो अजुलियाँ पो थी कि उसे लगा पानी उस के खाली पेट में चुभने लगा था । वह कलेजे पर हाथ रखकर कँटीले झाडा का मुँह मारती हुई भेडा का तरफ दखने लगा । फिर उस ने आँखें मली और देखा कि सुनमान जंगल में एक परी उतर आयी थी । खाल की माटी जूती उम ने वह पैरा में पहनी थी जिम से वह मिना आहट के ठुमक ठुमक चल रही थी । सिर पर उस न लाल रंग का अँगरखा बाध रखा था, और उस की हरी कमीज का कमर से काले रेशम की एक रस्सा बँधी हुई था । दोना बाहें ऊपर उठाकर अपने सिर पर एक हँडिया उठायी हुई थी । जिस से उस के चेहरे का काफी हिस्सा उस की बाँहा में छिपा हुआ था । कुमार एक पेड की आट में हो गया, ताकि वह परी जब पेड के पास से गुजरे, वह उस तरफ से उस का मुख देख सके । जिस पतली-सी पगडण्डी पर वह परी चलकर आ रही थी, वह पगडण्डी इस पेड के पास से गुजरती थी । वहा कुमार पेड की एक टहनी पर हाथ रखकर खड़ा था । वह परी जब पेड के पास आयी तो उस ने सिर से हँडिया उतारकर पेड के तने से टिका दी और सिर का लाल अँगरखा उतारकर तने के पास बिछा दिया । हँडिया में रखे हुए पक्वान की खुशबू कुमार के कलेजे में इस तरह मँडराने लगी कि वह पेड की ओट से हटकर हँडिया के पास आ गया । उसे इतनी भूख लगी हुई थी कि अगर वह हाँडी पेड के तने की बजाय परी के सिर पर भी रखी हाती तो वह एक झटके से हँडिया छीन लेता ।

न न न ' परी ने कहा, और कुमार का हाथ पकड़कर उस ने उसे जमीन पर बिछे हुए अँगरखे पर बिठा लिया । हँडिया का ढक्कन भी परी ने अपने हाथ से उतारा, और फिर भरी हुई हँडिया कुमार के सामने रख दी । कुमार अपनी भूख

पर लजा गया इस से आस उठाकर वह परी के चेहरे की आर देखने का साहम न कर सका। वह दाना हाथा से हँडिया म से पकवान निकालकर खाने लगा। कुमार ने जब भरपेट खा लिया तो उस ने लजायी सी आखो से परी की ओर देखा। देखा, और देखता रह गया। अलका उस के सामने खड़ी थी।

कुमार जब सोकर उठा तो उस ने हाथ से अपने बदन का छुटा। उस की कमर से काई रस्सी नहीं बँधी थी। पर उसे लगा कि अलका सारी की सारी एक रस्सी बन गयी थी जो रात का सपना में नी उस के साथ बँधी रहती थी।

आज कुमार ने साचा कि सपनों का मानने की जगह, और उन की ज़िद पूरा करने की जगह वह एकदम बेल्हियाज हाकर इन सपना का पूरा करने से इनकार कर देगा। नदी का सपना उस ने पूरा कर के देख लिया था। कुछ न बना था। सपने जब भी उस के पीछे पड़े हुए थे।

सुबह अलका आयी। उस के आने तक कुमार ने अलमारी में से एक गद्दिन पोशाक निकालकर बाहर रख ली थी। यह पोशाक बहुत पहले कुमार ने एक मेले में खरीदी थी, और उस ने सोचा था कि किसी दिन वह अलका का यह पोशाक पहनाकर एक तसवीर पेंट करगा। कुमार ने भेज पर नया बनवस लगा लिया।

“गुसलखाने में जाकर कपड़े बदल लो।

अच्छा।’

‘यह जूती कुछ बड़ी लगती है, पर ठीक है।’

“यह कमाज भी खुली है।’

‘यह खुला ही हाती है। कमर में जब यह काली रस्सा बांध लगी तो यह खुली नहीं लगती।’

अलका जब कपड़े बदल आयी तो खुले बाल लिये कुमार की कुर्सी के सामने घुटने टेककर बैठ गयी जोर वाला, चाटिया बना दा, जमी गद्दिनो की लम्बा पतली चाटियाँ हाती है।

कुमार ने नहीं, पर कुमार के हाथा ने एक मिनट के लिए कहना मानने से इनकार कर दिया। पर फिर कुमार ने चुपचाप अलका की चाटियाँ बना दी।

‘अँगरेजी में खुद बाध लेती हूँ पर यह रस्सी भुझ से ठाक नहीं बँधी। अलका ने कहा जोर वाले रंगम की रस्सी कुमार के हाथ में दे दा।

कुमार ने जब अलका के गिद बाहें डालकर रस्सी का लपटा तो उस ने चौककर अलका के मुँह की आर देखा। सारी की सारी अलका से वह खुशबू आ रही थी जो कुमार को रात में सपने की हँडिया से आयी थी।

कुमार ने एक बसिस लेकर अलका की कमर से रस्सा बाध दी, पर उस लगा कि उसे बगै भूख लगी हुई थी। सुनह का नास्ता लिये अभी आधा घण्टा भी नहीं हुआ था पर भरपेट किया हुआ नास्ता न जाने कहा चुक गया था।

“काम करने से पहले कुछ खा लें। तुम्हें भूख नहीं लगी?”

“मैं अभी नाश्ता कर के आयी हूँ।

“नाश्ता मैं ने भी किया था।”

“काफी बना है?”

“नहीं, कुछ नहीं चाहिए।”

कुमार ने ज़िद में जाकर कुछ खाने पीने से इनकार कर दिया, और अपने ब्रसा का रंगा म भिगाने लगा।

रंगा ने, और रंगा में से उभरती तसवीर ने कुमार की ज़िद रग्व ली। ढाई घण्टे बीत गये। भूख कुमार का भुलाये रही। फिर एक अजीब बात हुई। कुमार को ज्या ही तसवीर में एक हाँडी बनाने का खयाल आया कि भूख कलेजे में मँडलाने लगी।

“मुझे काफी बना दो, अलका! अगर हरिया वही बाहर दिखता है तो उसे कह दो, नहीं तो खुद बना दो।

हरिया कुमार का पहला नौकर था। बाँफो-चाय बनाता-बनाता आहिस्ता-आहिस्ता सब कुछ सीख गया था। पर उस का ज्यादा समय पानी भरने में बटता था। पीने का पानी कुमार जिस चश्मे से भगवाया करता था, वह चश्मा कुछ दूर था। इसलिए अलका ही बकत-बेबकत चाय बनाता।

अलका जब काफी बनाकर लायी तो कुमार ने काफी के प्याले का सूँघकर देखा। प्याले में काफ़ी की गंध आनी थी कि कुमार ने एक लम्बा सास खींचकर अलका के हाथ को तीन-चार बार सूँघा। अलका के हाथ से वही गंध आ रही थी जो रात में कुमार को सपने की हाँडी से आयी थी। और कुमार का डर लगने लगा कि जिस तरह उस ने सपने में उस हँडिया के पकवान का बेसन्नी स खाया था, उसी तरह वह अलका के जिम्म का भी बेसन्नी से खाने लगेगा।

पर आज कुमार ने सपना से बेलिहाज हाने की ज़िद ल रखी थी। काफ़ी का एक लम्बा घूँट लेकर कुमार ने कहा “अगर तुम्हें सारी उमर यहाँ बपड़े पहनने पड़ें अलका!”

“तो अलका उफ गद्दिन बन जाऊँगी, जिस तरह अलका उफ जिन्नी बनी थी, या अलका उफ डविल बनी थी।

“अलका उफ परी! मैं ने रात सपने में तुम्हें एक परी समझा था।”

“परी का मनलव हाता ह, परोबागी। फिर आप ने झुँसलाकर परी के पख नहीं तोड़ दिये?”

कुमार एक मिनट साच में पड़ गया। फिर हारो हुई हँसी से कहने लगा, “तुम मुझे क्या समझती हो, अलका? बहुत बेरहम दिल हूँ मैं।”

‘रहम की मुझे बभी जरूरत नहीं पडा, इसलिए किसी के रहमदिल हाने या बेरहम हान से मुझे कुछ पर नहीं पड़ता।

“पर तुम यह तो सोचती हो कि मैं परी के पख ताड़ देनेवाला आदमी हूँ।”

“जल्दतर पड़े तो उस के पर भी ताड़ देनेवाला आदमी।”

कुमार चुप हो गया। फिर धीरे से बोला, “यह तुम ने ठीक कहा है अलका। जिस रास्ते पर मैं जाना न चाहूँ, अगर मेरे पर मेरे कहने म न हो तो मैं ऐसा आदमी हूँ जा अपने पर भी ताड़ ले।”

“मैं जानती हूँ।”

“रात को सपने में मैं ने देखा था कि मैं जंगल में भेड़ें चरा रहा हूँ। सबेर उठकर भुंसे लगा, मेरी जसे सारी तसवीरें भेड़ें बन गयी हों। मैं तसवीरो का भेड़ें नहीं बनने दूंगा। तुम ने एक दिन कहा था कि सपनों के पैर सीधे हाते हैं और प्रयास के पैर उल्टे। आज मैं तुम से शत लगा सकता हूँ, कि प्रयास के पैर सीधे होते हैं और सपना के उल्टे।”

“शत भले ही रख लाजिए। पर मुझे डर है कि वही यह बात उल्टी न आ पड़े।”

“कैसे?”

यही कि शायद इस का उल्टा-सीधा देखने में ही सारी उमर गुजर जाये।”

“मर पास उमर इतनी फालतू नहीं कि इस का उल्टा-सीधा देखने में बिता दूँ। मैं काम करना चाहता हूँ।”

“और काम सपना के सीधे परा से नहीं हो सकता?—सीधे पैरो से सीधे हाथा से।”

“जा हाथ जिसमें के तिलवाड़ में उलझ जायें वे काम नहीं कर सकते। मैं जिसमें के अँधेरे में खो जाना नहीं चाहता।”

मेरे छाया में ज़िन्दगी का रास्ता जिसमें की रोशनी में मिलता है।

‘रोशनी मन की होती है, अलका तन की नहीं।’

“जिस के तन में मन राशन हो, वह जिसमें अँधेरा नहीं हो सकता।”

देखने की अलका का बात भारी पड़ रही थी। इसलिए कुमार खड़ा उठा। अलका से उस ने यह बात इसलिए नहीं चलाया थी कि वह अपना नुकता नजर अलका को समझा सके, या अलका का समझ सके। पर बात खुद ही यह माँड़ ले गयी थी। इसलिए कुमार ने बात का रंग बदल दिया। उस के मन में खीझ थी, और वह चाहता था कि अलका भी खीझ उठे। कहने लगा

‘जिस्में अँधेरा हो या राशन, पर तुम आज बीस रुपये नहीं कमा सकाओ।’

“न सही।”

“ये रहे उस दिन के नन्नीवाले पस।”

“अच्छा।”

“शायद कभी न कमा सको।”

“न सही !”

“फिर क्या करोगी ?”

“बेरोजगार लोग क्या करते ह ? कुछ नहीं करते ।”

कुमार का खयाल था कि उस ने अलका को बड़ी कटीली बात कही थी, इसलिए अलका जरूर झुंझला उठेगी । अगर उस की आखा में आसू नहीं भी उतरेंगे, तो उस की आवाज में आसू जरूर उतर आयेंगे । पर कुमार ने देखा कि अलका बड़े आराम से अपने बाजू के खुले कफा को मिला रही थी, और बाहर बगमदे में पानी का घड़ा लेकर लौटे हुए हरिया को आवाज दवर कह रही थी कि काफी के खाली प्याला को उठाकर ले जाये ।

कुमार को अपनी कही हुई बात पर पछतावा हुआ, और दिल की कड़वाहट को हटाने के लिए बोला, “इधर दबो, रोशनी की ओर ।”

“क्या ?”

“तुम्हारी आखें भर आयी ह ।”

“वह किस लिए ?”

“मेरी बात मलानेवाली नहीं थी क्या ?”

“हागी, पर मैं रो नहीं सकती ।”

“क्या ?”

‘क्याकि जिम त्ति मैं इस राह पर चली थी, आग्यो के सार आसू पीकर चली थी ।’

“अलका ।

अलका ने कोई जवाब न दिया, और पहाड़ी कपड़े उतारकर उस ने अपने कपड़े पहन लिये । अलका जब चली गयी तो कुमार को लगा कि वेगानगी का यह रास्ता, जो अलका के सूखे आँसुओं से भीगा हुआ था, बहुत फिमिल भरा रास्ता था । और किसी दिन किसी दिन इस रास्ते से कुमार का पैर जरूर फिमिल जायेगा और वह अपनत्व की गहरी ग्राइयो में जा पड़ेगा ।

५

अगले दिन सुबह अलका आयी तो कुमार रोज की तरह मेज पर काम नहीं कर रहा था । चारपाई पर लेटे हुए कुमार अपना खिर चारपाई के पाये पर रखा हुआ था । एक हाथ से वह पाये को सहला रहा था जमे वह काफी देर से पाये के साथ अपने दुःख-मुख की बातें करता रहा हो ।

‘तबीयत ठीक नहीं है क्या ?’

“ठीक ह ।”

“रात को देर तक काम करते रहे होंगे ?”

‘नहीं ।’

‘कुछ पढ़ने रहे क्या ?’

‘नहीं, या ही नींद उचट गयी था ।’

रातें चाहे अँधरी हा चाहे उजली कुमार रात को पहाड़ी पगडण्टिया पर घूमता था । वह अक्सर अकेला घूमता । कभी-कभार वह अल्का के चौबारे के सामने से गुजरते हुए अल्का का बुला लेता । पर पिछ्छे कई दिनों से उस ने अल्का को नहीं बुलाया था ।

‘तुम कल शाम को क्या करती रही हो ?’

‘कल ? जो रोज़ करती हूँ ।’

‘रोज़ शाम को क्या करती हो ?’

‘कुछ भी कभी औरता के साथ चस्मे से पानी भरने भी चली जाती हूँ ।’

‘तुम खुद पानी भरने जाती हो ? वह बनिये का लड्डवा पानी भरा करता था ?’

‘अब भी भरता है । यो भी कभी न कभी औरता के साथ मुझे अच्छा लगता ह । वे पानी भरते हुए डेरो गीत गाती ह ।’

“तुम भी उन के साथ गाती हो ?’

‘कई बार ।’

‘और क्या करती हो शाम को ?’

‘कई बार मैं उन के साथ मटर तोड़ने चली जाती हूँ ।’

“और जब मटरा का मौसम न हा ?’

‘मागरे तोड़ने चली जाती हूँ मिर्चें तोड़ने चली जाती हूँ पालक की पत्तिया तोड़ने चली जाती हूँ । और कुछ नहीं तो उन के साथ धान फटवने बठ जाती हूँ ”

“और ?’

‘और कई बार उन से मैं गलीचे की बुनाई सीखती हूँ ।’

“वह किस लिए ?’

‘गलीचे में जब फूल बनते ह तो मुझे अच्छे लगते ह ।’

और ?’

‘कई बार नाथी और रामो मुझ से पन्ने के लिए आ जाती ह ।’

वे क्या पढती ह ?

उन के छाविन्द फौज में गये हुए ह । उन का दिल चाहता ह कि वे अपने छाविन्द को खुद सत लिखें ।

‘तुम कल शाम को क्या करती रही हो ?’

“कल ? कल सालिया के बूढ़े बाप के घुटना पर तेल मलती रही हूँ । उस के घुटना पर बड़ी सूजन थी । उन की गाय बीमार थी, सालिया और उस की घरवाली उस की दवा-दारू में लगे हुए थे ।’

“तुम ने इन सब के साथ सम्बन्ध जोड़ लिये ह । कितनी आसानी से तुम रिश्ते जोड़ लेती हो । तुम झट किसी को बहन कह लेती हो, किसी को अम्मा, किसी को बापू । परसों मैं चश्मे के पास से गुजर रहा था । मेरे परो की आवाज सुनकर करमे की अर्धी मा मुन से तुम्हारी बात पूछने लगा । उमे रोप था कि तुम तीन दिन से उस के पास नहीं गयी हो । उस की बेटी उसे ठिठोली कर रही थी कि तीन दिन से अम्मा की लाठी सायी हुई थी । पर अल्का ?”

“जी ।’

“तुम्हारा और मेरा क्या रिश्ता ह ?’

‘वास रुपया का रिश्ता ?’

कुमार ने एक उच्छ्वास लिया, और मिरहान के नीचे हाथ डालकर बीस रुपये निकाले ।

“ये लो अपने बीस रुपये ।”

“पर आप ने कहा था कि अब मैं ये रुपये कभी न कमा सकूँगी ।”

“कहा था, पर ”

‘मुझे रोजगार छूटने का कोई शिक्वा नहीं ।

“आगे का मुझे पता नहीं, पर ये तुम्हारे पिछले हिसाब के देने ह । पिछले ?

‘हा ।

‘कब के ?’

“रात के ।”

“आज रात के ? इस गुजर चुकी रात के ?’

“हा ।”

“कह बने ?’

‘मेरा इश्कार था कि मुझे जब भी तुम्हारे जिस्म की जरूरत पड़ेगी, मैं बीस रुपया से उस जरूरत की कीमत दूँगा ।”

“हाँ, पर रात को मैं यहाँ आप के पास नहीं थी ?’

“तुम रात को यहाँ थी, अलका, सारी रात यहाँ थी ।’

“सपने में ?’

“हा, सपने में ।”

अल्का हम पड़ी ।

‘यह हेगने की बात नहीं, अल्का ! जिस इश्कार को कार्द दिव में पूरा कर

ले, रात को खुद ही उस इकरार के सामने झूठा पड़ जाये, उसे क्या कहा जाये ।”

“उसे यह कहा जाये कि वह अपनेआप से गलत इकरार न किया करे ।”

“मुझे गलत या ठोक् की वहस में नहीं पड़ना । पर जो इकरार मैं ने अपनेआप से किया हुआ है, वह मैं जरूर पूरा करूँगा । अगर मेरे सपने मेरा इकरार तोड़ेंगे तो मैं उस की कीमत दूँगा ।’

“फिर तो मेरा इन्तजार पक्का हो जायेगा ।”

“तुम्हारा मतलब है कि मुझे ऐसे सपने रोज़ आया करेंगे ? यूँ डबिल ”

‘मेरा यह नाम पुराना पड़ गया है आज कोई नया नाम रखना चाहिए था ।’

गुस्से में कुमार के हाथ कापने लगे । चारपाई के पाये की उस ने दोनों हाथों में इस तरह कसा कि अगर पाये की जगह उस के हाथों में अलका का गला हाता, तो वह सचमुच घुट गया हाता ।

किमी चीज का कोई बदल नहीं होता अलका ने हँसकर कहा और पाये के पास बैठती हुई वाली, अगर मेरा गला दबाने का दिल है तो दबा दाजिए । लकड़ी के पाये में अपने हाथ क्यों छीलते हो ?’

कुमार ने सचमुच ही चारपाई से उठकर दोनों हाथ अलका के गले पर कस दिये । हाथों के छूने की भर थी कि कुमार का लगा कि जमे उस के हाथ गुस्से में नहीं, अलका के अग-अग को छूने की ताप से काँप रहे थे ।

कुमार ने हाथ इस तरह झटककर अलका की गर्दन से दूर हटा लिये जमे के भूले भटके आग की लपट से छू गये हा ।

“माई गाड कुमार ने अपने माथे से घबराहट की बूँदें पोछी ।

‘आखिर ईश्वर को याद करने का भी तो काई समय चाहिए ।’ अलका हँसी ।

“तुम्हारा बस चले तो मुझे बान गाग बनाकर छोड़ो ।’

“बान गाग ?”

एक बार वह किमी लडकी से मिलने गया था

‘ फिर ?

‘ उस देखकर लडकी के बाप ने लडकी को दूसरे कमरे में भेज दिया ।

“फिर ?”

“रात का वक्त था । मेज़ पर मोमबत्ती जल रही थी । बान गाग ने मोमबत्ती की लौ पर अपना हाथ रख दिया ।”

‘क्या ?

“उस ने लडकी के बाप को कहा कि वह उतनी देर तक मोमबत्ती की लौ पर हाथ रखे रहेगा जितनी देर तक वह लडकी उस के सामने खड़ी रहेगी । तुम इस दीवानगी को समझ सकती हो ?’

‘हा ।

“मैं नहीं समझता ।”

“उस लड़की का बाप भी नहीं समझ सका हागा ।”

‘नहीं, वह भी नहीं समझ सका था । कमरे में जब जलते हुए मास की बू फल गयी ता लड़की के बाप ने हाथ मारकर मोमवत्ती बुझा दी और उस दीवाने को कमरे से निकाल दिया ।’

“अपनी दीवानगी की कीमत खुद ही चुकानी पड़ती ह ।”

“पर मैं यह कीमत चुकाने के लिए तयार नहीं हूँ । यह दीवानगी मुझे कतई मजूर नहीं ।’

यह दीवानगी हर किसी के हिस्स नहीं आती । वान गांग और अलका जैसे लोग कभी-कभी हा पदा हाते ह ।

अलका ने जब वान गांग से अपनी तुलना दी ता कुमार का हँसी आ गयी ।

‘अगर तुम वान गांग के काल में पैदा हुई होती तो बेचारे को इतने दुखों में से न गुजरना पड़ता ।’

“शायद मैं इस जन्म में उस लड़की का हिसाब ही चुकता कर रही हाऊँ जिस ने जलते हुए मास की बू तो सूँघ ला थी पर साथ के कमरे से बाहर निकलकर नहीं आयी थी ।’

“यू आर क्रैजी ।’

सिर्फ इतना खयाल रखना कि ‘क्रैज’ छूत की बीमारी होता ह ।”

‘यह छूत की बीमारी तुम्हें और वान गांग को ही हो सकती ह । मुझे नहीं हा सकता

कुमार ने लापरवाही से अलका का हाथ पकड़ा । हाथ को पहले अपने माथे से छुआया, फिर अपनी आखा से, फिर अपने होठों से और फिर अपनी गरदन से । और फिर कहने लगा, ‘मैं तुम्हारे हाथों का चाहे एक बार छूऊँ और चाहे हजार बार, यह छूत की बीमारी नहीं हो सकती ।’

‘यह बीमारी हानी हा ता बिना छुए भी हो जाती ह ।’ अलका ने भी लापरवाही से जवाब दिया ।

हवा बहुत तेज चल रही था । अलका की पीठ खिड़की की तरफ थी । अलका ने अपने बालों को चाहे कई बार अपने कानों के पीछे किया था, पर माथे की छोटी छोटी लट्टें नहीं टिकती थी । कुमार ने आगे झुककर अलका के माथे पर बिसरे हुए बालों को मुट्ठी में भरा, और फिर उस के होठों की साँस में से एक गहरी साँस भरकर बालों “कई जन्म मुझ पर असर नहीं कर सकता ।”

‘जन्म इतने सामान में नहीं होते जितने खयाल में हाते ह ।” अलका ने कहा, और साथ के कमरे में जाती हुई वाली “आजा काम करें ।

कुमार के पर आदत की तरह साथ के कमरे में चले गये । उस के हाथों ने

एक आदत की तरह मैत्र की बत्ती जलायी, पर उस लगा कि वह अभी इस कमरे में नहीं जाया था वह अभी अपने माने के कमरे में ही खड़ा था ।

‘मेरा खयाल है कि मुझे बीस रुपये और खर्चने पड़ेंगे’ कुमार ने कहा, और अलका का हाथ पकड़कर उसे फिर पहले कमरे में ले आया ।

कुमार ने कमरे का दरवाजा भिड़का दिया, और गिटकी के परदे को ठीक करते हुए बाला ‘यह सिर्फ जिस्म की मुत्ताजा है, अलका ! और कुछ नहीं । अगर तुम्हारी जगह इस समय मेरे पास कोई और औरत हाती तो भी ऐसा तरह होता ।’

कुमार की बात बड़ी अस्वाभाविक थी । अत्यंत अमानवीय । अलका की जगह अगर कोई और औरत होता तो वह इस बात का सह न पाता । अलका ने सिर्फ सहन ही नहीं किया, उस ने इस बात का समना भी और चुपचाप अपने कपड़े उतारने लगी ।

‘समझो ?’ कुमार ने पूछा ।

समझ गयी हूँ मैं, आप नहीं समझेंगे ।’

मैं नहीं समझा ? मैं क्या नहीं समझा ?

‘अपनी बात का ।’

‘मैं अपनी बात का नहीं समझा ?’

‘आप यह भी नहीं समझें कि आप ने यह बात क्या कही है आप को यह कहने की जरूरत क्या पड़ी ! अगर मेरी जगह कोई और औरत हाती तो आप का यह कहने का खयाल न आता ।’

‘क्योंकि कोई भी ऐसे समय ऐसा बात न कहता ।’

इसलिए कि लोग के मन का रिश्ता कोई नहीं हाता । सिर्फ घड़ी का घड़ी के लिए वे रिश्ते का भ्रम डालना चाहते हैं । यह भ्रम चुप रहने से भी पड़ सकता है । इसलिए लोग चुप रहते हैं पर जब किसी का रिश्ते से डर लगता हो तो सामांशी इस डर का बर्ण देती है इसलिए उसे बालना पड़ता है डर का तोड़ना पड़ता है ।

‘पर बीस रुपये का रिश्ता कोई ऐसा रिश्ता नहीं हो सकता जिस से किसी को डर लगे बीस रुपये दिये, रिश्ता बन गया, न दिये टूट गया ।’

‘जसी आप की मरजो है, साच लाजिए । पर कई रिश्ते ऐसे भी हाते हैं जो न लफजों की पकड़ में आते हैं जोर न रुपया की पकड़ में ।’

कुमार ने एक हाथ से अलका का अपनी तरफ खींचा, पर अलका की बात सुनकर उस ने दूसरे हाथ से अलका को पर हटा दिया । उस के मन में आया कि जो रिश्ता लफजों की पकड़ में नहीं आ सकता और जो रिश्ता रुपया की पकड़ में नहीं आ सकता उस रिश्ते को बाहों की पकड़ में भी नहीं लाना चाहिए ।

रिश्ता दिखाई नहीं देता था, पर जिस्म दिखता था । रिश्ता जाने कितनी दूर था, पर जिस्म बहुत नजदीक था ।

‘रिश्ते को तुम खोजती रहो मुझे सिर्फ तुम्हारा जिस्म चाहिए ।’ कुमार ने

कहा और अलका के हाथ का इम तरह बसकर पकड़ा जैसे अब अलका ने उम को बस्वाकार कर देना ही ।

कुमार की कहना अलका की पमलिया म चुभ रहा थी । अलका ने कहा कुछ न था, पर कुमार का लग रहा था कि उसे सास लेना मुश्किल हो रहा है । मुश्किल से सास लेते हुए अलका के होठों का कुमार ने अपने हाथों में इस तरह बसा, जैसे वह अलका की सास ताड़ दना चाहता हो । अलका का जो अस्तित्व कुमार की आवश्यकता बना हुआ था, उसी अस्तित्व से वह दुखा हुआ था । कुमार की अपनी नाडियाँ म उमलता हुआ खून आग की तरह गरम लग रहा था, और आज वह जमे जैसे अलका के कामल बदन का अपने लोहे की तरह जलते हुए शरीर से लगा रहा था, वह सोच रहा था कि यह कोमल-सी लडकी इस लोहे से टटती क्या नहीं ।

कुमार जल जलकर हार गया, और फिर राशनदान से आती हुई सूरज की एक किरण में उम ने देखा कि अलका बना की बना रेशम के गुच्छे की तरह उस की याँहा में झवट्टी हुई पड़ी थी ।

कुमार ने जब कपड़े पहनकर कमरे की जलमारी खाली ता अलमारी में से बास रुपये निकालकर अलका को देने हुए उस ने कोई ऐसी बात कहना चाही, जो अलका का दुखा सके । पर उस कोई बात न सूझी । कुमार के होठों पर धान कोई न आया, पर एक ऐसी मुमकराहट उभर आयी जो देखनेवाले का अपमान कर रही थी ।

कुमार के हाथों से रुपये लेते हुए अलका के हाथों पर भी एक मुसकराहट आयी पर एसी मुसकराहट जो सारे अपमान का पाकर एक मान से भर गयी हो ।

‘ चालीस रुपये राज । बीस रात के सपने के, और बीस दिन के सपने की पूर्ति के । ’ अलका ने कहा ।

तुम्हारा खयाल है कि तुम राज रात का मेरे पास एक सपना बेच सकागी ? मुझे आज के बाद तुम्हारा कोई सपना नहीं आयेगा ।

‘ ता फिर राज रात का जागते रहना ’ अलका ने कहा, और चारपाई से उठकर कपड़ पहनने लगा ।

दापहर तक अलका जिम तरह चुपचाप काम करती रही, दापहर के बाद उसी तरह चुपचाप उठकर घर चली गयी ।

कुमार ने गयी सायी, कुछ घण्टे और काम किया, और दिन ढलते ही वह सामने के पहाड़ पर घूमने चला गया ।

रात गहरी हो गया था जब कुमार लौटा । हरिया ने राज की तरह रागी बनाकर चून्हे की घीमा आग में गरम रखी हुई थी । कुमार ने राटी खायी और जब वह अपनी चारपाई पर सोन लगा तो उस आनसानी नौद से डर-मा लगन लगा । वह चारपाई में लपककर गठ बठा और उस लगा कि अगर यह सा गया तो वह नींद से भागा हुई पाइली से फिसलकर अपने के गहर कुएं में जा पडगा ।

अपना जवानी के भरपूर साल कुमार ने आमाना स बाट लिये थे। दौलत उसे इस तरह लगती थी जमे अपने हुनर के एवज में अपनी रागि कपड़े का जिम्मा उस ने एक बार उस सौप दिया हो, और फिर बार-बार उसे कुछ कहने से सुखरू हो गया हो। दौलत ने खुद ही जमे कुमार के लिए पहाड़ का इस वादी में एक घर बना दिया था, नही ता उस ने इतना भी उसे नही कहना था। शोहरत उसे हमेशा इस तरह लगती थी जसे एक बूढ़ी माँ अधिक देर अपने दिगड़े हुए बेटों के पास रहती ह—क्याकि उन्हें दुनियादारी की बड़ी जहरत हाती ह पर कभी कभी वह अपने अच्छे बेटा के पास आकर अपना दुख सुख रो जाती ह। इसलिए वह जब भी आती थी कुमार उस के पास बठकर उस की बातें सुन लेता था। और उसे जब भी जाना होता कुमार उस की गठरी उठाकर माड़ तक छोड़ आता था। ये बातें अब भी बसी थी जमी कुमार की जवानी के समय। पर कुमार की जवानी को उस के जिस्म की जिस भूख ने कभी नही सताया था, वह कुमार को जब मताने लगी थी। इस भूख का भी कुमार का इतना दुस नही था अगर उसे मालूम हाता कि यह सिफ जिस्म की भूख थी। वह हमकर इस भूख को दुलरा लेता। जदी नही ता दर से दुलरा जाती दुलरा ता जाती ही। पर कुमार अपने मन का गहराया से डर रहा था कि कहा यह भूख सिफ अलका के जिस्म की भूख न हा। जिस का मतलब था कि वह अलका से प्यार करने लगा था। प्यार करने का मतलब था कि उस के खयाल और उस के सपने सारी उमर के लिए अलका के रहम पर हो जायेंगे। कुमार ने हमेशा उन लोगो को कासा था जिहाने अपने सपने चादी से तौल लिये थे, या शाहरत को बेच दिय थे या किसी को मुहब्बत कर के हमेशा के लिए उस को नजर के महताज हा गये थे।

अलका ने दौलत भ, शोहरत में औरत में जा अंतर कुमार का बताया था उसे कुमार भा जानता था। दौलत जीर शाहरत की गुलामी का मुहब्बत का गुलामी से नही मिलाया जा सकता था। जब कोई मुहब्बत के सामने अपने सपने बेचता ह ता आँसुओ के भाव बेचता ह—पर कुमार का कसा के रहम पर जीना पसंद नही था। न पसे के रहम पर न शाहरत के रहम पर और न ही औरत के रहम पर।

इन्ही दिनो कुमार को दिल्ली से उस के एक दोस्त का खत आता कि दिल्ली भ उस ने एक बहुत बड़ा होटल बनवाने का ठेका लिया था। कुछ साल हुए एक नुमाइश के लिए कुमार का उस के इस दास्त ने बुलाकर तीन महीने अपने पास रखा था। कुमार की सहायता से उस ने पूरे सत्तर हजार रुपय कमाये थे। कुमार ने उस के लिए कई पदीलियन बनाये थे। उसी ने कुमार के हिस्से में से इस पहाड़ी वादी भ बहुत सी

जमीन लेकर कुमार के लिए स्टूडियो बनवा दिया था। अब फिर उसी दोस्त का खत आया था। वह कुमार को दो महीनों के लिए दिल्ली बुला रहा था। कुमार का चाहे पस का ज़रूरत नहीं थी, पर वह कुछ देर के लिए अलका से दूर जाकर अपने मन की हालत का ज़रूर समझना चाहता था। इसलिए उस ने दिल्ली जाने का फैसला कर लिया।

पूरे तीन दिन कुमार ने अलका का कुछ नहीं बताया। पर आखिर बताये ही चला था।

“आप जाइए, मैं यही रहूंगी। मुझे अमृतमर नहीं जाना।” अलका ने कहा।

“पर तुम तो महाने बहा बयो नहीं चला जाती हो? तुम्हारे पिताजी ने तुम्हें कई बार बुलाया है।”

“चली जाऊँगी। दो-तीन दिन के लिए मिल आऊंगी।”

“पर यहाँ अकेली क्या करोगी?”

“आप ने एक बार कहा था कि अगर कुछ पैसे आ गये तो वाग के पार के बाने में आप कुछ स्लेटा की छतें डालकर कुछ बुगिया बनायेंगे।”

“वह तो मैं उन लोग के लिए सोचता हूँ जो कभी इस बादी में रहकर कुछ काम करना चाहें।”

‘मैं भी उन लोगों में से हूँ। मैं यहाँ रहना चाहती हूँ। किसी के घर में किराये का कमरा लेकर रहना अब मुझे अच्छा नहीं लगता।’

‘पर तुम्हें यहाँ रहना ही कब तक है अलका! और छह महीने या एक साल। तुम्हारे पिताजी अब तुम्हारा विवाह करना चाहते हैं।’

‘मैं न रहूँगी तो मर जैसा कोई और रहेगा। पर अब आप के पास कुछ पैसे आ जायेंगे अब बुगिया ज़रूर डलवा दीजिए।’

“जोकर आऊँगा तो सोचेंगे।”

“मुझे आप उन का डिजाइन बना दीजिए।”

और तुम मेरे आने तक उन्हें बनवा लोगी?

‘हां।’

‘अकेली कैसे बनवाओगी?’

“चेतू चाचा सारा काम करेगा। सामान खरीदेगा, और मजदूर भी। उस के भी कुछ पस बन जायेंगे। आकल उसे पसे की बड़ी ज़रूरत है। उसे इस साल अपनी छोटी बत्ती का विवाह करना है। इसलिए वह काम करने के लिए खुशी से तैयार हो जायेगा।”

“पर पसे तो तब आयेंगे, जब मैं वहाँ जाकर जमा लूँगा।”

‘मैं अभी अपने पाम से खच देती हूँ। आप वहाँ से भेज दीजिएगा, या वापस आकर लौटा देना।’

कुमार जानता था कि अलका अमीर लडकी थी, और उस से बढ़कर मन-आयी करनेवाली । वैसे भी इस बात में उस की किसी दलील का काटा नहीं जा सकता था । उस ने अलका के कहने पर दो दिना में हा झुगिया के डिजाइन बना दिये । चेतू चाचा का बुलाकर अलका को सारा काम सौंप दिया और खुद दिल्ली जाने की तयारी कर ली ।

अच्छी भली सुबह गुजरी अच्छी भली दोपहरी बीती, पर इस भाव में बीतने वाली आखिरा शाम ने जाने क्या किया कि कुमार को लगा जैसे वह उन्मत्त ह । उदासी शायद कई दिना से उस की तरफ सरकती आ रहा थी, पर वह इस तरह पजा के बल दुबककर आयी थी कि कुमार को उस के जाने की जाहट तक न मिली । उस ने तब जाना, जब वह प्रत्यक्ष उस के सामने आ खड़ी हुई ।

‘सो तुम आ गयी हा ।’ कुमार ने उदासी के चेहरे की आर देखा । उस का गेहुँआ रंग शाम की लालिमा में दिप रहा था । उस ने कोई जवाब न दिया, सिफ थाड़ा सा मुसकरायी और धीमे से कुमार का हाथ पकटकर उसे बाहर बगीचे में जमरूंदों के एक पेड़ के पास ले गयी ।

‘बगीचे के इस कोने में अलका की झिलमिलती झुग्गी बनेगी ।’

‘हा । पर वह इस झुग्गी में कितने दिन रहेगी ?’

‘जितने भी रहे ।’

‘और इन तिनो की कीमत में सारी उमर के दद उसे दूँगा ।’

‘कभी तुम ने उस कीमत को भी देखा ह जा उस ने तुम्हें पाने के लिए दी ह, अब भी द रही ह और आगे भी न मालूम कब तक देगी ?’

‘ओह ।’

‘तुम ने उस के जिस्म का मोल बीम रपये आका उस न वह भी स्वीकार कर लिया ।’

‘मैं ने वास्तव में उस का मोल नहीं आका था । मैं न अपने और उस में अन्तर बनाये रखन के लिए ये रपये बिछा दिये थे ।’

‘मैं जानती हूँ । पर तुम उस के इस साहम की जाँर नहीं देखते जिम ने इस अपमान को भी अपना मान बना लिया ?’

‘यह तुम ने ठीक कहा ।’

‘तुम ने एक तरह से उसे बेश्या तक कहा ।’

‘मुझे यह नहीं कहना चाहिए था ।’

उस ने इस लफ्ज की भी ज़मीन से उठाकर उस ऊँची जगह पर रख दिया, जिस जगह पर सिफ बीबी का लफ्ज ही रखा जाता है ।

‘मुझे याद ह उस ने कहा था—जिम आगानी से मैं बेश्या बन सकती हूँ, उसी आगानी से बीबी भी ।’

“तुम्हें यह खयाल नही आया कि उस जसी औरत अगर बेइया भी होती, तो सिर्फ एक ही मद की ?”

“मुझे उस का अपमान करने का कोई हक नहीं था। पर तुम्हें मालूम है, मैं किस बात से डरता था ?”

“तुम मुझ से डरते थे।”

‘क्योंकि मैं यह जानता था कि तुम हरेक खुशी को बड़ी जल्दी सूँघ लेती हो।’

‘खुशी वस्तुआ में नहीं होती, खुशी मन की अवस्था में होती है। मैं वस्तुआ को सूँघ सकती हूँ, उन के पीछे पड़ सकती हूँ पर मैं किसी के मन का अवस्था को कुछ नहीं कह सकती।’

‘मैं अलका को पाना नहीं चाहता क्योंकि मैं उस के लो जाने में डरता हूँ।’

‘दूसी लिए मैं तुम्हारे पास आ गयी हूँ, पर अलका के पास जाने की हिम्मत मुझ में नहीं।’

‘यह भी मैं जानता हूँ कि तुम एक बार ज़िम के पास आ जाती हो उस के अगल रहती हो। मैं उमर भर तुम्हें लिये लिये पिन्गा।’

‘मैं तुम्हारे कई काम सँबाहूँगी।’

“कौन-से काम ?”

“तुम जब तसवीरें बनाओगे मैं उन का आखा में बाजल लगा दिया करूँगी।”

‘पर’

“मैं जिन लोग की दवात में मियाही भरती हूँ, जानते हो, उन की बल्म में से कैसे गात निकलते हैं ?”

‘पर जिन हाथा में कल्म पकड़ी हुई हो या ब्रस पकड़ा हुआ हो, तुम ने अभी उन हाथा की किस्मत देखी है ?’

‘किस्मत को वस्तुआ के गज में नहीं मापना चाहिए।’

न सही। अवस्था के गज में नहीं। पर यह अवस्था कसी है। हर साँस के साथ ही मेरे वदन में एक दद जाग उठता है।’

कुमार ने अपना नीचे का होठ अपने दाता में बाँटा, और आँखें बंद कर के बायें हाथ से अपनी छाती को दबाया।

‘आप की तबीयत ठीक नहीं।’ अलका ने धीरे से अपना एक हाथ कुमार के कंधे पर रखा। कुमार ने गरदन घुमाकर देखा अलका उस के पीछे खड़ी थी। कुमार चुपचाप अलका के चहरे की ओर देखता रहा। फिर उस ने कंधे पर रखा हुआ अलका का हाथ धीरे से अपने हाथ में लिया और हाँठा पर रख लिया।

कुमार चुपचाप अलका का हाथ पकड़कर धीरे धीरे बग़ीचे से बाहर आ गया और बाहर की कच्ची मडक से होना हुआ सामने के पहाड़ की पगडण्डी पर चढ़ने

लगा। वही-वही कोई कैंटाली झाड़ी अल्का के बपड़ा में उलझ जाती थी। कुमार आगे-आगे चलता, टहनियों को हाथ से हटाता, अल्का के लिए रास्ता बनाते हुए पहाड़ की पगडण्डी पर चढ़ता गया।

एक जगह एक चौड़ा पत्थर आसा की तरह बिछा हुआ था। कुमार ने अल्का को उस पत्थर पर बिठा दिया। खुद भी उस के पास बैठ गया। फिर धीरे से उस ने अल्का का सिर अपने गीने को उस जगह से सटा लिया जहाँ उस साँम लने में दब हो रहा था।

एक ठण्डा मरहम-सा कुमार के सीने पर लग गया। वह दायें हाथ से अल्का के बालों का सहलाने लगा। अल्का के लिए यह इतना नया अनुभव था कि वह उस से इस अनुभव का ताप न सह सकी। उस की आँखों में आँसू उमड़ जाये।

कुमार ने अपने पारो से अल्का के आँसू पाछे और फिर धीरे से उस के छोटा को चूमता हुआ बोला, पगली! तुम तो कहती थी कि मैं जब इस गन्ते पर चली थी तो आँसा के सारे आँसू पीकर चली थी ?

अल्का का गला भर आया। वह कुछ बोल न सकी। कुमार ने एक छतराये पेड़ की तरह अल्का का अपने गले से लगा लिया—एक कामल सी बेल का अपने गले से लगा लिया।

अल्का की हिचकियाँ बंध गयीं। कुमार ने एक-एक हिचक को चूमा और फिर अल्का का माथा चूमकर बाग “तुम मुझे माफ नही कर सकती ? मैं ने तुम पर बहुत सन्तिया की ह।

अल्का ने अपनी कापती उँगलियाँ से कुमार के होठ चुपा लिये। फिर एक गहरी मान लेकर वह बोली मैं ने सन्तिया की आदत बना ली थी इसी लिए मैं कभी नही रोयी थी। पर मैं ने इस नरमी की आदत नही बनायी थी।

कुमार का मित्रगी में यह शायद पहला अवसर था कि कुमार की जागें सजला गयीं। उस ने भोगी आवाज़ से कहा “अगर तुम कहाँ तो दिली न जाऊँ। मैं काम करने के लिए नही जा रहा मैं तुम से भागकर जा रहा हूँ।

अल्का कुमार के चेहरे की तरफ देखने लगी। चन्द्रमा ने बादल का एक टुकड़ा हाथ से दूर हटाया, और कुमार के चेहरे की तरफ देखने लगा। वह भा शायद अल्का की तरह चंचित था।

जिम ने घने जंगल में चाँदनी का जादू न देखा हो उसे मेरी हालत का पता नहीं चल सकता। तुम्हारा जादू इस चाँदनी से भी गहरा है जादूगरनी !” कुमार ने अल्का की गरदन को अपने होठों से छुआ।

अल्का की गरदन का कुमार के हाँठ ने भी छुआ और हाँठ से निकलकर गहरी साँस ने भी।

‘आप बड़े उलझ ह।

“इतना मैं जिंदगी में कभी उदाम नहीं हुआ।”

“चादनी का यह जादू क्या है ? जादू उदासियाँ दते हैं ?

“उन की दी हुई हर चीज़ के पाछे एक गहरी उदासी हाती है। क्या-क्या जादू उतर जानवाली चीज़ है।”

“मेरा जादू भी उतर आयेगा ?”

“अब मेरे अपने बस में कुछ नहा रहा, अलका ! सब कुछ तुम्हारे बस में हो गया। यह जादू तुम्हारे रहम पर रहेगा।”

“आप इसी लिए उदास हैं ?”

“मैं ने इस जादू को तोड़ने की पूरी काशिश की थी। मैं ने इसी लिए तुम्हारे जिस्म की बीस रुपये कीमत रखी थी। सोचता था, सारा हिसाब साथ के साथ निपट जायेगा पर जिन औरतों के साथ हिमान निबटाये जाते हैं, उन के पास जादू नहीं होते।”

“अगर हिसाब निपट जाता आप खुश होते ?”

“मैं बड़ा स्वतंत्र होता, इसा लिए खुश होता। खुश अब भी हूँ, शायद इतना खुश पहले कभी नहीं हुआ। पर इस खुशी में एक अजीब तरह का दद मिला हुआ है। तुम्हें एक बात बताऊँ।”

“क्या ?

“जैसे जने यहाँ मे जाने का समय निकट आता गया, वैसे-वैसे मेरे सीने में दद होने लगा। सबकुछ का दद, जना निमानिया में सास लेते समय हाता है। पर मैं ने जब तुम्हारा सिर अपने सीने से लगाया, मेरा दद जाता रहा। यह एक बहुत बड़ी मुहताजी हो गयी है।”

कुमार ने अलका के सिर पर रखा हुआ हाथ उठा लिया और उस से अपनी दोना आँखें ढँक ली। एक टूटती-भी आवाज़ कुमार के मुँह से निकली, “मैं ने आज तक हर स्वाद से अपनेआप का मुक्त रखा हुआ था। छुटपन में माँ ज़र गरम पराँठे बनाती थी ता मैं जान-बूझकर रात की बासी रोटी खाया करता था कि कहीं मेरी जीभ को किसी स्वाद की आत्त न पड जाये अलका, जल्ना दख, मैं किस तरह तुम्हारे अधीन हो गया हूँ।”

चुप की चुप बठी हुई अलका का कुमार ने दाना बाहा से क्षमशोर “अलका, मुझे बताओ कि कभी मुझे छान ता नहा जाओगी ? इस चादनी का जादू कभी न उतरगा ? इस मेरे सीने में जब दद हागा तुम अपना सिर मेरे सीने पर रख दिया करोगी ? जल्का अलका अगर तुम कभी मुझे छड कर चला गया

अलका ने अपनी दानो आँखें इस तरह भीच ली, जस वह अपने सार के सारे आसू पी रहा हो।—मिफ अपने ही नहीं कुमार के आसू भी।

तुम वाग्नी क्या नहीं ?”

“इसलिए कि मेरा जादू चल गया है।”

‘तुम बहुत दुःख हो, अलका ?’

“मैं बड़ी उदास हूँ।”

“क्या उदास हो ?”

“मुझे नहीं मालूम था कि मेरे जादू का यह असर होगा।”

‘तुम जा कुछ चाहती थी, तुम ने पा लिया। अगर कुछ गँवाया है तो मैं ने गँवाया है। तुम ने कुछ नहीं गँवाया।’

“मैं इसी लिए उदास हूँ कि आप का वह गँवाना पड़ा जिसे आप गँवाना नहीं चाहते थे।’

“पर मैं अपनी स्वतन्त्रता को गँवाये बिना तुम्हें नहीं पा सकता अलका। मैं तुम्हें पाना चाहता हूँ।’

मुझे पाने का सयाल छाट दाजिए।

‘यह तुम कह रही हो, अलका।’

“हाँ।”

पर मैं तुम्हारे बिना रह नहीं सकता भर जिस्म में एक आग जमी भूख जग उठी है।

“मैं आप की कीमता पर ही आप का अपना जिस्म दे दिया बूझेंगी।

‘पर बीस रुपये देकर तुम्हारे जिस्म का लेना तुम्हारे जिस्म का अपमान है अलका।’

“मुझे यह कभी अपमान नहीं लगा, फिर भी कभी नहीं लगा।

“पर मुझे यह हमेशा लगता रहा है कि मैं तुम्हारा अपमान करता हूँ।’

‘पर यह अपमान कर के आप खुश होते थे।’

‘क्याकि इस तरह मेरी स्वतन्त्रता पास रहती थी।

“बहुत अब भी आप के पास रहनी चाहिए।’

पर मैं दा चीजें नहीं पा सकता अलका। मुझे एक चीज खानी पड़ेगी। तुम्हीं बताओ तुम दाना चीज पा सकते हो ?

“हाँ।

“मुझे भी, और स्वतन्त्रता का भी ?’

“मैं ने दाना पायी है।

“यह तुम कैसे कह सकती हो—अगर बल में दिल्ली चला जाऊँ, तो वहाँ मैं दो महीने रहूँगा। क्या तुम सोचती हो कि वहाँ मैं किसान और औरत के पाम नहीं जा सकता ?’

‘जा सकते हो, पर जाआगे नहीं। जाआगे भी तो मैं आप के साथ हाऊँगी। आप अकेले नहीं जाआगे।

“यह कम हा सकता ह ? ”

‘जाकर देख तीजिएगा ।’

“पर मैं यह देखकर क्या करूँगा मैं तुम्ह पाना चाहता हूँ ।

“मुझे आप कभी नहीं पा सकते ।”

“कम तक नहीं पा सकता ?”

“जब तक आप की मुहब्बत और आप की स्वतन्त्रता मिलकर एक नहीं हो जाती ।”

“पर ये दाना अलग अलग चीजें ह, अलका ! ये कैसे मिल सकती ह ? कभी नहीं मिल सकती ।”

“जिस दिन ये दोनों मिल जायगी, उसी दिन के बाद आप उदास नहीं होंगे ।”

पर अलका

‘आआ चल आप की सुनह बहुत जल्दी उठना ह ।

“मुझे सुबह उठने की कोई जल्दी नहीं ।

‘आप को सुनह की गाड़ी से दिल्ली जाना ह ।’

‘मैं दिल्ली जाकर क्या कहूँगा ।

“काम कराओ ।

तुम मेरे साथ चलाओ ?’

मैं यही रहकर काम करूँगा ।

“झुगिया डलवाओगी ?

“हा ।

‘लौटकर बनवा लो ।

“मैं ने लखड़ी मँगवा ला ह । छन के लिए स्लेटें भी कल आ जायेंगी । मिस्त्रा और मजदूर कल सुबह आठ बजे आ रहे ह ।’

उस का वाइ बात नहीं । पर क्या तुम चाहती हा कि मैं अकेला जाऊँ ।

‘हा मैं चाहता हूँ कि आप अकेले जायें ।’

‘तुम मुझे पाना चाहती था, अलका ! अब जब मैं अपना सब कुछ तुम्हारे हवाले कर रहा हूँ तुम कुछ भा नहीं पाना चाहती ?’

“इस बात का जवाब मैं फिर दूँगी ।’

‘कब ?

“जब आप लौट आयेंगे ।”

उस रात दुमर को सोने समय एक अजीब खयाल आया कि कल सबेर जब वह दिल्ली जायेगा, ता यह भीला की दूरी उसे उदामी की अधेरी कन्दरा में ले जायेगी ।

कुमार दिल्ली चला गया। उस का दास्त उमे स्पेशन पर लेने आया था। कुमार उसे पाच साल बाद मित्र रहा था। पर कुमार को भी, और उस के दास्त को भी लगा जैसे वे पाच साल के बाद नहीं पच्चीस साल के बाद मिल रहे हैं, और इन पच्चीस साल में उन दोनों की जून बदल गयी हो।

‘लोग कहते हैं कि उमर के साथ चेहरे का तज ढल जाता है। जब मैं गाड़ी के डब्बा का देख रहा था तो साच रहा था कि अब तुम्हारे बाल सफे हो गये होंगे। चेहरे पर उमर की झुरिया पड़ गयी होगी। अगर ज्यादा नहीं तो कुछ मोटे हो ही गये होंगे। और साथ ही पहाड़ा म रहते रहते तुम्हें ढग से कपड़े पहनने की आदत भी नहीं रही होगी। केवलकृष्ण चकित होकर बार-बार कुमार के चेहरे की ओर देखते हुए बालता गया पर कमाल है! तुम पहले भी खूबसूरत थे। पर इतने नहीं। सुबक-मे, युत की तरह तरागे हुए हैं। जाने तुम वहाँ किस चश्म का पानी पाते हो! तुम्हारे चेहरे पर शायद इसी को चेहरे पर नूर की आमद कहत है।’

कुमार चुप रहा। उस ने जरा हमकर केवलकृष्ण की ओर देख भर लिया। केवलकृष्ण कुमार के साथ पग करता था। कुमार के साथ ही उस ने जाट का अभियन किया था। पर धारे-धारे उस का सम्बन्ध सरकारी दफतरी से इतना जुड़ गया कि उस के लिए उस ने कई छोटे छोटे आर्टिस्ट नौकर रख लिये थे। एक फम के मालिक से बढ़ते-बढ़ते वह एक अच्छा ठेकेदार बन गया था। दिल्ली में उस की अपनी कोठी थी अपनी गाड़ी थी, और जमे-जमे रुपया बक म बढ़ता गया बस-बसे उस के शरीर का मांस भी बढ़ता गया और जितना उस के शरीर का मांस बढ़ता गया उतना ही उस का रंग पीका पड़ता गया। बड़े बड़े मूँगे कपड़े को भी उस के बदन पर देखकर ऐंत्ता लगता था जस दिल्ली के दलियो को कपड़े साने की जाँच रह गया है पर यह सारी बात कहने की नहीं थी इसलिए कुमार ने कुछ न कहा।

केवलकृष्ण ने अपनी कोठी में एक एकांत कमरा कुमार के लिए सजा रखा था। कुमार ने कुछ दिन आराम किया, फिर उस ने केवलकृष्ण के साथ वठकर काम का पूरा चारा समझा। केवलकृष्ण ने उसे बताया कि हाटल बनानेवाला की मुख्य शक्त यह है कि हाटल किसी तरह भी बिनेगी हाटल की नकल न है। वे ऐसा भारतीय माहौल उभारना चाहते थे जो आज तक भारत के किसी और हाटल में न था। वे साज-सगीत आदि भा एबदम भारतीय रखना चाहते थे। पिछले अनुभव से केवलकृष्ण को विश्वास हो गया था कि कुमार की कल्पना में एक ऐसा नयापन था जो बिदेशों का अनुकरण करनेवाले आर्टिस्टों में कभी नहीं आ सकता था।

वास्तविक शब्दों में जिसे पन्द्रह दिन और पन्द्रह रातों का व्यतीत कहते हैं—कुमार ने उसे इस काम में लगा दिया। काम का नेकसा उभर आया। इस दिमागी मेहनत के बाद अब उमादा काम कागुड़ी मेहनत का था। केवलकृष्ण ने कुमार की सहायता के लिए दो नये मेहनती आर्टिस्ट दे दिये।

होटल के सब से बड़े कमरे के वातावरण में दूसरे कमरों से वैशिष्ट्य आवश्यक था। मालिका ने सब से पहले उसी कमरे का भीतरी व्योरा तयार करने को कहा था। उसे तयार कर लेने के बाद जमे काम का काफी हिस्सा पूरा हो गया।

कुमार ने कमरे के चारों कोना में चार बुत बिछाये। एक बुत में मारगी बना रही थी, एक में सितार एक में गहनाई, और एक में बासुरी। कुमार ने बताया कि जिस समय सारंगी का रिवाज लगाना होगा, सारंगीवाले बुत में रोगनी जल उठेगी। बाकी तीन कोना के बुत अंधरे में रहेंगे। जिस समय सितार का रिवाज लगाना होगा, सितार के बुत की राशनी जल उठेगी, और बाकी के तीन बुत अंधरे में रहेंगे। इसी तरह सारे बुत क्रम से अपने सगीत के अनुसार राशन हाने।

कुमार जब से दिल्ली आया था उस ने अलका को कोई खत नहीं लिखा था अलका को सोचा तक नहीं। इस में उस के काम ने उस बहुत सहायता दी थी। बीस इक्कीस दिन के बाद अलका का ही एक छाटा-सा खत आया जिस में उस ने बगीचे की घुंगियों के विषय में लिखा था, और उम्मी के बारे में कुछ पूछा था। उसे साधारण सवाब थे, कुमार ने एक खतने बसा ही जवाब दे दिया। साथ ही केवलकृष्ण से लेकर दो हजार रुपये भी भेज दिये।

एक महीना गुजर गया। कुमार को न अलका की सुनि ने बताया, और न किसी गहरी उदासी न। तीन-चार बार कुमार ने अलका को सपने में गहरा देखा, पर सपने में किसी किस्म की तल्खी नहीं होती थी। अलका चुपचाप कोई तसवीर बना रही होती, या वह बाग का पानी दे रहा होती और या मुँह दूसरी ओर घुमाकर कोई कितान पढ रहा होता। इन साधारण-से सपनों ने न तो कुमार के मन में कोई लहर उठायी, और न किस्म भ। बस कुमार थोड़ा हराग था कि अलका का देखते ही उस के किस्म भ जा आग सुलग उठती थी किसी सपने में भा उस जाग का सेंक क्या नहीं था। यह बात कुमार को अच्छी लग रही थी। उस लग रहा था कि उस के स्वभाव की स्वतंत्रता दिनादिन उस के पास लौट रही थी।

बरीब डेढ महीना हो चला। कुमार का विश्वास हो गया कि अब जब वह अलका के पास लौटगा तो यह उस के लिए, और अलका के लिए एक नया अनुभव होगा। उसे लगता था जमे उस ने अपने किस्म की भूख का जीत लिया है। अन्तर के किसी कोने में वह अलका का आभारी था कि उस ने अगर देकर उसे दिल्ली भेज दिया था और कुमार साब रहा था कि अगर वही उस रात अलका भी उस चादनी के जादू में आ जाती तो कुमार शायद सारी उमर के लिए एक मानसिक गुलामी महिज

लेता। उसे विश्वास होता जा रहा था कि उस रात उस ने जा कुछ अल्फा को कहा था वह जगल में छिटकी हुई चाँदनी के असर में कहा था। वह सिर्फ निमाणा उन्माव था, जा चाँदनी में समन्दर की लहरा की तरह उमट आया था।

अपनी इस स्वतन्त्रता का परखने के लिए कुमार को एक मयाल आया। वेवल-कृष्ण चाह उस का पुराना दोस्त था, पर कुमार ने जा अपना जवानी में ही बुजुर्गी का बैग ओल लिया था उस कारण वेवलकृष्ण ने कभी कुमार के साथ उस की 'यक्तिगत जिन्दगा का कोई बात नहीं पूछी थी, फिर भी कुमार को यह बात बठिन न लगी। एक दिन उस ने वेवलकृष्ण से कहा कि वह इतने दिन 'ग्यातार काम कर के बहुत थक गया है एक दिन वह खाली रहकर गराम पीना चाहता ह और उस रात उसे एक औरत भी चाहिए।

“अच्छा,” वेवलकृष्ण ने छोटा-सा उत्तर दिया। कुमार ने किसी ग्याग रात की बात नहीं की थी इसलिए इस बात को वह भी भूल गया।

चार-पाँच दिन बाते हागे। कुमार जब एक रात अपने कमर में लौग तो उस के कमरे में एक बीस बार्डम माल की लडकी बठी हुई थी। कुमार का वेवलकृष्ण से कही हुई बात फिर भी याद न आयी। उस ने समझा कि उस लडकी ने गलती से यह कमरा वेवलकृष्ण की बीबी का समझ लिया हागा तभी वह वहाँ आ बठी।

वह लडकी कुरमी से उठ खड़ी हुई। वह हमी—जब पहले से जानता हा। कुमार का उस की हँसी परायी-सी लगी। कुमार ने जाधे उतार टुण काट को उस ने आगे बढ़कर घाम लिया और कोट की दूसरी बाजू उतरवानर काट का खूँटी पर टाग दिया। कुमार हरान था।

कुमार अभी चकित पडा हुआ था कि उस लडकी ने मेज पर रखी हुई शराब की बोतल को सधे हुए हाथ स साला और गिलाम में बफ डालकर उस ने एक भरा हुआ गिलास कुमार के सामने कर दिया।

कुमार का बात याद आ गयी पर वह हरान था कि वेवलकृष्ण की पिछली शामें सारी-की सारी उस के साथ बीती थी उस ने खाना भा उमी के साथ खाया था पर इस लडकी के बारे में उसे कुछ नहीं बताया।

शराब का गिलाम उस ने पकड़ लिया। पर कमर में राड हुए उस यह नहो महसूस हो रहा था कि कमरा उस का ह, और आज उस के कमर में कोई महमान आया हुआ ह। उसे लग रहा था जस वह अपने कमर में जाते हुए भूल से किसी दूसरे के कमर में आ गया हो।

‘बठिन उस लडकी ने जब हाथ स कुरसी की तरफ इशारा किया तो कुमार को मयाल आया कि अभी तब वह मया हुआ ह।

कुमार चुपचाप कुरमी पर बठ गया और उस ने अपने हाथ में पकड़े गिलास में स एक घूँट लेकर उस लडकी के चेहरा का तरफ इस तरह देगा जसे उसी से पूछ

रहा हो बताओ, अब तुम से क्या बात करूँ ।

लडकी ने शराब का एक और गिलास भरा, और कुमार की तरफ देखती हुई हाथ ऊँचा उठाकर कहने लगी, "आप की सेहत के लिए ।"

कुमार ने मुसकराकर उस लडकी की तरफ देखा । वह खूबमूरत थी । उस के होठ कुछ माटे थे पर उस के मुख पर फव रहे थे । उस का जिस्म गठा हुआ था । उस की पीठ का काफी हिस्सा नगा था, और कुमार को खयाल आया कि अगर पीठ का एतना हिस्सा नगा रखना हो तो जिस्म की गठन इस से कुछ कम होनी चाहिए, और साथ ही माथा कुछ और चौड़ा । और कुमार को खुद ही खयाल आया कि वह लडकी को देखने हुए इस तरह जाच रहा है जमे उसे सामने बिठाकर उसे पेंट करना हो ।

जाने कुमार से यह कैसे पूछा गया, "एक रात के कितने रुपये केवल ने देने तय किये हैं ?" लडकी चुप-सी रह गयी । कुमार ने सोचा नहीं था कि वह यह बात पूछेगा । पूछने की जरूरत भी नहीं था । कुमार को खुद ही अपनी बात अच्छी न लगी ।

"आप रुपया की फिक्र न करें । केवल साहब ने मुझे द दिये हैं । साथ ही एमे वक्त ऐसी बात नहीं करते " लडकी ने कहा, और मेज पर पड़ी हुई शराब की बोतल लाकर कुमार के गिलास में डालने लगी ।

'जब मन का रिश्ता कोई न हो, तो लोग रिश्ते का भरम डालना चाहते हैं । यह भरम चुप रहने से हां पट सकता है । इसलिए ऐसे मौका पर लोग चुप रहते हैं ' कुमार को अचानक अन्का को कही हुई बात याद हो आयी और साथ ही अल्का भी याद हो आयी ।

'यू डैविल !' कुमार के मुह में निकला ।

"लडकी घबराकर कुरसी से उठ खड़ी हुई और कुमार ने चौंकर उस की ओर देखा, 'मैं ने तुम्हें नहीं कहा ।'

कुमार हाथ में पकड़े हुए गिलास को एक सास में पी गया, और मुसलखाने में जाकर कपड़े बदलने लगा ।

कुमार जब कमरे में वापस आया तो वह लडकी कुमार के बिस्तर पर लेटी हुई थी । बिस्तर की चान्दर उस ने आगी हुई थी । अपने उतारे हुए कपड़े तह कर के उस ने मेज पर रख दिये थे ।

बिस्तर की ओर न जाकर कुमार ने मेज की दराज खोला और सिगरेट निकाल कर पीने लगा । कुमार को सिगरेट पीने का आदत नहीं थी । गांव में वह कई-कई महीने सिगरेट नहीं पीता था । शहर में जब कभी वह रंग लेने के लिए जाता था तो साथ में सिगरेट की दो डब्बिया भी ले आता । यहाँ दिल्ली आकर उस ने दो डब्बिया खरीदी थीं जो पिछले सारा महीना खत्म नहीं हुई थी । पर आज कुमार ने एक सिगरेट पी, दूसरी पी, और फिर दूसरी सिगरेट की आग से तासनी मुलगा ली ।

'आप बहुत सिगरेट पीते हैं ? सभी आर्टिस्ट बहुत पीते हैं " उस लडकी ने

बहा। कमर की खामोशी टूट गया। कुमार ने हाथ के गिगरेट का रागदानी में रग रगिया।

कुमार बिस्तर के पास खड़ा हावर काफी देर लडकी के चेहर की ओर देखता रहा। फिर उस ने हाथ से उस पर ओढ़ी हुई चादर की नुस्कर एव आर हटाया। चादर कंधे से हटायी छाता में हटाया, कमर तक हटा नी। कुमार जान क्या सोच रहा था। अगर इन वक्त उसे कोई देखता तो उसे लगता जमे कुमार एव डाक्टर था, और मरीज को घड़े गौर से देखते हुए उस के मजबूत व बारे में साध रहा था।

उस लडकी ने कुमार के गमाला को साइत हुए पूछा, "आप दिली नहीं रहते?"
में?

कवल साहब कहते थे कि आप कहा पहाड पर रहन हं। वहाँ आप अले रहे ह? अगर मैं वहाँ अवेला रहती होऊ तो मुझे क्या डर लगे।

'डर? मुझे क्या डर ह यहाँ! कुमार का अलका व गदगद हा आये।

'यू डम कुमार के मुह में निकला।

लडकी धवरावर चारपाई पर उठ बठी।

'सारी तुम्हें नहीं कहा। कुमार ने नरमी से कहा और फिर उस से पूछा
"तुम्हारा नाम क्या है?"

"कान्ता।"

'तुम रात को बापस बसे जाओगी?

अगर जल्दी माली हा गयी तो टक्की लेकर चली जाऊगी नहीं तो सुबह चली जाऊँगी।

कुमार को खयाल आया कि इस लडकी को जदी पारिण हो जाना चाहिए। लडकी के साथ बिस्तर पर बठते हुए उस ने बत्ती बुझा दी।

कुमार पल भर बठा रहा। और दूसर ही पल चौकवर उठ खड़ा हुआ, और खिडकी की तरफ देखत हुए वाला, बाहर खिन्की के पास बाई खड़ा हुआ ह।

"उस तरफ बगीचा है। इस वक्त बगीचे में कोई नहीं हो सकता।"

'अभी काइ उधर से गुजरा ह। उस की छाया खिडकी पर पड़ी थी।"

कान्ता बिस्तर से उठ बठी। अपने ऊपर चादर लपटकर उस ने एव हाथ से खिडकी का परदा हटाया और बाहर बगीचा देखकर बोली आप खुद देख लीजिए। सत्क की रोशनी बगीचे में पड़ रही ह। बगीचे में किनी की छाया तक नहीं "

कुमार ने भी कान्ता के पास जाकर खिडका से बाहर देखा। बाहर कोई नहीं था।

कान्ता बिस्तर पर लौट आया। कुमार ने खिन्की का परदा ठीक किया और कान्ता के पास जाकर बिस्तर पर बठ गया।

'आप अब भी खिन्की की तरफ देख रहे ह। मान लीजिए आप को ऐसे ही

शक हो गया। वहाँ कोई नहीं आ सकता।" काता ने कुमार की बाँहों पर अपना हाथ रखा। कुमार ने खिंटका से ध्यान हटा लिया, और दोनों आगे भीचकर कान्ता पर ओढ़ी हुई चादर को एक तरफ हटाने लगा।

कुमार के हाथ ठिठक गये—“बाहर किसी के चलने की आवाज आ रही है।”

‘बगीचे से चलने की आवाज आ ही नहीं सकती।’ कान्ता ने कहा।

“खिड़की की तरफ नहीं, दरवाजे की तरफ। बाहर लकड़ी के फग पर कोई चल रहा है।”

काता आहट लेने लगी। वहाँ कोई आवाज नहीं थी। वह कुमार के हाथ को झकझारकर बोली “अगर आप ने शराब ज्यादा पी होता तो मैं समझती नशे में हूँ। पर आप ने तो जमकर पी भी नहीं।”

“मैं नशे में नहीं काता। बाहर सचमुच कोई चल रहा है। पग की आवाज साफ सुनाई दे रही थी।”

“अगर कोई बाहर आया भी हो तो क्या है। मैं ने दरवाजे की मालक चला दी है।”

कुमार ने चुपचाप अपना सिर सिरहाने पर रख दिया। कान्ता ने कुमार का हाथ पकड़ा और उस का बाह को अपना पीठ के गिद लिपटा लिया।

‘तुम ने काच की इतनी चूड़िया क्या पहन रखी है?’

“काच की चूड़िया?”

“इन के खनकने की इतनी आवाज हो रही है।”

‘पर मैं ने तो काच की कोई चूड़ी नहीं पहनी हुई।’

कुमार चौकसर पलंग पर उठ बैठा। उस ने कमरे की बत्ती जलायी और काता की दोनों माँग कगड़िया की तरफ देखा।

—‘फिर वह चूड़िया की आवाज कहाँ से आयी थी?’

काता ने कोई जवाब न दिया। कुमार का सारा ध्यान काप रहा था। काँपते हाँठा से उस ने कान्ता को टक्का के पस लेकर चक्क जाने के लिए कहा। उस की तबीयत ठीक नहीं थी। साँकर शायद ठीक हो जाये।

कान्ता कुछ न बोला। चादर को अपने बदन से स्पर्शकर बिस्तर से उठ खड़ी हुई। उस ने मेज पर पड़े हुए अपने कपड़े हाथ में लिये और गुसलखाने का दरवाजा भिड़काकर कपड़े पहनने लगी।

काता चली गयी। कमरे का दरवाजा भिड़काकर कुमार अपने पलंग पर लेटा तो उस खयाल आया—खिड़की पर पन्ती अलका की छाया दरवाजे पर उस के चलने की आवाज और उस की बाँह में पहना हुई काँच की चूड़िया की खनक उस ने तो कुछ देखा था, और जो कुछ सुना था वह और कुछ नहीं था यह वह रास्ता था जो पागल दिल का एक जँवेरी गुफा की ओर जा रहा था।

सबेरा होते ही कुमार के लिए जब नीकर चाय लेकर आया तो बेवलकृष्ण भी उस के साथ था। आते ही उस ने कुमार के माथे को छुआ।

“बुत्तार दख रहे हो?”

“मुझे डर था, वही बुत्तार न हा गया हा।

“क्यों?”

“शायद तुम ने रात में बहुत पी ली थी। तुम्हें आदत नहीं ज्यादा पीने की। सिर का चक्कर जा रहे हाने?”

कुमार ने पलंग से उठकर चाय का प्याला बनाया और वह प्याला बेवलकृष्ण का देकर अपने लिए एक गिलास में चाय बनाकर उस ने पूछा, तुम्हें किस ने कहा कि मैं ने बहुत पी ली था?”

“मैं रात सो नहीं पाया। एक बार उठकर भी आया था तुम्हें देखने के लिए, पर दरवाजा बंद था, बमरे की बत्ती बुझी हुई थी। साचा कि सो गये हाने इसलिए मैं ने दरवाजा नहीं खटखटाया।

‘पर यह तुम्हें किस ने कहा कि मैं ने बहुत पी ली थी?’

आधी रात के करीब बाता का टेलीफोन आया था। वह काफी डरी हुई थी ”

“और वह कहती थी, कि मैं ने बहुत पी ली थी?”

“नहीं, उस ने यह नहीं कहा था। मैं ने ही सोचा कि शायद तुम ज्यादा पी बठे थे। इसलिए तुम बान्ता से बसी बातें करते रहे।

‘बैसी बातें?’

‘चलो छोडो उस की बातों का, पर तुम्हें हुआ क्या था?’

“वह क्या कहती थी?”

‘कहती थी ”

“कहते क्या नहीं?”

‘वह मुझ से माराज थी कि मैं ने उसे एक पागल आदमी के पास क्या भेजा था।’

कुमार हस पडा। बेवलकृष्ण ने मेज पर पडी हुई बोतल को दखा और बाला, “पर बोतल ता उसी तरह पनी हुई ह। मुश्किल से दो गिलास लिये हाने तुम ने।’

‘एक मैं ने पिया था एक बाता ने।’

“फिर तुम्हें हुआ क्या था?”

“जाने क्या हुआ था !”

“तुम्हें खिड़की में से जिन भूत दिखाई दते रहे ह ?”

“जिन भूत तो नहीं, एक जिनी दिखती रही है।”

‘कान्ता कहती थी कि तुम्हें कौंच की चूड़ियों की आवाज आ रही थी।’

‘जिनी ने हरे रंग की चूड़ियाँ पहनी हुई थी।’

‘सच बताओ, तुम ऐसी बातें कर-कर के कान्ता का डरा क्या रहे थे ?’

‘उमे नहीं डरा रहा था, मैं तो खुद डर रहा था।’

“कान्ता से ?”

“उस बेचारी से क्या डरता ”

“शायद तुम्हें वाता पसन्द नहीं आयी। पर तुम्हें उस का कुछ नहा कहना चाहिए था। मुझे सबेरे कह देते, मैं किसी और का बुला दता।”

“इस में कान्ता का कोई कुसूर नहीं।”

कुमार ने केवलकृष्ण को विश्वास दिलाया कि रात में जा कुछ हुआ था शराब का एक गिलास पी लेने की वजह से हुआ था, क्योंकि उसे शराब पीने की आदत नहीं थी। उसे चक्कर आ गया था। इसी लिए उस खिड़की में किसी की परछाई दिख रहा थी। इस में कान्ता का कोई कुसूर नहीं था। पर केवलकृष्ण का इस पर विश्वास न हुआ। उस ने यही सोचा कि कुमार को कान्ता पसन्द नहीं आयी थी। वह कान्ता को अपने कमरे में से वापस भजना चाहता था, इसी लिए वहकी-वहकी बातें करता रहा।

‘अच्छा मैं तुम्हारे लिए एक बहुत खूबसूरत लडकी का इन्तजाम करे दता हूँ। पमे जरा ज्यादा लेती है, पर कोई बात नहीं। केवलकृष्ण बोला, आज कहो तो आज बल कहो तो बल। जब कहो।’

कुमार कुछ देर अपने दास्त के चेहरे की तरफ देखता रहा। फिर उस ने चाय का एक घूट लेकर पूछा, कितने रुपये लेती ह ?

‘जितने रुपये में तुम्हारी एक पेंटिंग बिकती ह।’ केवलकृष्ण ने हँसकर कहा।

“क्या मतलब ?”

“मेरा मतलब है कि एक साधारण पेंटिंग। या तो तुम्हारी पेंटिंग का हजार रुपया भी मिल सकता है, इस से भी ज्यादा मिल सकता है। पर आम पेंटिंग का जम दा-अर्दाई सौ रुपया मिलता ह ”

“वह दा-अर्दाई सौ एक रात का लेती है ?”

“शहर में दा-अर्दाई सौ। अगर शहर से बाहर ले जाना हा तो दो के चार देने पड़ते हैं। पर तुम रुपये के फिकर में क्या पड़ गये ?”

नौकर चाय रखकर चला गया था। वह चाय के बरतन उठाने आया तो कुमार ने उसे और गरम चाय लाने के लिए कहा। नौकर चला गया तो केवलकृष्ण ने कहा

“तुम रुपया की चिन्ता न करा, सिफ यह बता दा कि कब बुलाऊँ। तुम कभी कभार शहर में आते हो वहाँ पहाड़ा में तुम्हें क्या मिलता होगा वैसे पहाड़िनें हातीं तो खूबसूरत हूँ ”

कुमार कुछ न बोला। वह मेज़ के खाने में से सिगरेट निकालकर पीने लगा।

‘किस साँच में पड़े हो?’

“किसी में नहीं।”

तो आज रात उस को बुला दूँ?

‘इतना क्या जल्दी है, अभी मैं पन्द्रह दिन यही हूँ।’

“दरअसल बात यह है कि मैं अपनी बीबी को कल उम की मा के घर छाड़ आया हूँ। उस की माँ कुछ बीमार थी। पर वह दा रातों उस के पास रहकर कल लौट आयगी फिर मुश्किल पड़गा ”

फिर रहने दा इस बात का। कभी फिर सही।’

फिर किसी को यहाँ बुलाना मुश्किल हो जायगा। किसी हाटल में तो फिर भी हो सकगा

दस लेंगे ’

कुमार ने बात टाल दा। छह दिन बीत गये। सातवें दिन दापहर का खाना खाते हुए कुमार ने कवलकृष्ण न कहा ‘बात बन गया है। मेरी बीबी अभी अपनी माँ का तरफ चली है। उस के चाचा का लक्की बम्बई से आयी हुई है। रात का वह वही रहेगी। मैं आज रात उसे बुला दूँगा।

कुमार कुछ न बोला। चुपचाप राटी खाता रहा। केवलकृष्ण ने ही फिर कहा बहुत खूबसूरत है। खान्ता कुछ भी नहीं उस के सामने।

पाना पीते हुए कुमार ने सीने में हल्का-सा दब हुआ। पर गिलास का मात्र पर रखकर जब कुर्मा में उठा तो उम के सीने में तब दब हुआ।

‘पानी गायन बहुत ठण्डा था ’ केवलकृष्ण बोला और उम ने दिया कि कुमार का सांस लेने में कठिनाई पड़ रही थी। उस ने कुमार का उम के कमर में ल जाकर पलंग पर लिटा दिया।

फिर वे पाना में कभी-कभी ऐसा हो जाता है। जमा ठीक हो जायगा। केवलकृष्ण ने कहा और गरम पाना में कुछ चम्मच ब्राण्डी डालकर कुमार का पिया दी।

कुछ देर कुमार उसी तरह उगड़ी हुई साँसें लेता रहा। फिर खाने ब्राण्डी का अमर हुआ कुमार का हृत्की-सा नोद आ गयी।

केवलकृष्ण का किमा जल्दरी काम पर जाना था। वह चला गया। वन उसे मज्जीन था कि अब तक कुमार की तबायत ठीक हो गया होगा पर वह दा पण्डा में लौट आया। कुमार की साँस उगी तरह उगड़ी हुई थी। उम का रंग दूध से पाला

पड़ गया था ।

“जब हम खाना खा रहे थे, उम वकन तुम्हें कोई तकलीफ नहीं थी ।”

‘पानी पीते-पीते हुई थी ।’

कभी पहले भी हुई है इस तरह ?”

“एक बार हुई थी ।”

‘इसी तरह ? या ज्यादा ?’

‘इस से कम थी ।

“तब तुम ने कौन सी दवा ली थी ?

कुमार ने बात करते-करते आँखें बंद कर ली । शायद दद बढ़ गया था । केवलकृष्ण ने गरम पानी की बातल तौलिये म लपेटकर कुमार के सीने पर रख दी । कुमार ने एक बार आँखें माली बोतल को दखा और एक अजीब सी मुसकराहट उस के हाठ पर खिल आयी । शायद उम वह दिन याद आ गया था जब उम ने अल्का का मिर अपने सीने से लगाकर कहा था, “मेरे इस सीने में जब दद होगा, तुम अपना मिर मेरे सीने पर रख दिया करोगी ?

केवलकृष्ण ने कुमार के माथे का छुआ । माथा गरम था । दद के फोर से शायद हृत्काम्पा बुझार हो आया था । उस ने डाक्टर को बुलाने के लिए नौकर भेज दिया ।

डॉक्टर आया । उम ने कुमार के सीने और पीठ को रखा और एक इजेक्शन लगाकर बोला ‘रात तक फक पड़ जायेगा । खाने के लिए कुछ मत देना । गरम पानी का सेंक दीजिएगा वम । अगर रात तक फक नज़र न आया तो एक इजेक्शन और देना हागा । अगर बुमार बढ़ जाये तो मुझे फौरन इतल कर दीजिएगा ।

डाक्टर चला गया । केवलकृष्ण हरान या कि मिनटों में क्या हो गया था । कुमार भी हरान था । इस दद का अहसास उम पहली बार तब हुआ था, जब अपने गाव में अल्का के साथ उम की आखिरी शाम रह गयी था । पर तब उसे आज जितनी हरानी नहीं हुई थी । शायद इसलिए कि उस दिन दद आज जितना नहीं था । कुमार सोच रहा था कि खदाला की गाठें जिसम की नाडियों में कम इस तरह उतर सकता है, कि नाटिया में मूजन आ जाये

‘अजीब बात है ’ केवलकृष्ण ने कुमार पर जादयी हुई चादर के साथ एक कम्बल भी जाड दिया और वाला, “तुम्हें यह नहीं लगता कि कोई चीज तुम्हें किसी वान से राव रही है ?’

लगता है ।

‘किस्मत को इस तरह ज़िद ठानत मैं ने कभी नहीं दखा ।”

“मैं ने भी पहले कभी नहीं दखा ।

“उम दिन भी अजीब बात हुई थी ।

“हा, अजीब बात हुई थी ।”

‘तुम वान्ता को ‘डबिल’ कहकर बुला रहे थे । मैं ने कभी तुम्हारी जवान से ऐसे लफ्ज नहीं सुने थे ।’

“मैं ने उसे कुछ नहीं कहा था ।

‘तुम्हें शायद मालूम नहीं, तुम शराब के नशे में थे ।’

‘मैं शराब के नशे में नहीं था ।’

“बट इट इज समर्थिम मैण्टल ।”

“शायद ।”

“पर आज तुम बिल्कुल ठीक थे—मण्टली अब भी ठीक हो । पर आज फिजीकली कुठ हो गया ह—तुम जानते हो कि मैं ने टेलीफोन से बात पक्की कर ली थी, अब फिर टेलीफोन कर के आया हू, उमे मना कर के आया हू ।’

“वह तुम से नाराज नहीं हुई ?

‘बड़ी नाराज थी, क्योंकि मैं ने सवेरे उसे बड़ी मुश्किल से मनाया था, उसे आज वही दूसरी जगह जाना था । घर कोई बात नहीं, मैं उस की बसर फिर कभी निकाल दूँगा, वह मुझ से नाराज नहीं हो सकती—पर मैं उस की बात नहीं सोच रहा था, उस का क्या ह, तुम नहीं तो दूसरी सही—पर मैं तुम्हारी बात सोच रहा हू ।

“मेरी बात ह ?

कुमार ने करवट बदली । दद कुछ थम गया था । पर करवट बदलने से सीने में दद की एक लहर-सी दौड़ गयी । उस ने एक घुटी हुई सास खींची और गरम पानी की एक तरफ खिसकी हुई बोतल को हाथ से ठीक किया ।

‘थोड़ी चाय पियोगे ? चाय का कुछ हरज नहीं ।

‘अच्छा ।’

केवलवृष्ण ने चाय भँगवायी । कुमार को एक बड़े तक्किये का सहारा दिया और उस के लिए चाय का प्याग बनाने लगा । चाय के घूट लेन हुए कुमार ने दो-तीन बार आँखें बंद की ।

“दल क्याग ह ?

‘नहीं ।’

“तुम कुछ सोच रहे हो ?

‘मैं सोच रहा हूँ कि दुनिया में कोई ऐसी वेश्या भी होती ह या नहीं, जो सिफ एक ही आदमी की वेश्या हो ।

‘एक ही आदमी की वेश्या ?’

‘जो सिफ एक ही आदमी को अपना जिस्म दे और एक ही आदमी से उस के पैसे ले ।

‘पर वह वेश्या कैसे हुई ?

“यही तो मैं सोच रहा हूँ कि वह वेश्या कबसे हुई।”

केवलकृष्ण ने कुमार व माये को छुआ। उसे लगा कि बुखार बढ़ गया है।

डाक्टर रात का एक धार फिर आया। वह जब इजेक्शन की सुई का और सिरिज को गरम पानी में साफ कर रहा था ता कुमार ने एक गहरी साँस ली। उसे लग रहा था कि वह अपने ही खयाल की पगडण्डी से फिमलता जा रहा है, और दिना दिन बेवसी के गहरे पाताल में उतरता जा रहा है।

९

कुमार ने अलका को अपने बापम आने की खबर नहीं दी थी। बुखार टूटने के बाद उसने दिला में सिर्फ दो दिन आराम किया था, और तीमरी नाम उसने बापम लौटने की तयारी कर ली थी। इसलिए जब गाड़ी स्टेशन पर पहुँची तो चेतू चाचा का स्टेशन पर दखकर वह हैरान रह गया। चेतू चाचा ने आगे बढ़कर कुमार व हाथ से सूटकेस ले लिया। उसने बताया कि वह पिछले तीन दिना से रोज़ स्टेशन पर आकर गाड़ी देख जाया करता था। अलका पिछले तीन दिना से उसे राज़ स्टेशन पर भेजती थी।

कुमार का जमीन पपराला से डेढ़ मील दूर थी। वह डेढ़ मील चलाई का रास्ता था। चेतू चाचा के आने से कुमार का आसानी जरूर हो गयी, क्योंकि नहीं तो सूटकेस का उठाने के लिए उसे पपराला से कोई आत्मी खोजना पड़ता। पर वह हरान था कि अलका पिछले तीन दिनों से उसे स्टेशन पर क्या भेज रहा थी।

बजनाय को जाती चौड़ी सड़क के दायें हाथ पहलू का सपाट छाती पर कुमार की जमीन था। दायें हाथ की पगडण्डी उतरने से पहले ही सड़क पर से जमीन का बहुत-सा हिस्सा नजर आने लगता था। सीटियों की तरह बिछे हुए घान के खेत अनारो और अमरुदा के पेड़ और जिन हिस्से में कुमार का स्टूडियो था वह भी। कुमार ने पगडण्डी के सिरे पर खड़े होकर पल्ला पूरा की लम्बी क्यारिया के पार के हिस्से में नया बनी हुई झुगियों के स्लेटों से ढके हुए माये सच्च्या की लाला में अपने मुँह उठाकर उस की राह देख रहे थे। चेतू चाचा के हाथ में बाश था, वह थोड़ा पीछे रह गया था। कुमार ने कुछ देर उस की प्रतीक्षा की, पर फिर उस के पाव बरबस पगडण्डी उतरने लगे। कुमार जब झुगिया के पास पहुँचा तो उसे एक झुग्गी के दरवाजे में से आग जलती नजर आयी। दरवाजे की चौपट पर पहुँचकर उस का दिल इतना धड़कने लगा कि वह एक मिनट के लिए वहीं रुक गया।

झुग्गी में बठी अलका ने शायद उस के पैरा की आवाज सुन ली थी। वह चौखट पर आ गया। इस समय अगर कोई ऊँची पगडण्डी से इस झुग्गी की तरफ देखता

तो उसे लगता कि गुग्गी की चौखट में किसी ने दो बुत गड़बड़ रखे हुए हैं।

गुग्गी के अंदर बाया दीवार के साथ एक बच्ची उचान थी। उचान पर ऊन का एक पहाड़ी गलाचा बिछा हुआ था। उचान के सामने एक पेड़ का एक चौड़ा छीलकर बटाव पड़ा हुआ था, जिस पर एक सरसा के तल का दिया जल रहा था। दीवार के बाने में मिट्टी की अगोठी में तीन मोटी-माली लकड़ियाँ जल रही थी। जलती हुई लकड़ियाँ की रोशनी अलका की पीठ की तरफ थी। इसलिए अलका के मुँह पर से यह नहीं दिख रहा था कि उस के चेहरे पर कितने रग आये थे और कितने रग गये थे।

सड़क से उतरकर पगडण्णी पर राखे हुए जमे कुमार के पर दरबस चल पड़े थे कुमार की बाँहें भी दरबस आगे बढ़ गयीं और आगे बढ़कर अलका को अपने साथ लगा लिया।

अलका ने कुमार को जम मिट्टी की उचान पर बटाया तो कुमार का मुँह आग की रोशनी की तरफ था। अलका ने नज़र भरकर देखा, और कुमार के बच्चे पर हाथ रखकर पूछा, “बीमार रहे क्या?”

‘तुम्हें किस ने बताया?’ कुमार ने अलका की ओर देखा। पर अलका की पीठ की तरफ रोशनी हाने से उसे चेहरे पर पड़ने अधरे में आँखें दिख सकती थी पर आँखा में आया हुआ पानी नहीं दिया सकता था।

“कितने दुबले हो गये हो। अलका ने धीरे से कहा और आग के पाम ढककर रखी हुई चाय पत्थर के प्याले में डालने लगी।

‘सिर्फ दो दिन बीमार रहा था, ज्यादा दिन नहीं। कुमार ने कहा और अलका के हाथों से चाय का प्याला लेकर पूछा “पर तुम कैसे जानती थी कि मैं वापस आ रहा हूँ। तुम चेतू चाचा का रोज स्टेशन पर बस भेजती रही हो? तुम ने कल भी उसे भेजा था परसा भी।’

‘मेरा कोई कुमूर नहीं इस चाय का कुमूर है।’ अलका ने अपने प्याले से चाय का घूँट भरा और हसकर बोला “परना मैं ने अपने लिए चाय बनायी। केतली से चाय डालकर जब मैं प्याला उठाने लगी तो मैं ने देखा कि मैं ने एक की जगह दो प्याला में चाय भर दी थी। मुझे लगा कि आप आ रहे हैं मैं ने चेतू चाचा को स्टेशन पर भेज दिया।

कुमार को लगा कि उस की आँखा में उतरा हुआ पानी उस के चेहरे पर दिखने लगेगा। जैसे भी बना वह हसकर बोला, “तुम में और भाव की उस अल्हड़ छाकरी में कोई फर्क नहीं जिस की परात में आटा गूँघते समय अगर आटा उछल जाये, तो समय लेती है कि आज कोई पाहुना आयगा।”

“असल में मैं चार दिना से डरी हुई थी।

“क्या?”

‘मुझे एक सपना आया था। सपने में आप ने मुझे बड़ी आवाज़ दी। आप

आवाजें देते गये और मैं सुनती गयी। मैं जहाँ से भी गुजरकर आप की तरफ आने लगी, सामने लाहरे का एक जगला आ जाता। शायद मुझे स्टेशन का खयाल रहा हो। स्टेशन पर जमे जगले लगे रहते हैं, वैसा ही एक जगला हर मोड़ पर आ जाता था। आप इस तरह आवाज देते जा रहे थे जैसे आप को मेरी बड़ी जरूरत हो। आवाजें सुनते सुनते मेरी नींद खुल गयी।

‘अलका !’

“सबसे उठकर मेरे दिल में आया कि दिल्ली चल दूँ, पर मैं जानती थी कि आप नाराज होंगे।’

“मुझे सचमुच तुम्हारी बड़ी जरूरत थी।” कुमार ने हाथ में पकड़ा हुआ प्याला दिये के पास पेन् के बटाव पर रख दिया, और अलका को कसकर अपने गले से लगा लिया।

“क्या जरूरत पड़ गयी थी मेरी ?’

बड़ी जरूरत थी दद हाने लगा था, बुझार हा गया था, इसलिए ”

“बाहर कोई आया है ”

‘चेतू चाचा हागा

कुमार उठकर झुग्गी से बाहर आ गया। चेतू चाचा सूटकेस ज़मीन पर रख रहा था। कुमार ने उसे सूटकेस दूसरी तरफ उस के कमरे में ले चलने के लिए कहा, और साथ ही कहा कि वह हरिया को खाना बनाने के लिए कह दे।

कुमार ने झुग्गी में लौटत हुए देखा कि झुग्गी की दीवार पर अलका ने एक बहुत बनी तसवीर बनायी हुई थी। काली लकड़ी में एक मद का चेहरा था, और आलम का लकड़ी में एक औरत का। मद की पीठ की तरफ एक सूरज था, पर सूरज का ज़्यादा हिस्सा आँधरे से ढका हुआ था। औरत की पीठ की तरफ एक सूरज था, पर सार का सारा सूरज रोशनी से भरा हुआ था। मद की आँख खुली थी, और सतक हाकर दुनिया की आरंभ देख रही थी। औरत की दोनों आँखों पर मद की छाया लिपटी हुई थी। कुमार काफी देर दीवार की तरफ देखता रहा, और आग का रोशनी में अलका के चेहरे की तरफ देखने लगा।

“अभी मेरे पास इतना हुनर नहीं कि बहुत अच्छा बना सकूँ।”

हुनर की तरफ कुमार का इतना ध्यान नहीं था। वह खयाल को देख रहा था। दीवार के जिस हिस्से में मद का बूत था, उस के पीछे बहुत कम जगह थी, जैसे वह बहुत थोड़ा रास्ता चलकर आया है। पर अलका ने जिस राह पर स औरत को आते दिखाया था, वह रास्ता बहुत लम्बा था। उस रास्ते पर गहरे लाल रंग बिछे हुए थे, जैसे उस का रास्ता जिज्ञासा और तलाश से सराबार है। पर मद का रास्ता दलीलों से भरा हुआ था। उस के रास्ते पर अलका ने मानसिक उलझाव की गहरी छायाएँ डाली हुई थी।

कुमार ने अलना को बाह्य में लेकर उग का माथा चूम लिया और बोला, "तुम्हारी इस औरत को प्रणाम करने का जी चाहता हूँ।" अलना ने कुमार के बंधे पर सिर रखकर आँखें बंद कर ली और शायद वान भी बंद कर लिये क्योंकि कुमार के मुँह से यह बात सुनने के बाद उसे और कुछ सुनने की जरूरत नहीं रही थी।

"जानती हो, मैं ने इस जगह का नाम चक्क नम्बर छत्तीस क्या रखा था ?"

"यह नाम आप ने रखा था ?"

'पहाड़ा में गाँव के नाम नम्बर पर नहीं होते। गाँव और भी बड़ी नहीं हाने, परन्तु हमारे गाँव का नाम था—चक्क नम्बर छत्तीस। साल भर के अरसे मैं जब मेरे माँ-बाप मर गये तो हमारी सारी जमान चाचा ने हथिया ली। मैं तब बम्बई आट स्कूल में पढ़ता था।

"आप ने लौटकर जमीन का कुछ न किया ?"

"एक बार गया था, पर जमीन का क्षण्डा निम्नाना मेरे बस की बात नहीं थी। वैसे भी हमेशा के लिए गाँव में नहीं रह सकता था। मुझे गहरा में रहना था।

कई सालों के बाद मेरे पास कुछ रुपये जमा हो गये, तो मैं ने यहाँ आकर यह जमीन खरीद ली।"

'जैसे चक्क नम्बर छत्तीस की जमीन लौटा ला।'

'तब मुझे ऐसा ही महसूस हुआ था। इसलिए इस का नाम चक्क नम्बर छत्तीस रखा था। पर फिर कभी इस बात का खयाल नहीं आया। आज तुम्हारी झुग्गी में खड़े खड़े मुझे इस तरह महसूस हुआ है जहाँ मैं उस गाँव में उसी घर में खड़ा हो गया हूँ—इस के साथ कोई तुलना नहीं उस की—पर मेरी माँ ने कमरे में इसी तरह एक चार पाई पर एक फूलकारी बिछायी हुई थी। कमरे की दीवार पर उस ने लक्ष्मी की तस्वीर बनायी हुई थी—आज इस दीवार की आर देगते हुए मुझे लगा कि जहाँ मेरी माँ की बनाया हुई लक्ष्मी वहाँ से चलती-चलती आज यहाँ आ गयी हो।'

इस तरह की पिथली-सा बातें करना कुमार की आदत नहीं थी। अलना इन बातों से भीगी हुई चाकती जा रही थी कि अभी अगर कुमार को इस बात का ध्यान आ गया तो वह जल्दी से अपनी पुरानी आदत को लौटाकर अपने मन पर लाह की परत चढ़ा लेगा। इसलिए अलना ने उस का हाथ पकड़ा और बाला चलिण खाना खा लें।'

'तुम अब यहाँ रहती हो, या गाँव में जाया करती हो ?

यही। वह कमरा मैं ने छोड़ दिया।'

"मुझे दूसरी झुग्गियाँ नहीं दिखाओगी ?

"खाना खा लीजिए, फिर लौटकर दिखा दूँगी ?"

“तुम ने यहा बिजला नही लगवायी ?”

‘ झुगिया का माहौल न बनता तब ।’

“मैं ने स्टडिया के लिए बडी मुस्क्ल से बिजली ली थी । पूरा एक साल लग गया था ।’

“वहाँ जरूर चाहिए थी ।”

पर यहा तुम्हें रात को डर नहा लगता ? चारा आर उजाड ह ।’

“इतना सिफ दा बार डर लगा था । पर वह इस उजाड की वजह से नही लगा था । मुझे दो बार ऐसे सपने आये थे कि मैं बहुत डर गयी थी ।”

“क्या ?”

‘ एक मैं ने आप का अभी सुनाया है, जब आप सपने में मुझे आवाजें दे रहे थे—एक दस से सात-आठ दिन पहले आया था ।’

“सात आठ दिन पहले ?’

“मैं ने सपने में देखा कि जल्दी जल्दी कही जा रही हूँ । न जाने कहा । गहरी रात थी । मैं रात के अँधेरे में चलती जा रही थी । इतना मालूम था कि सड़कें किसी शहर की ह । फिर अँधेरे में मैं ने एक सिडकी को रटवटाया । एक दरवाजे को भी ठकौरा । नींद खुलने पर मुझे यह सपना समझ में न आया । जाने मैं कहा जा रही थी । मैं ने किसी दरवाजे का क्या ठकारा था वह दरवाजा बन्द क्या था मैं समझ न सकी । पर मुझे काफी देर डर लगता रहा ।

अल्का से लिपटा हुआ कुमार का हाथ काँपने लगा और उस के मुँह से निकला,
“यू डविल ।”

अल्का ने कुमार के चेहरे की ओर देखा, और बोली, “मेरा खयाल था कि अब तक मुझे डैविल कहना भूल चुके होंगे ।

कुमार ने शायद अल्का की बात नही सुनी । उस ने अल्का का हाथ पकडकर उसे गलीचे पर बठाया । उस के दिमा में आया कि वह अल्का का दिली की उस रात की बात सुना द, जिस रात वह कान्ता के साथ बहा कमरे में बठा हुआ था कि बिडकी पर अल्का की परछाई पडी थी और उस के दरवाजे पर अल्का के पैर की आवाज आया थी । पर कुमार ने अपने हाठ इस तरह भीच लिये जने वही उस के मुह से बात निकल न जाये । उस ने बात बताने की जगह अल्का से एक बात पूछी, “तुम ने उस दिन अपने हाथों में चूडिया भी पहन रखी थी ?”

अल्का समझ न पायी और अपनी दाग बाँहें बँटाकर वाली, “मैं ने उमी गिन नयी चून्कियाँ चढाया थी, शायद एक दिन पहले चढायी थी ।’

बात को मन हाँ मन खेल पाना कठिन था, पर कुमार उसे झेगना चाहता था । उस के अपने हाठा म समा नही रहा था । उस ने अपने होठा को अल्का के होठों से इस तरह लगाया तब वह हाग का नही, उस बात का चुपिया रहा हा ।

कुमार ने दिल्ली में रहते गावा था कि अब उम के जिस्म का भूय उस वभा नही सतायेगा । उस ने तजरवा वर के भी देया था । बाता उस के विस्तर पर लटी रही थी पर कुमार को उस की भूय ने कुछ नहीं कहा था । अलका की सान ने कुमार के जिस्म में सोयी हुई आग को मालूम नही किन पूँका से जगा दिया । कुमार को लगा कि उस का अग-अग जल रहा था । कुमार ने झुग्गी का दरवाजा भिड़का दिया । कोने में जलती लकड़िया में एक और सूखी लकड़ी रखी और जिस समय उस ने अलका के जिस्म से कपडे उतारकर अपनेआप स लगाया, उम लगा कि यह झुग्गी एक आग का तालाब है और यह इस में नहा रहा ह ।

कुमार दिल्लीवाली जो बात अलका से नही कहना चाहता था अलका के पास से उठकर, कपडे पहनते हुए उसे लगा कि उस ने वह बात अलका का अपने राम राम की जवान से कह दी थी ।

कुमार और अलका ने जब कुमार के कमर में जाकर खाना प्या लिया ता कुमार ने हरिया को एक लालटेन जलाने के लिए कहा, और अलका स बाला, चला दूसरी दोना झुगियाँ भी देख आये । '

तीनों झुगियाँ एक सीध में नही थी । एक का मुँह फूलों की बगारिया की तरफ था, एक का पहाड की खाई की तरफ, और एक का भवई के खेत की तरफ । तीना का पीठ से लगा हुआ एक साझा आगन था । हरेक के दरवाजे के सामने एक चौडा बरामदा था, जा स्लेटा की छत स ढका हुआ था । जो एक झुग्गी के सामने से घूमकर, दूसरी झुग्गी के सामने हावर, तीसरी झुग्गी के सामने आता था । इसी बरामदे म स गुडरकर कुमार ने दूसरी झुग्गी का दरवाजा खोला और हाथ में पकटी हुई लालटेन की रोशनी म झुग्गी को देखने लगा ।

पहली झुग्गी की तरह इस झुग्गी की खिड़की भी ताड के पत्ता से ढकी हुई थी । लकड़ी की एक चिटकनी स खिड़की बन्द की हुई थी । इसे खोलने के लिए साँकल की जगह बौडिया की एक डारी बाँधी हुई थी । बठने के लिए मिट्टी की एक उचान इस झुग्गी में भी उसी तरह थी, जसी पहली झुग्गी में कुमार ने देखी था । पर दीवार में ऊँचे-नीचे कितने ही आले थे, और हरेक आले म एक एक दिया रखा हुआ था ।

'अगर ये सारे दिये जला दें ।' कुमार ने इतना उमडकर कहा कि आवाज उस की अपनी नही लगती थी । शायद इसी लिए अलका ने कोई जवाब न दिया ।

कुमार ने लालटेन की राशनी दूसरी दीवार पर डाली । सारी दीवार पानी की लहरा स ढँकी हुई था । चूने में नीला घोसा मिलाकर अलका ने पानी की ये लहरें बनायी थी । कुमार ने ध्यान से देखा, पानी की भरी हुई छाती में अलका ने एक लकीर खींची हुई थी ।

'लोग कहते ह, पानी में रखा नही खिचती ।'

'आप यह कहते ह ?'

“नहीं, मैं नहीं कह सकता, क्योंकि मैं इस लकीर पर पाव रखकर खड़ा हुआ हूँ।”

अलका हँस पड़ी।

“मुझे नहीं मालूम तुम ने यह लकीर क्यों खींची है। पर मैं ने इस का अपना ही अर्थ निकाला है।”

“क्या?”

“मेरे अपने मन में एक लकीर लगी हुई है। लकीर की एक तरफ बड़ा ठण्डा पानी बह रहा है, और एक तरफ बड़ा गरम।

“एक ओर मुहब्बत, एक ओर नफरत।”

“अलका।”

“जी।”

“मैं यही कहना चाहता था, पर कहा नहीं। तुम ने खुद ही कह दिया जाने मेरे अन्दर यह क्या है। मैं तुम्हें प्यार भी करता हूँ और नफरत भी।”

‘मैं जानता हूँ’

“मैं एक पतली-नी लकीर पर खड़ा हुआ हूँ। मालूम नहीं, किस समय और किस तरफ मेरा पाव फिसल जाये।”

अलका ने कुछ न कहा।

कुमार ने लालटेनवाला हाथ नीचे किया, और झुग्गी से बाहर आकर दूसरी झुग्गी की तरफ बढ़ा।

उम में अभी कुछ काम रहता है।’ अलका ने कहा।

कुमार पीछे लौटने लगा तो उस ने अलका से कहा कि अगर उभे यहाँ झुग्गी में अकेले डर लगता था तो वह कुमार के कमरे में चली आये।

“मैं यहाँ अपनी झुग्गी में सोऊँगी।” अलका ने पहली झुग्गी का दरवाजा खाला और दिये में तेल डालकर उम की बर्ती को उकसा दिया।

अपने कमरे में जाते हुए कुमार सोच रहा था कि इस दुनिया में और कोई औरत नहीं थी जो उसे इस तरह धाध सकती थी। यह सिर्फ अलका थी, जिस ने उम की बाँहों को, और उस के खयाला को अपने हाथों में बगलकर पकड़ा हुआ था।

इस पकड़ पर कुमार का प्यार भी आता था, और गुस्सा भी आता था। और वह सोच रहा था कि अलका ने कितनी सच्ची तसवीर बनायी थी। उस के मन के पानिया में एक रेखा खिंची हुई थी, और इस रेखा पर वह दोनों पर रखकर खड़ा हुआ था और कुमार को लगा, कि खड़े-खड़े अब उम के पैर धक गये थे। उसे इस लकीर पर से ज़रूर गिर पड़ना था। पर उभे यह नहीं पता लग रहा था कि वह हमेशा के लिए मुहब्बत की तरफ गिर पड़ेगा, या नफरत की तरफ।

कुमार अलका के लिए बागीक रगदार सूत से बुनी एक लाल घाती दिल्ली से लाया था। अलका आज जब नहाकर वही घाती बाँध रहा थी, तो उसे लगा जैसे एक गीत पहाड़ की पगड़णी उतरकर उस की सुग्गी की ओर आ रहा है। उम ने बान लगाया। गीत पास आ रहा था

दुःखा वाला डलहू तू मेरे बने दे दे

ता हाई जा अगाड़ी मेरे माहणुयाँ।

ओ परलिया माहणुया।^१

अलका समझ गयी कि नाथी आ रही थी। नाथी को इस गीत का ओर छोर पता नहीं था बस एक ही पक्ति आती थी और नाथी जानती थी कि अलका जब बड़ी री में हाती थी तो वह उस से मिनत कर के इस गीत का सुना करती था। गात बाहे का एक ही पक्ति का फिर फिर गाती थी। इसलिए नाथा जब अलका से मिलन के लिए या उम से पत्ने के लिए आया करती थी, तो चौड़ी सड़क से पगड़णी उतरत ही इस गीत को गाना शुरू कर देती था।

यह गीत अलका ने जब से सुना था वह इस गीत से बँध गयी थी। जाने इस घाटी में किस दिलवाली ने इस गीत को रचा होगा। अलका हमेशा सोचा करती थी कि वैसे तो सारे गात ही अपने सिरा पर अपने दुखों की डलिया उठाकर चलते हैं पर यह गीत क्या था। यह दूसरे के दुखों की डलिया को सहारा देता था। और यह गीत सुनते ही हमेशा अलका को यह महसूस होता था कि पहले भी कहीं इस घाटी में कोई कुमार जमा मद हुआ होगा जो कहीं बँध नहीं पाता होगा और पहले भी इस बादी में कभी अलका जसी औरत जरूर हुई होगी जिस ने उस मद से कहा होगा कि तुम्हार सिर पर उठायी हई दुखों की डलिया अब मैं उठा लेती हूँ तुम हलके होकर आगे बढ़ जाओ।^१

नाथी ने कभी इस गीत को नहीं समझा था पर अलका की आँखें इस गीत का सुनकर भारी हो जाती थी। नाथी की आवाज में ज़र लोच बढ़ जाता था और वह लहंगवर कहती थी वे परलिया माहणुआँ वे मेरिया माहणुआ। तो अलका की आँखें धोराकर उम रिस्ते का बूढ़ने लगती जिग रिस्ते से कोई एक गीत की एक ही पक्ति

१ दुःखा की डलिया तू मुझे दे दे।

और तू आगे चल राही।

ओ मेरे अजनबी राही।^१

में किमी को 'भेरा' भी कह सकता ह, और 'पखला' भी । नाथी ने बताया था कि 'पखला' उसे कहने ह जो हमारा बाकिफ न हो ।

नाथी ने झुगगी में आकर शहद का भरा हुआ बसोरा पड के कटाव पर रख दिया । अलका नाथी ने कुमार के लिए शहद मोल लिया करती थी ।

नाथी ने नज़र भरकर अलका की ओर देखा, और हँसकर अपनी छाती पर हाथ रखकर बोली, 'हाथ नी अम्मा ! एह खदरेना चोलू ए ?'

अलका हँस पड़ी ।

'नहाई घाई के तिज्जा इतना रूप चढना ऐ ! मेरे मन बुरी ममता लगदी "' नाथी ने कहा और उचान पर बठ गयी ।

तुम ने यह गीत बीच ही में क्या छाड दिया ? अलका ने हाथ में पकड़ी हुई कधी आले में रख दी, और नाथी के पास गलीचे पर बठ गयी ।

'घडोलू चुक्क कर सत्त बल पई जादे तेरे लक्के बिच, दुखा दा डलडू कुत्पू गल-गल लई फिरना । नाथी हँसने लगी ।

अलका जब कभी यह गीत सुनने के लिए बेचन होता, नाथी उसे इसी तरह खपाता थी । 'अच्छा, अब जब तुम्हारे रसिया का खत आयेगा, मैं तुम्हें पढकर नही सुनाऊँगा ।' अलका ने नाथी की एक चाटी खाल दी और हँस पड़ी ।

'भला, बाबी मैं नरेलू दिगी । तू चिट्ठी पडी लिया ।'

"नरलू तुम फिर दना । चल आ तुम्हें चाय पिलाऊँ ।" अलका ने कहा, और दरामदे के चूहे में आग जगाकर चाय बनाने लगी ।

चाय पीकर अलका नाथी का छोडने चली, तो उस ने देखा कि कुमार हाथ में कोई कागज पकडे हुए उम् की ओर आ रहा था । अलका ठहर गयी । कुमार ने पाम आकर एक तार अलका को पकग दिया । अलका ने लिफाफा खोला, तार पत्र और कागज को मोटकर फिर लिफाफे में रग दिया ।

'पिताजा का तार ह न ?

'हा । C

'काई खाम बात है ?

'काई खास बात नही मुझे बुलाया ह ।'

"बच जाआगा ।"

'मुझे जाना नही खत लिख दूँगी ।'

"नही, अलका, जब वह बुलाते हैं तो जाना ही चाहिए ।'

"जिस काम के लिए वह बुलाते हैं, उस के लिए जाने का जरूरत नही ।

कुमार चुप रहा । वह जानता था कि जिस काम के लिए अलका को जाने की जरूरत नही था, वह कौन सा काम हो सकता ह ।

नाथी चली गया थी । कुमार अलका का लेकर वापस उस की झुगगी में आ

उस व जादू का झाड़कर चला न गया होता तो जाने क्या हा जाता ।

चलते चलते कुमार ने मकई के एक भुट्टे को उस के सुनहरी गुच्छ स पकड़कर सहलाया, और अपने हाठों में बहा, वम वहा समय मुश्किल था । मैं मुश्किल घटियाँ गुजर आया हूँ अब कोइ डर नहीं ।

सामने अनार का पेड़ था । कुमार ने अनार की एक कली ताड़ा, और उस क लाल रंग का दोना आया स घूरते हुए बोला, 'सुबह वह बिलकुल तुम्हारे जसा लगती थी दया तो मैं न किस तरह तुम्हें इन पत्ता से अलगा दिया ह । इसी तरह मैं ने उसे अपने दिठ मे ताड़ दिया ह '

स्लेटा की चुगियो के पास पहुँचकर कुमार का खयाल आया कि वह कितनी देर से एक एक पीछे स और एक एक पत्ते से अलका की बातें कर रहा था और उम ने अपने पर राककर अपने आप का कहा, 'इधर बाहे का आ निकला हू । मुझे अपने कमर में जाना चाहिए ।

कुमार ने झुग्गी की चौखट से अपने पाँव लौटा लिये । दूबने सूरज का लाली बडे ध्यान से कुमार के चेहरे की आर देखने लगी ।

कुमार जब अपने कमर में आया ता हरिया ने उमे बताया कि अलका बीबी सवेर चली गयी । चेतू चाचा भी उस के साथ गया ह और हरिया ने बताया कि स्टेशन पर जाकर चेतू चाचा को जाने क्या हुआ कि वह गाड़ी स बठ गया । नानी भी स्टेशन पर गयी था वह लौट आया ह ।

जा कुछ हरिया न बताया था कुमार न सुन लिया पर अपनी ओर से कुछ न पूछा । हरिया खाना ले आया कुमार ने पाना खा लिया और बिस्तर पर लेटकर उस ने एक किताब पत्नी गुरु वर दी यू गेव भी बक सर्मिथिंग दट विलाग्ड टु मी, सर्मिथिंग दट यू डिड नाट टेक जब माइ कार्फिडेंस इन माइमेल्फ ।

कुमार ने जब ये पत्तियाँ पनी तो उसे लगा कि वह एक साधारण किताब नहीं पढ रहा था वह एक वेद में से वाक्य पढ रहा था । आज अलका ने सचमुच उस की खायी हुई चीज उस लीन दी थी । यह चीज वह अपने साथ नहा ले जा सकी था और कुमार खुश था कि अपने आप में उम का विश्वास लौट आया था ।

कुमार ने इस किताब को किसी खाम इरादे मे पटना गुरु रही किया था । उमे खयाल आया था कि पुस्तक का पन्ते पन्ते वह सा जायगा । इसलिए उस ने किताबा की अलमारी के पास जाकर जो भा हाथ में जायी, वही किताब निकाल ली थी । उस ने किताब का नाम भी नहीं पटा था ।

ये पत्तियाँ पटन के बाद कुमार का लगा कि वह किताब अपने हाठों स उस के मन की बातें कर रही थी । इसलिए उस ने उस उमग स पढन लगा । अगली पत्तियाँ थी 'दि एबिलिटी टु लव डीपला एण्ड स्टेट फास्टला इज रयरर दन ग्रेट टलेण्ट ।

टलेण्ट गुड बी रि सर्वेण्ट आफ लव । फार विदाउट लव, टेलेण्ट इज लाइक सेकम विद ओनली वन वाडी ।”

‘क्या वक्तास ह ।’ कुमार के मुँह से गुस्से में निकला और बिताव को उस ने मेज़ पर पटक दिया । उस ने मेज़ पर जत्ती बत्ती बुझा दी और साने के लिए दाना आखें बंद कर ली ।

‘अलका ने जाते हुए शायद मेर लिए कोई खत लिखा हा । कुमार को खयाल आया, पर उस न साचा कि अलका ने अगर कोई खत उस के लिए लिखा हाता तो हरिया ने उस सुद ही दे देना था । तब भी कुमार ने मेज़ की बत्ती जलायी और मेज़ का ध्यान से दखा । मेज़ पर कोई बागज नही था । कुमार ने बत्ती बुझा दी, और सोचने लगा अलका ने जच्छा ही किया जा जाते बक्त काइ सन्देश नही देकर गयी नही ता जिस तरह वह जरना दाता से दूमरा को दौरा देती ह, उस ने खत लिखकर भी मुझे रला देना था

कुमार ने एक हल्की सास ली और स्वतंत्रता के इस क्षण का पूरी तरह महसूस करने के लिए चारपाई से उठकर ग़ाहुर अमरुदा के पड़ा के तले आ बधा । रात तारों की रोशनी में भीगी हुई थी । कुमार ने दोनों बाहें खालकर धरती की आर और आसमान का इस तरह देखा जमे उस की बाहें एक लकी के बदन से अलग हाकर इतनी स्वतंत्र हा गयी हा और इतनी विशाल भी कि अब वे सारी धरती का और सारे आसमान का अपने में ममेर सकती हा ।

एक हल्की सास लेते हुए कुमार के सीने में हल्की सी पीडा हुई पर कुमार के जिस्म ने आज किमा भी पीडा का स्वाकार न करने की ठानी हुई थी ।

चल तारा की छांव में आगमिचौली खलें ।

कुमार का लगा कि किमा ने उसे पीठ के पीछे से कहा था । कुमार ने चौंकर पीछे की आर दखा । वहा कोई नही था । बायी ओर जगला फूल की एक सघन घाने थी । उसे लगा कि उस बागे की आठ में पना कोई हँस रहा था । कुमार न याडी की आर जान की जगह माया सिकाटकर उस झाडी की तरफ दखा ।

कुमार का लगा कि जिम तरह दिली में एक रात उसे अलका की परछाई दिगई दा थी और उस के काना में अलका के परो का आवाज आयी थी, आज भी उस के माय वमा ही कुछ हाने चला था । उस ने गुस्से में कहा ‘अलका ।’ इस तरह— जमे अलका एक छान्नी-भी बालिका हा, उस बार-बार चिडाता हा, और वह अलका का रोक रहा हा ।

“पर यह अलका नही, मैं हूँ अब तुम और मैं रोज तारा की छांव में आँस मिचींग खेला करेंगे !” घाने के पाछे में आवाज आया और कुमार ने आवाज पहचान ली । यह उस उगामी की आवाज था, जिम के साथ उस ने एक बार सामने खडे हाकर बातें की थी ।

‘सा तुम आ गया हा ।’ कुमार ने धारे से कहा, और सिर नाचे झुका लिया ।

सिर नीचा किये कुमार बाग में घूमता रहा । चलते चलते उस ने दगा कि वह झुग्गा के दरवाजे पर खड़ा था । कुमार न एक गहरा साँस ली और झुग्गी का दरवाजा साल्वर अंदर चला गया ।

अंदर गहरा अंधेरा था । कुमार ने हाथा से लकड़ी के बटाव का महलाया । उस मानूस था कि इस के ऊपर एक दीया और एक माचिन रमा रहनी था ।

कुमार ने दीया जलाया । उमे समग नहा आ रहा था कि उस ने दीया क्या जगया था । दीय की राशनी में उस ने झुग्गी की दीवारों की तरफ दगा । झुग्गी का चेहरा बड़ा उदाम था ।

कुमार ने एक गहरी साँस ली और वाला तुम मुझ से बेहतर हा । तुम उगाग हो, पर तुम अपनी उगागी का छिपाती नहीं हा, पर मैं अपनी उदासी को स्वीकार नहीं करता । कुमार ने कहा और गलीचे पर इस तरह बठ गया जस उस ने झुग्गा के साथ और भी बहुत सी बात करनी हा ।

दीवार की तरफ देखते-देखते कुमार की नजर एक आले में पडा । आले में एक कागज पडा हुआ था । कुमार का दिल एकाएक धक्का लगा । कुमार ने उस कागज को उठाया । पर जस उसे साल्वर दीय की राशनी में पढ़ने लगा ता उस की आँखें पथरा गयी, और कुछ देर तक उस से बाई अंधर पढ़ने न आता ।

कुछ देर बाद कुमार न पता अलका ने लिखा था

इट इज सा सिम्पल दट इट मे वा इम्प्रासिबल टु एक्सप्रेस । इट इज सा पमनल दट इट इज हाड टु वाम्पूनिजेट । इट इज सा लानगी दट इट इज डिफ्रिजल्ट टु रोवर । इट इज सा मक्रेड दट इट मे थो टू प्रेजाइल टु टाक एवाउट वस इट हज लेफ्ट वज हाड इट मे इवपारट ।

बाँपते हाथा से कागज को लकड़ी के बटाव पर रखकर कुमार के मन में जा कुछ हुआ, उस का एक ही सीने में झेल पाना कठिन था । कुमार ने गलीच पर लटकर आँखें बंद कर ली ।

जाने कब कुमार को नींद आ गयी । वह रात भर उस गलीच पर लटा रहा । सात समय ही उस ने अपने नाच बिछे हुए गलीचे का एक कोना उठाकर अपने पर आन लिया । जस उस की आँख खुली बिडकी में स सुबह की हल्की राशनी अंदर आ रही थी । बिडकी की ओर देखते हुए उस की नजर कौडिया की लकड़ी पर गयी जिन अलका ने ताड के पत्तों से बाँधा हुआ था, और कुमार को लगा कि अलका विवाह करवाने के लिए अमृतसर चली गयी थी, पर अपना कत्तरा यहा छाड गयी था ।

* गाँदी के अवसर पर कानाई की चूड़ियाँ के साथ बँधनेवाली कौड़ियाँ की लकड़ी ।

अलका जिस लाल धोती को कल छत्तीस चक्क में पहने हुई थी, अमृतसर पहुँचकर जब वह अपनी काठी में आयी तो वही लाल धानी उन ने बांधी हुई थी। रास्ते में उस ने कपड़ नही बदले थे, बाल भी नही सँवारे थे, पर बीराये वाला ने और सूत की इस लाल धाती ने अलका को जाने क्या रूप बना रखा था कि अलका का माया चूमते हुए अलका व पिताजी को खयाल आया कि अलका को किसी की नज़र न लग जाये। पिताजी ने अलका के लिए जिस आदमी को चुना था, वह आजकल उन्ही के यहाँ ठहरा हुआ था। इस वक़्त भी वह बाहर टांगे की आवाज़ सुनकर पिताजी के साथ ही बाहर चला आया था। वह अलका की तरफ़ देखता रह गया। पिताजी ने अलका से उस का परिचय कराया “कप्टन जगदीशचन्द्र, मर्चेण्ट नेवी में हूँ।” और अलका का अपनी बाँही में लेकर चाय पीने के लिए कमरे में ले गये। अलका ने चेनू को अपना कमरा दिखा दिया। वह अलका की चीज़ें कमरे में रखने चला गया।

पिताजी ने अलका से जगदीशचन्द्र का बड़ साधारण तरीके से परिचित कराया था। और कुछ न कहा था। निऊ के चाय पीते समय जगदीशचन्द्र की सफ़री ज़िन्दगी के बारे में वे दिलचस्प बातें सुनाते रहे, जो ग़ायद उहाने पिछले चार-पाँच रोज़ में जगदीशचन्द्र से सुनी थी। और उन्ही बातों से अलका ने अपने पिताजी की इच्छा का अंदाज़ा लगा लिया था।

जगदीशचन्द्र बड़े शीक के साथ अलका से उस की पॉन्टिंग और पहाड़ी ज़िन्दगी के बारे में पूछता रहा। अलका सलाह से जवाब देती गयी। समुद्र के सफ़र के बारे में उस से पूछती रही। पर वह सारा समय उस आनेवाले वक़्त के बारे में सोचती रही जब उस का मन से ज्यादा बनी बातों से वास्ता पटना था।

सच्चा समय पिताजी किसी काम से बाहर चले गये। अलका ने समझ लिया कि वह जान-बूझकर उसे जगदीशचन्द्र के पास अकेली छोड़ गये थे। वह अपने कमरे की गिड़की में इस तरह खड़ी हुई गयी जने चिट्ठी की इस नयी मांग को, और उस के बराबर तुलनेवाली अपनी हिम्मत को जाचकर दग़ रही हो। उसे ठहर हुए कुछ ही समय हुआ था कि कमरे के दरवाज़े में स जगदीशचन्द्र ने आवाज़ कर उस से पूछा कि क्या वह कमरे में आ सकती था।

“आइए।” अलका ने गिड़की से हटकर एक कुरसी की आर हाथ से संकेत किया।

“अभी तक सफ़र की थकान होगी ” जगदीशचन्द्र ने कमरे में आकर कुरसी पर बैठते हुए बड़ी आत्मीयता से दसा।

“आप तो खूब लम्बा सफर करनेवाला मैं है, सफर की थकान की बात इतना क्यों गाचते ह ।’ अलका हँस पड़ी और मामने कुरसी पर बैठ गयी ।

‘हम लोग की वह आदत बन जाती है । वास्तव में मैं बहा आना चाहता था ।

‘कहाँ ?’

“वही तुम्हारे चक्क नम्बर छत्तीस में ।

“आ जाते ।

“पर पिताजी तुम्हें यहाँ बुलाना चाहते थे वह सब मुँदर जगह होगी ?’

‘हाँ ।

“इतने दिनों बाद शहर में आकर अजीब सा लगता होगा ।

“बहुत अजीब ।”

“मेरा खयाल है कि तुम्हें समुद्र किनारे की ज़िन्गी भी अच्छी लगेगी ।

अलका ने एक नज़र में जगदीशचन्द्र के चेहरे की ओर देखा और हँस पड़ी । अलका के हँसने से जगदीशचन्द्र को खयाल आया कि अलका ने पूछे बिना उस ने उम का ज़िन्गी का खुद ही समुद्र के किनारे में जान दिया था । यह उम ने बड़ी जल्दी की था ।

“वास्तव में ’ जगदीशचन्द्र ने कुरसी से उठकर अलका की पीठ की तरफ खड़े होकर उस की कुरसी पर हाथ रखा और वह जैसे जा कुछ महसूस कर रहा था उसे वैसे ही कह दिया, ‘मैं ने यह बिल्कुल नहीं सोचा था कि मेरा इतनी खबसूरत लड़की से वास्ता पड़ेगा ।

“आप ने क्या साचा था ?’

“मैं ने कुछ भी नहीं साचा था । मैं काफी बरसे से शांति के लिए ज़ोर दे रही ह । इस बार छुट्टियों में उस ने मुझे मना लिया था कि मैं शांति कर लूँगा । उस ने कई जगह देख रक्की थी ।

‘फिर कई स्थानों में से आप ने इस जगह को क्यों चुना ?’

‘आप के पिताजी को शायद किसान ने मेरी आर स बताया था । उन्होंने मुझ से मिलना चाहा और मैं चला आया । वैसे मैं यहाँ भी माँ के ज़ार देने पर आया था । वह कहती थी कि अगर यहाँ बात हा जाये तो किसी और जगह की बात मोचने की ज़रूरत नहीं ।”

“वह मुझे जानती है ?

‘तुम्हें नहीं पिताजी का जानती है ।

‘पर यह मा का फमला है, आप का नहीं ।

जगदीशचन्द्र ने कुरसी पर रखा हुआ हाथ अलका के कंधे पर रख दिया । उम के हाथ में उम के मन की बात धड़क रहा थी, पर वह साच रहा था कि वह इस

बात का वैसे कहे ।

“सा आप मुझ से विवाह करने के लिए तयार ह ।” अलका ने खुद ही कहा ।

“अगर सिर्फ मेरी मरजी से हो सकता हा तो आज ही हो जाये अभा ”

“पर अब सन्ध्या समय वैसे होगा ।” अलका हँसने लगी । जगदीशचन्द्र को उस की हँसी बड़ी अच्छी लगी । उस के मजाकिया स्वभाव के बराबर उत्तरने के लिए वह भी हँस दिया, और बाला, “विवाह करवानेवाली अदालतें रात को भी खुली रहनी चाहिए ।” और फिर जगदीशचन्द्र ने अलका के कंधे पर रखे हुए हाथ को जरा दबाकर कहा, “पर यह मेरी मरजी की बात है । मुझे अब तक तुम ने अपनी मरजी नहीं बतायी ।”

“मेरी मरजी का तो आप ने पहले ही फैसला कर दिया था कि मुझे समंदर के किनारे की जिंदगी अच्छी लगेगी ।” अलका हँस दी ।

जगदीशचन्द्र ने झुककर अलका के हाँठों का छूना चाहा, पर अलका ने मुँह हटा लिया और बोला, ‘अभी नहीं ।’

जगदीशचन्द्र ने अलका के कंधे पर रखा हुआ हाथ इस तरह उठा लिया जमे वह अपने सिर का सवूत दे रहा हो ।

अब जब पिताजी आयेंगे, उन्हें तुम खुद बताओगी, या मैं बता दूँ ?’ जगदीशचन्द्र ने अलका से पूछा ।

“जसी आप की मरजी ।”

‘मेरी छुट्टी बहुत कम रह गयी है । तुम जो कुछ खरीदना चाहो, मुझे जल्दी बता दना ।’

‘मुझे कोई चीज नहीं खरीदनी । पर अदालतवाले एक महीने का अरसा मागने ह ।’

“मेरी मा अदालती शादी से खुश न होगी । अगर हम दूसरी तरह से शादी करते तो कोई हरज है ?

‘कई दशों में आप एकवर्षीय विवाह भी कर सकते हैं, और द्विवर्षीय भी और जरूरत पड़े तो एकमासिक भी पर हमारे देश में इस तरह का विवाह नहीं होता । इसलिए रस्मी विवाह से अनालनी विवाह अच्छा है ।’

“अलका ।

‘जी ।’

“तुम मुझ से उमर भर के लिए विवाह नहीं करना चाहती हो ?”

‘वह नहीं सकती । गुजर जाये तो सारी उमर धीत जाये, न गुजरे तो एक महीना भी न गुजरे एक दिन भी न बीते ।’

जगदीशचन्द्र पहले हुरान हुआ । फिर उस ने हमकर अलका की ओर देखा और बोला, ‘दखने से यह बिल्कुल पता नहीं चलता कि तुम इतनी एडवेंचरस’ होगी ।’

“मैं बिल्कुल एडवेंचरस नहीं हूँ।”

“मैं ने साचा था कि अगर कभी किसी से इस तरह की बात करनी होगी, तो मुझे ही हम नेवीवाला का जिन्दगी बड़ा अजीब हाता ह। नित नये लोगो से वास्ता पडता ह। इसलिए सारी उमर का बंधन कई बार हमें अच्छा नहीं लगता पर लगता ह कि तुम मुझ से भी कही एडवेंचरस हा।

“मैं बिल्कुल ‘एडवेंचरस’ नहीं हूँ। बात बम इतनी ह कि जिन्दगी बड़ी अजीब होती ह। सिफ नेवीवालो की ही नहीं, सभी की अजीब हाती ह।”

‘तुम्हारा खयाल ह कि शायद तुम कभी किसी और को प्यार करे लगोगी?’

“शायद नहीं, अब भी करता ह।

जगदीशचन्द्र अलका के चेहरे की ओर देखने लगा। वह अब तक खड़ा हुआ था।

वह हरान हुआ कुर्सी पर बठ गया। फिर कुछ देर बाद उस ने अलका से पूछा, “फिर तुम उस से विवाह क्या नहीं कर लेती हो, अलका?”

‘वह मुझ से विवाह नहीं करना चाहने।’

जगदीशचन्द्र कुछ ढेर चुप रहा। फिर हम पडा, “पर अब जब कि तुम कुँआरी हो, वह तुम से विवाह नहीं करना चाहता और फिर जब तुम्हारा विवाह हो जायेगा तो क्या वह चाहेगा कि तुम तलाक लेकर उस से विवाह कर लो?”

शायद ?

जगदीशचन्द्र के मन में कमक सा उठी और उस ने जाने बल्कर अलका का हाथ पकड़ लिया और बोला ‘मैं तुम्हें इतनी दूर ले जाऊंगा कि तुम्हें कभी उस की खबर-खबर भी न मिले।

मैं जहाँ भी रहूँ मुझ उस का पता रहेगा।

जगदीशचन्द्र ने अलका का हाथ छोड़ दिया और बोला “मेरा खयाल ह तुम्हें विवाह नहीं करना चाहिए।

मेरा भी यही खयाल ह कि मुझे विवाह नहीं करना चाहिए।’

पर मैं हरान हूँ कि तुम विवाह करना मान कैसे गयी।’

मैं ने उमे वचन लिया ह कि मैं विवाह कर लूंगी।”

इस का मतलब ह उस ने जबरदस्ती तुम से वचन लिया है।

‘हा।’

“उस का खयाल ह कि एक बार तुम्हारा विवाह हो जायेगा और वह हमसा के लिए तुम से जुग हा जायेगा।

‘हाँ।’

‘मेरा खयाल ह कि उस ने ठीक साचा ह।

जगदीशचन्द्र ने प्यार से अलका का हाथ पकड़ लिया और बोला, “उस से चाहे

तुम्हारा कितना भी तात्लुब रहा हो मुझे उस की परवा नहीं। ज्यादा ने ज्यादा यह होगा कि उस का तुम से जिस्मानी तात्लुब हागा। यह कोई खास बात नहीं। इस तरह मेरी जिन्दगी में भी कई लटकियाँ आयी ह। सब का जिन्दगी में आती है। विवाह से पहले की बात का नहीं कुरेदना चाहिए। मुझे सिर्फ यह बता दो कि मुझ में विवाह हो जाने पर मुझ से चारो उसे मिलोगी ?

“बिल्कुल नहीं।”

“उसे खत लिखोगी ?

“बिल्कुल नहीं।”

जगदीशचन्द्र ने कुरसी से उठकर अलका का पीठ पर अपना हाथ रखा और बर प्यार से बोला, “दो इट इज नथिंग।”

‘पर एक बात है।’

‘क्या ?’

“अगर कभी मुझे यह मालूम हो गया कि उस ने अपना खयाल बदल दिया है, और उसे मेरी ज़रूरत है तो मैं आप से तलाक़ लेकर उस के पास चली जाऊँगी।

“चलो, यह बात मजबूर है।” जगदीशचन्द्र हँसा। उस ने अलका के घने बालों में से एक छोटी लट का अपनी उँगली पर लपेटा और बोला, “मैं खुश हूँ कि तुम ने इतनी दिलेरी से बातें की ह। तुम जमी लडकी कभी झूठ नहीं बोल सकती।”

“मैं कभी झूठ नहीं बाँट सकती।”

जगदीशचन्द्र ने झुककर अलका के होठ का छूना चाहा। पर अलका ने इनकार में सिर हिला दिया, ‘अभी नहीं, विवाह के बाद।’

‘सुबह अदालत में लिखकर दूँ।’

“दे दीजिए।

‘पूरा एक महीना इन्तज़ार करना हागा।’

“आप की छुट्टी का क्या होगा ?”

“मैं और छुट्टी लूँगा।”

जगदीशचन्द्र जब अलका के कमरे से जान लगा तो अलका ने जल्दी से दरवाजे की देहरी पर जाकर उम से पूछा “एक आखिरी खत लिखने की इजाजत है ? सिर्फ यह लिखना है कि आगे से एक महीने के बाद मेरा विवाह हो जायेगा।”

“हाँ। जगदीशचन्द्र ने हँसते हुए कहा, और अलका के कमरे से यह चला गया।

अलका रात को जब कुमार के नाम खत लिखने लगा तो उसे यह समझ नहीं आ रहा था कि वह यह खत किम लिखने लगा है। हाथ में कलम पकड़कर जब उस ने बाग़ज की तरफ देखा तो उसे लगा जैसे वह खाइयो के पत्थरों को खत लिखने लगी हो।

चेतू चाचा शहरे जो म्या तो शहरे दाई हाई रया ।” हरिया ने उठने-बठते कई बार कहा । कुमार ने कई बार हरिया को शिडकी देकर कहना चाहा कि उस ने चेतू चाचा की रट क्यों लगा रखी है, आखिर वह मुद्दत में शहर गया है, चार दिन वहाँ की रीनर देखेगा और खुद लौट आयेगा । पर कुमार का लगा कि राज जय गादी का समय होता था ता वह खुद घूमने घूमते शहर की बड़ी सड़क पर चला जाता था । वह पिछले कई दिनों से बजनाय की ओर नहीं गया था । हमेशा पपराळा का उतराई उतर जाता था, जैसे वह आधी बाट चलकर स्टेशन से जाते हुए चेतू चाचा का लेने जा रहा है । इस लिए उम ने हरिया का कुछ न कहा ।

“मैं चेतू चाचा की बाट इस तरह क्या देख रहा हूँ, जैसे कोई कासिद का इन्तजार कर रहा है ?” कुमार ने हरिया का कुछ कहने का जगह अपनेआप का बोसा । वह स्वयं स्थासा-न्ता हो गया । फिर उस ने खुद ही अपनेआप का डाँस बँधाया, ‘मैं चेतू की बाट इसलिए देख रहा हूँ कि वह आकर मुझे अलना की पूरी खबर बताये कि उस ने क्या जाकर कोई ज़िद नहीं ठानी और अपने पिताजी का कहना मानकर अपने विवाह की बात पक्की कर ली ।’

एक दिन नाथी हरिया को खाजती-खोजती कुमार के वरामद से बाहर निरली । कुमार घास पर बठा था । नाथी को उस ने पहले भी दा बाग हरिया के पास आकर शहर की खबर पूछते देखा था । पर वह हमेशा हरिया से पूछकर लौट जाया करता थी । आज वह कुमार के पास आकर खड़ी हो गया—‘बाबूजी ।

‘हाँ, नाथी ।’

मेरी जान तौ मूटा टँगोई गयी ।

‘क्या हुआ नाथी ?’

‘चेतू चाचा घरे जो भुल्ली गया ।’

‘उस ने जाना कहाँ है, नाथी । आज-कल मैं ही आ जायेगा । तुम्हारी मा को उस पर भरोसा नहीं, जो इतनी उतावला हो गया है ?’

‘खट्टा द पार तित्तरूँ बोल्दे तौ अम्मा डरी डरी जाँदी ।’

कुमार हँसने लगा । कुमार जानता था कि नाथी का खाबिद कई सालों से उसे छोड़कर परदेश गया हुआ है । नाथी जवान-जहान थी पर वह हंस खेलकर दिन बिता रही थी । और अब जब चेतू चाचा दा चार दिना के लिए परदेश गया था तो उस की बूढ़ा औरत इस तरह विराम गया था कि वह पल पल बाद नाथी का उस की खबर पूछने के लिए भेजती थी । कुमार ने हँसकर नाथी से कहा, अगर अम्मा की तरह तुम

भा अपना दिल छा: बठी ता क्या होगा !”

‘मैं ता बाबूजी अपना दिल सड़ा दिया पत्थरा साही करी लिया ।”

‘फिर तूम अम्मा का समझाती क्या नहीं हो ?’

“उसा दिया हड्डिया दा चूरा होई जादा । मिता क्या पता उम जो बी कते भेजि दिदी ।’

‘उसे किम बात का डर लगता ह ?’

‘रब दीयाँ रब जाने उठ्ठी कई मिजो गालिया दिदी ए ।’

‘पर इस में तुम्हारा क्या कुमूर ह ?’

“मैं चाचे जा टेशने उपपर छड्डि आयी । अम्मा उठ्ठा-कई मर्लानी ए ओ दगेबाज शहरे जो ग्या गहरे दा ई होई रया ।’

नाथी लौटने का हुई ता कुमार ने एक गहरी सास ली, ‘एक ओर चेतू की औरत ह, जो यह सोचती ह कि चेतू शहर जानर शहर का ही क्या हो रहा ह । दूसरी तरफ मैं हूँ जो यह सोच रहा हूँ कि अलका शहर गया है, ईद्वर करे वह शहर की हो रहे ।’

“जली आये गहरा दा रहणा ।” नाथी ने जाते-जाते कहा ।

‘तुम्हें शहरा पर बहुत गुस्सा आ रहा ह । कुमार फिर हँसने लगा ।

‘तितो पता ना, बाबूजी, ए हासा कुत्तू ते आउदा ए ?’ नाथी जाती जाती छिटक गयी, और कुमार की ओर देखने लगी ।

“आज तुम्हें क्या हुआ ह नाथी ! तुम्हें मेरी हँसी पर भी गुस्सा आ रहा ह ।’

“अलका बीबी जो बन्ही करी शहर भेजि दिता । मेरा मन बुरा हुआ ए बाबूजी ! मरियाँ अवलौ उस जो तापदिया फिरदीया ।

कुमार ने चौककर नाथी के चेहरे की ओर दया । उस ने साचा कि अलका ने नाथी को कुछ न बताया होगा, पर यह अल्ट्रा-सो नाथी खुद ही उस की हमराज बन गयी थी । उस के मन ने खुद ही ज्ञान लिया था कि अलका कुमार के कहने पर शहर चली गया ह ।

‘एह घडालू ताँ मेरे सिर दा बरीए, बाबूजी ! पानिएँ जो जान्दो आ ताँ में सार रस्ते बीबी ए जो तापदीया ।’ नाथी ने कहा, और उदाम मुँह लिये चली गयी ।

कुमार की आँखें झुक गयी । नाथी की बात उस के मन को कचोटने लगा । उसे लगा कि वह भी नाथी का तरह अपने मिर पर अपना भार उठाकर चल रहा ह । यह भार किसी दिन उस के सिर का बरी हो जायेगा । वह इस उठाये-उठाये फिरेगा । और अलका को जगह-जगह दूँडता फिरेगा ।

“बाबूजी बाबूजी ! हरिया पगडण्डा के दूसर मिर से दौडता आ रहा था—
“चेतू चाचा आयी गया ! हत्ये नी बडा भारा टरक लयी आइँवा—” हस्सिया ने कुमार के पाग आनर बताया । वह हाँक रहा था ।

कुमार का मातूम था कि चेतू गाली हाथ गया था। दरक की वान गुनकर उग लगा, जम अलका भी चेतू के साथ आयी हो।

कुमार का दिङ्ग गिहर उठा और वह गिहरन उस के बदन में से हानी हुई उग के पाँव में उतर गयी। पगडण्डा पर चक्कर अलका का देखने के लिए उस व पर आगे बढ़े। पर फिर वह अपने पाँव का जकड़कर ठिठक गया—।।। उस ने पुन ही एव जजोर अपने पाँव से बांध लो हा।

‘मुने यही डर था !’ कुमार को लगा, जैसे उसे अलका पर गुस्सा आ रहा था। पर गुस्से से दखने की बजाय वह उत्सुकता से पगडण्डा की आर दखने लगा। दखता भी जा रहा था और साधता भी जा रहा था ‘उस ने जल्द मन की होगी अगर मैं अब उसे आते हा यह वह हूँ कि यह उलटे पाँव लौट जाये ता फिर यह मुझे धन मे जीने बया नही देती ?

‘परी पाऊं दा बाबूजी !’ चेतू चाचा ने दस गज दूर से ही कहा और सिर वधा पर रखी हुई चाज वही उतावर कुमार के पास आ गया।

कुमार ने एक बार चेतू की तरफ देखा, एक बार खाली पगडण्डा की ओर और घोरे स बाला, ‘राजी तो ह चेतू ?’

‘बडा राजी बाबूजी ! चेतू न लपककर कुमार के पाँज को छुआ।

‘बडे त्ति लगा दिय !’ गहर में बडा दिल लम गया था ? कुमार को लगा कि चेतू स बातें करते-करत यह अब भी खाली पगडण्डा की आर देग रहा ह।

‘गहर दीया गल्ल बाबूजी बडा मुख पाया ओयू ! खान जा बहुत कुछ, दखने जो बहुत कुछ ओयू बडे बडे मानन ’ चेतू चाचा बोल्ता जा रहा था।

‘अच्छा अच्छा अज जल्नी से घर जाओ। तुम्हारी औरत को तुम्हारा विगम हा रहा ह। कुमार ने चेतू का बीच म ही टोककर कहा। उस म चेतू की बात को इसलिए नही टोका था कि वह जल्नी स घर चला जाये वह सोच रहा था कि चेतू से गहर की बातें रितनी दर तक खत्म नही होगी। बात को टाक देने से शायद वह स्व जायेगा, और अक्का की बात करगा।

‘क्या गला दी थी ? चेतू ने अपने पाव से जूती निवालकर उस म से मिट्टी झाडत हुए पूछा।

‘बौन ?

‘ताथी दी अम्मा !

वह नाथी का गालियाँ दती ह कि उस ने तुम्हें गहर क्या भेजा। वह तुम्हें स्टशा स लौटा क्यों न लायी।

‘उस म बस होए बाबूजी, ताँ मिजो गोडे बने बनी छट्ट। चेतू ने कहा और हँसने लगा। उस की हसी म इतना राप नही था, जितनी इस बात की खुशी थी कि उस के पाम ऐसी औरत थी जो उसे आँख की ओट नही रखती थी।

कुमार ने गठरिया और दक्कमे की तरफ देखा और चेतू से बोला, "तुम शहर से बड़ी चीजें खरीदकर लाये हो ?"

"क्या गलाऊँ, बाबूजी ! अलका बीबिए मिजो बड़ीया बखसासा दित्तिया !

अलका का नाम सुनकर कुमार को लगा कि यह नाम सुनने के लिए उस के कान बड़े प्यासे थे ।

"वह राजी थी ?" कुमार की जवान ने अपने वश से बाहर हाँकर यह बात पूछ ली ।

"तुसाँ धास्ते इक् कागद दित्ता । चेतू ने कहा और वह दक्कमे का खोलने लगा ।

'अगर इस तरह उस की खबर को तरतना था तो उस ने उसे भेजा ही क्यों था ? कुमार ने अपने आप को उलाहना दी ।

'बाबूजी दिक्खा कितनियाँ बगा ।' चेतू ने दक्कमे को खोलकर काच के बर्तन से गजरे ढिछाये, और फिर एक रेशमी चादर दिखाते हुए बोला, 'ऐ मिजो बड़े बाबूजी ने नित्ती ओ, पित्ताजी ने ।'

बक्से में एक गरम कोट पड़ा था । चेतू ने बड़े चाव से उस कोट का निचाला, और उस के रेशमा अस्तर को अपनी तली से बार-बार सहलाते हुए कहा, 'इक ओयू साहब आया, मिजा एक कोट ' चेतू का धात उम के मुह में ही रह गयी । उसे लगा कि कुमार ने माथे पर तेवर डालकर उस की तरफ देखा था । उस ने सोचा कि बाबूजी उस से नाराज हो गये, 'गाय' यह मोचकर कि उम ने यह चीज खुद मागकर ली हो ।

'मैं कुछ नहीं मँगिया था बाबूजी साहब ने मिजो आपू ही नित्ता । चेतू ने कुछ सहमकर कहा और जल्दी से दक्कमे के खाने में से एक लिफाफा निचालकर कुमार को दिया ।

कुमार ने लिफाफा टे लिया और अपने कमर में जाकर दरवाजा भिन्का लिया ।

'आप ने मेरे कई नाम रखे थे । अपने नये-नये नाम रखने की मुझे आन्त हा गया ह । आज इस महीने की आठ तारीख ह । अगले महीने की इसी तारीख को मैं अपना एक और नाम रखूँगी—मिमेज जगदीशचन्द्र । यह खबर सब का बता दना । गाय्या के पत्यरा का भी बता दना ।' यह खत पढ़कर कुमार का पहला बार जिन्दगी में यह महसूस हुआ कि उस के साने का चोरपण उम का राना निकल जायेगा ।

जगदीशचन्द्र अपने गाव चाहल अपनी मा के पास चला गया था। पूरे बीस दिन वहाँ रहकर फिर कुछ चीजें खरीदने के लिए अमृतसर आ गया था। रात को उसे अलका के पिताजी अपने पाम ले आये थे। अलका उसे पूरे गत्कार से मिला थी। उस के साथ बाठी के बगीचे में भी बठी रहती। जगदीशचन्द्र को सिर्फ यह महसूस हुआ था कि अलका पहले से कुछ दुबली हो गया है।

आधी रात होगी। सोते-सोते जगदीशचन्द्र को लगा, जैसे वह किसी पहाड़ की पगडण्डी पर खड़ा होकर सामने के ऊँचे पहाड़ पर पड़ी हुई बर्फ का दख रहा हो। पास के किसी मोड़ पर से उसे किसी पहाड़िन के गाने की आवाज सुनाई दी। पहाड़ी स्वर कितनी ही देर उस के कानों में गूँजते रहे। फिर स्वरो के साथ-साथ गीत भी सुनाई देने लगा

‘दुर्गावाला डलडू तूँ मेरे कन्ने देई दे !

ता होई जा अगाडी मेरे माहुणुआ !

ओ पखलिया माहुणुआ !

आवाज दिल में उतरती जा रही थी। जगदीशचन्द्र अधजगी हालत में था। उस का कितनी ही देर मानूस न हुआ कि वह पहाड़ पर नहीं, शहर के एक कमरे में साया हुआ है।

एक बार गीत के बोल धिरक गये, जैसे गानेवाले की आवाज आसुओं से भर आयी हो। जगदीशचन्द्र चौंकर चारपाई से उठ बैठा। आवाज बाहर के बगीचे में से आ रहा थी। बगीचे में रात का अँधेरा गहरा नहीं था। वह कितनी देर चिड़की में से देखता रहा। पर जिस तरफ आवाज की सीध थी उस तरफ एक पेड़ का गहरा साया था। पेड़ के साये की तरफ देखत हुए जब उम की आँखें अँधेरे से कुछ हिल गयीं तो उस ने अलका को पीठ पहचान ली।

‘अलका ! जगदीशचन्द्र ने बाहर बगीचे में जाकर कहा, जोर पेड़ से पीठ टेककर खड़ी हुई अलका के पास जा खड़ा हुआ।

अलका चुप हों रही।

‘तुम बहुत उदाम हो।’

अलका ने सिर झुका लिया।

‘मुझे लगता है जैसे इस सारी उदामी का कारण मैं हूँ।’

‘नहीं, आप नहीं।’

पर मेरे कारण तुम्हारी मजबूरी और बढ़ जायेगी।’

“इस से अधिक अब क्या बलेगी ”

“पर अलका ”

“जी ।”

“कसा विवाह ह यह ?”

“मैं खुद नहीं जानती ।

‘ मैं कई बार बड़े-बड़े सोचने लगता हूँ राजा भी जाना हूँ, चीजें भी सरीदता हूँ पर दिल में खुशी नहीं दिखता

अलका का अपनेआप पर कभी तरस नहीं आया था जगदीशचन्द्र की हालत पर उसे तरस आ गया । उस ने आगे बढ़कर जगदीशचन्द्र का हाथ पकड़ लिया, “आप क्या विचारा में पड़ते ह, इनकार कर दीजिए इस विवाह से ।’

‘ मैं ने एक दिन यह भी सोचा था और उस रात तुम्हें खत भी लिखा था पर दूसरे दिन मैं खुद ही विचारा में डूब गया । लिफाफे में डाला हुआ खत फाड़ डाला ।

‘आज यही समय लीजिए कि मुझे वह खत मिल गया ह ।’

“तुम्हारे पिताजी क्या कहेंगे ? सावेंगे यह कसा आदमी ह । मिफ दम दिन बाकी ह ।”

“पिताजी से मैं खुद कुछ कह लूँगा ।

पर अलका वह कसा आदमी ह जो तुम्हे प्यार नहीं कर सका । तुम उसे भूल नहीं सकती ? मैं सोचता हूँ कि उसे तुम कुछ समय में भूल जाओगी ।’

अलका ने पहली बात का कोई जवाब नहीं दिया । आखिरी बात के जवाब में बोले ‘ शायद यह समय उमर जितना लम्बा हो जाये । आप इस समय की कीमत चुकाने रहिएगा ?”

“मुझे उदास रहने की जरा भी आदत नहीं, पर मैं कई दिना से उदास हूँ ।”

‘ मैं इसी लिए कहता हूँ कि आप यह कीमत क्यों दें ।’

“मैं भी यही सोचता हूँ कि मैं क्या कर रहा हूँ तुम ने मुझे पहले दिन ही सब कुछ बता दिया था । पर उस दिन जाने मुझे क्या हुआ था । ६

‘ मैं उस दिन सोच रही थी कि आप न जाने यह विवाह क्या करना चाहते हैं ।’

“तुम मुझे बहुत सूझसूझता था यो पर अब सोचता हूँ कि मैं तुम्हारी अकेली सूझसूझती का क्या कहूँगा ।’ जगदीशचन्द्र की भटकती आत्मा ने अंधेरे में अन्का के चेहरे का टटोटा ।

आप ठीक सोचते हैं ।”

“मेरा खयाल ह कि मैं बाकी छुट्टियाँ कमिल करवाकर वापस नौकरी पर चला जाऊँ । पर मेरे जाने के बाद क्या साचागो ।”

“कसा ! एक अच्छा आदमी, और क्या । आप यों ही परेशान हो रहे ह । आज

आप की रात की नींद भी खराब हो गयी है।”

अलका जगदीश को साथ लेकर कोठी में लौट आयी और जगदीश को उस के कमरे तक छोड़कर खुद अपने कमरे में चली आयी।

अलका जिन दिना यहाँ होती थी सुबह की चाय खुद बनाया करती थी। उस दिन भी जब सुबह हुई, अलका ने चाय बनायी। एक प्याला अपने पिताजी के कमरे में रख आयी और एक प्याला जगदीश के कमरे में। जगदीश के कमरे से जब वह लौट रही थी तो आवाज देकर जगदीश ने उसे अपने पास बुलाया।

अलका पलंग के पास जाकर खड़ी हो गयी। जगदीश ने पलंग से उठकर एक मिगरेट मुलगायी, और पलंग के पाये पर बैठते हुए बोला ‘मुझे रात को बिल्कुल नींद नहीं आयी।’

‘आप इतना क्यों सोचते हैं? वापस जाकर एक-दो दिन में ठीक हो जायेगा।’

“तुम ने उम्र दिन तलाक की बात की थी।”

‘अच्छा हुआ उस की जरूरत न पड़ी।’

“तलाक विवाह के बाद होता है। पर मुझे आज एसे लगता है, जैसे तलाक विवाह से पहले हो गया हो।’

अलका ने मन की पीड़ा को जीकर देखा हुआ था। वह जगदीश के मुँह से इतनी भावुक बात सुनकर सहम गयी कि इस रात चलते आदमी को यह पीड़ा न छू जाये।

‘मैं कभी ऐसी भावुक बातें नहीं करता पर तुम ठीक कहती हो। वापस काम पर लौट जाऊँगा तो एक दिन में ठीक हो जाऊँगा।’

अलका जाने लगी तो जगदीश ने उसे फिर रोक लिया कहा ‘तुम मेरे मन की हालत समझता हो?’

“हाँ।”

“मैं जब तुम्हारी तरफ देखता हूँ, तुम्हारे चेहरे के पीछे मुझे एक जोर चेहरा भी दिखाई देता है जिस से तुम प्यार करती हो—मुझे उस का चेहरा भा दीखता है शायद मैं जब भी तुम्हारी तरफ देखूँगा मुझे इसी तरह दिखाई देगा इसलिए हमें विवाह नहीं करना चाहिए। क्या करना चाहिए?’

‘नहीं करना चाहिए।’

“मेरा यहाँ दिल धबकाता है। मैं अभी तयार होकर चला जाऊँगा।’

“अच्छा।”

“मैं पिताजी के कुछ नहीं कहूँगा—तुम खुद कुछ कह देना।’

“अच्छा।”

अलका अपने कमरे में लौगी, तो उस की चाय ठण्डी हो चुकी थी। उस ने गरम चाय का एक प्याला और बनाया। बिडकी में खड़ी जब वह चाय पी रही थी, उस ने

जगदीशचन्द्र को काठी के दरवाजे से बाहर आते हुए दगा। वह कितनी ही देर जगदीश की पीठ की तरफ देखती रही। वह ओझल हो गया, तो अलका उस की पीठ के खयाल में ही टूबी रही। उसे लगा, जैसे वह इस पीठ से माफी माग रही हो।

१५

कुमार के कमरे में लटका हुआ कलेण्डर कई दिना से कुमार की ओर देख रहा था, और कुमार उस की ओर। कलेण्डर की ओर देखते देखते कुमार कभी यह सोचता कि आनेवाली आठ तारीख इतनी जल्दी क्यों आ रही थी। उस का दिल चाहता था कि वह तारीख कही रास्ते में ही अटक जाये और कभी वह सोचता कि आनेवाली आठ तारीख इतनी देर से क्या आ रही, और उस का दिल चाहता कि तारीख जल्दी से आकर गुजर जाये। कलेण्डर उस की तरफ देखता रहता था, और देखते-देखते उस का दिल चाहता कि वह इस कमरे में से उठकर वहाँ चला जाये जहाँ से कुमार का कभी किसी तारीख का पता न चले।

आठ गन्ध याद आते ही कुमार का जाने क्या हो जाता। एक दिन हरिया ने आकर जब आठ आने माँगे तो कुमार काफी देर उस के चेहरे की तरफ देखता रहा।

“अट्ट बजी गए बाबूजी ? एक दिन सुबह लकड़िया का गट्टा ले जाते हुए पहाड़िये ने कुमार से पूछा, तो कुमार का पाव ठिठककर पत्थर से जा टकराया।

कुमार कई दिना से एक तसवीर बना रहा था। तसवीर में एक चन्द्रमा अपने पूरे जलाल में था। नीचे एक पानी का तालाब था। उस में चाँद की परछाई भी चन्द्रमा की ही तरह भरपूर जलाल में थी। तालाब के किनारे पर कुछ लम्बे पेड़ थे, और पानी में उन के काले साये तर रहे थे। यह तसवीर करीब आठ फुट लम्बी थी। कुमार ने जब तसवीर खत्म की, तो कमरे की सब से बड़ी दीवार पर लटकाकर उस दूर से देखने लगा। उसे महसूस हुआ कि तसवीर पर बड़े आकार में ‘आठ का अंक लिखा हुआ था। आसमान के चन्द्रमा का गोल दायरा, और पानी में उस की परछाई का गोल दायरा मिलकर ‘आठ का अंक बन गया था। कुमार ने कई बार अपनी चेतना पर दबाव डालकर देखना चाहा कि तसवीर में एक चन्द्रमा था, और एक उस की परछाई। पर उस की आँखें इस विचार के प्रतिकूल जब तसवीर की ओर देखती थी तो उन्हें आठ का अंक दिखाई देता था। तसवीर की ओर देखते-देखते कुमार ने देखा कि तसवीर के पङ्क भी आठ ही थे। चार तालाब के किनारे पर उगे हुए पङ्क थे और चार उन के पानी में तरते साये। कुमार ने धबकाकर वह तसवीर दीवार से उतार ली।

कुमार ने नया बनवस लेकर एक और तसवीर बनानी शुरू कर दी। इस

तसवीर में एक अँधरे का आलम था। एक मुसाफिर इस अँधरे में रास्ते पर चल रहा था। क्षितिज की केवल हल्की-सी रेखा उस मुसाफिर को दिखाई दे रही थी। मुसाफिर का सारा शरीर अँधरे में लिपटा हुआ था। पर उस के पर राशनी में भीने हुए थे। कुमार ने इस मुसाफिर के पैरों को उजल रंग में बनाया। जितने कदम वह मुसाफिर चला चुका था कुमार ने उन पैरों के निशान भी उजले बनाये। तमबीर को खत्म कर के कुमार ने जब उसे कमर का दीवार पर लगाया तो उस की तरफ देखते देखते कुमार को लगा कि तसवीर का मुसाफिर चल नहीं रहा था। अपने पैरों पर सड़ा का सड़ा रह गया था। कुमार ने उन उजल कदमों की ओर देखा, जो कदम वह मुसाफिर चलकर आया था। कदम पूरे सात थे। आठवें कदम पर वह मुसाफिर चलने से रुक गया था। कुमार ने कापते हाथों से उस तसवीर का दीवार से उतार लिया और नया बनवस लेकर एक और तसवीर बनाने लगा।

इस नयी तसवीर में कुमार ने खास ध्यान रखा कि किसी तरह भी पड़ा और कदमों का तरह कोई ऐसी चीज नहीं बनायेगा जिसे गिना जा सके। इस तसवीर में उस ने एक लड़की इस तरह की बनायी, जिस का सम्बन्ध एक अलग दुनिया और अलग किस्म की ज़िन्दगी से था। लड़की के इस तरफ उस ने सगमरमर की जागी की एक बहुत ऊँचा आड बना दी। जाली की यह आड एक दुनिया का और एक ज़िन्दगी को अलग अलग कर रहा थी।

कुमार ने ऐसी तसल्ली से इस तसवीर को बनाकर जब दीवार पर टांगा और खुद दरवाजे की चौखट पर खड़ा होकर दूर से इस तसवीर को देखन लगा, तो उस की आँखें चकित रह गयीं। सगमरमर की जाली के सार सूरख एक-दूसरे से मिलकर इस तरह के आकार में ढल गये थे जैसे पूरे के पूरे बनवस पर सँवड़ा आठ लिखे हुए हों। आठों की गम्भीर कतार थी, कतार के नीचे एक और कतार। उस के नीचे एक जोर कतार उस के नीचे एक और कतार। कुमार ने सिर झुकाकर दीवार की जोर से मुँह फेर लिया जहाँ उस ने अपने आप से मुँह फेर लिया हो।

हरिया कई बार बठ-बठे अपने देश का एक गीत गाया करता था, बारा बजि गय हो राज दीया घड़ीया बाराँ बजि गये हों। कुमार ने यह गीत कई बार सुना था। इसे सिर्फ हरिया ही नहीं गाया करता था गडरिये भी गाया करते थे। कई-कई तो इसे बासुरी पर बजाया करता था। कुमार ने कभी इस गीत की तरफ ध्यान नहीं दिया था। आज हरिया से यह बात सुनकर उसे लगा कि इस गीत की पृष्ठभूमि में कोई दद भरी कहानी थी। इस घाटी में कभी इस तरह के बारह बजे होंगे कि सारी घाटी काप उठी होगी। इस घटना का जाने कितने वष होंगे चुके होंगे। शायद एक सदा गुजर चुकी हो। पर बारह बजे घटित हुई कहानी आज भी इस घाटी के लोग का याद थी। जैसे वे आज भी जब घड़ी की तरफ देखते हैं उन्हें बारह बजने से भय आने लगता है।

“हरिया ।”

“हाँ, बाबूजी ।”

“यह तुम क्या गा रहे हो—बारा बजि गये ?”

“एक साढे देसे दा गौन ए ।”

“बारह बजे क्या हुआ था ?”

“बारह बजे मोहने ने फासिये चढ़ना सी ।”

“यह मोहना कौन था ?”

“फुल्ला लहीया बाडोया बिच राजे दा माली सी ।”

“राजे ने उसे फाँसी का हुक्म क्या दे दिया ?”

“एक राते दी रानी कीया हार दिदा सी ।”

“और क्या करता था ?”

“पजरगी मुरली बजादा सी ।”

फिर राजे ने उसे फाँसी लगा दिया ?

“नहीं, बाबूजी । इस दे धरमे दे भार नाल तखता टुटी गया ।”

“आ ।

कुमार जब हरिया से यह कहाना सुनकर दूर के पड़ा की तरफ देखने हुए नीचे गया तो वह मोच रहा था, ‘माहने ने किमी रानी क रूप की पूजा की होगी, रानी के श्रृंगार के लिए उस ने फूल के हार पिराये होंगे, राजा को उन फूलों में से मुहब्बत की खुशबू आयी होगी और राजा ने फाँसी का हुक्म सुना दिया । मुहब्बत करना माहने का कुसूर था । यही कुसूर उस का धम बन गया, और धम के भार से फाँसी का तख्ता टूट गया । मैं इस से बिल्कुल उल्टा खेल खेल रहा हूँ । मैं ने मुहब्बत को धम नहीं बनाया, शायद इसी लिए मेरे भार से कुछ नहीं बनता । मेरे सारे दिन सारी रातें इस तरह हो गयी ह, जस मैं फाँसी के तख्ते पर खड़ा होऊँ ।

घड़ी की सुई ने जसे धीरे धीरे सरकते हुए वही बारह बजा दिये थे, जब माहने ने फाँसी लगना था । उसी तरह समय की सुई धारे धीरे सारे दिन गुजर गयी, और आबिर आठ तारोख आ पहुँची ।

कुमार को याद आया कि कई वष पहले जब वह बम्बई पढ़ता था तो वह एक बार समुद्र में नहाने के लिए गया था । उस दिन उस ने पहली दफा समुद्र में पाव रखा था । वह कितनी ही हल्की-हल्की लहरों के थपेड़ अपनी पीठ पर महसूस करता रहा । कभी उस का पैर उखड़ जाते थे कभी समुद्र का मलौना पानी उस की नाक और मुँह में चला जाता था । वह कितनी ही देर छोटी छोटी लहरों में खड़ा रहा था । नहाते-नहाते वह पानी में और आगे बढ़ गया था और फिर अचानक एक बहुत बड़ी लहर उस पर चढ़ आयी थी । वह बीखला उठा था । उसे लगा था कि यह लहर उसे बहाकर ले जायेगी । एक और आदमी उस से कुछ फासले पर नहा रहा था । उस ने

पास आकर कुमार का हाथ पकड़कर उस ऊपर उछाल लिया था, और लहर पैरो के नाचे से गुजर गयी थी। उस ने कुमार का बताया था कि इस तरह की ऊँची लहरा के आन पर या तो अपने पैर उठाकर लहर पर सवार हो जाना चाहिए, और या नाक मुँह बन्द रखकर लहर को अपने सिर पर से गुजर जाने देना चाहिए। और कुमार ने सोचा कि अगर वह आठ तारीख की इस ऊँची लहर पर सवार होकर पार नहीं हो सकता, तो उसे अपनी नाक मुँह बन्द कर लेना चाहिए, और इस लहर को अपने गिर के ऊपर से गुजर जाने देना चाहिए।

कुमार अपने चक्क की पगडण्डी पर चलता बड़ी सड़क पार आ गया। इस सड़क पर से अकमर सलानिया का मोटरें गुजरती थी। कई बार कुछ सलानो अपनी मोटरें सड़क पर छोड़कर कुमार का स्टूडियो देखने के लिए चक्क की पगडण्डी उतर आते थे। मंदिरा के घरना की तरह इस घाटी में कुमार का स्टूडियो भी दानाय समझा जाता था। कई बार कुछ लोग कुमार से शहर का कोई काम भी पूछ लेते थे।—आज कुमार को सड़क पर आकर किसी सलाना की शहर की आर जाती मोटर ता दिखाई न दी पर फौजिया की एक जीप ज़रूर मिल गयी। फौजिया ने बताया कि उन्हें पठानकोट तक जाना है। कुमार उन की जीप में बैठकर पठानकोट की तरफ चल दिया। जीप पालमपुर पहुँची तो कुमार ने पठानकोट जाने का इरादा छोड़ दिया। वह पालमपुर ही उतर गया।

‘जसा पठानकोट बसा पालमपुर।’ कुमार ने मन में कहा और उस गली की तरफ चल दिया। वहाँ पहुँचकर कुमार ने सोचा था कि वह नाक मुँह बन्द कर किसी औरत के जिस्म में इस तरह खा जायेगा कि आठ तारीख की ऊँची लहर उस के सिर के ऊपर से गुजर जायगी। कुमार को विश्वास था कि वह पानियो में अड़िग खड़ा रह जायेगा, और वह आसाना से किनार की रेत पर लौट आयेगा।

पालमपुर के बाज़ार में बठनेवाला औरतों को क्याना आमदनी की उम्मीद नहीं हुआ करती थी। इस रास्ते से हाकर गुजरनेवाले फौजा उन का एकमात्र सहारा थे। बड़े अक्सर उस तरफ कम ही आते थे क्योंकि उन्हें पठानकोट में यहाँ से अधिक सङ्कलितें मिल जाती थी। इसलिए आम किस्म के ग्राहकों की अग्यस्त य औरतें जब कभी ऐसे आदमी को देखती जिस से उन्हें क्याना आमदनी की उम्मीद होती तो वे छाम तीर से उस का स्वागत करती। कुमार का स्वागत भी इस तरह हुआ जस एक मुद्दत के बाद किसी व्यक्ति के घर में आया है।

चन्द्रावती की आँखों का अलूड कहा जा सकता था पर उस की काँई भी अदा अलूड नहीं थी। कुमार ने शराब पाने से इनकार कर दिया तो चन्द्रा ने मुसकराकर कुमार के सामने से गिलास हटा लिया। काच के एक प्याले में उस ने फला का रस डालकर कुमार के पास रख दिया और उस के पैरों से बूट उतारकर उस की जूरीबें उतारने लगी।

चंद्रा की ठण्ठी ठण्ठी उँगलिया जय कुमार के कसे हुए पदन से छुई, ता कुमार को लगा जैसे नींद आ रही हा ।

चंद्रा ने सेमल की रुई से भगा हुआ एक तकिया पलंग पर रख दिया । कुमार ने तकिये पर सिर रखकर चंद्रा से पूछा अगर आज उम का विवाह होना हो तो वह कमे कपड़े पहनेगी । उम ने चंद्रा का कमे ही कपड़े पहन लेने के लिए कहा, और चादी के वे सारे गहने भी पहनने को कहा, जिन्हें विवाह के दिन पहना जाता ह ।

चंद्रा चुप रही । साथ ही काठरी म जाकर उस ने अपना बक्स खोला । चंद्रा ने हरी छत्र की चूड़ीदार सलवार पहनी । दगियाई किनारीवाला कुरता पहना, पाँव में पायलें और नाक में चादी की एक छोटी सी नथ पहनकर जब वह कुमार के पास आयी तो कुमार सो चुका था ।

पायल की खनक से कुमार ने अपनी अलसायी आँखें खोली और देखा कि चंद्रा उस के पायताने इस तरह सिमटकर बठ गयी थी जसे वह अभी-अभी डोली में से निकलकर लायी गयी हा ।

कुमार ने हाथ पकड़कर चंद्रा को पायताने से उठाया । पर चंद्रा को अपनी बाहों में लेते हुए उसे महमूस हुआ जसे वह कपड़ा की बनी एक गुड़िया से खेल रहा हो ।

चंद्रा ने नाक में पहनी हुई नथ को अपनी उँगलिया से थाम लिया । नथ का मोती शायद उस भारी लग रहा था । कुमार ने चंद्रा की ओर देखा । उसे लगा, चंद्रा विवाह का यह स्वाग भरते भरते ऊब गयी थी ।

‘यह स्वाग किस लिए । कुमार को खयाल आया और उम ने अपने आप को घरकर देखा, ‘मैं ने चंद्रा का अलका का स्वाँग भरने के लिए क्यों कहा था ? मैं यह क्या कर रहा हूँ ।’

‘आज ही नहीं तुम हमेशा ही इस तरह करते हो ।’ कुमार को लगा जैसे बाहर से किसी ने कुछ न कहा हो, पर उस के अंदर बैठकर उम स कोई कह रहा था । तुम ने अपने-आप को कभी भी उस तरह स्वीकार नहीं किया, जसे तुम्हें करना चाहिए था । तुम ने अलका को भी कभी उस तरह कबूल नहीं किया, जमे तुम्हें करना चाहिए था । तुम अलका में हमेशा एक वेश्या का भ्रम खाते रहे और आज एक वेश्या में अलका का भ्रम खाना चाहते हो । तुम यह क्यों नहीं समझते कि वह यहाँ भी बैठी हुई ह । तुम उस के पास बैठे हुए हो, और तुम यहाँ भी खड़े हो, वह तुम्हारे पास खड़ी ह ।

पाना में कभी रेखा नहीं पिचता । रेखा का भ्रम होता है, पर रेखा नहीं । तुम अब तक पानी को लोडकर दम रहे हो ।’

पानी टूट नहीं सकता था पानी का बाँध टूट गया । तब के पानिया में जाने बसा बग आया । इसी पाना के जोर में स एक बिजली पग हुई । मुहब्बत और

नफरत की तारा ने मिलकर इस विजली को जगा दिया, और इस की रागनी म कुमार को लगा कि अलका उस के पास थी। अलका उस के अंदर भी थी, और अलका उस के बाहर भी थी। कुमार ने चंद्रा की भूँठ रुपया से भर दी। ये रुपये चन्द्रा से आज के स्वाग के लिए माफ़ी माँग रहे थे।

कुमार गली में स होता हुआ बड़े बाज़ार में आ पहुँचा और पपरोला का जा रही बग में बठ गया।

बस के पपरोला पहुँचते पहुँचते अँधेरा गहरा हा गया था। डेढ मील अभी और बाकी था। पर कुमार जल्दा जल्दी पाव उठाता हुआ अपने चक्क की तरफ इस तरह चला जिस वहाँ उस का कोई इन्ज़ार कर रहा हो।

चक्क की बच्ची पगडण्डी से उतरकर कुमार सीधा झुग्गियों की तरफ चला गया। जिस झुग्गी में अलका ने दीयो व बहुत-से आले बनाये हुए थे कुमार ने उस झुग्गी में जाकर सब दीये जला दिये। झुग्गी की दीवार बिलमिला उठी। बच्ची उचान पर उन का गलीचा गिरा हुआ था। कुमार जब उस गलाचे पर बठा तो उस लगा जमे आज उस के विवाह की पहली रात हा। अलका कहीं नहीं गयी थी अलका उस के पास थी। अलका उस के अंदर था। और फिर कुमार ने उस दीवार की ओर देखा, जिस दीवार पर अलका ने पानी की लहरें बनाकर पानी में एक रखा खीची हुई थी। कुमार के दिल में आया कि वह अभी रंग और ब्रश लेकर पानी में खिंची हुई रेखा को मिटा दे।

१६

अलका ने कोठी के बगीचे में एक ऊँची जगह पर पत्थर की एक शिला रखी हुई थी। इस शिला पर वह शाम का चाय के प्याले रखकर अपने पिताजी को आवाज़ दकर बुला लेती थी। पिताजी रोज नियमपूर्वक शाम के छह बजे चाय पीते थे, और फिर सर करने के लिए चले जाते थे। अलका उन के आने तक बगीचे में ही बठी रहती थी।

आज पिताजी को गये कुछ ही दर हुई थी। जगदीशचंद्र कोठी के बाहरी दरवाजे में से अलका के पास आ गया। अलका चाय के खाली प्याले उठा रही थी।

आप।

‘मैं कितना देर से उस तरफ मोड़ पर खड़ा हुआ था। पिताजी के चले जाने पर अंदर आने की साव रहा था।’

‘पिताजी ने आप को आने से कभी नहीं रोका।’

पर मैं तुम्हें जेबे में मिलना चाहता था।’

‘बटिए।’

‘बठने का अधिकार मैं ने खो दिया ह पर आज मैं वही अधिकार लेने आया हूँ’

“आप अभी तक वापस नहीं गये ? आज पन्द्रह ताराग्न हो गयो ह ”

“वापस जाना चाहा था, जा नहीं सका अलका ।’

“जी ।”

“मैं उस दिन जब रात के अँधेरे में यहाँ से चला गया था ”

‘मैं ने आप का जाते हुए देखा था ।”

“तुम ने उस दिन क्या सोचा होगा ?

अल्का ने हँसकर कहा, “जहाँ तक आप की पीठ दिखाई देती रही मैं आप की पीठ की तरफ देखती रही और उस से माफी मांगती रही ।’

“माफी तो उसे मागनी चाहिए जो पीठ बर के चला जाये ।

‘आप किसी की तरफ पीठ कर के जानेवाले नहीं थे जान के लिए मैं ने आप को मजबूर किया था, इसलिए मैं आप की पीठ से माफ़ी मांगती रही’

जगदीश ने एक गहरी सास ली, और अलका की तरफ देखते हुए बोला, “न कोई तुम्हारी तरह साब सकता ह न कोई तुम्हारी तरह बोल सकता ह । अब तुम समझी हो कि मैं जाकर भी क्या नहीं जा सका । लगता था दुनिया म टूटन भी बहुत मिल जायेगा, जवानी भी मिल जायेगी, पर यह जो मैं ने तुम में देखा ह वह मुझे कभी नहीं मिलेगा ।”

अलका कुछ नहीं बोली । उस ने सिर झुका लिया ।

‘यह जो आठ तारीख गुजर गयी है अलका, वह मुझे लौग दो ।’

‘तारीख ता लौट सकती है, पर

“अब मेरे मन में कोई ‘पर’ नहीं रहा, और न तुम्हारे मन में रहेगा ।’

‘क्या ?’

‘क्याकि उस का कारण नहीं रहा ।’

“कारण उसी तरह ह जसे पहले था ।’

नहीं, अलका, अब वह कारण नहीं रहा । तुम्हे एक अपनी चोरी बताऊँ ?”

क्या ?

‘मैं तुम से भी पूछ सकता था पर पूछा नहा था । खुद ही सोचता रहा कि धाँवर वह कौन-सा आदमी था, जिसे तुम इतना प्यार करती थी ।”

‘आप पूछते, मैं बता दती ।”

“मैं वद ही सोचता रहा । जो सोचा था ठीक निकल ।’

“उन का नाम कुमार ह ।’

“मुझे पता है ।

‘पर यह पता लगने मात्र से कारण कैसे मिल गया ?”

“मैं बहा गया था, चपक नम्बर छत्तीस में, उसे देखने के लिए।”

“फिर ?”

“जब मैं ने उसे देखा वह हाश में नहीं था, इस लिए मुझे यह मालूम नहीं कि वह क्या आदमी था। अच्छा ही होगा। पर

“वह बीमार है ?”

“मेरा खयाल है कि अब तक ज़िंदा नहीं होगा। डॉक्टर ने बताया था कि मुश्किल से दो रातों और गुजरेंगी। यह बल सुबह की बात है।”

अलका पत्थर की तरह पत्थर की शिला पर बैठ गयी।

“अलका, तुम यह मत सोचना कि मैं उस की मौत से खुश हो रहा हूँ बल्कि डाक्टर ने जो न्याय लिखकर दी थी वह वहाँ नहीं मे न मिल सकी। मैं आते हुए पठानकोट से वह दवा भिजवाकर आया हूँ मैं ने यह बिल्कुल नहीं चाहा था कि वह ज़िंदा न रहे।”

“उन्हें क्या तकलीफ थी ? सीने में दद था ? अलका शिला से इस तरह उठ खड़ी हुई, जैसे अभी कुमार के पाम चल देगी और उसे बचा लगी।

“हाँ, सीने में दद था। चेतू ने बताया था कि बाबूजी का यह दद पहले भी हो जाया करता था पर इस बार बुखार भी हो गया था, और यही बुखार दिन-ब-दिन बढ़ता गया था। वह शायद एक रात सर्दी में बैठकर झुग्गा की दीवार पर कोई तमबीर बनाता रहा। झुग्गी का एक दावार में दीया के लिए बहृत-स आले बने हुए हैं। वह सारी रात दावे जला कर एक तमबीर बनाता रहा तभी उस के सीने का टण्ड ने जकड़ लिया

“चेतू ने मुझे ”

“चेतू का इस में कोई कसूर नहीं अलका ! यह यहाँ आकर तुम्हें खबर देना चाहता था, पर कुमार ने आने नहीं दिया।

“मुझे आप बता देते ”

“यह मरे जाने से पहले की बात है अलका ! मुझे सिर्फ चेतू ने, और उस की बेटी ने बताया था।”

“पर ”

“मेरा खयाल है कि उस की दिमागी हालत ठीक नहीं थी। मुझ से ज्यादा तुम्हें पता होगा वह शायद गुरु से ही कुछ इसी तरह था

“किस तरह ?”

“चेतू कहता था कि बाबूजी को यह मालूम नहीं कि तुम अमृतमर चली आयी हो।

“क्या ?”

“वह समझता था कि तुम अभी तब अपनी झुग्गी में रहती हो तुम वहाँ एक

झुग्गी में रहती थी न ? मैं ने वे झुग्गिया भी देखी थी ।

अलका जगदीश की आर देखने लगी ।

“मैं ठीक कह रहा हूँ, अलका ! अगर वह जिंदा भी रहता, या अब भी किसी तरह बच जाये तो मैं जो कुछ उम के बारे में सुन आया हूँ, उस से मुझे बिल्कुल यह डर नहीं रहा कि वह कभी हमारी जिन्दगी में कोई दखल दे सकता है ।”

“वह बच जायेंगे ?”

‘बचने की बात मैं ने या ही कही ह, अलका ! मुझे डाक्टर ने खुद ही बताया था कि वह बच नहीं सकता पर तुम यह मत सोचना कि मैं उस की मौत से खुश हूँ मैं अब भी चाहता हूँ कि वह बच जाये पर जिस आदमी की दिमागी हालत ठीक न हो, वह बचकर क्या करेगा ! वैसे वह आर्टिस्ट बहुत अच्छा ह, मैं ने उस की तसवीरें देखी ह ।’

‘दिमागी हालत ?’

उसे शायद किसी जिन प्रेत की बसर थी । यह मेरा खयाल नहीं अलका ! मैं किसी जिल्म प्रेत को नहीं मानता । चेतू चाचा ऐसा साबुता था उस ने बताया था कि बाबूजी बड़े-बड़े किसी से बातें करते रहते थे और कई बार अपने पलग की ओर हाथ कर के चेतू को पूछते थे कि उसे पलग पर बड़ी हृष्ट जिन्नी दिखती थी या नहीं क्या नाम ह चेतू की बेटी का, नाया ? वह भी यही कहती था कि बाबूजी को पैरो का कोई घटम पड़ गया था । वे उस से पूछते थे कि जिन्नी के पैर उलटे हाते या सीधे ? और या नोद में कहते थे कि पानी में रेखा नहीं खिंचती, रेखा का भरम होता ह यह सब शायद बुगार की बजह से होगा ।”

अलका ने मुँह धुमा लिया । एक हाथ से उस ने पत्थर की गिला का कसकर पकड़ा हुआ था । आँसुआ की जितनी भी बूँदें अलका की आँखों से टपककर पत्थर की गिला पर गिरी, सिंग को लगा कि वह इन बूँदों से पिघल जायेगी ।

‘अलका ! जगदीश ने पास हाँकर अलका के कंधे पर हाथ रखा ।

‘जी !’

“मैं जानता था तुम्हें दुख होगा । आखिर तुम ने कभी उसे इतना प्यार किया था । पर यह तुम्हारे और मेर बस की बात नहीं । जाने उम की किस्मत कसी थी । वह तुम जमी लड़की से प्यार न कर सका । पता नहीं उस के मन में क्या था । पर अब शायद यह बात ही खत्म हो गयी ।

अलका से बोला न गया । उस ने इनकार में सिर हिला दिया, जमे वह कह रही हो, ‘यह बात अभी खत्म नहीं हुई, यह बात कभी खत्म नहीं होगी !

‘अलका !’

‘जी !’

“मैं तुम्हारे दुःख का समझता हूँ, अलका ! इसलिए मैं विवाह में धूम्रपान नहीं

बहूँगा। कल या परसो हम पाँद्रह मिनटा में यह रस्म कर लगे, फिर मैं तुम्ह सीधा

‘मेरा विवाह हो चुका ह, जगदीश !’

‘अलका !’

“काफी दूर दूई, मेरा कुमार से विवाह हुआ था। पर वह सोचते थे कि पानी में रेखा खिंच सनती है। अब उन्हें मालूम हा गया है कि पानी में रेखा नहीं खिंचती। इसलिए मैं रात की गाड़ी से उन के पास चली जाऊँगी—अपने घर चली जाऊँगी

“पर अलका, वह तो ’

“वह जरूर जिंदा होंगे !”

“तुम यह भी देख लो, सुद जाकर देख ला। पर अगर तुम्हारे जाने तक कुमार जिंदा न हुआ ”

‘फिर भी मैं वहा अपने घर रहूँगी, एक विधवा औरत की तरह रहूँगी।

यात्री

एक

औरत दुनिया की सब से बड़ी स्मगलर है। मद कुछ भी करे, सिर्फ गाजे और अफाम जसी चीजें ही स्मगल कर सकता है। ज्यादा से ज्यादा साना स्मगल कर सकता है या सरकारी भेद जमी कोई चीज, बस इस से ज्यादा कुछ नहीं। पर औरत इनसान के समूचे अस्तित्व का स्मगल कर सकती है। जब तक स्मगलिंग का मान छिपा सकती है, कास में छिपाये रखती है जब नहीं छिपा सकती, बता देती है, दिखा देती है—और वह भा किसी शर्मिंदगी के साथ नहीं, बड़े मान के साथ—स्मगलिंग के बम्ब का हक बहकर। हक बहकर भी नहीं एहमान बहकर। इनसान पर इनसान के बस का चलाये रखने का एहमान बहकर।

मेरी मा ने मेरे बाप पर यही एहसान करने के लिए भगवान से एक बेटा मांगा था—पहले हकीमा की दवावा स मांगती थी, फिर फकीरा की जड़ी-बूटिया से, फिर अडोसन-पडोसन के बताये हुए जादू-टाने से, फिर करामाती कहे जाने पीरा फकीरा की कला से, और फिर शिवजी के इस मन्दिर में आकर शिवलिंग स—और आखिर मांग मांगकर उस ने भगवान का इतना तग कर दिया कि भगवान का उस बेटा दवा ही पड़ा।

सोचता हूँ, भगवान पूरा बनिया ह। माँ ने भगवान् स भी एक सौदा कर लिया था—तू मुझे एक बेटा दे दे मैं उमे तेरे इसी मन्दिर में चढ़ा जाऊँगी, तेरी सेवा में अर्पित कर जाऊँगी

अजीब सौदा ह—माँ ने भगवान पर भी एहमान कर दिया देख तेरी सेवा के लिए मैं क्या दे रही हूँ। लग मुट्ठी भर मक्की का आटा देते ह, या गुड, चावल और मारियल चना देते ह या ज्यादा से ज्यादा किसी चबूतरे और बावली पर सगमरमर मड जाने ह या बल्ल पर माले का पतरा, पर मैं ने जोसा-जागता एक बच्चा तेरी मूर्ति के आगे रखा है और उधर मेरी माँ ने मेरे बाप पर भी एहमान कर दिया—वितनी मुगीबतें शेल्नी पनी, पर आखिर मैं ने तेरे कुल का नाम रख लिया, तेरा बस खरम हाने नहीं दिया और चाहे तेरे इस बेटे को तेरे खता में जाकर हल नहीं जातना है, बुझाये में तेरी लाठी भी नहीं पकड़नी ह, पर तू कभी-कभी उसे आँखा से दमकर

बलेजा ठण्डा कर सकती है—नियमादार घटा का सिफ दखा जाता है, पर साधु घटे के तो दशन बिघे जात है ।

माँ अक्सर यहाँ दशन करने आती है, बाप सिफ सक्रान्तिवाले दिन या बिगी पर्व पर । शायद इसलिए कि बहुत मुसीबतें माँ ने झेली थी और उसी का महत्त्व जानने के लिए उसे एक प्रत्यक्ष सन्त का जहरत पड़ती है और मैं बीस बरसा का प्रत्यक्ष सबूत हूँ ।

मुझे याद नहीं—बालीसा नहाने के बाद जब मेरी माँ मुझे एक गेए कपड़े में लपेटकर इस मन्दिर में बढाने आयी थी, तो शिवमूर्ति के ठण्ड पैरा पर पड़ा मैं राधा था या नहीं । (मुता है, मा ने अपनी मानता के मुताबिक मुझे पैदा हान हो गए कपड़े में लपेट दिया था ।)

मन्दिर के मुख्य सन्त बिरपासागरजी ने मेरे माथे का मूर्ति के पैरा में छुआ-बर मुझे फिर माँ की झाली में डाल दिया था—यह बालक आज से शिव का पुत्र है पावती इस की माँ और तू इस की धाय । एक बरस के लिए तुझे दूध पिलाने की सेवा सौंपते हैं । इस की पहली वषगाठ पर यह बालक हम लौटा देना ।

सो एक बरस के लिए मैं उधार सौंपा गया था । पता नहीं इस एक बरस में मैं ने माँ का माँ बहकर पुकारा था या नहीं शायद नहीं—क्याकि मेरे होठ इस शब्द से परिचित नहीं लगते ।

अनुमान लगाता हूँ कि अपनी पहला वषगाँठ का जब गेरआ चाते में घुटना घुटना चलते, मैं ने मन्दिर की मूर्ति के पैरो में पड़े हुए फूल के पास पहुँचकर बिगी फूल का उठाकर खाने के लिए मुह में डाला हागा और मेरे गले ने फूल के स्वाद को कबूल न किया होगा—तो मैं जरूर रोया हाऊगा । (मन्दिर का बूटा सवात्तर माइ भगतराम बताता है कि फूल की पत्तियाँ मरे तालू से चिपक गयी थी और मेरी साँभ रक गयी थी । उस ने मरे मुह में उगली डालकर वे पत्तियाँ निकाली थी और फिर मुझे बहला-के लिए महन्तजी ने खुद एक बटारी में दूध और बताशा डारकर मुझे भूनि का प्रसाद चलाया था ।)

शायद कुछ दिन ठुकुर-ठुकुर सब के मुँह की तरफ दखा हागा—साइ भगतराम के मुँह की तरफ, गोविन्द साधु के मुह की तरफ महन्त बिरपासागर के मुह की तरफ शिव की मूर्ति के मुह की तरफ पावती की मूर्ति के मुह की तरफ और मन्दिर में आकर माथा टेकनेवाले भक्तों के मुह की तरफ—कुछ याद नहीं । ये सारे मुह बिरकाल से परिचित लगते हैं ।

मन्दिर में एक गुफा है । कहते हैं, यह गुफा यहाँ बाँगडा घाटी में से निकलकर बेलस पर्वत पर पहुँचती है । पर अब कोई इस गुफा में से गुजरा नहीं । जानेवाले जब जाते थे, इस बात को सदियाँ गुजर गयी हैं । यह गुफा कई सौ मील लम्बी है यह सिफ एक कथा है । कथा का इधर का सिरा सामने दिखता है—गुफा का मुँह ।

उबर का सिरा काई नहीं जानता । पता है—मैं भी नहीं जान सकूँगा, पर लगता है, उसे मैं इस भव्नों मील लम्बी गुफा में कुछ मील रोज चलता हूँ । पहुँचता कहीं नहीं, सिफ़ चलता हूँ । अँधेरा इस के गाल मुह पर भी पड़ा हुआ है—और दूर अन्दर भी ।

‘मा’ शब्द का सिफ़ इस कहानी को चलाने के लिए बरत रहा हूँ, वैसे इस शब्द से मेरा काई वास्ता नहीं । मंदिर में बहुत-सी औरतें आती हैं, वह भी आती है । मन से उस को ‘वह औरत’ हा कह सकता हूँ मैं नहीं । यह शब्द एक मगक लगता है—मेरे साथ तो लगता ही है उस के साथ भी । बिल्कुल उसी तरह जैसे बेचारी पावती के साथ ।

कई बार रात के अँधेरे में मैं अपना काठरी से निबलकर मंदिर के उस हिस्से में चला जाता हूँ जहाँ शिव और पावती की आदमकद मूर्तियाँ हैं । वह दोनों मुझे बड़े स्थिर और आराधना में लीन एक बूढ़े किसान और एक अवेड औरत की तरह खड़े लगते हैं—भगवान से एक बेटे का मुराद माँगते हुए । बिल्कुल उसी तरह जिस तरह मेरी माँ, और मेरा बाप किसी दिन इसी तरह ऐसे ही खड़े हाकर भगवान से प्रार्थना करते रहे होंगे ।

मैं दोनों मूर्तियाँ के सामने खड़ा हो जाता हूँ, जम हँस रहा हाता हूँ—तुम्हें एक बेटे की बहुत कामना है ? अच्छा मैं अपनेआप का दान देता हूँ

मूर्तियाँ दो भिक्षारियों की तरह लगता है और अपनाआप—भिक्षा की वस्तु । नहीं मैं भिक्षा की वस्तु भी नहीं, सिफ़ भिक्षा का एक पात्र हूँ । वस्तु में एक रस एक स्वाद, एक मूँक शामिल हाता है । और सब से ज्यादा एक सन्तुष्टि शामिल होती है मुझ में वह कुछ भी नहीं । मैं सिफ़ एक पात्र हूँ—वस्तु को ढानेवाग । वस्तु एक तसल्ली है—जो माँ नाम की एक औरत का मिली है और बाप नाम के एक मद की मिगी है या शिव-पावती का मिली है, जिन की मूर्तियावाले इस मंदिर की गोभा बड़ गयी है—कि इस मन्दिर से बेटों की मुराद मिलती है ।

मेरा खयाल है—महत विरपामागरजी सचमुच दूरदा है । उन्होंने मेरे जम के समय ही मेरे मन की उस अवस्था का अनुमान लगा लिया था, जो कुछ सोच और समझ आने पर मेरे अन्दर पड़ा हा जानी थी । इसलिए उन्होंने एक सन्नान्तिवाले दिन मेरा नाम रखा था—विरपापात्र ।

विरपापात्र या भिक्षापात्र एक ही बात है । एक तरह से हम सब भिक्षा पर हा पलन हैं—सिफ़ मैं नहीं साइ भगतराम भी, गाविंद साधु भी, महन्त विरपामागर भी । हाय पलावर काद भा किसी से कुछ नहीं माँगता, सब पैरों के जार से माँगने है—यहाँ अपन पैरा के जोर से और वहाँ उस से बहुत लगने शिव-पावता के पग के जार से—भक्तजन जो कुछ देते हैं, शिव-पावती के पैरों पर रख देते हैं, कई महत्ता के पग पर भी रख देने है कोई गोविन्द साधु के पैरों पर भी रख दत है,

और कोई-काई गाइ भगत राम के परा पर भी—मेर पर भी इन पैरो में शामिल हो रहे ह—हम सब जम हाथा का काम परो से ले रहे ह

पर भिन्नापात्र हाने का खयाल सिफ मुये आता ह। पता नही, क्या ? शिव पावती तो खर बोल नही सकते महन्तजी के मुँह से भी ऐसी बात मैं ने कभी नही सुनी। गाविन्द साधु गूँगा है उस के कुछ बोलने का सवाल ही नही उठता, पर उस के मुह स भी नही लगता कि वह किसी चीज का भीख नमश्तता हो—बल्कि बादामा की ठण्डाई अगर कभी उस के हिस्से नही आती तो वह घूरकर सब की तरफ देखता ह। साइ भगत राम ता बिल्कुल अलबेला ह वह बाजरे की सूखी रोटी भी उसी स्वाद से चबा जाता ह जिस तरह गिरी की पजीरी। सिफ मेर गले में कुछ अटका हुआ ह—और हर ग्रास के साथ चुभ सा जाता ह।

डेर के नाम पर सिफ चार कोठरियाँ ह—एक महन्तजी की, एक मेरी, एक गाविन्द साधु और साइ भगत राम की, और एक आने-जानेवाले साधुओं के लिए। इन काठरिया की पाइ-बहार साइ भगत राम के जिम्मे ह। मंदिर इन काठरिया से बिल्कुल अलग ह—एक पथरीली पगडण्डा का लाघकर पहाड के एक वक्ष में बना हुआ। एक छोटी सी पानी की नहर मंदिर के पैरो में बहती ह। इस नहर के माथ चौतरे की ओर पथराला पगडण्डी को सफाई भी अक्सर साइ भगत राम ही करता ह। (वस यह गाविन्द साधु के जिम्मे ह) मंदिर के पक्ष को धोना और पोछना मेर जिम्मे ह—मुझ से पहले महन्तजी के अपने जिम्मे था—और लगता ह इस काम से हम सब भिन्ना के शर को अपने से झाड देने ह। सब स मेरा मतलब ह—सारे सिवा मेरे।

मंदिर पत्थग या इटा से बनाया हुआ नही एक बहुत बड़ी चट्टान को बीच में से खोदकर बनाया हुआ ह। चट्टान का ऊपर का हिस्सा छत की तरह ह नीचे का हिस्सा पक्ष की तरह। इस के अंदर की मूर्तिया भी वही बाहर से लाकर रखी हुई नही बीच के पथरीले हिस्से को ही तगशकर बनायी हुई ह। और बाहर से जा ननी गुजरती ह, वह पहाड के पिछले हिस्से म से एस आती ह कि उस का कुछ पानी चट्टान के ऊपर व हिस्से से टपककर बूँ बूँदकर मूर्तियों के शरीर पर गिरता रहता ह। मूर्तिया गेज घुली हुई होता ह—लगातार पडते पानी से सीलन की एक पतली सी परत उन पर जम जाती ह, जिसे राज एक मोटे कपडे से मलकर उतारना होता ह। और लगता ह—भिन्ना का शब्द भी बूँद-बूँद गिरत पानी की तरह दिन रात मेर जिस्म पर पडता रहता ह। मैं किसी भी खयाल के माटे कपडे स मलकर उसे उतारू वह तब भी एक सीलन की पतला परत की तरह मेर ऊपर जमा रहता ह। राज जम जाता ह।

महन्त त्रिपासागरजी से निजी तौर पर मुझे काई शिक्वा नही—उन्होंने अपने लिए आये चढावे में से हिस्सा निकालकर मुझे पाला ह पनाया ह—मिफ शिक्वा ह तो उन के सागर होने से, और अपने पात्र हाने से।

सिक्का भी नहीं, नफरत ह ।

और यही नफरत उस माँ नाम की औरत से ह जिस ने इस पात्र की अस्तित्व दिया ह । यह नफरत इस हद तक ह कि वह जब भी मन्दिर के दशन के लिए आती ह, मैं किसी वहाँने मन्दिर मे बाहर चला जाता हूँ । दभी वह मेरी काठरा की दहलीज रोक ले और अपने पन्तू मे बँधी हुई अखरोट की गिरियाँ जवरन मेरे मुह में डाल दे, ता उस की पीठ मुठने ही मैं मुह में स वे गिरियाँ घूस देता हूँ ।

बाप नाम क मद का जब दखता हूँ—वह अपने बश की रखवाणी करता हुआ एक प्रेत-सा लगता ह ।

किरपासागरजी के गाल मुझे दो लाल पके हुए फोडा की तरह लगन ह, जिन पर एकदम पुलिस बॉधने का खयाल आता ह

मा—धीरे धीरे चलती हुई जब एकदम सामने आ जाती ह—वह मुझे पजों के बल चलती हुई बिल्कुल एक बिल्ली लगती ह, जो अभी एक चूहे की गरदन दबोच लेगी

बाप—दुबला-पतला-मा और सिर का कर्चों के ऊपर एक बाझ मा डालकर चलता हुआ मुझे खेता में गाढे हुए 'डग्ने' की तरह लगता ह और मैं चिड़िया-कौआ की तरह उस मे उर जाता हूँ

एक साधारण आँख से शायद यह सब कुछ नहीं दीप्त सकता पर मुझे पता ह, मेरी आँखा में नफरत की डारियाँ पडा हुई ह

गोविंद साधु जब बूटी रगड़कर पीता ह उस की आँखा में भी लाल डारिया पड जाती ह और वह लाल डारियावाली आँखा से जत्र मुझे दगता ह—मैं उस बीस बरस का एक जवान आदमी नहीं, जवान औरत नजर आता हूँ

तीन-चार साल हा गये, गोविंद ने एक दिन अपनी तोरी जसी लटकती टाँगों पर बान्गम रोगन की मालिश करते हुए जवरदस्ती मेरी बाह पकड री थी, और वह मेरी पीठ पर और दा टागा पर बान्गम रोगन की मालिश करने लगा था । मुझे बिल्ली, कुत्ता या कार्द भी जानवर अच्छा नहा लगता, उस के लम्बे-लम्बे हाथ मुझे कुत्ते के पोंधा की तरह लगे थे, मैं ने जब छूटने के लिए जार लगाया था ता उस ने अपनी पूरी ताकत स मुझे एक चौड पत्थर पर गिराकर । मैं बड़े जार स चिल्लाया था—इतने जार स कि अन्त में किरपासागरजी यह आवाज सुनकर वहा पहुँच गय थे । उन्हान पास ही पडे हुए बूटी रगड़नेवाले ढण्डे से गोविंद साधु को एमे पीट डाला था—जय वह गोविंद साधु को भी बूटी की तरह ही रगड़ देंगे । उस जिन क बाद गोविंद साधु ने मुझ से कुछ नही कहा, बल्कि मैं दापहर के समय जिस पेठ के नीचे बैठकर पन्ता हूँ, वह वहा से घूमकर दूर जा बठता ह । पर यह मैं अब भी दख पाता हूँ—वह जिस दिन बूटी रगड़कर पी ले, और उस की आँखा में लाल डारियाँ पड जायें वह उन की कारा में से मुझे आते-जाते एमे दगता ह—जमे मैं उस का बीस बरस की

जवान औरत दिग्गता हाऊं

पर उस से मुझे नफरत नहीं। वह खुजली के मारे हुए कुत्ते की तरह लगता है। कुत्ते से कोई रास्ता काटकर निकल सकता है तो उस एक ग्लानि-मी हो सकती है, पर उस के खून में नफरत नहीं खोलती।

इस तरह साइ भगतराम एक खस्ती (बधिया) जमा लगता है, जिस से किसी गाय को कोई खतरा नहीं। इसलिए उस से भी कोई नफरत नहीं होती।

नफरत के पात्र सिर्फ वे हैं जिन्होंने अपनी झोलियों में दान पुष्प भरा हुआ है—और या मिश्रापात्र—में स्वयं।

दो

नफरत नफरत नफरत चिड़िया का एक झुण्ड अभी चहक्ता गुजरा है। शायद उधर की दीवार के पास साइ भगतराम ने दाल-चावल सूखने के लिए डाल रखे थे चिड़िया ने उसे चुगना समझ लिया था, और साइ ने या गाविंद साधु ने अपना घुघरू-बाला डण्डा खटका दिया था कुछ आवाज-सी आयी थी और फिर चिड़ियों का झुण्ड मेरे ऊपर से चहक्ता हुआ गुजर गया। सब चिड़ियाँ जस चहक् रही थी—नफरत नफरत नफरत

यह शब्द बहुत बड़ा है—चिड़ियों की चोंच में पूरा नहीं आ रहा था, पर वे इसी शब्द का बार-बार दाहरा रही थी—जितना भी उन की चाच में पकड़ा जा रहा था

ढेरे में परसा से मूसलनाथ का डण्डा फिर खड़क रहा है। वह बरस में एक आध फेरा जहर लगाता है। फिर उन दिनों में रोज़ भाग का दौर चलता है। बहुत छोटा था, जब वह मुझे झोली में बिठाकर—नहीं बिठाकर नहीं झाली में दबोचकर कहता था 'तुझे नाथ जोगिया के नाम आते हैं? ओ तू बिना भूले सारे नाम सुना दे तो मैं तुझे इगयची और मिथ्री दूँगा इगयची और मिथ्री के लिए नहीं, पर उस की झोली में स छूटने के लिए मैं जवा से जागिया के नाम दाहरा दता था—आदिनाथ महेंद्रनाथ, उदयनाथ सत्तापनाथ कथलनाथ, सत्यनाथ अचम्भनाथ, चौरगीनाथ और गारखनाथ। वह झाले में से इलायचा मिथ्री निनाला लगता, तो मैं उस की बाहों से छिटककर परे जा खड़ा हो जाता था, और बार से कहता था—और तेरा नाम मूसलनाथ। मुझे पता था उस का नाम गोल बाग़ है, पर उस के हर समय डण्डा पकड़े रहने के कारण मैं ने उस का नाम रख दिया था—मूसलनाथ। 'घन तेरे की,' कहता हुआ वह इलायची और मिथ्री को फिर मुट्ठा में भीच लेता था, और मुझे अपनी बाहों में दबोचने के लिए आगे बढ़ता था। इतन में मैं दोन

जाती थी ।

आज पता नहीं क्या, ऐसा लग रहा है कि अगर वह आज एक बार मुझे फिर चाली म दवाचकर आगियों के नाम पूछे, तो सारे नाम बताने के बाद मैं सिर्फ यही कहूँगा—तेरा नाम मुझे मालूम नहीं, पर मेरा नाम है—मिशानाथ । अपनेआप से इस से बड़ा मजाक मैं और क्या कर सकता हूँ

सिद्ध मकरध्वज बनाने का नुमस्त्रा सिर्फ शील बाबा का आता है, पिछले बरस उस ने महंतजी को बनाकर दिया था, सारा साल उन्हें जादों का दब नहीं हुआ था । इस बरस वह फिर बना रहा हूँ और इस बरस उस ने महंतजी के कहने पर मुझे उस का नुमस्त्रा लिख दिया है—सोना आठ तोले, पारा एक सेर, औलेसार गंधक दो सेर । इन तीनों चीजों को पहले लाल कपास के फूला के रस में, फिर घीबुआर के रस में घाटकर, आतशी शीशे में डालकर, मुँह पर खडिया मिट्टी लगाकर, और मुलतानी मिट्टी के पाचे कपड़े की सात तहें बोनल पर लपेटकर सुखा लेना । इस गोती को एक हाँडी में साधा रखना, और उस के चारों तरफ बालू रत भर देना । बत्तीस पहर याग की एकसार आँच लना । फिर बातल के मुँह पर उड़कर जा लाल पदार्थ जम जायेगा—वही मकरध्वज होगा

और शील बाबा ने यह नुमस्त्रा लिखाते हुए मेरे कान का मराडकर कहा था—अनाडी हकीम की तरह कुछ कच्चा-गक्का किसी को न खिला देना । पारा कच्चा रह गया तो खानेवाले का हड्डियाँ गल जायेंगी

जवान राक ली था नहीं तो जवान से निकलने लगा था—मूसल बाबा ! मिशाना भी कच्चे पारे की तरह हाता हूँ, खानेवालों का हड्डियाँ गल जाती हूँ ।

पारे का शिव धातु कहते हैं, मिशाना को पता नहीं क्या कहते हैं मिशाना का मैं धातु बहना चाहता हूँ ।

वह मेरी मा आज भी आयी थी । दबे पाँव चलती हुई वह मेरी कोठरी तक आ गयी थी । वह जब दुबककर आती हूँ, मुझे हमेशा एक बिल्ली का खयाल आता है । कल सारा दिन यही खयाल आता रहा था—भारा दिन हमारे डेरे में एक बिल्ली को पकड़ने की भागदौड़ होती रही थी । एक कोठरी में दूध की बटोरी ऐसे दहलीज के पाम रख दी गयी थी, कि बिल्ला ने जब बटोरी को मुँह मारा था, बाहर ताक के पीछे खड़े माइ भगतराम ने तुरत दरवाजा भिड़का दिया था । बिल्ली कोठरी में बन्द हो गयी थी । पर जब दूसरी बाठरी में से बीच के दरवाजे को खालकर बिल्ली का पकड़ने का पल किया गया तो वह उछलकर खिड़की के ताक से ऐसे जा लगी कि खिड़की की पतंगी-सी कुण्डी टूट गयी, और बिल्ला उम खिड़की में से बाहर बूद गयी । लेकिन आखिर डेर के तीन साँप उस के पीछे पड़े हुए थे, शाम तक उन्होंने बिल्ली को पकड़ ही लिया—और आज उम बिल्ला को मारकर उस की एक हड्डी को त्रिफले के पानी में पीसा जा रहा है । गाविंद साधु को पिछले दिनों से एक फोडा हो गया है । शील बाबा

यात्री

कहते हैं कि यह भगदर है, और उम के ऊपर लगाने के लिए मिली की हड्डी का रूप तयार करना है।

बल मारी रान में सपने में एक बिल्ली पकड़ता रहा था—हालाँकि दिन में बिल्ली पकड़ने के लिए मैंने किसी का साथ नहीं दिया था—पर सपने में मैं ऊँचे ऊँचे पत्थरों पर से गुजरता एक बिल्ली के पीछे-पीछे दौड़ता रहा—और अजीब बात थी कि मेरे आगे-आगे दौड़नेवाली चीज़ कभी एतदम बिल्ली बन जाती थी, कभी मेरी माँ

मुझे पता नहीं भगदर फोड़ा क्या होता है, उस से बस पीप बहता है, और उम में बमे टीसें उठती हैं—पर मेरी हड्डियाँ में एक दद है, एक एक हड्डी में एक एक जाड़ में, एक एक खयाल में

और बग ही भयानक खयाल आया है—मन के इस फाड़ पर लेप करने के लिए अगर माँ का पसली का पीसकर

मनु ने इक्कीस नरक मान है ब्रह्मवत में छिपाता नरक-कुण्ड लिखे हुए हैं—और मेरा यक़ीन है उन में से एक नरक कुण्ड जहाँ मेरे मन की हालत जसा होता होगा।

तीन

मात्रिद साय का शालू बाबा की दवा से शायद सबमुच आराम हो गया है—आज उस का घुँघरूवाला डण्डा फिर उम की पत्थर की कूँडी में छनक रहा है। वह भाँग घाट रहा है और उस का गूँगापन भी घुँघरूवाले डण्डे की तरह छनक रहा है। दे रगटा मस्त कलंदर द रगडा यह बाल उसे साइ भगताराम ने सिखाये थे—जा उस के गले में से छनकर बन जाते हैं—‘गे गे गे

पता नहीं, यह घुटता हुई भाग की ठण्डो-मी गन्ध है या कुछ और—अचानक मुझ ठण्ड माँ लगने लगी है। पर ऐसा कई बार आता है, धड़े-धड़े लगन लगता है—कई बार धूप में बड़े हुए भी और कई बार रजार्द में साते हुए भी

बहुत छोटा था, स्कूल पढ़ने के लिए जाता था, तो एक दिन मेरा सहपाठी रलिया स्कूल से लौटते वक़्त मुझे अपने घर ले गया—आँख की चीज़ थी इसलिए रलिये की माँ ने मेरे बैठने के लिए मूला डालकर, मूँडे पर खेस बिछा दी थी। और मैं सारे घर में एक अलग-सी चीज़ की तरह उस मूँडे पर बैठ गया था।

रलिया के लिए उस ने मूला नहीं बिछाया था, बल्कि उम ने उसे गिड़ककर उस की बाहूँ अपनी तरफ़ ढाँची थी—‘यह मुँह पर तू ने सियाही कहाँ से लगा ली?’ और अपने दुपट्टे के पल्लू से उस ने रलिये का मुँह रगड़कर पोछा था। मूँखे पल्लू में सियाही नहीं छूटी थी, इसलिए उस ने बत्ती को थोड़ा सा धूर लगाकर, उस बत्ती का रलिये के मुँह पर रगटा था।

रलिया जग स बाह छुगकर और हाथ में पकटे हुए बस्ते को जल्दी से बही रखकर, मेर साथ जाने के लिए आनुर था, पर उम की मा ने फिर डाट दिया, "जाता कहा ह मूवा पेट लेकर, बठ जा सीधा होकर निकम्मी ओलाद ।" और फिर उसी पल बड़े दुलार के कहने लगी— 'किमी का घर लाकर कोई भूखा थोड़े ही भेजा जाता है ? देखकर, अभी मैं गम-गरम रोटी पका देता हूँ, तू भी खा और अपने दोस्त का भी खिला ।" और उस ने रलिये को समझाते हुए उम का माथा चूम लिया था ।

एक औरन नही, जस एन फिरकी माया चूम रही थी ।

चून्हे में अघजली लकड़िया का घुआ सारे घर में धूम रहा था । रलिया ने जब अपना चम्ता फेंका था तो उम से एक चिताव उबर गिर गयी थी । रलिया का छाटा भाद खटाले पर मोटा हुआ अचानक राने लगा था । उम व मुँह पर बठी मक्खिया ने गायद बहुत जार से भिन भिन की थी । रलिये की माने ज से एक हाथ से चून्हे को हवा की और दूसरे हाथ से रलिये के बस्त से गिरा चिताव का उठाकर पहले माथे से लगाया और फिर बस्ते में रखा और एक हाथ से खटाले पर रा रहे बच्चे के मुँह पर से मक्खिया का उड़ाया लग रहा था कि गिर व तीन नेत्रा की तरह रलिया की मा के तान हाथ थे

बग मला पममला-सा घर था—पर लकड़िया की तिट तिट में से मक्खिया की भिन भिन में से रलिया का पड़ता चिन्किया म से, जार रलिया के मुँह का चूमती उम की माँ के घूँक में धुल मिलकर एक सेंक-मा उठकर मेरी तरफ आने लगा था—एक गरमायी मा

मैं फिर कभी रलिया के घर नहीं गया, पर कभी-कभी अचानक बैठ-बठ या साते हुए मुझ ठण्ड-सी लगती है और पता नहीं क्या मुझे बचपन की वह बात याद आ जाती है

चार

बल शिवरात्रि को मा ने बन रखा था, पूजा के लिए मन्त किरपागामरजी का बुगया था । सुना है कि उम की यह ताकाद थी कि पूजा के समय मैं भी उन के साथ जाऊँ ।

मुहूर्त टालने के लिए मैं मन्दिर के पिठवाड़े जगल में डम तरह छिप गया था कि बार के मुझे टैने ता पूजा का मुहूर्त गुजर जाता ।

पता गया कि वह पूजा के वक्त राये जा रही थी

आज साइ भगताराम ने उस के बड़े शरा में एक बात बताया, ' इस लट्टे की रंग में खून की जगह पानी भरा हुआ है ।'

सुनकर हँसी-भी आ गयी है । भोग खयाल है, उम ने ठीक कहा है । पद्मपुराण

मैं एक कथा आती है कि मार्कण्डेय ऋषि जब तप कर रहा था तो आम-पान खाने के लिए पत्तो के सिन्ना कुछ न था। सो वह बरगा तब पत्ते खाता रहा, और उस के शरीर में खून की जगह हर पत्ता का रस भर गया। ऋषि ने जब अहंकार से भरकर यह बात महादेव को बताया तो महादेव ने उस का अहंकार तोड़ने के लिए दिखाया कि उन के शरीर में खून की जगह भस्म भरी हुई है। भला अगर उस ऋषि की नाडिया में खून की जगह पत्ता का हरा रस हा सजता है, और महादेव की नाडिया में भस्म, तो मेरी नसा में ठण्ठ पाना क्या नहीं हो सकता ? आसिर मैं ने अपने जन्म से लेकर अब तक मंदिरवागी नगी का पानी पिया है

आज फिर मुझे हँसी-सी आ रही है। हँसी पता नहीं क्या होती है, पर जो कुछ आयी था शायद हँसा ही थी।

मैं शिवजी की मूर्ति के पास खड़ा था। यह प्रायना का समय था। मन्दिर की दहलीजा में स गुजरते हर किसी का हाथ लाहे के घण्टे का एक बार जरूर छू लेता था, और घण्टे की आवाज प्रायना के बाला से टकरा रही थी—आवाज बहुत भारी थी, इसलिए वह साजुत थी, सिर्फ बाल टूट रहे थे

ज ज ज ज ज त्रिपुरारी
 कर त्रिशूल साहत छवि भारा
 शारद नारद शीश नवाय
 नमो नमा ज नमो शिवाय

और मैं ने देखा—सामने मरी माँ मूर्तिया के आगे दोना हाथ जाड़ खड़ी थी। परवर की छत से छतकर बूँद-बूँद पानी मूर्तिया पर भी गिरता रहता है और दगा पर भी। उस के सिर के पल्ले पर भी पड़ रहा था—और वह बिलकुल भोगी हुई बिल्ली की तरह लग रही थी—पर हँसी इस बात पर नहीं आयी थी—इस बात पर आयी थी कि आज उस ने अपने बाला को मेहँगा स रंगा था। मेहँगी का खयाल मुझे बड़ी देर बाद आया, यह याद कर के कि कुछ दिन हुए उस ने मेरे सामने माथे की वनपटियो को दबाते हुए साइ भगत राम से सिर दद का इलाज पूछा था और साइ ने उसे मेहदी पीसकर सिर पर लगाने के लिए कहा था। पर अचानक जब उस के बाल लाल-से दखे—ता मुझे लगा वह आज काली और सफेद तिलना की जगह अचानक भूरी बिल्ली बन गयी थी और वह बिल्ली की तरह म्याऊँ-म्याऊँ करती लग रही थी—

की ही दया तहाँ करी सहाइ
 नीलकण्ठ तब नाम कहाई
 प्रगटे उदधि मथन में ज्वाला
 जरे सुरासुर भये बेहाला

जिसमें मैं एक कपकपी सी आ गयी—याद आया कि बहुत छोटा था, अभी अलगे कौठरी में साने लायक नहीं था। चार बरस का होऊंगा, महन्त किरपासागरजी

को कोठरी में बिछे उन के आसन के पास ही एक चटाई पर साता था, और अचानक एक रात आस खुल गयी थी—सामने जो कुठ दिवा था उसे देखकर धिधियाकर रो पड़ा था। वह तो आदमकद कोई चीज थी, पर उस वज्रत वह सारी काठरी में फग हुई लगती थी—एक बहुत बड़ा और काला सियाह मुँह था जिस पर दाना आँखें सफ़ेद और लाल रंग में जलती दिख रही थी। सिर पर कुछ हरे-हरे पत्त फूल रहे थे।

महन्त किरपामागरजी ने मुचे उठाकर अपनी गोद में ले लिया था, पर मैं गोये जा रहा था, और कापे जा रहा था।

‘तू उमे हाय लगाकर देख, यह तुझे कुछ नहीं कहेगा,’ महन्तजी ने एक बार मुझे अपनी गोद से हटाकर उस की तरफ़ करना चाहा था मेरा डर उतारना चाहा था पर उस की तरफ़ देखते ही मेरी फिर चौख निकल पड़ी थी।

सबरे दिन के उजाले में, बाहर पड़ा की खुली जगह पर महन्तजी ने मुचे बिठाकर, और उसे भी सामने बिठाकर मुचे समझाया था ‘यह बड़ा अच्छा आदमी है, दोबाना सानु हरिया बाबा।’

बहुत देर बाद मुचे समझ आयी कि माधुजा का एक समुदाय दाबाना साधु कहलाता है और इस समुदाय के सारे सानु मुह पर काला रंग मलकर, सिर पर मोर के पंख सोंम लेते हैं।

पर उस रात की भयानकता बड़ी देर तक मेरा याद में अटकी रही थी—एक कुछ बहुत काला-सा, मेरी आँखा के आगे फग हुआ, और उस में मोर का एक रंग-बिरंगा पंख हिलता हुआ

आज की इस घटना से पता नहीं उस का क्या सम्बन्ध था—मा के मेहँगे रंगे बाला का देखकर मुझे मोर का पंख याद आ गया। लगा मेरे सामने एक बहुत बड़ा खालीपन है—और उसी काले खालीपन में मेहँगे रंग का एक गुच्छा लटक रहा है—मार के पंख की तरह।

उस के होठ बराबर फट रहे थे

स्वामी एक है आस तुम्हारी
आय हरा मम सक्कट भारी
शकर ही सक्कट के नागन
सक्कट नाशन बिघ्न बिनागन

माँ की आँखा के आगे पतली-पतली सुरियों का एक जाग-सा फग हुआ है। आँखें उस जाग में फँसी हुई लग रही हैं, नहीं तो कई बार ऐसा लगता है अगर वे जाल में फँसी हुई न हों तो उस के मुह से उखर मोधी मेरे मुह पर आकर बठ जायें

पर काले और फग हुआ खालीपन में वे आँखें मुझे क्या-कमी ही निम्ता है, नहीं तो काग और फग हुआ यह आगेपन बड़ा अदाल होता है। सिर्फ आज यह लग यात्रा

रहा ह कि उम खालापन में मेहँरी रंग बान्गी का गुच्छा लटका रहा ह—मार के पल की तरह ।

पाँच

भुलावा एक बार हो सकता है, दो बार हा सकता है पर यह जो रोज़, आये तिन लगता है—यह शायद भुलावा नहीं होगा

प्रभात का समय था । पूजा के समय मन्दिर में गया था मूर्तियों के बिल्कुल पाम था इसलिए मूर्तियाँ के चरणों में चढ़ाये हुए फूल मेरे पैरों तक भा पहुँचे हुए थे और फिर सुन्दरा ने फूलों का एक झोली इस तरह पलटी कि मेरे पर उन के नीचे ढक-से गये । और फिर जब सुन्दरा ने जमीन तक माया झुकाकर मूर्तियों को प्रणाम किया तो लगा कि उस का एक हाथ मेरे पर का छू रहा था ।

जरा-सा चौककर मैं ने आँखें नीची कर ली—अपने पैरों की तरफ़ पर पैरों के ऊपर और पैरों के गिद फूलों का इतना ढेर था कि न अपना पैर निम्नता था न उम का हाथ ।

यह भुलावा भी हा सकता था इसलिए इस बात की तरफ़ फिर कभी ध्यान नहीं दिया । पर यह जिस दिन की बात ह, उस के तीन चार दिन बाद सन्नति थी । रोज़ मन्दिर में न इतने भक्त आते ह न इतने फूल चढ़ते ह पर सन्नतिवाले दिन पूर्णिमा वाले दिन, जमावसवाले दिन या और किसी एमे दिन छाटे-से मन्दिर का सारा चनूतरा फूलों से भर जाता ह । उस दिन सन्नतिवाले दिन फिर ऐसा लगा था—सुन्दरा ने फूलों की एक झोली मूर्तियों के चरणों में पलटी थी और फिर मूर्तियों के चरणों में मिर झुकाती हुई फूलों के ढेर में से बाह्र गुज़ारकर, लगा मेरे एक पैर पर अपने हाथ की हथेली रख दी हो ।

मन का जार-सा लगाकर, दूसरी बार की घटना को भी एक भुलावा कह लिया था । पर पूर्णिमावाले दिन फिर ऐम हा हुआ था अमावसवाले दिन फिर इसी तरह और इस से जगली सन्नतिवाले तिन बल फिर

उम ने जोर कभी कुछ नहीं कहा । पर बहुत दिनों की एक बात ह—तब मैं ने इस बात को भी एक संयोग ही समझा था—पर यह शायद संयोग नहीं था

वह अपने खेतों की भड पर चलती गाँव की तरफ़ लौट रही थी । शाम का अँधेरा इतना गहन हो गया था कि एक बार देखकर भी जो कोई अपने ध्यान में हो जाये, तो यह नहा पता लगता था कि किसी ने देखा या पहचाना था या नहीं । मैं अपने ध्यान में नदी की तरफ़ जा रहा था । नन्ही बिल्कुल उस के खेतों के सामने पड़ती ह—और फिर लगा वह भी नन्ही की तरफ़ लौट पड़ी थी ।

कुछ आगे जाकर मैं ने पीछे एक बार देखा था—वहाँ तक लगा कि वह नदी के किनारे जाकर खड़ी हो गयी। एक आवाज सी सुनाई दी, जैसे वह नदी की तरह एक लम्बी आवाज में गा रही थी।

पीछे मुड़कर ज़रूर देखा था, पर इस तरह नहीं कि उस का यह दिख जाये कि मैं उस की आवाज सुनकर खड़ा हो गया था। एक पेड़ के तने के पास होकर ज़रा थम-सा गया था।

देख सकता था—वह गा रही था, पर बिल्कुल अपने ध्यान में। नदी के किनारे, पानी में हाथ लटकाकर कुछ धो रही थी—शायद रोता स जो साग-मन्जी ताड़कर लायी था, उसे धो रही था। ज़बेर में बहुत कुछ नहीं दिख रहा था। पर यह दिख रहा था कि वह बड़ी बेग़बर थी न उस तरफ देख रही थी जिन तरफ मैं गया था, न किसी और तरफ। सिर्फ जा कुछ गा रही थी, वह बड़ा अजीब था। उस की पत्तियाँ पूरन भक्त के किस्ते में से थी, जिन में उस के नाम जसा नाम आता ह

मैं भुल्लो हा, तुमी न होर काई
लाइया जोगिया नाल प्रीत लोका ।
जगल गये न बौहडे सुदरा नूँ
जागी नही जे किसे दे मीत लाको ।

पेड़ के तने के पास मैं कुछ देर खड़ा रहा था।

य पत्तियाँ, न जाने क्या, ठण्डे पानी के छीटा की तरह लगी थी। मैं ने अपने कपड़े पर रखी हुई खदर का गेरुई चादर ज़रा कसकर दोना कच्चा पर लपेट ली थी।

पर दया था, वह फिर बेध्यान नदी के किनारे से लौट पड़ी थी—सीधी गाव की जाती हुई पगड़ण्डी पर। और लगा था—उस की आवाज समय से मेरे कानों में पड़ गयी थी, उस ने जान-बूझकर मेरे कानों में नहीं डाली थी।

वैसे एक बात उम्र दिन रह रहकर मेरी याद में अन्ती रही थी—बहुत साल हुए, जब मैं छोटा था, गाव की औरतें जब क्या जमाती थी, मुझे मन्दिर में स जबरन पकड़कर ले जाती थी 'यह हमारा वीर लंगूरिया' कहता थी, और मुझे छाती छाती ठडकिया की पगल में दिठा देती थी।

और एक बार की बात है—इसी सुदरा की भा ने क्या जमायी थी। उस दिन सुदरा ने सिर पर गोठेवाली लाल चुनरी आल रखी थी। उस के हाथ भी लाल थे। वह हम सब को अपनी हथेलियाँ दिखा रही थी—“देखा बल्लाजी, मैं ने मेहँदी लगायी है।” और सुदरा की मौसी ने सब ठडकिया के पर धोकर उन का जब मौली बाजी

१ मुझ से भूल हुई तुम बाद यह भूल मन करना, तुम काई जोगिया से प्रीत मत करना। सुदरा के पास वह फिर छाटकर न आया, वह ऐसा जगल में चला गया कि फिर वही खो गया। जोगी विशा के दोस्त नहीं छोड़े।

और एक पगल म बिठाया, तो मुझे सुंदरा के पास बिठाती हुई जार से सुंदरा की भाँ से बहने लगी, “ओ बहन ! जरा एक बार दखर देव । ये दोना जने सुंदरा और पूरन की जोड़ी लगते ह । यह छोटा सा साधु सचमुच किसी राजा का बेटा लगता ह

छोटी छोटी घालिया में पूरी, हलवा और छोले देती हुई सारी औरतें हँस पड़ी थी । उस वकन मुझे बिलकुल पता नहीं लगा था कि वे क्या हँसी थी । सुन्दरा का भी पता नहीं लगा था । पर फिर जब मैं ने कुछ बरसा बाद पूरन भक्त का बिस्सा पटा तो फिर एक बार दशहरे के मले में जब सुंदरा मसुराल से आयी हुई थी और अपनी मौमी की बेटो को मेला दिखाती अचानक मेरे सामने आ गयी थी ता हँसकर उस ने अपनी मौमी की बटी को कहा था, ‘ले देख ले, मेरा पूरन मेरा जोगा ’’

पर यह बहुत दिनों की बात थी । सिफ उस दिन रह रहकर मेरा यादा में उलझ रही थी जिस दिन नगी के किनारे मैं ने उसे देखकर गाते सुना था—नगी की तरह लम्बी आवाज में वह कह रही थी ‘मैं भूली हूँ तुम में मे कोई और जागियो से प्रीत न लगाना ’’

लेकिन फिर इस बात का भी एक अजीब-सा संयोग समझ लिया था ।

पर यह जो राज आये दिन फूला के ढेर में छिपा हाथ मेर पर का छू जाता है

पैर कुछ देर के लिए सुन्न-सा हा गया लगता ह । किसी क्या-कहानी में जैसे कोई राजकुमारी फूट तोडने जाती है फूलों की किसी डाली का हाथ लगाती ह डाली से लिपटा हुआ साप उस की उगली को डस जाता ह और वह वही मूँछित हाकर फूला की झाड़ी में गिर पड़ता ह—मेरा पर भी फूला के ढेर में मूँछित-सा हो जाता ह

उस का बाह एक साँपिन की तरह फूले के ढेर में फुकारती-सी लगती ह ।

छह

आजकल महन्तजी का दाया गाल सूजा हुआ ह । उन की दो दाढ़ें दुखती ह । पर पूजा के नियम में उहान कोई फक नहीं आने दिया । सिफ इतना फक पडा ह कि इन्को के सारे शब्द उन क मुँह में दाटा की तरह अटके लगते ह—हिलते भी ह पर बाहर नहीं निकलते ।

साइ भगतराम आजकल दो वकत उन के लिए लपमी बनाता ह सिफ पतली पतली लपसी उन के अंदर जा सकती ह और कुछ नहीं । पहले वह रोज सनेरे रात की भीगी बादाम की गिरियाँ छीलकर और शहद में डालकर खाते थे, पर अब गिरिया चबायी नहीं जा सकती इसलिए कुछ गिरिया का पीसकर लपमी म मिला लिया जाता है । वह नियम से जिस वकत लपसी पीते ह एक कटारी लपमी मुझे भी जरूर पिलाते

है, अपने पाम बिठाकर । जैसे शहद और गिरियाँ पहले राज अपने पास बिठाकर खिलाते थे । सिफ यह पता नही लगता कि इस सब कुछ को मैं जिन एक शब्द 'उन की विरपा' से जाडना चाहता हूँ, वह जुडता क्यों नही

रात जब वह सोने लगते हैं, साइ भगतराम नियम से उन के पाव दबाता है । मैं ने कई बार चाहा कि साइ भगतराम का यह नियम मैं अपना नियम बना लूँ, पर उन्हाने हर बार अपने हाथ के इशारे से मुझे पैरो की तरफ से हटा दिया । पता नही, उन्हें मेरी सेवा क्या स्वीकार नही ? वैसे 'सेवा' शब्द को लाग जिन गहरे अर्थों में लेते ह, मैं इम उस तरह कभी भी नही ले सका । यह सिफ एक नियम की तरह लेना चाहता था—सबरे उठने के नियम की तरह या कीकर की दातुन करने के नियम की तरह । पर मुझे इस नित्य नियम में डालना, लगता है उन्हें मजूर नही । या शायद उन्हाने इस के असली रूप में देख लिया है—यानी 'सेवा' से बहुत छोटे रूप में । और इस छोटे रूप में उन्हें यह मजूर नही हो सकता ।

अब कई तीन दिना से साइ भगतराम लपसी में पास्त के डांडे भी पीसकर डाल देता है, ताकि उन्हें जन्दी नौद आ जायें, और दांडा का पीडा से उन्हें कुछ देर के लिए चैन मिल जाये । इसलिए वह रात को जब बहुत जल्दी जैघने लगते हैं, मैं साइ भगतराम को उस की 'सेवा' स उठाकर खुद उस की जगह ले लेता हूँ । ऊँघते हुए वह यह नही पहचान सकते कि उन के पाव का मेर हाथ दबाते हैं या साइ भगतराम के । पर हरानी मुझे उन पर नही, अपनेआप पर हो रही है—कि यह मेरा नियम 'सेवा' की हल्की-सी छुअन से भी इतना दूर है कि उन के पैरो को दबाने के बाद, मैं जितनी देर अपने हाथों का अच्छी तरह मल मलकर न धो लूँ सा नही सकता ।

समझ नही सकता, पर नफरत अभी कोई चीज है जा मेरे मुँह में एक दाढ की तरह उगी हुई है ।

लगता है, जो कुछ खाता हूँ इसी दाढ से चचाता हूँ । चाहे कई बार यह भी लगता है कि इस दाढ में बड़ी पीडा हो रही है । यह मेरे मुँह में हिल रही है पर निकलती नहीं ।

और कभी यह साचता हूँ कि कही किसी दिन कोई चिमटी-सी मिल जाये, तो उस के साथ खींचकर इस दाढ को हमेशा के लिए अपने मुँह से निकाल दूँ ।

पर फिर कुछ नही हाता । पीडा भी नही होती । बल्कि फिर हर चीज का इस दाढ से चवाने में स्वाद आता है ।

हरेक चीज का हरेक खयाल को जैसे आज सुबह जब महन्त विरपामानर जी पूजा के इलाक पड़ रहे थे और इलाका के सारे गब्द उन के मुँह में दाढों की तरह अटके हुए थे, ता अचानक मुझे जा खयाल आया था वह था कि जा ये मुँह साल दें ता मैं हाथ में एक चिमटी ले लूँ और दाढों के सारे गब्द खींचकर उन के मुँह से बाहर निकाल दूँ

यह किमी के लिए भी एक भयानक खयाल है। पर एक पुजारी के लिए, चाहे उस की उमर बीस बरस क्या न हो, अति भयानक है

पर मैं सारा दिन इस खयाल का स्वाद लेता रहा हूँ—जैसे यह एक गिरी का टुकड़ा था जो अपना दाढ़ से चबाता रहा है

गिरी में से एक सफेद दूध-सा घूँट रह रहकर मेरे अंदर उतरता रहा था
आज मेरी दाढ़ में त्रिलकुल कोई पीड़ा नहीं है रही।

सात

हे ईश्वर !

ईश्वर पता नहीं क्या चीज है यह सब एक वादत की तरह मुह से निकल गया है।

आदत की तरह नहीं दुखी हुई सास की तरह।

शील बाबा ने एक दिन मकरध्वज का नुसखा लिखाते हुए कहा था अनाड़ी हकीम की तरह कुछ अधकचरा कर के किसी का न खिला देना। पारा बच्चा रह गया तो खानवाले की हड्डियाँ गल जायेंगी ” और आज मैं ने बच्चा पारा खा लिया है।

राज नफरत की एक गिरी-सी साता था। आज बच्चा पारा खा लिया है।

शायद हर ज़िन्गी एक मकरध्वज हाती है। ईश्वर जब भी किसी इन्सान का पैसा करता है, जिन्दगी नाम की चीज मकरध्वज की तरह उसे खिला देता है। और इन्सान हसता है खेलता है, जवान होता है और उस की जवानी धरती पर टुमक-टुमककर चलती है धमक के चलती है

और लगता है—ईश्वर ने जब मुझे जन्म दिया था और जब जिन्दगी नाम की चीज उस ने मुझे मकरध्वज की तरह खिलायी थी, उस दिन एक अनाड़ी हकीम की तरह मकरध्वज बनाने हुए उस से पारा बच्चा रह गया था

यह बच्चा पारा शायद मैं ने आज नहीं खाया, अपने जन्म के समय ही खा लिया था, मगर आज उम के अमर को देख रहा हूँ—क्योंकि आज लग रहा है कि मेरी हड्डियाँ गलनी शुरू हो गयी हैं

आज प्रातः काल—सुबह की पहली किरण के साथ—महन्त किरपासागरजी को लगा कि उन की उमर के दिन पूरे हो गये हैं। उन्होंने साइ भगत राम के बंधे का सहारा लिया चारपाई पर से उठे और जैसे-तैसे मंदिर में पहुँच गये।

मुझे बुलाया। एक नारियल मेरी शोली में डाला। और फिर जरी की एक पगड़ी शिव-भावती के चरणा से छुआकर मेरे सिर पर बाँध दी। अपनी सारी गदवी

मुझे सीप दी ।

फिर मेरे आगे—अपनी पदवा के पैरों के आगे—सुद भी सिर मुकाभा, माइ भगत राम और गात्रिद साधु को भी सिर मुकाने के लिए कहा, और फिर उस के बाद जा बाइ भी माथा टेकने के लिए आया, उसे भी ।

“सोचा था, बहुत बड़ा समागम करूँगा । पर अब वक्त नहीं ” उन का सिर्फ एक छोटी भी यह हसरत आयी थी, वैसे वह बड़े सुप्रसन्न लग रहे थे ।

‘याग्यता नाम की काई चीज न कभी मुझे अपने-आप में लगी थी, न उस बात लग रही था । बल्कि अपने-आप उस वक्त

याद आ रहा था कि मंगल नाम का एक साधु कुछ वरस हुए, इस डेरे में आकर रहा था । वह जहाँ भी घँटा था, पाम से गुजरते हर कीड़े को हाथ से मारता रहता था । दिन में न जाने कितने कीड़े मारता था । उस का कहना था, मैं इस तरह कीड़ों को इन की जून से छुड़ा रहा हूँ

उस वक्त जरी तिल्लेवाली पगड़ी सिर पर बाधकर—मुझे अपना-आप विलकुल उस कीड़े की तरह लग रहा था, जिसे उस की जून से छुड़ाने के लिए किसी मंगल साधु की जरूरत थी ।

पर कहा कुछ नहीं, कहने का कुछ हक् भी नहीं था ।

शाम तक महन्त किरपानागरजी का और भी यकीन हो गया कि उन की आयु के दिन पूरे हो गये थे और वह सायद आगिरी दिन था । सब का अपनी कोठरी से बाहर भेज दिया गया । आज उन की हालत को देखते हुए मन्दिर में आये कितने ही थडाल मन्दिर में वापस नहीं गये थे । उन्होंने सब को वापस जान का हुक्म दिया, और फिर मुझे अकेले कोठरी में बुलाया । परा के पाम ही मैं बैठ गया । उन्होंने पैरा के पास से उठाकर अपनी बाह के पास बिठाया, अपनी आँखा के सामने ।

पिछले कई दिना स मुँह की सूजन की वजह से उन्हें बोलने में मुश्किल हाती थी, पर उन के आँधे से उच्चारण की समझने की आदत पड़ गयी थी । इसलिए उन्होंने जो कुछ कहा समझने में कठिनाई नहीं हुई ।

समझने के लिए तो शायद इतनी कठिनाई हुई है कि सारी उम्र भी कुछ समय में नहीं आयेगा, पर सुनने में मुश्किल नहीं हुई ।

‘सिर की पदवी, मिर का भार, जिस तरह उतारकर तुझे दिया है, उसी तरह मन का एक भेद, मन का भार भी उतारकर तुझ देना हूँ ”

मुझ ज़िम तरह तिल्ले की और जरी की पगड़ी मिर पर रख ले थी मैं ने, और मुह से कुछ नहीं कहा था, उसी तरह जो कुछ उन्होंने बताया, छाती पर रख लिया मैं ने और मुँह से बिलकुल कुछ नहीं कहा ।

सिर्फ यह लगता है—सिर सायद साबुत रहेगा, पर छाती साबुत नहीं रहेगी ।

‘आज जा भी पक्की तुझे मिली है, यह तेरा हक् था, यह मिर्ज़े तुझे मिल

सकती थी

“जिस तरह जा कुछ भा किसी बाप के पास हाता ह, बटे को मिल जाता है ।
अमीर बाप से अमीरी, फकीर बाप से फकीरी

‘ मुझे सब कुछ मिला, जवान नही मिला । इस जवान से तुझे बेटा नही कह सका । इस वक्त सिफ भगवान हाजिर ह और कोई नही, और भगवान् की हाजिरी में मैं तुझे एक बार बेटा कहकर मेरा अपना बेटा

ये सारे शब्द ज्यों-ज्यों उन के मुँह से निकलते गये—मैं अपनी छाती पर रखता गया । देखने का जानने का, जोर साचने का वक्त्र नही था, सिफ इन्हें पकड़-पकड़कर छाती पर रखता गया ।

तेरी माँ एक पुण्यात्मा है उसे कभी दाप नही देना भगवान ने खुद उसे सपने में दर्शन दिये इस सयाग का हुक्म लिया उम ने सिफ हुक्म माना और मैं ने सिफ एक बार उमे अंगीकार किया फिर कभी नज़र भरकर उम की तरफ नही देखा उस की साथ पूरी हो गयी उस के मन में सिफ एक बटे की साथ थी तेरी मेरी भा जन्म जन्म की तृष्णा मिट गयी तेरा जन्म एक पुण्यात्मा का जन्म ’

काठरी का दरवाज़ा खडका । दूर-दूर के मंदिरों के साधुआ तक महन्तजी की बीमारी की खबर कई दिना स पहुँची हुई थी, पर आज सुबह मंदिर के वारिम की नियुक्ति की बात भी शायद पहुँच गयी थी और उन्होंने अन्त नजदीक जानकर आज जल्दी से उन की खबर लेनी चाही थी । उन आये हुआ को कोठरी में बठाकर, मैं कोठरी से बाहर आ गया ।

रोज सोने से पहले, कितनी देर तक मैं आसपाम की पहाड़ी पगडण्डियों पर घूमता हूँ । आज भी वही पगडण्डिया ह, पैरों की जानी-पहचानी हुई, पर परा को कई बार पत्यरा की ठोकर लगी ह ।

पर कापते जा रहे ह—टांगा के बीच की हड्डियाँ जैसे गलकर खोखली हुई जा रही ह कोई बच्चा पारा खा ले तो शायद ऐसे ही होता हागा

आठ

अगर जन्म बदलना एक चोला बदलना ह तो मैं रोज दो चोले बदलता हूँ ।

चार पहर एक चोला पहनता हूँ—डरे के स्वामी होने का । और चार पहर दूसरा चोला—एक बड़े बदशक्ल कीड़े का ।

‘कीड़ा’ शब्द जितना हीन ह स्वामी शब्द उतना ही महान । यह मेरे अस्तित्व के दा सिरे ह—हीनता और महानता ।

जब साता हूँ—दखता हूँ कि एक काले और बदशक्ल कीड़े की तरह मैं एक

बिल में से निकल रहा हूँ और मुझे जमीन पर रेंगते हुए देखकर मगल साधु अपने उपले सरीखे हाथ को मेरे ऊपर फैलाकर हँस रहा होता हूँ 'आ मैं तुझे इस जून से छुड़ाऊँ !'

जागता हूँ—पग के पाम कई माये चुके हुए हाते हूँ और मैं एक पदवी के आसन पर बैठकर जमीन से ऊपर उठ रहा होता हूँ ।

दोना सिरों के बीच एक गुफा है, बड़ी सँकरी और अँधेरी । मन्दिर की एक दीवार में स निकलती गुफा की तरह । और कई बार मैं उन दाना सिरों से बचने के लिए उस गुफा में घुस जाता हूँ ।

यह मेरे काले और अँधेरे खयालों की गुफा है । मसलन कभी यह कल्पना कर के देखता हूँ कि मेरी मा ने महन्त किरपासागरजी से एक बेटे का दान कमे मँगा होगा । महन्त किरपासागरजी ने उस के सिर पर आशीर्वाद का हाथ रखकर, फिर वह हाथ धीरे धीरे उस के अगल पर किस तरह फेरा होगा । गायद अपनी कोठरी में जाकर या शायद मन्दिर के पास लगे पेड़ के घने झुण्ड में फिर सफेद और गेहूँ कपड़े किस तरह कुछ देर के लिए एक-दूसरे में गुथ गये होंगे ।

'तेरी मा एक पुण्यात्मा ' महन्तजी के कहे हुए ये शब्द गुफा के अँधेरे में बड़ी ज़ार में हँसते हैं और फिर यह हँसी एक जीते-जागते बच्चे की शक्ल में बिलस कर रा पड़ती है ।

मैं गुफा से बाहर भी आ जाऊँ, तो यह बच्चा उसी गुफा में पड़ा बिधियाकर राता रहता है ।

महन्तजी के स्वर्गवास की खबर सुनकर, गांव की कोई औरत या मद ही हागा जा उन के आखिरी दशन करने न आया था । माँ भी आया थी । गाँव की सभी औरतों ने धारी-धारी महन्तजी के चरणों पर माथा टेका था, और उन की तरह मा ने भी टेका था । पर वह जब महन्तजी की लाश के पंरा के पास चुकी थी—मुझे उस के मुँह पर दिख रहा था कि उस एक क्षण में उस के मुँह की हड्डिया निकल आयी थी । मेरा खयाल है उस वक़्त वह ज़रूर सोच रही होगी कि महन्तजी के स्वर्गवास से अगर वह पूरी नहीं तो आधी बिधवा हो गयी थी ।

उस के 'आधी बिधवा' होने के खयाल से एक हमदर्दी-नी हो आयी थी । अमल में हुई नहीं थी, सिर्फ मैं ने साचा था कि हानी चाहिए थी । और फिर मैं यह सावने लगा था—आज यह हमदर्दी मुझे अपने प्रति भी हानी चाहिए । क्योंकि अपने बाप की मृत्यु से मैं सही अर्थों में अनाथ हुआ हूँ । पर यह हमदर्दी मुझे अपने प्रति भी न हुई ।

चिता का आग दी थी—चेला होने के नाते भी देनी थी, बेटा होने के नाते भी ।

एक बन्धन में दा नाते शामिल है सिर्फ मैं शामिल नहीं । न उस वक़्त, चिता की आग दत्त वक़्त शामिल था, न अब ।

आज एक अजीब घटना घटी है, किसी शहर से कोई बनी अमीर-भी दोखती औरत आयी थी। उस के साथ दो दामियाँ थी जिन्होंने मन्दिर में चढ़ाने के लिए फल और मिठाई उठा रखी थी। वह मन्दिर की इस स्थाति को सुनकर आया थी कि इस मन्दिर में मानता करने से सुखी हुई कोव भी हरा हो जाती है

उस के हाथ प्रायना में जुड़े हुए थे 'कृष्ण साखें लड्डू पेडा शिवजी पीवें भोग बल की सवारी बरे पावतोजी के नग, मेरे भोलानाथजी मेरे बाज सम्पूर्ण कर

एक अजीब लयाल आया था—वहते है, इतिहास अपनेआप को दोहराना है। और आज शायद इतिहास ने अपनेआप का दोहराना चाहा था

लगा—अभी उस की प्रायना के जवाब में उस का वह दूँगा कि इस स्थान से हमिल किया हुआ उच्छा इसी स्थान पर चढ़ाना होता है। और फिर जब वह हा कर देगी, उस का हाथ पकड़कर उस को अपनी कोठरी में

एक ग्लानि-सी हुई। लगा—इस औरत का हाथ पकड़कर जब अपनी कोठरी में ले जा रहा होऊंगा तब वह मैं नहीं होऊँगा, वह मेरे रूप में एक बार फिर महन्त किरपामागरजी मेरी माँ का हाथ पकड़कर उसे अपनी कोठरी में

इसलिए उस औरत को कुछ नहीं कहा बल्कि धबकाकर आखें बंद कर ली। उस ने शायद यह समझा था कि मैं उस के लिए प्रायना कर रहा था, क्योंकि फिर जब आखें खाली वह बनी सन्तुष्ट होकर जोर प्रणाम कर के चली गयी थी

मन की अजीब दगा है—मा के साथ हमदर्दी करना चाहता हूँ—होनी नहीं। फिर यह साबकर कि इन्सान की मौत के बाद तो उस के साथ कुछ हमदर्दी हा जानी चाहिए महन्त किरपामागरजी के साथ हमदर्दी करना चाहता हूँ, पर कुछ नहीं होता आखिर में एक स्वयं रह जाता है। सोचता हूँ, तीन पात्रा में एक ही सही पर वह पान भी मेरी हमदर्दी का पान नहीं बनता

और जैसे महन्तजी के आखिरा निम्ना में उन के मुँह की सूजन भा उतर गयी थी पर उन की हालत बिगड़ती गयी थी हकीम ने बताया था कि ममूडा में पडा हुआ मवाद उतरकर जेदर मेदे में पड गया है—लगता है मेरी नफरत भा माथे से उतरकर मेरे मेदे में पड गया है—किसी को कुछ कहना नहीं चाहता पर मेरे अन्दर से रेत की तरह कुछ गिरता बिलगता जा रहा है

नौ

आडूआ के पेडा पर जब भी फूल लगते हैं, मेरी आखें अजीब तरह बेचन हो जाती हैं। लगता है, यह सिर्फ मुझ पर हैसने के लिए खिलते हैं। यह सिर्फ अब ही नहीं

लगता, जब बहुत छोटा था तब भी लगता था कि मैं किसी चटखे हुए पत्थर में से उग आयी घाम की तरह हूँ, और शायद किसी को पता नहीं, पर आड़ुआ के पेड़ को यह भेद पता लग गया हूँ—और वह जोर-जोर से खिलखिलाकर हँस रहा हूँ

‘मेरी जड़ धरती की छाती के भीतर है तैरी कहा हूँ ? वह कई बार कहता था और बड़ी जोर से हँसता था—इतने जोर से, कि उस के कई फूल झड़कर मेरे जिस्म पर गिर पड़ते थे—जस हँसते-हँसते मुह से गूँक गिर पते ।

मैं ने उस के नीचे खड़ा होना छोड़ दिया, पास खड़ा होना भी छोड़ दिया । पर वह दूर खड़ा भी हँस सकता हूँ, इसलिए जब उस की हँसी की आवाज कान में पत्ती हूँ, मेरा आँखें अजीब तरह बेचैन होकर उधर देखने लगती हूँ ।

पीपल की जड़ भी धरती में होती हूँ और पेड़ा की भी, पर ये अपने में मस्त रहते हूँ—अपने हरे-भाले बदन में लिपटे हुए । आड़ुआ के पेड़ की तरह काई भी गिन्तिल्लाकर नहीं हँसता ।

पता नहीं, उसे इतनी बार हँसने की क्या जरूरत पड़ती हूँ—जब कि मुझे पता हूँ कि मैं किसी पत्थर की दरार में से अपनेआप उग आयी घास का एक तिनका हूँ, मेरी काई शाखाएँ कभी नहीं निकलेंगी, कभी फूल नहीं लगेंगे, फूल से काई फल नहीं बनेंगे

अगर बन सकते हाते महन्त किरपामागरजी ने जब अपनी आँखिरी साँसें रेंते हुए इगारे से अपने पास बुलाया था, उस शाम जा भेज उन्होंने मेरे सामने खाला था उन की आँखों में एक भेद की ली थी इस ली का शायद वात्सल्य कहने हूँ, पर मेरे बदन की नाटिया में काई खून नहीं पिघला था । एक हुक्म में बँधा मैं उन के पास हो गया था, पर उन क बोल्ते खून के जवाब में मेरा खून कुछ नहीं बोला था । उन की आँखा में एक घुंघ-सी आ गयी थी शायद कोई हसरत-सी थी और फिर उन्होंने आँखें बंद कर ले ली थी मैं पत्थर की दरार में से उग आयी घास का एक तिनका-सा हूँ अगर एक बीज की तरह धरती की छाती चीरकर उगा हाना, जरूर मेरी किसी टहनी पर खून का फल खिल पड़ता

मुदरा ने भी यह आजमाकर देख लिया हूँ । आजमाइश का दिन था—उस की नहीं, मेरा आजमाइश का ।

‘मेरे लिए क्या हुक्म है ?’ मन्दिर के साथ के मुनसान जगल में उस ने मुझे पता नहीं किस तरह डँक लिया था और मेरे पास आकर यह कहने हुए एक अनुनय से मेरी तरफ दन्ना था ।

‘मेरा हुक्म ? किस लिए ?’ कुछ समय नहीं पाया था । सिर्फ यह समझ सका था कि मन्दिर में फूल की बोली की पण्टली हुई वह जब जमीन का हाथ से छूनी थी तो उस की हथेली मेरे पैरों को छू रहा-तो लगती थी । यह भुलावा नहीं था ।

“क्या पूरन इस जन्म में भी सुंदरा को स्वीकार नहीं करेगा ?” उस की आँखों में पानी भरा हुआ था, आँखों में भी और आवाज़ में भी, क्योंकि उस के दन्त भाँगीले-से लग रहे थे ।

“मैं पूरन भी नहीं हूँ और राजा का बेटा भी नहीं,” सिर्फ इतना ही कहा था । हरान था—पत्थर की दरार में से निकले घाम के तिनकेवागी बात आँखों के पेड़ को पता लग गयी थी पर सुंदरा को क्या पता नहीं लगी थी ?

मंदिर में पूजा के समय जब वह फूला की शोली को पलकती थी, उस की बाह फूलों के ढेर में सापिन की तरह पड़ी हुई लगता थी और वह मेरे पैर का जब जँगिया या हथेली छूआती थी पर मूच्छित-सा हुआ लगता था—पर आज मैं ने उस के डक को अकारण कर दिया है । भला घाम के तण को भी क्या किसी साँप का जहर चढ़ता है ? मुझे उस की बात का जहर नहीं चढ़ सकता

मेरी आत्मा ” वह कुछ ऐसी बात कहने लगी थी, मैं पर उस से दूर भाँ होकर खड़ा हो गया । आत्मा और पुण्यात्मावाली कहानी जो महान् विरपासागरजी ने सुनायी थी वही बहुत थी, इन कहानी को फिर आज सुंदरा से सुनना नहीं चाहता था ।

मेरे पत्थर के दबता उस ने वही दूर से कहा, और फिर जल्दी से चली गयी ।

सुंदरा बावला है रो पड़ा थी पता नहीं, उस ने आँखों के पेड़ों की तरफ क्या नहीं देखा—वह अगर देखता तो उस वह भेद मालूम हो जाता कि उस पेड़ के मारे फूल सिर्फ मुझ पर हँसने के लिए खिलते थे

पिछले कई सालों में मैं कभी आँखों के पेड़ के नाचे नहीं खड़ा हुआ था, आज बड़ी देर तक खड़ा रहा, लगा आज जरूर खड़ा होना था और देखना था कि आँखों पर उस के फूल मुझ पर कितना हस सकते हैं

दस

आँखों के गुलाबों फलों की हँसी, और सुंदरा की काली सिपाही आँखों के आँसू अजीब तरह एक-दूसरे में मिल-जुल गये हैं । गायद यह हँसी बाँज की तरह है जिसे धरती में बाँकर यह आँसू पाना दे रहे हैं या आँसू गोल बीज की तरह है जिसे धरती में बीजक यह हँसी पानी दे रही है

एक अजीब-सी हमदर्दी मेरे मन में उग आयी है—माँ को तो भगवान् ने सपने में दया दिये भगवान् की तरफ से उसे एक सपाय का हुक्म मिला, महान् विरपासागरजी ने भगवान् का हुक्म मान लिया, और दाना ने मित्रक कुछ प्राप्त कर लिया । पर

वह तीमरा आदमी जा मेरी माँ का पति ह पर मरा बाप नहा उस बेचारे ने क्या प्राप्त किया सिर्फ एक भुलावा कि मैं उस का बेटा हूँ चाहे उस के आगमन में नहीं खेला, चाहे उस के खेतों में उस का हल नहीं चलाया, पर उस के बग का चिराग हूँ

क्या चिराग जमा शब्द भी इतना बाला और जँधियारा हो सकता है

लगता ह—मा ने एक अँधेरा चुराया, जब तक अँधेरे को अपनी कोख में छिपा सकती था, छिपाये रखा। फिर जब छिपाया न गया, उस की एक पोटरली दाघवर उस गरीब आदमी के सामने जा रखी—देख। मैं तेरे घर का चिराग बूढ़कर लाया हूँ।

चिराग क्या होता ह—मिट्टी की एक कटोरी-मा, याडा-मा तेल, याडी-सी रई। वह ता था ही, सिर्फ आग नहा थी। आग एक सच्चाई हाती है पर झूठ भी शायद सच्चाई की तरह बलवान हाता ह, और वह भा अपने हाथा की रगड़ में स आग की चिनगारी पदा कर सकता ह

चिराग जल गया। पर एक फ़क मैं देख सकता हूँ— इस चिराग की रागनी में जो राह नज़र आती ह उस राह पर एक भयानक खामागी है और एक भयानक एकाकीपन।

इस चिराग स जिन का भा सम्भव ह, सब उस राह पर चल रहे ह पर सब एक-दूसरे से अपनी आँखा को चुराते हुए और अपने अस्तित्व का भी चुराने हुए, सब एक-दूसरे से दूटे हुए और अपने-अपने एकाकीपन को भागते हुए

हमदर्दी जमे शब्द का मा के साथ जाडना भी चाहूँ, तो भी नहीं जुटता। महन्त किरपासागरजी के साथ भा नहीं जुटता। सिर्फ कुछ जुडता है—तो उस बेचारे आदमी के साथ जो दुनिया की नज़र में मेरा बाप ह।

बाप शब्द स खयाल आया ह कि अगर मैं इस शब्द का उस बेचारे आदमी पर स उतार दूँ—(मुझे लगता ह इस शब्द का उस ने एक गठरी की तरह उठाया हुआ ह)—और इस शब्द का भार मैं महन्त किरपासागरजी के मिर पर रख दूँ फिर?

पर अब वह भी नहीं हो सकता। अगर महन्त किरपासागरजी जीवित हाते, ता मैं शायद किसी दिन यह कर दता। पर अब यह भार मैं उन की लग के सिर पर कने रख दूँ?

आज सुबह मन्दिर के बापों स निबटकर, मेरे पर अबराम्ती उस खेत की तरफ चल पडे थे जहाँ वह 'बेचारा' आदमी हल चला रहा था। पता नहीं उस ने क्या समझा हागा पर मैं ने उस के हाथ से उस का काम पकड़ लिया था। सूरज जब तक गिरर पर नहीं आया था मैं उस के खेतों में उस के एक मजदूर की तरह लग रहा था उस के काम का बोझ हल्का नहीं कर रहा था, साच रहा था, शायद ऐसे ही उस के सिर पर उठाये हुए शब्द का भार कुछ हल्का हो जाये

उस का मुँह पना नहीं पर मेरा अपना मन कुछ हल्ला-सा हो गया ह—मेत के पाम यहन पानी में जब मैं ने अपने हाथ धाये थे लग रहा था—बन स कुछ धाया जा

रहा था। कंधे की चादर से जब माथे का पसीना पाड़ा था, लग रहा था—ऐस की तरह लगे हुए एक् रिस्ते का कुछ हिस्सा मैं ने आज पोछ दिया था

अगर मैं राज इसी तरह कुछ पोछता रहूँ तो शायद किसी दिन सत्र कुछ पाछ दिया जायेगा

हे भगवान

मैं ने यह साचा ही नहीं कि अगर मैं रोज उस के खेत में जाकर उस की गाड़ाई या जुताई करूँगा, तो गांववाले रोज देखने, और तब ऐस की तरह लगा हुआ यह रिस्ता दिनो दिन छूटेगा या और पक्का हो जायेगा ?

नही, मैं कुछ नहीं पाछ सकता। कुछ भी पोछा नहीं जा सकता बल्कि रोज जा हाथा को पसीना आयेगा उस पसीने से भी उस रिस्ते की बू आयेगी

अजीब हालत ह। कोई रिस्ता नहीं, पर उस रिस्ते की बू सब ओर पनी हुई ह

रिस्ता होता फिर मर गया हाता यह बू समझ म आ सकती थी। बिलकुल उस तरह जिस तरह एक लास में से बू उठती ह। पर जो ह ही नहीं, उस की बू किस तरह ?

ईश्वर तो वही दिव्यता नहीं पर उस की खुशबू हर तरफ फैली हुई ह

क्या यह रिस्ता भी ईश्वर की तरह ह ? लगता ह, अगर बू और खुशबू क पक को छाड़ दिया जाये तो यह रिस्ता भी ईश्वर की तरह ह

या यह कह सकता हूँ कि यह मर हुए ईश्वर की तरह ह।

मरे हुए ईश्वर ने, लगता ह उस क साथ एक मरा हुआ मजाक किया ह। उस का नाम दीनानाथ ह यह मजाक नहीं ता और क्या ह ? शायद उस से बढ़कर और कोई दीन नहीं, पर फिर भा वह दीन का नाथ ह

शायद वह स्वय ही दीन ह, और स्वय ही नाथ ह

ग्यारह

रिस्ता भा क्या चीज ह ? जहाँ कुछ भा नहीं, वहाँ नजर आता ह जहाँ नजर नहीं आता, वहाँ ह।

गुरु से पता था—माँ स एक् रिस्ता ह, पर बास बरस बड़ गौर स दखता रहा हूँ कभी नजर नहीं आया।

महंत किरपामागरजी ने अपने आगिरी वक्त जा कुछ बताया था सुन लिया पर ग्रहण कुछ भी नहीं हुआ। वहाँ भी गौर से देखता हूँ, पर कुछ दिखाई नहीं देता।

मवर मुन्ना आयी थी—उस ने ब्याह का जाटा पत्न रखा था। मुँह अच्छी

तरह नहीं दीख रहा था। सिर्फ आँख दिखती थी, और एक बड़ी सी नय दिखती थी। उस वक्त मन्दिर के चबूतरे पर बहुत-से फूल नहीं थे, पर उस ने फूग की चाली जब पलटी थी सारा चबूतरा फूलों से भर गया था। और उस ने उसी तरह फश पर झुक कर, फूलों के ढेर में से बाह गुज़ारकर

आज सिर्फ मेरा पैर ही नहीं, मेरा सिर भी मूँछित हो गया लगता था, फिर उठकर जब वह खड़ी हुई तो तज़र भरकर देखा—नय की गाल तार पर पानी की बूँदें बटकी हुई हैं। जमे नय की आँखा में आसू आ गये हैं।

लगा—मेरी आँखा में स कुछ रिस पड़ा था। जैसे किसी टहना से कुछ साँडो तो पानी रिस आता है

पर टहनी कौन है ? क्या मैं टहनी हूँ ?

और क्या इस टहना से जो कुछ टूट गया है, वह रिस्ता था ?

सुन्दरा के साथ मैं ने कभी यह शब्द नहीं जोड़ा, पर क्या जा दिखता नहीं था, वह था ?

“आखिरी प्रण ” आवाज़ काना तर पहुँची थी। हाट हिलते नहीं दिखे थे, सिर्फ नय टिँकती-सी दिखी थी। जैसे यह बात उस नय ने कही हो

सुन्दरा नहीं जानती, पर यह भी एक रिस्ता है

वही रिस्ता जो हवन-कुण्ड के साथ होता है

मैं कुण्ड हूँ पाराशर स्मृति के अनुसार पति के जात-जो जो स्त्री किसी और से सन्तान लेती है उस सन्तान का नाम कुण्ड हाना है

किसी कुण्ड में जो कुछ पड़े वह दण्य हो जाता है

भुज प्यार कर के सुन्दरा अपना हवन करना चाहती थी। वह नहीं जानती, पर मैं ने उसे हवन की सामग्री होने से बचाया है

वारह

मौ औरत का रूप में होता है, पृथ्वी के रूप में भी। विष्णुपुराण में कहा आती है कि विष्णु ने जब वराह का रूप धारण किया, तो पृथ्वी ने उस के साथ भाग कर के नरक नामक पुत्र पैदा किया।

सा यह कहानी सिर्फ मेरी नहीं, आदि-युगादि का है।

और आदि-युगादि से यह नरक पैदा होने रहे हैं।

भाग करनेवाला का क्या है, उन का खेत उन को नहीं भुगतना पड़ता, यह सिर्फ नरक का भुगतना पड़ता है। यह सिर्फ मुझे भुगतना है

आज सुबह मौ जब मन्दिर में आयी थी, सोच रहा था, उस को प्रणाम करें।

विलुप्त इस तरह जग तरह बार्द पुष्पा का प्रणाम करता ह ।

पुष्पी ने जब तरह पत्ता दिया था, तो विगी न भा पुष्पी का निरादर नहीं किया था, सा मुने भा उस का निरादर करने का क्या हउ ह ?

मरा माँ सागान पुष्पी ह ।

मुत्पा बहुत अच्छी चीज ह । मैं ने आज तक नहीं दिया था । गाविन्द साधु क हाथा से चिलम पक़्कर आज मैं ने याग-गा ही दिया कि आनन्द आ गया । अजीब अजीब बात भी मूँस रही ह

अभी चरपट यागी की क्या याग आया ह कि चरपट यागी का जन्म यागा मछेन्द्रनाथ की नृष्टि म हुआ था—भाग स नहीं गिऊ नृष्टि स ।

और क्या पता मेरा जन्म भी महन्त विरपागागरजा का सिद्ध नृष्टि म हुआ हो

लगता ह महन्त विरपागागरजा भी यागा मछेन्द्रनाथ की तरह गिद्ध पुष्प थे । सा गिद्ध पुष्पा का प्रणाम करना चाहिए

मुझे अफ़सस ह कि मैं ने महन्त विरपागागरजा का कभी जान जो एग प्रणाम नहीं किया था । चरपट यागी न मछेन्द्रनाथ का जरूर प्रणाम किया हागा । मुझ चरपट यागी स यह गिना लेनी चाहिए थी

चरपट य माँ मेर बन् भाई का जगह ह पता नहीं यह श्याल पड़े क्या नहीं आया उग का जन्म भी एस हुआ था जस मेरा मा हम भाई भाई ह आज मैं बहुत मुन हूँ आज इतिहास के पन्ना में से मुझ मरा भाई मिल गया ह

गाविन्द साधु पता नहीं कहाँ अलाप हा गया ह । अभी नागफन्ती की झाड़ी के पास बठा चिलम पी रहा था । बही साइ भगताराम ही दिख पड़े ता बहू कि चिलम मेर लिए भी भर ला । चिलम क दा धूट स ही आनन्द आ गया

आनन्द की तृष्णा भी अजीब चीज ह यह मैं विग तरह बठा हुआ हू विग मुद्रा म ? आह, याद आया—यह भद्रा मुन ह । टगना का मान्कर अपने नीचे रगकर बठने की मुद्रा । यागिया का आसन

पता नहीं, मेरे नीचे क्या बिछा हुआ ह मेरा सवाल ह भद्रागन हागा बहुत सन्त ह भद्रासन हाता ही सत्त ह बल का चमत् इन आमन पर बठनेवाले लागा की भलाई के लिए बठने ह लागा क कल्याण के लिए मैं विग का कल्याण करूँगा ? क्या आगन पर बठनेवाले अपना कल्याण नहीं कर सकते ?

एक अजीब बू आ रही ह, सायन बल के चमड़े का ह नहीं यह मेरे जिस्म में स आ रही ह हाथा में स बाँहों में से सीने में से मछली की बू की तरह मस्त्य गचा वह कौन थी मस्त्यान्त्री ? वह जा वमु राजा के बाय से मछली क पट म स जमा थी ? उमे भी जरूर अपन जिस्म में स मछली की बू आनी हागी मेरी माँ भी सायद मछली ह मैं मछली के उत्तर स पदा हुआ हूँ एक लिन महन्त विरपा

सागरजी समाधि में लीन था पता नहीं, महाभारत में किशा ने यह क्या क्यों नहीं लिखा

याम ने महाभारत लिखते समय जहर भाग पी रखी होगी नहीं, सुल्फा पी खा होगा कोई साइ भगत राम उस की चिलम भर रहा होगा, और वह लिखता गया होगा आज साइ भगत राम ने कमाल की चिलम भरी है, मैं भा महाभारत लिख सकता हूँ

महाभारत का क्या है, जो मरजी आये लिखते जाओ जहाँ कुछ समझ न आये, वहाँ जो जी चाहे लिख दो शुक ब्रह्मा का बेटा था पर शुक की मा नहीं थी वह ऐसे ही पदा हो गया था। ब्रह्मा एक यज्ञ करवा रहा था, वहाँ देवताओं की बहुत सुन्दर पत्नियाँ आयी हुई थी, ता उन को देखकर ब्रह्मा का वीर्य गिर गया। सूरज ने उस वीर्य को इकट्ठा कर लिया और अग्नि में उस का हवन किया ता उगी वक्त अग्नि में से तीन सुन्दर बालक निकल आये देवताओं ने एक बालक शिव को दे दिया रावहमन्वाह एक अग्नि को दे दिया वह भी रावहमन्वाह और एक उस के असली बाप का दे दिया, ब्रह्मा को, यही बालक शुक था

तो बाप का क्या है, बाप पर कोई दोष नहीं लगता इसलिए बाप का नाम याद रख लेना चाहिए दाप भिष मा पर गता है सो माँ का नाम भूल जाना चाहिए

बच्चे का क्या है, वह वहीं भी पदा हो सकता है—मछली से भी पृथ्वी से भी अग्नि से भी मैं जब महाभारत लिखूँगा, ता लिखूँगा कि मैं मुल्फे की चिलम में से जमा था

खूब वक्त पर खयाल आया है कि बच्चे की पैदाइश के लिए इनसान का वीर्य भी जरूरी नहीं पद्मपुराण में लिखा है कि भगल विष्णु के पत्नीने से पदा हुआ था वामनपुराण में लिखा है कि शिवजी के मुह में से एक धूक गिरा और उस धूक में से एक बालक जमा था

तो मैं अपने जन्म की क्या लिखूँगा कि एक दिन महन्त किरपासागरजी मुल्फे की चिलम पी रहे थे मुँह से एक धूक गिरकर चिलम में पड़ गया और मैं मुल्फे के घुएँ की तरह चिन्म में से निकल पड़ा

यह सब सम्भव है अयोध्या के भूयवशी राजा सागर की रानी सुमति की औरत ऋषि के घर के अनुसार साठ हजार पुत्र पदा होने थे, ऋषि की वाणी थी, इसलिए सुमति के गर्भ से एक तुम्बा जमा जिस में साठ हजार बीज थे। राजा ने साठ हजार घी के घड़े भरकर उन में एक एक बीज रख दिया—दस घड़ीने बाद हर घड़ में से एक एक बालक निकल आया

यह हर्षिपुराण की क्या है इसलिए सच है। सच किसी माल में भा हो सकता है। इस बात में यह भी सच है कि एक दिन महन्त किरपासागरजी मुल्फे की चिन्म पी रहे थे, मुँह में से एक धूक गिरकर चिलम में पड़ गया, और एक बालक

सुल्फे के धुएँ की तरह चिलम में से निकल पड़ा

यह क्या ज्ञान है जो मुझे प्राप्त हो रहा है

भुशुण्डि नाम के एक ब्राह्मण को जब लोमश ऋषि ने श्राप दिया था, तो उस के श्राप से वह एक कौआ बन गया था पर कौआ बनते ही उस को एक ज्ञान प्राप्त हो गया था, और फिर वह चिरजीवी होकर सब ऋषियों को कथा सुनाता रहा

मैं भी शायद उस की तरह वाग्भुशुण्डि हूँ मुझे भी एक ज्ञान प्राप्त हुआ है मैं भी समय को एक कथा सुना रहा हूँ

तेरह

सुना—मा बहुत बीमार है। कुछ दिना से मन्दिर में देखी नहीं थी। कुछ ऐसा ही खयाल आया था पर जिस बात को खबर लेना कहते हैं, उस बात का खयाल नहीं आया।

आज उस ने अपनी किन्ना पड़ोसिन को भेजा था—“एक बार मुँह दिवा जा। यह मेरे बत्तीस दाता में से निकली मित्रता है।”

उस वक़्त मैं मन्दिर में खड़ा था, शिव और पावनी की मूर्ति के पास और लगा, यह शब्द सुनकर मैं भी पत्थर की तरह हो गया था—पैरा को उठाकर चलने की जगह वही पत्थर का तरह हो जाना आसान लगा था।

यह सुबह की बात है। दोपहर के समय वह पड़ोसिन फिर आयी थी “मरने को पड़ी है कहती है—एक बार मुँह दिवा जा। तुझे मेरे दूध की बत्तीस-धारा की सौगंध”

बत्तीस दात बत्तीस धारें लगा उस के पास बत्तीस की गिनती बहुत सारी थी, और अचानक खयाल आया कि स्व-द्विपुराण के काशीखण्ड में औरत के बत्तीस गुभ-लक्षण माने गये हैं ”

इकतीस के बारे में कुछ नहीं कह सकता, पर एक के बारे में जरूर कह सकता हूँ। बत्तीस में से एक लक्षण निष्पटता भी है।

सोचा जाना है इसलिए जाऊँगा। दूध की बत्तीस धारा का कर्जा लौटाने नहीं, और न ही बत्तीस दाता में से निकली मित्रता को सुनकर सिर्फ एक मन्दिर का साधु होने के नाने, जिसे गाँव में से आये किसी मद या औरत के बुलावे पर जरूर जाना होता है।

सिर्फ यह खयाल जरूर आया कि उस ने अपने आखिरी वक़्त या मुश्किल की घड़ी में जा मेरे मुँह से कोई माधु-वचन सुनना चाहा तो मैं यह कह सकूँगा, ‘मली औरत’। तुम में औरत के बत्तीस गुभ-लक्षणा में से शायद इकतीस ही होंगे पर मैं

बत्तीसवें की बात करता हूँ—निष्कपटता की। जिस मद के नाम के नीचे तू ने सारी जिन्दगी गुजारी है, अगर आखिरी वक्त तू उस के साथ निष्कपटता बरत ले ।

जाते वक्त कोई और खयाल नहीं आया था। सिर्फ एक खयाल था, यही खयाल जो मैं सुल्फे की तरह पीता गया था। और एक क्राध-सा था जो सुल्फे के धुएँ की तरह निकल रहा था

अब आती बार खयाल आ रहा है, यह भी कि सुल्फे का जो नशा मेरे सिर को चढ़ा हुआ था—एक दम्भ का नशा था। शायद दम्भ को भी सुल्फे की तरह पिया जा सकता है

और यह खयाल भी आ रहा है—बत्तीस गुंम लक्षण सिर्फ औरत के ही नहीं हाने, मद के भी होते हैं। और उन बत्तीस में से एक लक्षण उदारता भी होता है, क्षमा भी। मैं ने उस के गुंम लक्षणों की गिनती कर के उस को सुना दी पर यह गिनती मैं अपने लिए भी तो कर सकता था

क्या उदारता और क्षमावाला लक्षण मुझ में नहीं होना चाहिए ?

उम्र के बरसों की तोड़ी हुई एक औरत बड़ी दीन-मी होकर, और हारकर, चारपाई के बान से लगी हुई थी और मैं परे एक आसन पर चावल के माड की तरह अकड़कर बठ गया था।

चला, बैठ भी गया था, तो चुप ही रहता

उस ने मुझे हाथ से छूना चाहा था—बढ़कर, पता नहीं परा को कि मिर को, पर उस का हाथ बीच में ही लटका रह गया था

कुछ झुर्रियाँ थी, जो हवा में लटक रही थीं

मास के बला में पता नहीं जिन्दगी का क्या कुछ लिपटा होता है

परे आसन पर बैठे हुए मुह पर शायद निदमता जसी कोई चीज थी, लगा—उस ने देख ली थी, और उस की आँखा में पानी भर आया था।

शायद वह सोचती थी कि आखा के पानी से वह मेरे मुह पर से इस निदमता को धो सकती थी

पर यह मेरे मुह पर जा कुछ भी उसे दिग्ग था, धूल की तरह उड़कर पड़ा हुआ नहीं, मास के रोम की तरह उगा हुआ है।

वही बात हुई जो मैं ने सोचा थी। मेरी खामोशी तोड़ने के लिए उस ने कहा, 'मेरे लिए कोई वचन।'

'वचन मैं सोचकर गया था। इसलिए कह दिया, 'निष्कपटता।'

लगा उस के मुह की सत्र झुर्रियाँ मेरा आर देखने लगी थी।

उस वक्त कोठरी में वह अकेली थी। मैं था, पर मेरा मनलब है, उस का पति उस का दीनानाथ—उस वक्त बाहर ओगारे में था, अंदर उस के पास कोठरी में नहीं था।

उस की आँखा में कुछ फल गया था। शायद खोफ जसी काइ चीज थी। वह एकटक मेरी तरफ देख रही था और उस की आँखों में वह खोफ शीशे की तरह चमक पड़ा था। और फिर लगा था—वह शीशे की तरह चटख गया था शायद पिघल गया था

उस की आँखा से कुछ पानी पिघले हुए शीशे की तरह बह रहा था।

उस ने छोट की बाँही पर छाती का भार डालकर अपनी बाँह को रटवाया—मेरे आसन का एक कोना हथेली से छू लिया। आसन का कोना भी उस के माथे लगा मेरा घुटना भी।

घुटना जल-सा उठा एक क्रोध में। हथेली को घुटने से झटक सकता था पर गुस्से की बड़ी गरम लकीर, घुटने से लेकर जबान तक फल गयी थी इसलिए जबान तिलमिल गयी। कह दिया “महन्त किरपासागरजा ने आखिरी वक्त यह निष्कर्षता मुझे बता दी थी।”

बहुत साल हुए एक बार गोविन्द साधु ने एक साप मारा था। उस का डण्ठा जब साप की कमर में घँसा हुआ था, और साप के सिरवाला हिस्सा व नीचे धड़वाला हिस्सा दो अलग-अलग हिस्सों में तड़प रहे थे—मैं उस के पाम खड़ा उस को देखता एक ग्लानि से भर गया था। उस दिन मुझे साँप पर नहीं गोविन्द साधु पर बड़ा गुस्सा आया था। साँप तड़प रहा था, गोविन्द साधु तमाशा देख रहा था।

लगा मेरी बात सुनकर वह भी साप की तरह तड़प उठा थी मेरी बात लकड़ी के एक डण्डे की तरह उस की पीठ में घस गयी थी और जिम के बोझ के नीचे वह गुच्छा हुई अजीब तरह टूट रही थी। अपनेआप से भी एक नफरत हुई। अपनेआप से भी उस बात से भी, और उस बात की चोट से तड़पती उस की जान से भी।

एक मरते हुए इन्सान को मैं कैसे शांति दे रहा था? मुझे पता था मैं एक बदला ले रहा था पर यह कसी घड़ी थी बदला लेने की?

और सब से अधिक नफरत अपनेआप से हुई अपने अस्तित्व से। अमे मेरा अस्तित्व नफरत का एक टुकड़ा हो

हिल-सा गया था।

फिर यह खयाल भी आया—जो मैं नफरत का एक टुकड़ा था तो मास के इस टुकड़े को जन्म देनेवाली माँ? वह एक बच्चे की माँ नहीं, एक नफरत की माँ थी।

और मैं फिर अडोल-सा हो गया।

कोठरी में एक खामोशी छा गयी थी।

यह खामाशी शायद बहुत भारी थी, पत्थर की शिला की तरह । इस वृत्त में हटा सकता था, न वह ।

पर मेरा खयाल गलत निकला, उस ने खामाशी की शिला ताड़ी और कहा, 'मुझे पता था, एक दिन मुझे अग्निकुण्ड में नहाना हागा '

मैं ने कुछ हुरान होकर उस के मुँह की तरफ देखा ।

अचानक उस ने अपनी मिन्नत-सी करती हथेली मेरे घुटने पर स हटा ली । और बड़ी शान्त हाकर अपनी खटिया पर आराम से लेट गयी ।

अब उस की आवाज भी शान्त और अडाल थी । उस ने सहज भाव से कहा, "कई बार लगता था कि सीता की तरह मुझे भी अग्नि-परीक्षा देनी पड़ेगी "

लगा—यह बाल महन्त किरपासागरजी के उन बोलों के साथ मिलते थे—
'तेरी मा एक पुण्यात्मा है उसे कभी दाप न देना स्वयं भगवान् ने सपने में उसे दशन दिये

पर यह बोल शायद जान-बूझकर मिलाये गये थे । मुझे कभी भी भगवान् के इन दशनोंवाली बात पर विश्वास नहीं हुआ था । और लगा अब मा भी अगले वाक्य में इन दशनोंवाली बात का दोहरा देगी

इन्सान अपने किये को अपने हाथ में न पकड़ सके, ता बड़ी सीधी-सी बात है कि वह भगवान के हाथ में पकड़ा द

पर उस ने कुछ नहीं कहा ।

इसलिए मुझे, खुद, कहना पड़ा, "भगवान ने सपने में दशन दिये, सिर्फ यही कहने के लिए ?'

वह सचमुच हँस दी—"नहीं, मेरे लाल ! मेरे ऐसे करम कहाँ थे कि भगवान मुझे सपने में दशन देते, और कुछ कहते ।

लगा—दशनवाली बात महन्त किरपासागरजी ने मेरे मन का बहकाने के लिए बनायी थी ।

और लगा—एक झूठ था, जो इस कोठरी में पड़ी हुई खटिया पर स रेंगता-रेंगता, एक मरे हुए इन्सान की समाधि तक पहुँच गया था ।

पर मैं झूठ और सच का नितारना क्या चाहता था ? अपने पर एक खीझ-सी आयी । और लगा अगर यह लोग किसी झूठ पर कुछ खाट-सी झपेटकर मुझे खिलाना चाहते ह, ता मैं इसे खा क्या नहीं लेता ? आखिर भगवान के नाम को खाँड की तरह पीसने के लिए इन बेचारा ने कितना कुछ किया ह

"अग्नि-परीक्षा, कभी किसी पति की आना थी, आज पुत्र की आना ह "

लगा—वह अपनेआप से बातें कर रहा थी ।

फिर एक गुस्मा-सा आ गया—झूठ को खिलाना भी जरूर ह पर दूसरे से यह भी कहलाना है कि यह बहुत मीठा है !

उस ने मेरे गुस्से को नहीं जाना, कहती गयी “मेरे एम कम नहीं थे जा भगवान मुझे दशन देते । मैं ने सिर्फ उस की आज्ञा मानी थी जिस को मैं ने सारी उम्र भगवान् समझा । दशन उसे हुए थे, मैं ने सिर्फ उस की आज्ञा मानी ।’

दरवाजे के पास खटवा सा हुआ । लगा, अब वह बिल्कुल चुप हो जायेगी, क्योंकि अब उस का पति अदर कोठरी में आ गया था ।

हकीम से तेरे लिए एक और पुडिया लाया हूँ ’ उस ने कोठरी में आत हुए कहा । और कहा, “हकीम ने कहा ह कि आज का दिन कष्ट का ह, अगर आज का दिन कुशलता से गुजर गया तो ’

“हां आज का दिन ही कष्ट का था ” लगा, वह हँस दी थी, और फिर उस ने अपनी चारपाई पर से हाथ में दवा की पुडिया लेकर, खड़े हुए अपने पति के पैरों की तरफ अपना हाथ बढ़ाकर कहा, “मैं तेरे, अपने भगवान के, हाथों में इस दुनिया से चली जाऊँ मुझे इस से ज्यादा कुछ नहीं चाहिए । एक इस बेटे का मुह देखने के लिए जान अटकी हुई थी, वह भी देख लिया अब मुझे शांति मिल गयी ह और हाथ के इशारे से उस ने पुडिया खान से इनकार कर दिया ।

शाम का बँधेरा उतर आया था । और फिर लगा, जस वह सो गयी थी । मैं उठकर बाहर आ गया ।

बाहर ओसारे में वह लालटेन की चिमनी पाछ रहा था । उस ने एक बार भरे कंध पर हाथ रखकर मुझे प्यार-सा किया । लगा हाथ कुछ शिक्षक सा रहा था ।

शिक्षक को समझ सकता था, पर हाथ की मेहरबानी को समझ नहीं सकता था । कुछ हरान होकर उस की तरफ दखा । लगा, वह कुछ कहना चाहता था, पर फिर वह कोठरी की तरफ देखकर चुपचाप लालटेन की चिमनी पोछने लगा ।

एक सन्नेह सा हुआ—जैसे वह सब कुछ जानता था । और मुझ से कहना चाहता था—मैं ने क्षमा कर दिया ह मैं, एक आम दुनियादार इन्सान होकर, और तू उस क्षमा नहीं कर सकता ?

मैं ने एक बार अपने वश की तरफ देखा—सिर से पाव तक मैं ने गेरआ, भगवान के नामगाला, वेश पहना हुआ था । और लगा उस के सफेद कपड़े भर वेश को एक उलाहना-सा दे रहे थे

एक बार फिर पलटकर देखा—वह ओसारे में खड़ा एक सफेद कपड़े के टुकड़े से अब भी लालटेन की चिमनी पाछ रहा था । चिमनी पता नहीं कब की धुआँयी हुई थी, या कोई काला सा घब्बा चिमनी पर से उतर नहीं रहा था

यह कसा अँधेरा ह कही उत्तम ही नहीं हाता

कोस का अँधेरा हर कोई झेलता ह । पर उस का एक गिना चुना समय होता ह । और वह जसे-तैसे गुजर जाता ह । पर मेरा यह जँधेरा गुजरता क्यों नहीं ? क्या समय मुझे अंधेरे की कोख में डालकर फिर निवाटना भूल गया ह ? और मुझे, अँधेरे की कोख में पड़े हुए ही बरस पर बरस गुजरते जा रहे ह ?

साइ भगतराम एक दिन एक मूख पण्डित की क्या सुना रहा था कि एक गाव की स्त्रिया जब एक पण्डित से तिथि त्योहार पूछने जाता और मूख पण्डित से जन्त्री न पड़ी जाती, तो वह बहुत कच्चा पड़ जाता । आखिर उस ने मोच-साचकर एक उपाय ढूँंढा । मिट्टी की एक कुलिया रख ली, और पड़वा का दिन पूछ पुछाकर, उस ने अपनी बकरी की एक मँगनी उस कुलिया में डाल दी । दूसरे दिन एक और मँगना डाल दी, तीसरे दिन एक और । इस तरह राज एक मगनी वह याद से उस कुलिया में डाल देता । जब कोई स्त्री तिथि पूछने आती वह कुलिया की मगनी गिनता और उस के गुताबिक उस दिन की तिथि बता देता । कुलिया में एक मगनी हाती तो पड़वा हाती दो होती ता दूज, तीन होती तो ताज सो काम चलता गया । पर एक दिन पण्डित जी की कुलिया कहीं आगन में पड़ी रह गयी, और आगन में रखी बकरी ने जब मँगनी की ता कुलिया मुँह तक भर गयी । अगले दिन एक स्त्री तिथि पूछने आयी, पण्डित ने कुलिया देखी ता मँगनिया की गिनती ही न हो स्त्री ने स्वयं ही कहा, होनी ता आज नौमी है ।' पण्डितजी ने भी उस समय टालने के लिए कह दिया 'है तो नौमी, पर अपार नौमी है ।'

मन का हालत रुझाँसी-सी ह । पर यह हास्यास्पद बात याद आ गयी ह । लगता है, समय भी एक मूख पण्डित ह । मेरी बारी अँधेरे दिना की गिनती करता हुआ अपना कुलिया को रात आगन में ही रख गया था—और अब मेरी नौमी को अपार नौमी कहकर अपनी मूखता छिपा रहा ह ।

अपार जँधेरा ।

और लगता ह—कोख में से निकलकर मैं सीधा मन्दिर की गुफा में आ गया हूँ और गुफा पता नहीं कितने सौ मील दूरी ह ।

हर सवाल अँधेरे की उपज होता ह—किण यह बात अलग है कि सवाल छोटा हो तो वह एक बालक की तरह घुटुएँ घुटुएँ चलता है और रोता ह, पर अगर बड़ा हो तो वह काली दीवारा का हाथा से टटोलता और उन से सिर पटकता है

कोख के अँधेरे में मैं ने सिक्र हाथ-पैर ही मारे हागे, मैं ने तो घुटुएँ चलना भी

गुना व अंधरे में गाया था, और अब मेरे माथ का जवाना गुफा की दीवारों से गिर
मार रही है

अपेरा उठा तरह है—सिर्फ सबाल बड़े हो गये हैं—मेरे अगा की तरह

पन्द्रह

आज गेटे में पहना हुआ बाला-मा चोला भी मेरे अगा में फमता-मा लग रहा था

अगों की गालादया में जैसे कुछ नोकेँ निकल आयी हों

बड़ी बरस हुए, जब एक स्कूल में पढ़ता था, एक दिन भरा एक सहपाठी लड़का
हैमी-सेल में मुझे एक लारी में बिठाकर पठानकोट ले गया था।

पठानवाट के गुल बाजारों में नहीं, सबरी गलियों में। और वहाँ उन गलियों
में औरतें ही औरतें थीं—छाटी-छाटी चाँदी की मुर्कियाँ पहने स्कूल में पढ़ती
लड़कियाँ जमी भा, और हाठा पर दन्दागा मल्लर बड़ी हुई बच्ची-बच्ची स्त्रियाँ भी जोर
दहलीजा में बठार हुआ पाता बच्ची-बूढ़ियाँ भी।

बड़ी बार्ई मद नहीं था। जमे छाटा स्त्रिया का बड़ी स्त्रिया न आर ही जम
गिया हा।

हम दाना लगे, स्कूल में पढ़ती उम्र व, वहाँ साय-साय-म लगत थे—या
गुला-दग्गा चलते अपनी साया हुई गुला का दूढ़न-दूढ़ने वहाँ, उन गलियों में पहुँच
गये लगत थे।

बना स्त्रियाँ हूँके की गुग्गुड की तरह मुझे हँगती लगी थी। अभा यह गर
था कि मेरे गापी न लारी में चप्पे न पहले मर गए चाले का गल में स उतरयावर
अगी एक ब्रमाज और एक सऊ पायजामा मुने पहना लिया था। उम का बन्नारगत
वह पहल हा कर व आया था। मुवह पर न आत समय दानों वपद अपने बस्ने में डाल
साया था।

यह उा औरतों का कुछ बाजिज भा लगता था। एक-मा का उा न माँ,
राम सऊ ना बही था।

व औरतें और उा के हुँके जम मिन्नर गुग्गु करने लगे थ।

मैं ब्रमाज का बाँह न गाया पडा पडी माय का पगोना पोंछ रहा था उम न
एक पर क मुहारा में स गुडरने हुए मरा बाँह का झटकर पकड़ लिया था—“एन
पकसपग ता तय वह लडका भा तेरा मजाज उगापग।

मरा कौन।

अजब दग्ग था, गाया बही लग गया था मरी टाँगें बाँधन लगी था। और
दिर एक बठरी-मी में पडुबकर मैं हैरान-मरगान एक लडकी व सन्तपाग पर बठ

गया था ।

थोड़ी देर में दो लड़कियाँ आयी—एक ने सिर पर लाल चुनरी ओढ़ रखी थी, और एक ने गहरे काशनी रंग की । लाल चुनरीवाली लड़की को मेरे दोस्त ने बाह से पकड़कर अपने पास बिठा लिया । और काशनी चुनरीवाली ने आप ही मेरी बाह पकड़ी और फिर मेरे पास तत्पराश पर बैठ गयी ।

फिर जमे में ने गाजे का एक लम्बा-सा घूँट पी लिया हो—और मेरी सास मेरे गले में अड़ गयी हो

वह काशनी चुनरीवाली लड़की मेरी बाह पकड़कर मुझे पता नहीं कौन-सी और काठरी में ले गयी थी । मैं वहाँ एक तन्तपोश पर निढाल-सा पड़ गया था । शायद अँपेरा बहुत था—या उम ने अपनी चुनरी सारी कोठरी में तान दी थी—मेरी आँखा के आगे काशनी रंग फल गया था

रंग काशनी भी था और गीला भी था

मेरा बदन उम रंग में पता नहीं डूब रहा था कि तर रहा था, पर मेरे बदन की सारी हड्डियाँ बसी हुई थी और मुझे लग रहा था जैसे मेरी सारी हड्डियाँ उस रंग में घुम रही हो

कुछ पल के लिए मुझे ऐसा लगा, जैसे मैं अपनी हड्डियों के जोर से उस रंग को तोड़ सकता था

पर रंग गीला था । मेरी हड्डियाँ उस रंग में फिमल रही थी

और फिर मुझे लगा कि मैं रंग की किसी गहरी खाई में गिर पड़ा था । ऐसे जोर से गिरा था कि शायद मेरे सारे अंग टूट गये थे

अपनाआप मास के एक ढेर की तरह लग रहा था ।

फिर मास के ढेर में से मुझे एक अजीब-सी बू आयी ।

यू से मेर सिर को एक चक्कर सा आया । एक चेतनता-सी भी हुई, कि मैं ने सारा जोर लगाकर जहा प गिरा हुआ था वहाँ से उठना चाह

उठने क लिए मैं ने हाथ मारे—मेरे हाथ को बड़ा कुछ छूआ—मास के अजीब अजाब टुकड़े बहुत छोटे होठा जमे भी और बहुत पतले उँगलियो जमे भी ।

और बड़े गोल टुकड़े, जिन्हें हाथ लगाने पर मेरे हाथ बाँप गये थे ।

काशनी रंग अब पानी की तरह पतला नहीं था, गाढ़ होकर जम रहा था ।

जोर फिर वह रंग अब बहुत जम गया, हँसने लगा ।

मैं ने जल्नी-जलदी अपने कपड़ गले में पहन लिये—शायद उस की हँसी से घबरा गया था ।

यह सिर्फ बाहर रोशनी म जाकर दसा था कि मैं ने पायजामा उल्टा पहन लिया था ।

इस बात को बहुत साल हा गये ह ज़र भी सोचा, अच्छी नहीं लगी ।

कई बार यह भी सोचना चाहा कि यह मैं नहीं था, मेरे दोस्त का सिर्फ कमीज़ पायजामा था, जो लारी में बठकर वहाँ गया था, पर वह कमीज़-पायजामा गले से उतारकर भी सारे कुछ का दोष गले से नहीं उतार सका था ।

फिर यह भी सोचना चाहा था कि इस में इतना दाप नहीं था । दोष सिफ सस्कारो में था । तो भी इस को दोहराने का कभी खयाल नहीं आया था ।

यह खयाल सिफ आज आया था । आज गले में पहना हुआ ढीला चोला भी अगो से अटकता लग रहा था । अगा की गोलाइयो में जसे कुछ नोकें निकल आयी हा ।

और मुने लगा—आज मेरी हड्डिया किसी घोराने हुए बल के सीगा की तरह तनी हुई ह जो किसी के पहलू में घसना चाहती थी

गाव से बहुत दूर जाकर, गेरए चाले को उतार दिया । कपडे की एक पोटली सी बांधकर साय ले गया था—घारीदार पायजामा लकीरावाली कमीज़ और सिर पर लपेटने के लिए एक लम्बा-ना अगोछा

भेप बगल गया । लारी में बठकर साचा कि वह मैं नहीं था, वह एक भेप लारी में बठा हुआ था

पर वहाँ पहुचकर किसी सँकरी गला की तग कोठरी में बठकर जब किसी लाट या वाशना रंग में डूबना चाहा उस के किनार पर ही पर अड गये ।

अगा का सारा तनाव जमे अगो से निकलकर परा में आ गया था । पर जमकर खडे हो गये ।

पैरों को देखना चाहा लिखे नहीं । वह काल्पनिक फूलो के ढेर में छिपे हुए थे ।

‘तू यह फूल क्यों लायी ह ?’ गायद मैं ने बहुत गुस्से से कहा था ।

काठरी में से एक सहमी-सी आवाज़ आयी थी—‘फूल कहाँ ह ? यहा कोई फूल नहीं । मैं कोई फूल नहीं लायी ह ।

पर कहा फूला का एक ढेर लगा हुआ था—इतना बडा कि मेरे दोना पर उस में ढके हुए थे । मैं ने अपने परो को देख मरता था, न हिला सकता था ।

किसी ने उस काठरी में मेरी सहायता भी करनी चाही थी मेरी बाह पकडकर मुझे वहा से हिलाना चाहा था, शायद बठाना चाहा था शायद कही ले जाना चाहा था

पर दानो परा के ऊपर कोई हथेलिया भी छू रही थी

और पर उन हथेलिया की छुअन से गायद मूँछित हो गये थे

मूँछित पैरा को गायद आगे नहीं बडा सकता था, पर पीछे घसीट सकता था ।

घमीट घगाटकर फिर अपने ढेर में लौट आया हूँ ।

अगा की मालाइया से सभी नाकें चढ़ गया ह और मेरा गेहूँ चाला सहमकर मेरे गले से लगा हुआ ह ।

सारा बदन सूखा ह—किसी रंग में नहीं डूबा । और शायद इसी सूखेपन का पवित्रता कहते हैं

पर पर सीले ह । शायद बहुत देर गीले फूला के ढेर में पड़े रहे थे, इसलिए ।

या शायद पैरों की आखों में आभू आ गये ह

सुंदरा सुंदरा जादूगरनी ! आज तू ने यह मेरे साथ क्या किया ह ?

यह 'क्या' मेरी देह से बाहर ह, पर फिर भी मेरी हृ के अंदर ह

स्कन्दपुराण में क्या क्या जाती ह कि सूरज की एक पुत्री छाया वं गभ से पैदा हुई । क्या सूरज व भाग व समय भी छाया का अस्तित्व कायम रहा था ? जरूर रहा होगा, नहीं तो उस का नाम छाया कस हाता ।

तो सूरज के सम्मुख होकर भी छाया का अस्तित्व सम्भव ह ? मैं ने सुंदरा को त्यागा था, पर उस का अस्तित्व हम त्याग के सामने भी खड़ा ह

कुछ गिस्ते कस हाते ह जो हर हाल में रहते ह । स्वाकृति मे से जन्मने कायम रहने ठाक था । पर यह अस्वाकृति म से भी जन्म ले लेते ह, और सिर्फ जन्म नहीं लेते, दनसान की उम्र के साथ भी जीते ह, और उम्र के बाद भी जीते ह

ब्रह्मवत पुराण का एक क्या याद आयी ह—विष्णु का शखचूड़ की स्त्री तुलसी का सत भग करना था । इसलिए एक दिन उस ने शखचूड़ का रूप धारण किया और तुलसी के साथ भाग किया । तुलसी का जब बस ठल का पता लगा उस ने विष्णु का शाप लिया कि वह पत्थर हो जायेगा । विष्णु ने भी उसे शाप दिया कि उस के मिर के बाल तुलसी का पौरा बन जायेंगे । और उस का शरीर गण्डका नदी बन जायेगा । गण्डका नदी म मे अब तक जो पत्थर मिलते ह वे विष्णु का रूप ह—मालग्राम । वह रिस्ता अब तक कायम ह । यहा तक कि लोग कार्तिक की अमावस को तुलसी की पूजा करत तुलसी के पौधे का और मालग्राम का विवाह रचाते हैं

यह कसे शाप थे जिहाने वर का रूप धारण कर लिया ? सुंदरा का त्याग पता नहीं वर था, कि शाप ! पर जो कुछ भी था, वह कायम ह । मेरी देह से बाहर ह, पर फिर भी मेरी देह के अंदर ह

शायद वरदान और शाप भी सूरज और छाया की तरह एक ही समय, एक ही जगह इष्टे रह सकते हैं

पृथ्वी का नाम, जिस राजा पृथु के नाम स पड़ा, उस का जन्म उस के मरे हुए पिता वेणु की दायाँ जाँघ म से हुआ था—वेणु धार्मिक राजा नहीं था, इसलिए ऋषियों ने कुप के तिनका ने मार-मारकर उसे मार दिया पर राज-काज व लिए आखिर किसी की जरूरत था, इसलिए मरे हुए वेणु की एक जाँघ का मलना शुरू किया । पर उस जाँघ म स जिंग बालक ने जन्म लिया वह बहुत भयानक गबल का था, उस का राज्य

यात्रा

नहीं सोपा जा सकता था। इसलिए ऋषिया ने फिर मरे हुए राजा की दायी जाघ को मलना शुरू किया। इस दायी जाघ में से एक प्रकाश से चमकते बालव ने जन्म लिया, वही बालव पशु था।

इन्सान की एक जाघ में यदि भयानकता वास करती है तो दूसरी जाघ में अनन्त सौंदर्य। मून के एक ही चक्कर में वर भी शाप भी

सुंदरा वहीं नहीं, पर है

सोलह

मंदिर के पासवाले जंगल के पिछवाड़ेवाली खड्ड आज धुंध से गांवा-नाक भरी हुई है। धुंध इतनी गाली और जमी हुई उगती है लगता है—अगर मैं उस पर पैर रखकर चूँ, तो अडोल खड्ड के परली तरफ पहुँच सकता हूँ।

पेडा का काली नाली और हरा परछाइया खड्ड की धुंध पर बड़ी स्थिरता से लेटी हुई है। सिर्फ किसी किसी वक़्त हिलती और करवट रेंती-मी लगती है।

पिछले दिना एक यात्री यहाँ आया था। पता नहीं कौन था? सिर्फ एक रात का बसेरा कर के आगे कुन्लू की पहाड़ियाँ की तरफ चला गया। कहता था फिर वापसी पर आऊँगा। अभी आया नहीं पर आयगा, क्योंकि भार हल्का करने के लिए बितावा का एक गट्टर अमानत छोड़ गया है।

सिर्फ वहीं नहीं अपनी याद भी छाड़ गया है आज बार बार उस की याद आ रही है।

जिस दिन आया था उस दिन दूर-पास वहीं धुंध नहीं थी पर जब मैं ने उसे पूछा कि वह किस शहर में आया था, तो उस ने हँसकर कहा था 'धुंधवाले शहर से।

पूछा था कि वह शहर कहाँ है तो हँस पड़ा था—“हम शहर धुंधवाला शहर है और उम ने जरा देहराकर कहा था हमारी दुनिया में वह कौन-सा शहर है जो धुंधवाला शहर नहीं।

मैं ने चारों तरफ देखा था, और दूर घौलाधार की पहाड़ियों की तरफ भी। वह मेरे प्रश्न का समयकर हँस पड़ा था, और उम ने कहा था, पत्थर हम जगह दिखते हैं पर इस धुंध में इन्सान का इन्सान का मुह नहीं दिखता।

मैं ने एक बार उस की तरफ देखा था फिर अपनी तरफ। जम पूछ रहा था—क्या तुमने मेरा मुँह नहीं दिखता?

वह कुछ दूर चुप रहा था फिर धीरे से उम ने कहा था, जो मैं यह कहूँ कि मुझे तारा मुँह नहीं दिखता, सिर्फ तारा जागिया बना दिखता है, फिर?

मुने यह लालच नहीं था कि मेरा मुँह उस निखे, और इस मुँह के पीछे, मैं वह भी उस का नजर आऊँ, इसलिए मैं ने भी हँसकर कह दिया, 'चला, मुँह की पहचान न सही, जागिये वेश की ही सही, क्या यह पहचान के लिए काफी नहीं है ?'

'जिम हिसाब स दुनिया चल रही है, उस हिसाब स काफी है,' उस ने कहा था, और बरामद के एक काने में कम्बल बिछाकर चुपचाप लेट गया था।

गाम का हलका-सा जँवेरा था, देख सकता था कि अभी वह साया नहीं था। उस के हाथ के पाम एक दीया और एक पानी का कटारा रखकर एक बार गौर स उस के मुँह की तरफ देखा था। मुँह के बारे में कुछ और नहीं साच रहा था, सिर्फ यह कि आज तक के देखे हुए चहरा स वह कुछ अलग-सा लग रहा था, और उसे कुछ घड़िया के लिए मैं अपने ध्यान में रखना चाहता था—जैसे कोई विलक्षण फूल तोड़कर कुछ घड़िया के लिए उसे अपने सिरहाने के पाम रख ल।

पीठ माड़ने लगा था, जिस वकन उस ने कहा था, 'जागिये वेशवाली बात का गुस्सा मत करना, दोस्त !'

हँसी आ गयी थी, इसलिए जवाब दिया था 'जागिये वेश को तो गुस्सा गामा नहीं देता,' पर माय ही ध्यान आया था कि वह ऋषिया की जवान हँ होती था, जो बात-वान में क्रोधित हो उठता थी और शाप दे देती थी।

इसलिए एक गहरी सास लेकर यह भी कह दिया, 'क्रोध करेगा तो जागिया वेश क्रोध करेगा, मैं क्या कहूँगा ?'

वह कंधा पर तानी हुई गरम चादर का हाथ से परे कर के कम्बल पर बैठ गया, और कहने लगा, 'यह बात तू ने बर्निया कही है। खुश हाते हैं, ता वेश ही खुश हाते हैं। क्रोध करते हैं तो वेश ही क्रोध करते हैं। इनमान है ही कहा ? अगर कही है भा तो मुने तो धुंध स दिखते नहीं।'

फिर वह खिलखिलाकर हँस पड़ा और कहने लगा, 'सारी दुनिया कपड़ा में बँटी हुई है, वेशा में—फटे हुए चीथड़ावाले, कामकाजी मजदूर, अधमले कपड़ावाले, छोटे-छोटे दुकानदार, चमकते कपड़ावाले बड़े-बड़े दुनियादार।' और मेरा हाथ पकड़ कर मुझे भी अपने कम्बल पर बिठाते हुए कहने लगा, 'और कमरवाय पहननेवाले राजा और मन्त्रा इस लोक के रक्षक और गुरु वेशवाले परलाक के रक्षक।'

मेरे कंधे पर उस ने जोर से एक हाथ मारा और फिर कहा, 'और तो और, धरती के टुकड़े भी वेशा से ही पहचाने जाते हैं—अपने-अपने झण्डा स। और उन धरती के टुकड़ा की रखवाली भी इनमान नहीं करते बर्निया करती है। अगर इनमान कही होते तो लडाइया की क्या जरूरत थी। भला कही सचमुच का इनसान भी सच मुच के इनसान का मार सकता है ? यह सब बर्निया और वेशा की लडाई है। झण्डा की लडाई।' उसे एक सास सी चढ़ गयी थी। जैसे सास बहुत बड़ी थी और छाती बहुत छोटी थी। और लूग रहा था—कपड़ा का वेश तो क्या, उस की रूढ़ को उस के

बदन का वेश भी तग लगा रहा था

“तू कोई भगवान् को पहुँचा हुआ इनमान लगता है,” मैं ने उम की पीठ पर थपकी-सी मारी थी, और उस के कंधा से उतरी हुई चादर उस के कंधा पर ओढ़ा दी थी ।

वह हँसा नहीं, बल्कि कुछ उदासीन सा हा गया और कहने लगा ‘भगवान के पास तो किसी फुरमत के वक्त पहुँच लगे । पहले अपने-आप के पास पहुँच लें इस धुँव में भगवान तो क्या दिखना है अभी किसी को अपना मुँह भी नहीं दिखता ”

कुछ कहने के लिए मचल-सा गया था । मैं नहीं, शायद मेरा गैर-आवेश मचल गया था । पर अपने वेश को मैं ने स्वयं ही चुप सा करवाया, और वहाँ से उठ बठा ।

सुनहल मक्की की रोटी और गुड की ढली मैं ने जब उम को जाते हुए उस के पल्ले से बाध दी, उस ने अपनी गठरी पाटली को जरा हाथ से ताला और फिर कुछ कित्तावा का भार उस से हटका कर क गठरी और पाटली उठा ली ।

यह मेरी अमानत । फिर जब इस राह से गुजरूँगा, ले लूँगा उस ने कहा था ।

“पर जो सीने में डाला हुआ है और मस्तक में भी वह भी तो बहुत भारी है ’ मुझे हँसी सी आ गयी थी ।

‘उसे ढाने के लिए ही तो इस शरीर की जरूरत है, नहीं तो यह शरीर क्या सँभाले फिरना था । ’ वह हँस पड़ा था ।

बहुत-से यात्री आते हैं जाने हैं । पर जो भी आते हैं, मन्दिर की नदी में से पानी के बुल्लू भरते जस नन्ही को कुछ रीता ही करते हैं । पर वह जब हँसा था मुझे लगा—उस की शरने जमी हँसी नन्ही के पानी में मिलकर, नन्ही को और भर गयी थी ।

वहाँ कुछ नहीं, सिर्फ जाते समय यह पूछा “इस पुस्तका का बाचने का हक वजित तो नहीं ?

उम के जाते हुए के, पाव पल भर का ठहर गये थे । उम ने गौर में भर मुह की तरफ दखा था—जैसे किसी धुँव की तह में से मेरे मुह का बूट रहा हो ।

“ज्ञान की धारण करना शिवजी की तरह गंगा का धारण करने के बराबर है ’ उस ने कहा और मुसकरा दिया ।

‘पुराणा में गंगा के बारे में जो प्रसंग आते हैं उन की जगह जो तेरा यह कथन प्रसंग बनकर आता तो बहुत अच्छा था । अनायास ही मेरे मुह से निकला ।

“पुराणा में क्या प्रसंग आते हैं ? उस ने पूछा ।

“कई आते हैं,” मैं ने जवाब दिया, जिन में से एक यह है कि यह वामन अवतार के परा का जल है । जय वामन का पर ब्रह्मालोक तक पहुँचा, तब ब्रह्मा ने उम का पर धोकर उस जल को कमण्डल में डाल लिया, और भागीरथ की प्रायना पर

श्रृंगलाक से छाड़ दिया। गिबजी ने उस जल का जटाआ में सँभाल लिया, और फिर जटा खोलकर उस जल को पथरी पर छाड़ा ता वही जल गगा बहलाया।”

“और ?” उस ने फिर पूछा।

“और ‘वामीवीय रामायण’ में आता है कि हिमालय पर्वत के घर मेनका के उत्तर से गगा और उमा दो बहनें पैदा हुई। एक बार शिव ने अपना वीर्य गगा में डाल दिया। गगा उसे धारण न कर सकी, और गभ का फेंककर ग्रहा के कमण्डल में जा रही। फिर भगीरथ की प्रार्थना पर कमण्डल से निकलकर पथरी पर आयी।”

‘काफी दिलचस्प कहानियाँ ह।’ वह जोर से हँसा और कहने लगा, “शायद इन कहानियों में ही गगा को जान का चिह्न कहा गया है।”

‘गगा को कि शिवजी के वीर्य का जिसे गगा धारण न कर सकी ? किसी जान को गभ में धारण कर रखना ही तो मुश्किल था।”

मैं ने जब कहा ता हम दोनों इस तरह हँसे, जैसे मैं हम दोनों स्पष्टता और अस्पष्टता के बीच में खड़े बड़े व्यापे हुए लग रहे थे।

यह बात अलग है कि दूसरे पल वह चला गया, और उस के जाने के बाद भी कितनी ही देर तक वहा खड़ा रहा।

उस दिन धुंध नहीं था, पर आज मन्दिर के पासवाले जंगल के पिछवाड़े खड्ड में धुंध भरा हुआ है

वैसे जिस धुंध का जान उस ने की था, वह उस दिन भी था, आज भी है और शायद हमेशा होगा

सिर्फ यह कह सकता हूँ कि आज धुंध दाहरा है

पर यह दाहरा धुंध पता नहीं क्या है—गाढा सफेद और बर्फ की तरह जमा हुआ—कि पेड़ा की काली, नीली और हरी परछाइयों की तरह। किसी के यहा हाने की परछाई भी इस पर अडाल पड़ी लगती है

यह पता नहीं मरे वजूद की परछाई है, कि उस जानी के रूप में किसी जान के वजूद की परछाई

सत्रह

आज लगता है—उम यात्री को मैं ने बहुत नज़दीक से देखा है। उसे भी और अपने-आप को भी।

उम की अमानत किताबों में से एक किताब मैं ने पढ़ी किताब का हर पन्ना जैसे शीशे का एक टुकड़ा था। अत्यन्त अपनी सूरत भी नज़र आती रही, और अपनी कल्पना में पड़ा हुई उस यात्री की सूरत भी।

रैत उस के परा के नीचे भी हिलता ह और उस के पर चौंकर रैत के कानून की ओर दबते ह

कुछ बूढ़े आदमी कुछ घबराये हुए-से उसे सरकारी आत्मी समझते ह पर वह विश्वास दिलाता है, कि वह एक साधारण स्कूल मास्टर है। रात बिताने के लिए वह कार्दे जगह पूछता ह तो एक जना उस मदद का विश्वास दिलाता ह। शाम ढल जाती ह। उस बीड़ा की कोई खाम किस्म नहीं मिलती और वह थककर अपनी तलाश बल पर छोड़ देता ह।

रात बिताने के नाम पर उसे सड़क पर उतरती एक गहरी ग्यार्ड में बना हुआ एक घर मिलता ह। रस्सी की मदद से वह घर की छत पर उतरता ह। घर का रास्ता दिखाने आया हुआ बूढ़ा लौट जाता ह। वह घर की छत पर ढेर सारी गिगती रैत को देखकर परेशान होता ह, पर यह तजरबा सिर्फ एक रात का साचकर वह धारज बाध लेता ह।

रस्मी को घर की छत तक लटकाते समय बूढ़े ने जावाज दा थी— नानी किवाड खाला।' पर यह यानी घर की दहलीज पर जिस औरत को देखता ह उस की जवानी अभी ढली नहीं होती। हाथ में लालटेन पकड़ वह उम्र का स्वागत करती ह।

“इस कोठरी में एक ही लाय्पेन ह अगर तू अघेर में बठ सके, तो मैं पिछवाड़े बठकर तेरे लिए कुछ राध हूँ” औरत कहती ह।

‘मैं कुछ खाने से पहले नहाना चाहता हूँ’ वह जवाब देता ह।

औरत हरान सी होती ह फिर कहती ह ‘जो तू परसा तक इन्तजार कर सके, नहाना का इंतजाम हो जायेगा।

“पर मैं ने यहा सिर्फ एक रात रहता ह वह जवाब देता ह और हरान होता है कि औरत ने उस की बात सुनी-अनसुनी कर दी ह।

खाने के लिए उसे मछली का सूप मिलता ह पर औरत जब उस की थाली पर कागज की छतरी तानती ह, वह हरान होता ह ता वह बताती ह कि यहा रैत इस तरह उड़ती ह कि अभी सूप का प्यान्ना छतरी के बिना रैत के बणा से भर जायेगा। और वह बताती ह कि हम का रंग जा इस आर ह। ता सारी रात उसे छत पर से रत उड़ेरनी पड़ती ह, सही तो दूसरे दिन तब सारी काठरी रैत में दब ही सकनी है।

उस का वस्त्र थानी देर में चिपचिपा हो जाता ह, और उड़ती रत, उस के गले में नाक में और आवा में एक तरह की तरह जमन लगती ह।

दुगर र्निन सबेरे-सबेर बाहर दूर से बहुत ऊँचाई से आसारा आता है, और रस्सी से एक आत्मी क लिए नहीं, दो आत्मिया के लिए कुछ खाने का मामान नीचे उतार दिया जाता ह। जवाब-से एक उम्र की आँखों के आगे रत के बणों की तरह

घूमने ह, पर उस की समझ में कुछ नहीं पड़ता । औरत लगातार एक फावड़े से दरवाजे के सामने से रेत का हटाने म लगी हुई ह ।

“मैं तेरा हाथ बटाऊँ ? वह औरत से पूछता ह ।

पर औरत जवाब देती ह ‘पहले दिन ही तुझे इतनी तकलीफ दूँ ? नहीं, पहले निन नहीं वह परेशान हाता ह फिर भी उस के हाथ स फावड़ा पकड़कर उम की मदद करना चाहता ह । औरत बहती ह अच्छा जा तुझे आज ही वाम पर लगना ह ता तर हिस्से का फावड़ा उन्हाने भेज लिया ह, वह ले ले ।

‘वह कौन ?’ अभाव परेशानी ह । वह वहा से उलटे पाँव ही चला जाना चाहता ह पर बाहर की सड़क तक पहुँचने के लिए रेत की चढ़ाई किसी तरह भी पार नहीं की जा सकता

वह रेत का कत्ती हावर रह जाता ह

गाव के अस्तित्व का बनाये रखने के लिए सारा रात रेत का बुहारने का काम जरूरी ह और इस काम के मजदूर सिर्फ रेत बुहारते ह । और उम के बदले गाव के मुखिया उन्हें मूखी हुई मछला कुछ आटा और कुछ पानी रस्तिगा से उतारकर उन तक पहुँचा देते ह

इस का मतलब ह कि तुम कुछ लाग सिफ रेत बुहारने के लिए जीते हो ?’ वह परेशान हाकर पूछता ह ।

‘हा, सिफ रेत बुहारने के लिए । यह गाव तभी बना रह सकता ह । जो हम यह काम छाड दें तो दम निना म सारा गाव रेत के नीचे दब जायेगा औरत बताता ह और उम का दान्निक् मन मोचता है कि रेत के इस कानून के आगे गायद कुछ भी नहीं हा सकता । बड़ी-बड़ी बादशाहत्तें भी बक्त का रेत म दब जाती ह पर अस्तित्व क्या ह ? शायद पानी के अथाह सागर म पानी को बुहार बुहारकर एक निश्चल स्थान बनाने का यत्न

उस की निराशा उस के गले में अटक जाती ह वह रेत की दीवार पर चढ़कर रेत की इस बन्न में से निक्ल जाना चाहता ह पर

इस ‘पर का जवाब कही नहीं

‘उन्हाने मुझे यहा तेरे पाम रेत का कैदी क्या बनाया ? वह हाकर कुछ दिनों बाद उस औरत से पूछता ह ।

‘इसलिए कि मैं अकेला थी, यहा मुझे रेत भा सा जाती, और अकेलापन भी, औरत बताती ह ।

पर उन्हाने मुझे कोई कुत्ता या बिल्ला समझ लिया था कि जो भी औरत मेरे सामने आ जायेगी ’ वह गुस्से म खौल जाता है ।

पर गुस्सा भी आगिर रेत का तरह नाडिया म जम जाता ह । जब समय गुजरने लगता ह ता उम के जिम्म की निराश भूख उसा औरत के जिम्म म से हडबडा

वर कुछ माँगती है

काई चीज मजबूर करती नहीं लगती, सिफ रेत औरत पर आया हुआ उस
का गुस्सा आगिर रेत के कणा का तरह रेत में मिल जाता ह

वह रेत की कब्र में ह, पर फिर भी रेत बुहारता ह

फिर और कुछ नहीं, सिफ साँसा का चलते रहना ही जरूरी लगने लगता ह

और जिन्दगी के अथ धन जाते ह, साबुन की, पसीने की, और रेत की गन्ध में
भीगे हुए धन, और उन में साँसा को चलाये रखने का निरंतर यत्न

जिन्दगी की हकीकत को मैं ने इतने नग्न रूप में कभी भी नहीं देखा था। किताब
मरम हो जाती है, कहानी फिर भी चलती जाती ह

इस दुनिया में कौन ह जा इस कहानी का पात्र नहीं ?

हम सब रेत बुहार रहे ह। यह बात अलग ह कि कोई हल-पावड़ा लेकर इस
रत को उठाता ह काई तराजू लेकर और काई कलम-खदान लेकर मेरे जैसे कुछ
लोग पूजा-पाठ के पावड़े से रेत बुहारते ह पर साधन बदलने से कुछ नहीं बदलता,
रत रेत है

सपनों के नाम पर हम—सारे जा कुछ सोचते हैं हर आज के बाद, उस की
बात, हर कल पर डालकर, चलते चले जाते ह

और यत्न के नाम पर जा कुछ करते ह

(इस कहानी का पात्र फिर याद आ गया ह—गले के कपड़े उतारकर और
उन की रस्ती बट-बटकर उन के सहारे कही से निकलने और छूटने का उस का यत्न)
उन यत्ना के पदचिह्न भी उड़ती रेत से बहुत जल्दी मिट जाते ह

और कगावत के नाम पर हम जा कुछ चाखने ह खुले गले में उड़ उड़कर पत्ती
रेत आगिर उन चीखों को भी हमारे गले में बंद कर देती ह

कुछ नहीं बनता। कभी भी नहीं बनता। सूखती घास जमे कुछ बीज धारण
कर लेता ह इनमान भी अपना हड्डिया की मुठ किसी और मांस में लपेटी हड्डियों की
मुठ के साथ जोड़-ताड़कर अपने अस्तित्व के बीज इस धरती पर छोड़ जाता ह

अठारह

मैं महन्त किरपामगरजी के अस्तित्व का बीज हूँ, चाहे धूरे पर पड़ा हुआ—पर हर
बीज की मिट्टी की मेहरबानी गारर स्वीकारनी होती ह, फलना भी जरूर होता है,
फूलना भी

अपने वन में से उगता सोचा का मैं कुछ नहीं कर सकता

इहें जो नफरत के बडबे फल लग जायें, ता भा मैं कुछ नहीं कर सकता
यह बाज की बेबनी ह ।

अपनी सूरत के बार में चर्चा हाती मैं ने सुनी ह (मेरी सूरत को किसी भी
तरह महन्त विरपासागरजी की सूरत से मिलाकर नहीं) । शिवजी के वष के साथ
मिलाकर, दूध और केसर के रंग से मिलाकर, या दूध और मधु के रंग से मिलाकर

रंगा का भी गायद शोक हाता ह भुलावा डालने का । जा सिफ किसी रंग का
उपमा में किसी को विरह लिखा हो, ता मेरा गयाल है वह सब से पहल सप-फली
की उपमा में कोई विरह लिखेगा । उस के जितना सुंदर रंग किसी फल का नहीं
होता । उस के रंग में जम आग जलती हाती ह । पर इसी सप-फला का दूसरा नाम
मौत फली ह । इस का बस हाठा से छुआने की देर हाती ह

आम मिट्टी में से उगनेवाली जड़ी-बूटियों का जहर सिफ हाठा को चन्ता ह,
पर इन्सान के मन में से उगनेवाली जडा-बूटिया का जहर आँखा का भी चढता ह,
माये को भी चढता ह, मामा का भी चन्ता ह पपाग को भा चन्ता ह, और सपना
को भी चढता ह

कभी-कभी नदा की आवाज में से अचानक महन्त विरपासागरजी की आवाज
उभर आती ह—कुसूर मेरे बाना का ह, आवाज का नहीं—पर फिर भी ऐसे लगता है
जैसे वह आवाज मेरे बाना से मजाब-सा करती हो

बमे मोचना चाहता हूँ कि मने कान उन आवाज से मजाब करते ह । पर पता
है यह सच नहीं । शायद कभी हो जाये पर अभी नहीं । अभी तक यही सच ह कि यह
आवाज

यह सच कुछ शायद इसलिए कि उन की आवाज में कुछ खास तरह का 'कुछ'
था—नगी के पानी की तरह, हल्का-भा हाते भी बडा भारी, और अपने जोर से बहता ।
कोई पत्थर, कंक पत्ता या हाथा का भल उस में फँक भी द तो उस से बेपरवाह
उसे बहाकर ले जाता, या परा में फँककर उस के ऊपर गुजर जाता ।

पानी के बहाव की शायद सिफ आँखें होती ह, कान नहीं होते । उन की
आवाज भी एक सीध में चली जाता थी, इन् गिद की दाता को सुनकर कभी खड़ी नहीं
होती लगती थी । साधु डर भी घर-गृहस्थों की तरफ शगडों बगडा और निन्दा चुगनी
से बसते ह—जाते इन की दीवारा पर भी लगते ह । पर महन्त विरपासागरजी की
आवाज के बारे में मैं यह जरूर कह सकता हूँ कि वह नगी के बेग की तरह, इस सच
कुछ का बहाकर ले जाती और उन्हें आँखें भरकर रखती भी नहीं थी ।

यह आवाज दो तरह की थी—एक भाग और बेगवती और दूसरी बहत
सूक्ष्म, उन्मत्त और पवन का तरह पवन में मिलती तथा अपने अस्तित्व का स्रोत भी
चुराती ।

पहली तरह की आवाज एक खास तरह के प्रभाव का लेकर चलती थी, पर

दूसरी तरह की बिल्कुल बेपरवाह हाकर ।

कोई जब भा वान करता ह, मिफ पहली तरह की आवाज की ही बात करता है । गायद वह प्रत्यक्ष थी, इसलिए । और शायद लोगा की अपनी हस्ती उस क प्रभाव के नाचे चुक जाती थी इसलिए । पर मेरे लिए इस तरह नहीं । सोचता हूँ—वाहर दिखते बोझ का कोई हाथ से अपने ऊपर स उतार सकता ह, पर वह जा दूसरी किम्म का कुछ होता है, जा साँमा म मिलकर छाती में उतर जाता है उस का क्या करे ।

मंदिर के साथवाले जगल में, यह दूसरी तरह की आवाज मैं ने कई बार सुनी थी । वह अकेले रात प्रभात कभी उस जगल में खा गये लगते थे—आवाज की भी गायद जगल की शा शा में मिलाकर, खा दना चाहते थे—एक ही बोल हाता था जो बार-बार हाठा स झटता था—‘मुहूर्ते गुजर गयी बेयार ओ मददगार हूँ ।’

यह बोल उन के होठा से पीले पत्ते की तरह झडता था फिर होठा पर हरे पत्ते की तरह उगता था और फिर होठा से पीले पत्ते की तरह पडता था

पजा के बल चलकर मैं ने कई बार इस आवाज का पीछा किया था । अपने काना की इस धोरी से मुझे कोई उलाहना नहीं । सिफ कई बार एमे हाता था कि मेरे कान बहुत दद करने लगते थे और लगता था कि एक नफरत मेरे काना में पीप की तरह भर जाती थी

पता नहीं, यह असली अर्थों म नफरत थी या नहा । यदि थी ता इस से बचने क लिए मैं बड़ी आमाना से यह कर सकता था कि कभी वह आवाज न सुनता । एक बेपरवाही की रई काना म दे सकता था । पर मैं ता उस आवाज का पीछा करता था, वह मुझे बुलाती नहीं थी पर फिर भी पजों के बल चलकर मैं उस के पीछे जाता था । उस के बिना काना को जैसे एक बेचनी-सी हाती थी ।

आज आवाज कोई नहीं, पर उस की कल्पना अभी भी बाक़ी ह । वही उस मरी हुई आवाज को फिर स जीवित कर दती ह । और फिर वह मिफ मेरे कानो तक सीमित नहीं रहती कई बार मेरे हाठा तक भी आ जाती ह । हाठा उस के भार के तले हिलने लग पडते ह और हिलने हिलते खुद एक आवाज-नी बन जाते हैं—मुहूर्ते गुजर गयी बेयार ओ मददगार हूँ

किसी साइ-फ़कार ने कहा ह—

कुन फ़िनुन जगो कीतो इ
कीतिमाँ ना जोरावरिया
जुज अपनी ता जुदा कीतो ई
तेरियाँ कीतिमाँ मत्थे घरियाँ^१

१ तुम ने जब कहा कि मैं एक से अनेक हा पाऊँ, तब तुन ने हम से जबरदस्ती की । तुम ने हमें अपने से अलग कर लिया, और तुम्हारा बिना हमें खींचकर बगना पडा ।

उस साइ-सकीर ने भी शायद यही एकाकीपन भोगा था, जा महन्त किरपासागर
जी ने बेगार मददगार होते हुए भुगता था

कुन फिकुन—मैं एक से अनेक हाऊं—

पता नहीं किस अपार शक्ति का यह खयाल आया ? सब छोटे छोटे टुकड़ा में
बंट गये थे—एकाकीपन के टुकड़ों में ।

महत् किरपासागरजी का अस्तित्व भी एकाकीपन का एक टुकड़ा था—और
उस टुकड़े ने शायद बिल्कुल मिट जाने के खौफ में से एक और टुकड़े का जन्म दना
चाहा था—मुझ ।

किमी के बज्र पर लदी गयी किमी की मरजी

मुझे उन से नहीं, उन की इसी मरजी से नफरत ह

अपना आप नाजायज लगता ह, शायद इसलिए यह नफरत जायज लगती ह

उन्नीस

आज वह आया था—वहा दानानाय । बपड़े साधारण थे घर के धुले हुए थे, साफ-
सुथरे, पर उस के सिमटे हुए अंगो से लेकर कुछ सिकुड़े स लग रहे थे उस के मुँह
की तरह दीन-मे लग रहे थे, और उस के मुख से निकली वान की तरह विश्वक्ते-से,
और गुच्छा-से होते

उस के गले में काई अगोछा-न्ता था और उस अगोछे की वानी वह अपने हाथ
से ऐसे मरोड़ रहा था जैसे अभी भी एक बपड़े के टुकड़े स लालटेन की चिमनी पोछ
रहा हो

पता नहीं उस दिन उस का चिमनी पाछते हुए दस्तकर उस का किस तरह का
मुँह ध्यान में अड गया था । लगा, वह कई बरसों से एक चिमनी को पाछ रहा ह

वह बड़े एकान्त के समय आया था । यह शायद सयोग नहीं था, वह वक्त को
देखकर आया था । मैं उस वक्त अनेला मंदिर के पिछवाड़े के जंगल में पगडण्डिया पर
घूम रहा था । रोज शाम को सध्या के समय इस तरह घूमता हूँ । एक नियम की
तरह । लगता ह, उस को हम नियम का पता था

ये वक्त के दिन बड़ अजीब हाते ह—पेड़ा की पत्तिया पल पल में रंग बदलती
ह थोड़ी-सी हवा से भी काप-काँप सी जाता ह और फिर लगता ह जैसे ये धधराकर
पड़ा के पैरा पर गिर रही हो

उन की यह दीनता देखकर मन में कुछ हाता ह

वह भी जब आया मेर पास, मेर मन का कुछ हुआ

मेरा खयाल है, उस ने भी एक बार चुपचाप पेड़ा की तरफ देखा था—पेड़ जा

हर घड़ी नगे और दीन-से हा रहे थे, फिर उस ने, आँखा को मुकावर, पेडा की हानी कबूल कर ली थी—

“मैं तुम से एक बात करने आया हूँ ” उस ने कहा । पर इतना वह मुझे बहता नहीं लग रहा था, जितना अपनआप को । जैसे काइ पेड अपने को पतझड के आने की खबर बता रहा हो ।

‘ यह तेरी मा है ” उस ने कहा, और फिर चुप हा गया ।

पता नहीं यह बतानेवाली क्या बात थी । मुझे पता थी, और उस का भी मालूम था कि मुझे पता है ।

“जाने उस के कितने दिन रहते ह पता नहीं दा घडिया ही हा, पर उस की जान अटकी हुई ह तू ने उस राजकुमारी की कहानी सुनी ह जिस की जान ताते में थी ? वह मारने से नहीं मरता थी, पर जब किसी ने ताते की गरदन मराड दी उस का भी गरदन टूट गयी वह भी अभी मरने लायक नहीं थी, पर उस की जान उस में नहीं, तुझ म है—तरी एक नजर म । तू नजर माडता है उस की जान लटक जाती ह तू उमे एक बार मा समयकर देख, वह मरी हुई भी जी पड़ेगी ’ यह सब कुछ उस ने अटक-अटककर भी कहा और एक सास में भी ।

मुझे ऐसा लगा था कि जैसे वह मुझ पर तरम खाकर मुझे गुफा के अंदर में से निकालने आया हा, पर उसे यह पता न हो कि अगर उस ने दा कत्म जागे रखे ता उमे भो हमेशा के लिए गुफा के अंदर में गुम हा जाना होगा ।

मुझे ज़िन्दगी म अगर किसी पर पहली बार तरम आया तो उस पर—दिल में आया कि उस के हाठा पर हथेली रखकर उसे जागे कुछ कहने म चुप कर दूँ

हवा तेज नहीं थी पर पेडा की पत्तिया बडो जा रही थी । मैं हवा को हाथ से राक नहीं सकता था ।

“वह बडी नेत्र औरत ह ” शायद उस के मुँह म थे मेरे वान दौरा-स गये । वही घडी सामने आ गयी, जब महन्त किरपासागरजी ने आखिरा स्वासा के समय कहा था “वह एक पुण्यात्मा ह ’

लगा—यह दाना मद, मुने—एक तीसरे रत्नमान का—यह बताने के बजाय, एक-दूसरे का बताते, फिर ?

तो क्या फिर भी दोना के मुँह से यह बात निकलती ? साचा—महन्त किरपा सागरजी जीवित नहीं पर उन की कही हुई बात चाफ़ी ह, जो मैं यह इन भाल इनसान को सुना दूँ ? लगा—यह जो स्वय ही गुफा के अंदर में भटकने के लिए आया ह, तो मैं क्या कर सकता हूँ

इसलिए जबाब दिया, ‘मुझे पता ह महन्त किरपासागरजी न भो यही बात कही थी । ’

घटुत दिन हुए महाभारत की एक कथा पढ़ी थी कि एक मुनि ने यन कराया

राजा की आर स इक्कीस बल दक्षिणा म मिले, पर मुनि ने वे बल दूसरे ऋषिया का दान कर दिय और राजा से और बल मागे । राजा ने गुस्स म आकर मरी हुई गउएँ दे दी । मुनि ने भी गुस्स म आकर राजा के नाश के लिए और यन आरम्भ किया । वह ज्यो ज्यो गउआ का मास काटकर हवन करता गया, त्पारया राजा का राज्य नष्ट हाता गया

लगा—मैं ने जा बात कही थी वह भी एक मरी हुई गाय का मास काटकर हवन म डालनवाली बात थी, और उस क साथ अभी, इस सामने खड इनसान के मन का स्वग नष्ट हो जायेगा

मा उस वक़्त मरी हुई गाय की तरह लग रही थी

पर कोई भी स्वग शायद भुलावे के परदे में नहीं हाता सच की नग्नता में हाता ह । लगा मैं कुछ भी कहूँ, उस के मन के स्वग को नष्ट नहीं कर सकता था । क्योंकि मेरा बात क जवाब म उस ने स्वय ही कह दिया था, “उन्होने जरूर कहा हागा क्योंकि यह सच ह ।

एक बार यकीन नहीं आया कि म सचमुच उस के स्वग को नष्ट नहीं कर सकता । इसलिए फिर कुछ ठहरकर, कुछ और स्पष्ट-सा कहा “उन्होन यह भी बताया था कि उस पुण्यात्मा को भगवान ने स्वय सपने में दान दिय और हुक्म दिया ’

लगा मैं ने उस के स्वग को अगर अभी नष्ट नहीं किया था, तो भी एक सध जरूर लगा दी थी । और मैं ने कहा ‘भगवान ऐसा हुक्म दन के लिए सिफ किसी पुण्यात्मा का ही चुन सकता ह ’

खयाल था—वह काँपकर पूछेगा—क्या हुक्म ? कसा हुक्म ? पर उस ने कुछ नहीं पूछा । सिफ यह लगा कि वह कुछ काँपा सा जरूर था । फिर वह कुछ दर सामने पडा की तरफ देखता रहा, जिन की टहनिया पल पल झडते पत्ता से नगी-सी हो रहा थी ।

‘हाँ उस पुण्यात्मा को ही मैं ने यह हुक्म देने क लिए चुना था । यह मेरा हुक्म था उस न हमेशा मुझ भगवान समथा ह उस ने कहा ।

लगा—यह कहते हुए न उम का मुँह दीन-सा हो रहा था, और न उस की आंख ज हीन-सी थी ।

याद आया—पाँच छह दिन पहल, जब उस के घर गया था, उस ने भी कुछ ऐसा ही कहा था, ‘मेरे ऐसे करम कभी नहीं हुए कि भगवान मुझे सपने में दशन दते, और कुछ कहते मैं ने सिफ उस का हुक्म माना जिमे मैं ने सारी उम्र भगवान समझा । दान उसे हुए थे, मैं ने सिफ हुक्म माना

लगा—एक साम थी जो मेरे सीने की हड्डिया म अटक गयी थी

वह एमी नेक औरत ह कि मैं अगर उसे सीवा-सादा हुक्म देता, वह रोती और मेर पैर पर गिर पडती कि मैं इस हुक्म का वापस ले लूँ । मैं उम का भगवान

था, पर जो भगवान सामन खिखता हो, उस का यह भी ता कहा जा सकता ह कि हुक्म को वापस ले ले इसलिए मैं ने अपना हुक्म उस को उस भगवान के मुह से सुनवाया, जो दिखता नही । कहा कि मुझे सपने में भगवान के दशन हुए ह और उन्होंने हुक्म दिया है कि तेरा मजीग ”

लगा—एक अनन्त पीडा उम आदमी की छाती में उठी थी । उस ने पेड के एक तने से पीठ लगा ली, और पल भर के लिए अपनी आखें, आखा की पलका के नीचे ढाँप ली ।

फिर उस की आखों की पलकों धीरे से हिली, उस के हाठा की तरह । और उस ने कहा, “मुझे शिव की मूर्ति के आगे चढ़ाकर जब महत् किरपामागरजी ने कहा था कि यह बालक आज मे शिवजी का पुत्र ह उन्होंने सच कहा था । क्या हुआ जो तन उन का था तेरी मा ने जब उन के तन से पुत्र माँगा था तो उन्होंने अपने तन में शिव का मन डालकर उसे पुत्र दिया था

और लगा—अब उस के मुह पर आया हुआ अनन्त दद उस का बल बन गया था । उस ने पेड के तने से लगी हुई पीठ पेड से हटा ली, और एक पड की तरह तन कर खड़ा हो गया । और फिर पेड पर नये सिरे से लगे पत्ता की तरह मुसकरा दिया, “वह मन मरा था । मैं आप शिव हू । मैं ने शिव की तरह जहर का प्याला पिया है ”

उस ने मचमुच जहर का प्याला पिया ह यह सामने दिख रहा था । मैं ने आँखें नीची कर ली ।

“तू सोचता होगा कि तू मेरा पुत्र नही । पर मैं ऐम नही सोचता । हिसाब निफ लोक का नही होता, परलोक का भी हाता ह । असली सयाग तन का नही होता, मन का होता है । तन साथ नही देता था इसलिए तन की जगह मैं ने मन को बरत लिया । उस का तन, मेरा मन, और तू इस सयोग में से पत्ता हुआ । मैं किस तरह कहूँ कि तू मेरा पुत्र नही ”

लगा—मेरा माया हुक् गया था । वह कह रहा था, “मैं ने तेरी मा पर काई एहसान नही किया था । वह बेचारी अब भी समझती ह कि मैं उसे भगवान का रूप होकर मिला हू । पर यह मेरा पाप ह कि मैं ने उसे कभी कुछ और नही बताया । पता नही, उस की आखा में भगवान् का रूप हाकर रहने का लाउच ह ’ वह कहता कहता हैमन्ना लिया और फिर कहने लगा, “तू उम का बेटा है इसलिए तुझे अपना बेटा गमनकर बताऊ हूँ कि मैं ने अपनी जवानी में उस क साथ ब्राह किया था । वह अभी शक्ती में स निक्ला थी कि मैं उस छोड़कर परदेग चग गया था । धन बमाने के लिए । बमाया भी बड़ा, उजाड़ा भी बड़ा । पर धन से जयाग मैं ने अपनेआप को उजाड़ा । एगी बामारी ग्या रि जिग के इलाज के बवन गयाता ने मुझे बताया कि अब मेरा वग कभी नही चलेगा । बीमारी का माया हुआ जब घर लौटा उस नेकमल

के माथे लगने लायक नहीं था। मन फटकारें देता था। पर मैं ने उसे बताया कुछ नहीं। वरस बीत गये। रोज़ देखता था कि वह एक पुत्र के मुँह का तरमती थी। कितनी देर देखता ? उस का कुछ ता कर्जा चुकाना था जसे-तसे उसे तैरा मुँह लिखाना था ”

लगा—उस के पाव धरती से ऊँचे हो गये थे। इतने ऊँचे कि मेरे माथे तक पहुँच गये थे

और शायद उस के पाँव चल रहे थे, मुझे लगा, मेरा माया भी उस के पैरों के साथ-साथ चल रहा था

एक बहुत ही लम्बी राह थी, कुछ नहीं दिख रहा था। शायद शाम का जँघेरा बहुत गाढ़ हो गया था, कि शायद मैं मन्दिर का गुफा में चल रहा था

और फिर एक उजाला-सा हुआ। दखा—उस के हाथ में एक लालटेन थी। शायद उस ने लालटेन अभी जलायी थी

और दखा—लालटेन की चिमनी पर एक भी दाग नहीं था। उम ने चिमनी के शीशा को पोट पाछर उस के सारे दाग उतार दिये थे

और लालटेन की राशनी में देखा—मेरे सामने मेरी ओर बिटर बिटर देखता मेरी मा का मुँह था

मन्दिर के पिछवाड़वाले जगल में से चलता हुआ पता नहीं किस तरह मैं वहाँ उम के घर पहुँच गया था

मेरा बाँहें उस के गले की आर बनी—जमे काँई बहुत अँधियारा गुफा में से निकलने के लिए गुफा का द्वार ढूँढ़ता हूँ

उम की सामें मेरे माथे का छू रही थी वही से बहुत ठण्णी और ताज़ी हवा का झाँका आया हूँ और मेरी सासा में मिल गया हूँ

शायद अब सामने एक कर्म की दूरी पर, कलाम पवत हूँ

बीस

सार के सारे आममान ने जमे धरती को अपने हाथो धोया हो

बादल मेरे पावा के नीचे कुछ रेशम-सा बिछा रहे हूँ

अचानक पर्वों की टहनिया ने मेरे गिद कुछ लपेट-सा दिया हूँ

अभी माथे पर एक ठण्डी फुहार सी पड़ी हूँ, कुछ उड़ते पक्षी सिर के ऊपर से गुजर हैं शायद उड़ोन अपने पखो से कुछ कुहरा पाड़ा हूँ

एक सरमराहट नी भा शायद उन के पखो से झडकर मेरे सीने में पड़ गयी हूँ

सूरज की कुछ किरणें शायद सोयी हुई वफ को जगाने के लिए आयी हूँ।

नलियो का पानी ऐसे टुमककर चल रहा हूँ जमे उम ने परा में चादी की खड़ाऊँ पहनी हुई हा

लगता हूँ—कलास पवत की सारी सुन्दरता, सारी ऊँचाई, और सारा एकाकी पन मेरा हूँ

एक बड़े निमल पानी का सोता मरी माँ व मुँह जमा हूँ, जिम म मेरी परछाई ऊपर रही हूँ

कमल फूल के तालाब को देखकर अनायास ही महन्त किरपामागरजी का खयाल आ गया हूँ

अभी किसी टहनी से एक फूल गिरा था और अडोल एक हथेली का तरह मेरे पैर को छू गया था। एक पल लगा, पैर जम मूर्च्छित-सा हो गया था

दूर वह गुफा दिख रही हूँ जिस के अँधेरे में मैं कई वरम चला हूँ। मेरा खयाल हूँ कोई उम अँधेरे म अब भी लालटेन लेकर खड़ा हूँ

मेरा खयाल हूँ शिव और पावती पत्थर नहीं हुए, सिर्फ वहाँ मंदिर की छत के नीचे, एक जगह खड़े, हाथ के इशारे से बता रहे हूँ कि यह गुफा कलास पवत पर पहुँचती हूँ

लगता हूँ—कलास पवत की सारी सुन्दरता, सारी ऊँचाई और सारा एकाकी-पन मेरा हूँ

आखिरी पक्तियाँ

गणिनहावर की जेब में पड़े हुए साने के सिक्के की तरह हम भी कई लाग—छाटे-छाटे गणिनहावर—साने की डाल जसा किसी न किसी सोच का सिक्का जेब म डाले घूमते हैं गणिनहावर बरमा उम घड़ी का इन्तज़ार करता रहा—जिम घड़ी वह साने का सिक्का दान कर सकता। वह घड़ी उस की जिन्दगी में नहीं आयी। सिक्का उस की जेब में ही पड़ा रहा। और जिन्दगी की आखिरी साम तक उम अपनी जेब का बाध बोना पड़ा। गायद हमारी भी, बड़प्पा का, यही तबदार हूँ

बहते हूँ गणिनहावर जिम होल में दा वक्त गेटी खाता था, रोटी की मेज़ पर रोज़ सान का एक सिक्का रखकर राटी खाना शुरू करता और आखिर मेज़ से उठने लगता तो वह साने का सिक्का फिर जेब में डाल लेता। बरसा बाद एग बरे ने उम स यह भेद पूछने की जुरत की। उस ने साचा था कि यह कोई गणिनहावर की खानदानी रसम होगी। पर गणिनहावर ने उमे अपनी एक अजीब हसरत बतायी—
“मैं ने आज तक कभी दान नहीं दिया पर यह सान का सिक्का मैं रोज़ इस आम से जेब में से निबालता हूँ कि मैं उम पहला घड़ी यह सिक्का दान करूँगा तिस तिस में

यात्री

किसी अंगरेज को घाड़ा, औरता और कुत्ता के मित्रा विनी चीज के बारे में बात करते सुनूँगा ।

गोपिनहावर होने का कोई दावा नहीं—यह सिर्फ आग-प्यास दूर-दूर तक पड़े हुए सिब की बात है । मारलिटी के सीमित अर्थों, और सिकुड़े हुए घेरों की बात है । और उस दृष्टिकोण की बात, जो बहुसंख्यकों की आत्मता में गुमार हाता स्वीकृत माना जाता है पर जो गिने चुने लोगों का चिन्तन हाता तो अस्वीकृत ।

('डेमीक्रेन्सी' सिफ उन्नत और विचारणीय लोगों का मुआफिक आती है पर मानसिक और आर्थिक सौर पर पिछड़े हुए लोगों को यह नसीब नहीं हो सकती । भूय बहुसंख्यक के मुख फमले वक्ता की लगाम सभालते हैं—और जिन्दगी की विनाश सीमाएँ उन के खुरों के नीचे कुचली जाती हैं । ये लोग आपरस्ट हाता तो एक खड की तरह हाँके जाने हैं, 'आपरसर' हाता तो एक लठी की शकल में हाँकते हैं । हात्तों दोनों ही भयानक हैं ।)

नीतियों न सीमित अर्थोंवाले इन्सान से विनाश अर्थोंवाले इन्सान को अलग करने के लिए सुपरमन शक्त माना था मैं ने ऐसा कोई शब्द नहीं माना पर मेरे सब से पहले नावल के डाक्टर दब को कुछ ऐसे ही अर्थों में लिया गया था । हमेशा सोचती रही हूँ क्या यथायवाद के अर्थ इतने सिकुड़ गये हैं ? क्या बहुसंख्यक का जाना-पहचाना जो कुछ है सिफ वही यथाय है ? और क्या अल्पसंख्यक कहे जानेवाले लोगों का अमन यथाय नहीं ?

पर सच की तलाश जिस की प्यास हो और सिफ 'सर्वाइवल' जिस की तसल्ली न हो यकीनन वह मारलिटी के जाने-पहचाने अर्थों से टूट जायगा । डाक्टर दब की ममता पर, 'एक सवाल की रेखा पर 'बन्द दरवाजा की करमी पर, 'एक थी अनीता' की अनीता पर घरती, सागर, सीपिपाँ की चेतना पर 'चक्क नम्बर छत्तीस' की आत्मा पर और 'एरियल' की एकता पर, इस जुरत का दाव है । ये दोगी है क्वाकि सिफ सर्वाइवल इन्हें कबूल नहीं था ।

अधरे म भोगे जाते झूठ के बजाय इन्होंने उजाल में सच को भोगना चाहा—चाहे इम्मारत कहलवाने की कीमत ली । अधरे की मारलिटी स उजाले की इम्मारलिटी इन का चुनाव था ।

सुपर जमा कोई शक्त मैं इन पाना के साथ जोड़ना नहीं चाहती—इन का खजू और उस का इजहार सिफ एक लेखक के तौर पर जेब में डाले हुए साचो के सिक्का का छचने का यत्न है—इस आम से कि अगर बहुत नहीं तो शायद कुछ लोग, छोड़ा, औरता और कुत्तों के मित्रा किसी और चीज की बान भी सुनना चाहेंगे (पश्चिमी स्तर के मुकाबले म जो पूर्वी स्तर के अनुसार कहना चाहें तो औरत, पैसा और परलोक कहा जा सकता है ।)

मैं ने अपने नाबेला में जिन औरत की बात कही ह, वह सिर्फ 'सेक्म चिह्न' के अर्थों से टूटकर चलती ह, इसलिए वह अलग ह। और इसलिए चाहे वह 'एरियल की एकता (एक औरत) के मुँह से हा या 'जलावतन के मलिक (एक मर्) के मुँह से—वह इनसान की बात ह। एकता का दुस्मान्त ह कि उस के साबुत अस्तित्व के लिए, इनसान का सिफ टुकड़ा न बनूलेवाले समाज की व्यवस्था में, कोई जगह नही। और मलिक का दुस्मान्त ह कि उस की उम्र से बड़े उस के मानसिक स्तर के वास्ते, कुछ लकीरा में लिपटे हुए समाज के ढाँचे में, उस की कोई पूर्ति नहा।

सचाई का जिनामु मद भी हा सकता है और औरत भा। सिफ सच की परिभाषा अपने-अपने मानसिक विकास के अनुसार होती ह

इस नये नावल का नायक एक मद ह—काई बीस बरसा की उम्र का, ज़रानी की पहली सीढ़ी पर खड़े होकर अपने वजूद को एक बेबसी से देखता, अपने माहौल को घूरता, और उस का कारण बने लागा से क्रुद्ध। अपने क्रोध को वह आग की तरह जलाता ह और उस के अगारा से खेलता, अपने हाथ पर भी छाले डलवाता ह और अगर बस चले तो उस की चिनगारी उस की झोली में भी फेंकता ह जिन का अस्तित्व उस के अस्तित्व से सम्बन्धित है यह सचाई को उमी एक बाण से देखने का प्रतिक्रम ह, जिस बाण से देखने की आत्त उसे उस के जन्म से मिली ह—और जिस बाण से यह अक्सर देखी जाती ह।

'ग्राथ' इनसान को एक कोण पर नहीं खड़ा हाने देती। यह नायक ग्राथ का चिह्न ह, इसलिए जब बकत आता ह, वह किमा और कोण पर खड़ा हाकर सचाई को देखने से इनकार नहीं करता। न उस को समझने से इनकार करता है।

जिन्दगी अपने जाने पहचाने अर्थों में जिस दायरे का नाम ह उस को एक नज़म में मैं ने कुछ इस तरह कहा था

छे बरस पूरे ते इक अधा
जेल दा इक काठडी
/ कि बन्दा बठ उठ सके
ते निमल वा हो लवे,
'रव दी इक बही रोटी
सबर' दा बकल सलूणा
चाहवे ताँ गजपुज के
उह दावे उग खा लवे
ते जेल दे हाते दी गुठठे
इक छप्पड जान दा
कि बन्दा हथ मुँह धावे

पर पान का खड पाना का आहड बनाना पान का हतक है और उस व
बासीपन का चुल्लू भर पीकर एक तसि हासिल करना इनसान की हतक । और कुछ
लोग ऐसे हाने ह—जा यह हतक नहीं कर सकते

इनसान के ऊंचे मानसिक स्तर की सम्भावना का अगर एक पक्षि में कहना ह
तो कुछ एम कह सकते हू—इनसान हर खाई के ऊपर आप ही एक पुल बन
सकता ह आप ही उस पुल पर स गुजरनेवाला और आप ही अपने से आगे पहुँ
चनेवाला ।

इन नावल के नायक को मैं उस की जन्म-कहानी स लेकर जानती ह उस
दिन से जिस दिन उस का सामुजो के किसी डेरे में बढाया गया था—यह बहुत बरसा
की बात है । अब दखे हुए बरसा गुजर गये, पर अब भी याद रहूँ तो बडे तरासे
हुए नक्शावाला उस का साबला चेहरा, उस की उदासी समेत आत्मा के आगे आ
जाता ह । उस क बचपन का, उस का बार-बार कुछ सोचता हुआ चेहरा मुझे याद
है पर नहीं जानती कि उस ने अपनी भरी जवानी म जिंदगी का कितना हसकर
कबूल किया, कितना रोकर । मेरे नावल के पन्नों में चन्ता हुआ वह आखिर में जिस
अवस्था का पहुचता ह वह मेरी कल्पना ह ।

रवायती मय्यार खुले आसमानो की सचाई नहीं हाते, यह फालमरूफ की
एक मित्रुनी हुई दाना हाते ह । 'फालमरूफ म कोई चाहे ता चाद सितारे भी जड
सकता ह पर चाँद सितारा की लौ नहीं जल सकता

इस नावल के नायक का मैं ने इसी लिए यानी कहा ह क्योंकि सिर को छूती
छन का तोडकर वह चाद सितारो की लौ की यात्रा आरम्भ करता ह । अंधर स पदा

-
- १ छह वरम पूरे और एक आधा
जेउ की एक कागरी
कि आत्मा बैठ-उठ सके
आर निवृत्त भी हो ले,
'मनु' की एक बासा रोटी
'सम्र' का सलाना बजरुड
वह चाहे तो इसे ही
दोनों वक्त खा ले
और जल के अहाने के पास
शान का एक जोहड़
कि आत्मी हाथ में ट धोये
(उस के मच्छर नितारकर)
और घूँट भर पी भा ले ।

हुई एक तीखी नफरत में से उस की यह यात्रा गुरु होती है—यहां नफरत उस का हथियार है, जिस के साथ वह सिंग के ऊपर तनी हुई छत को तोड़ने का यत्न करता है

छत का तोड़ना, या मोला लम्बी एक गुफा को लाघना एक ही अर्थों में है—

सिफ एक पक्षि में बहना हो ता वह सकती है कि यह चांद सितारा की लौ के आशिकों के लिए, चांद सितारा की लौ के एक आगिक की कहानी है । अपने से आगे अपने तक पहुँचने की यात्रा ।



जगला बूटी	२२३
गुलियाना का एक खेत	२३१
बू १ १	२३८
अननबी	२४५
एक निइवास	२५०
लटिया की छोकरी	२५७
गोंजे की बछी	२६५
पाँच बरस लम्बी सड़क	२७७
एक मर्द एक औरत	२८५
शाह का बजरो	२९३
दो गिड़कियों	२९९
एक शहर की मौत	३११

जगली बूटी

अगूरी, भेरे पडासिया के पडासियों के पडासिया के घर, उन के बड़े ही पुगने मौकर की बिलगुल नयी बीबी है। एक तो नयी इस बात से कि वह अपने पति की दूसरी बीबी है सा उस का पति 'दुहाजू' हुआ। जू का मतलब अगर 'जून' हो तो इस का पूरा मतलब निबला 'दूसरी जून में पड चुका आदमी,' यानी दूसरे विवाह की जून में, और अगूरी क्योंकि अभी विवाह की पहली जून में ही ह, यानी पहली विवाह की जून में, इसलिए नयी हुई। और दूसर वह इस बात से भी नयी ह कि उस का गौना आये अभी जितने महीने हुए ह, वे सारे महीने मिलकर भी एक साल नहीं बनेंगे।

पाँच-छह साल हुए, प्रभाती जब अपने मालिकों से छुट्टी लेकर अपनी पहली पत्नी की 'किरिया करने के लिए अपने गांव गया था, तो कहते ह कि किरियावाले दिन इस अगूरी के बाप ने उस का अगाछा निचोड दिया था। किसी भी मद का यह अगाछा भले ही अपनी पत्नी की मौत पर आँसुआ से नहीं भीगा होता चौबे दिन या किरिया के दिन नहाकर वदन पाछने के बाद वह अगोछा पानी से ही भीगा हाता ह, पर इस साधारण-सी गांव की रस्म से किसी और लडकी का बाप उठकर जब यह अगाछा निचोड देता है ता जैसे वह रहा होता है—“उस मरनेवाली की जगह में तुम्हें अपनी बेटी नेता हूँ और अब तुम्हें रोने का जरूरत नहीं, मैं ने तुम्हारा आँसुआ से भीगा हुआ अगाछा भी सुखा दिया ह।’

इस तरह प्रभाती का इस अगूरी के साथ दूसरा विवाह हो गया था। पर एक तो अगूरी अभी आयु की बहुत छाटी थी, और दूसरे अगूरी को माँ गठिया के रोग से जुडी हुई था इसलिए गौने की बात पांच साला पर जा पडी थी। फिर एक-एक कर पाँच साल भी निबन्ध गये थे। और इस साल जब प्रभाती अपने मालिकों से छुट्टी लेकर अपने गांव गौना लेने गया था ता अपने मालिकों को पहले ही कह गया था कि या तो वह अपनी बहू को भी साथ लायेगा और शहर में अपने साथ रखेगा, या फिर वह भी गांव से नहीं लायेगा। मालिक पहले तो दलील करने लगे थे कि एक प्रभाती की जगह अपनी रमोई में से ब दो जना की रोगी नहीं देना चाहते थे। पर जब प्रभाती ने यह बात कहा कि वह कोठरी के पीछेवाली बच्ची जगह का पोतकर, अपना अलग चूल्हा बनायेगी, अपना पकायेगा, अपना खायेगी, ता उस के मालिक यह बात मान गये थे। गा अगूरी शहर आ गयी था। चाहे अगूरी ने शहर आकर कुछ दिन महल्ले के मदों से तो क्या जोरता में भी घूँघट न उगाया था, पर फिर धीरे धीरे उस का घूँघट क्षीना हो

गया था। वह पैरा में चाँदी की साजरें पहनकर छनक-छनक करती महल्ले की रौनक बन गयी थी। एक साजर उस के पावा में पहनी होती, एक उस की हँसी में। चाहे वह तिन का अधिकतर हिम्सा अपनी कोठरी में ही रहती थी पर जब भी बाहर निकलती, एक रौनक उस के पावों के साथ माथ चलती थी।

“यह क्या पहना ह, अगूरी ?”

“यह तो मेरे पैरों की छल चूची ह।”

“और यह उँगलिया में ?”

“यह तो बिछुआ ह।”

“और यह बाँहों में ?”

“यह तो पछेला है।”

“और माथे पर ?”

“आलीबंद कहने है इसे।”

“आज तुम ने कमर में कुछ नहीं पहना ?”

तगड़ी बहुत भारी लगती ह कल को पहनूँगी। आज सा मैं ने तीक भी नहीं पहना। उस का टाका टूट गया ह। कल सहर में जाऊँगी, टाँका भी गटाऊँगी और नाक की कील भी लाऊँगी। मेरा नाक को नक्सा भा था, इत्ता बडा, मेरी साम ने दिया नही।

इस तरह अगूरी अपने चादा के गहने एक नक्खरे से पहनती थी, एक नक्खरे से निगाती थी।

पीछे जय मौसम फिरा था, अगूरी का अपनी छोटी कोठरी में दम घुटने लगा था। वह बहुत बार मेरे घर के सामने आ बठती थी। मेरे घर के आगे नीम के बड़े-बड़े पड ह और इन पेडा के पाम जरा ऊँची जगह पर एक पुराना कुआँ ह। चाहे महल्ले का कोई भी आदमी इस कुएँ से पानी नहीं भरता पर इस के पार एक सरकारी सडक बन रही ह और उस सडक के मजदूर कई बार इस कुएँ को चला लेते ह जिस से कुएँ के गिद अकसर पानी गिरा हाता ह और यह जगह बडी ठण्डी रहती ह।

“क्या पन्ती हो, बाबी जी ?” एक दिन अगूरी जब आयी, मैं नीम के पेडों के नीचे बठकर एक किताब पढ़ रही थी।

‘तुम पढ़ागी ?’

‘मेरे का पढ़ना नही आता।’

“सीख लो।

“ना।

“क्यों ?”

‘औरता को पाप लगता ह पढ़ने से।’

“औरत को पाप लगता ह, मर को नही लगता ?”

“ना, मा को नहीं लगता ?”

“यह तुम्हें किम ने कहा ह ?”

“मैं जानती हूँ ।”

“फिर मैं ता पता हूँ । मुने पाप लगेगा ?”

“महर की औरत का पाप नहीं लगता, गांव की औरत का पाप लगता ह ।”

मैं भी हूँ पटो और अगूरी भी । अगूरी ने जो कुछ सीखा-मुना हुआ था, उस में उसे कोई गका नहीं थी । इसलिए मैं ने उस से कुछ न कहा । वह अगर हँसती-नेलती अपनी जिदगा बं दायरे में मुसी रह सकती थी ता उस बं लिए यही ठाक था । बने मैं अगूरी के मुँह की आर ध्यान लगाकर दगती रही । गहरे माँवले रंग में उस बं वनन का माम गुँथा हुआ था । कहते ह—जोरत आटे की लोई हाती ह । पर बरपा के वनन का मास उस ढीले आगे की तरह हाता ह जिम की रोटी कभी भी गाल नहीं बनती और बइयों के बदन का माम बिलगुल गमोर आटे जमा, जिम बेलने से फटाया नहीं जा सकता । सिफ़ किमो किमा के बदा का माम इतना सत्त गुँथा हाता ह कि रांग ता क्या चाहे पूरियां बेग ला । मैं अगूरी क मुँह की आर देखती रही, अगूरी की छाती की आर, अगूरी की पिण्डियों की आर वह इतने सग्त मदे की तरह गुँथी हुई थी कि जिम से मठरियां तला जा सकती थी और मैं ने इस अगूरा का प्रमाता भी देखा हुआ था, ठिगने ब्रद का, ढलने हुए मुँह का, कसोर जगा । और फिर अगूरी के रूप की आर देखकर मुझे उस के साविन् बं वार में एक अजीब तुलना सूझा कि प्रमाती असल में आटे की इस घना गुँथी लोई का पवाकर माने का हकदार नहा—वह इस लोई को ढक्कर रखनेवाला कठकत ह । इस तुलना से मुझे खु ही हँसी आ गयी । पर मैं अगूरा को इस तुलना का आभाम नहीं दना चाहती थी । इस लिए उस से मैं उस के गांव की छाटी-छोटा बातें करने लगी ।

माँ-बाप की बहन भाइया की, और खेता-खलिहाना की बातें करते हुए मैं ने उस से पछा ‘अगूरी, तुम्हारे गांव में शादी बने हाती ह ?’

“लडकी छोटी-सी होनी ह, पाँच-सात साल की, जब वह किसी के पाँव पूज लेती ह ।’

“कस पूजती ह पाँव ?”

“लडका का बाप जाता ह फूला की एक थाली ले जाता ह साथ में रुपये, और लडक के आगे रख देता ह ।’

“यह तो एक तरह स बाप न पाव पूज लिये । लडकी ने कसे पूजे ?”

“लडकी की तरफ से ता पूजे ।”

“पर लडकी ने ता उसे दखा भी नहीं ?”

“लडकियां नहीं दखती ।

‘लडकियां अपने हानेवाले खाविन्द को नहीं देखती ?’

“ना।”

“कोई भी लडकी नहीं देखती ?”

ना।”

पहले तो अगूरी ने ‘ना’ कर दा पर फिर कुछ सोच साचकर कहने लगी, “जा लडकियाँ प्रेम करती ह, वे देखती ह।

“तुम्हारे गाव में लडकिया प्रेम करता ह ?”

“कोई-काई।

‘जो प्रेम करती ह उन को पाप नहीं लगता ? मुझे असल में अगरी की वह बात स्मरण हो आयी थी कि औरत को पढ़ने से पाप लगता ह। इसलिए मैं ने साचा कि उम हिमाच से प्रेम करने से भी पाप लगता होगा।

पाप लगता ह बडा पाप लगता ह। अगूरी ने जल्दी मे कहा।

“अगर पाप लगता ह तो फिर वे क्या प्रेम करती ह ?

“जे ता बात यह होती ह कि कोई आदमी जय किसी छाकरी को कुछ मिला देता ह तो वह उम मे प्रेम करने लग जाता ह।

कोई क्या खिला देता ह उम को ?

‘एक जगली बूटी होती ह। बस वही पान में डालकर या मिठाई में डालकर खिला देता ह। छाकरी उमे प्रेम करने लग जाती ह। फिर उस वही अच्छा लगता ह दुनिया का और कुछ भी अच्छा नहीं लगता।’

‘सच ?

“मैं जानती हू, मैं ने अपनी आँखो से देखा ह।”

‘कैसे देखा था ?’

मेरी एक सखी थी। इत्ती उड़ी था मेर से।’

‘फिर ?’

‘फिर क्या ? वह ता पागल हो गया उस के पीछे। सहर चली गयी उस के साथ।

यह तुम्हें कैसे मालूम ह कि तरी सखी को उस ने बूटी खिलायी थी ?

‘बरफी में डालकर खिलायी थी। जोर नहीं तो क्या वह ऐसे हा अपने मा बाप को छोडकर चली जाती ? वह उस को बहुत चीजें लाकर दता था। सहर से धोती लाता था, चूडिया भी लाता था शीशे की और मोतियो की माला भी।

‘ये तो चीजें हुइ न। पर यह तुम्ह कैसे मालूम हुआ कि उस ने जगली बूटी खिलायी थी।’

नहीं खिलायी थी तो फिर वह उस को प्रेम क्या करने लग गयी ?’

‘प्रेम तो या भी हो जाता ह।’

नहीं एमे नहीं होता। जिम से मा-बाप बुरा मान जायें भला उस मे प्रेम कैसे

हो सकता है ?”

‘तू ने वह जगला बूनी देखी है ?’

‘मैं ने नहीं देखी । वा ता बड़ी दूर से लाते हैं । फिर छिपाकर मिठाई में डाल देते हैं, या पान में डाल देते हैं । मेरी मा ने तो पहले ही बता दिया था कि किसी के हाथ से मिठाई नहीं खाना ।’

तू ने बहुत अच्छा किया कि किसी के हाथ से मिठाई नहीं खायी । पर तेरी उस सखी ने कैसे खा ला ?”

‘अपना किया पायेगी ।’

किया पायेगी ।’ कहने को तो अगूरी ने कह दिया पर फिर शायद उसे सहेली का स्नेह आ गया या तरस आ गया, दुखे हुए मन से कहने लगी बावनी हो गयी था बेचारी । बालो मे कधी भी नहीं लगाती थी । रात का उठ-उठकर गाने गाती थी ।’

क्या गाती थी ?

‘पता नहीं क्या गाती थी । जा कोई बूटी खा लेती हैं बहुत गाती हैं । राती भी बहुत हैं ।’

वात गाने से रान पर आ पहुची थी । इसलिए मैं ने अगूरी से और कुछ न पूछा ।

और अब बड़ थोड़े ही दिना की बात है । एक दिन अगूरी नीम के पेड़ के नीचे चुपचाप मेर पास आ खटी हुई । पहले जब अगूरी आया करती थी तो छन छन करती, बीस गज दूर से ही उस के आने की आवाज सुनाई दे जाती थी, पर आज उस के परा की आजर पता नहीं कहा खायी हुई थी । मैं ने बिताब से निर उठाया और पूछा “क्या बात है, अगूरी ?

अगूरी पहले जिननी ही दर मेरी ओर देखता रही फिर धीरे से कहने लगी बीबीजी, मुझे पढ़ना सिखा दो ।’

“क्या हुआ अगूरी ?

मुझ नाम लिखना सिखा दो ।

किसी का खत लिखोगी ?’

अगूरी ने उत्तर न दिया एकटक मेर मुँह की ओर देखती रही ।

‘पाप नहीं लगा पढ़ने से ? मैं ने फिर पूछा ।

अगूरी ने फिर भी जवाब न दिया और एकटक सामने आममान की ओर देखने लगी ।

यह दुपहर की बात था । मैं अगूरी को नीम के पेड़ के नीचे बड़ी छोड़कर अन्दर आ गयी थी । शाम का फिर वही मैं बाहर निकला, ता देखा, अगूरी अब भी नीम के पेड़ के नीचे बठी हुई थी । बड़ी सिमटी हुई थी । शायद इसलिए कि शाम की ठण्डी हवा देह में थोड़ी थोड़ी कंपकंपी छेड़ रही थी ।

जगली बूरी

लटा को भिगा दिया । और फिर इन आँसुओं ने वह रहस्य उस के होठों का भिगा दिया । अगूरा के मुँह से निकलने अन्तर भी गीले थे 'मुझे कसम लगे जो मैं ने उस के हाथ से कभी मिठाई खायी हो । मैं ने पान भी कभी नहीं खाया । सिर्फ चाय जाने उस ने चाय में ही ”

और आगे अगूरी की सारी आवाज़ उस के आसुआ में डूब गयी ।

गुलियाना का एक खत

दहनी पत्ता से भर गयी थी पर उस पर फूट नहीं लगने थे। मैं रोज पत्तो का मुह देखती थी और साचती थी कि चम्पा कब खिलेगी। गमला कितना भी बग हा, पर गमले में चम्पा नहीं फूलता—मुझे एक माली न बताया था और कहा था कि इस पौधे की जटा की धरनी की ज़रूरत होती है। और मैं उस पौधे को गमले में से निकालकर धरती में राख रही थी कि एक औरत मुझ से मिलने के लिए आयी।

“तुम्हें कहा नहा स पूछनी जोर कहा-नहा से खोजती आयी हूँ।”

तुम ? नीली आँखोंवाली सुन्दरी ?

“मेरा नाम गुलियाना है।”

“कूट-मी औरत।

“पर लाहे के पैरा चक्कर पहुँचा हूँ। मुझे दा साल हाने को जाये है चलते हुए।”

“किम देग से चली हो ?”

“यूगास्लाविया स।”

“भारत में आये कितना समय हुआ ?

एक महीना। बहुत लोग से मिली हूँ। कुछ औरतों मे बड़ी चाह से मिलती हूँ। तुम से मिले बगैर मुझे जाना नहीं था इसलिए कल से तुम्हारा पता पूछ रही थी।”

मैं ने गुलियाना के लिए चाय बनायी और चाय का प्याग उसे देते हुए भूरे बाल की एक लट उस के माथे से हटाया और उस की नीली आँखों में देखा और कहा, “अच्छा, अब बताओ गुलियाना। तुम्हारे पाव लोहे के ही सही, पर ये क्या अभी तुम्हारे हुस्न और तुम्हारी जवानी का भार उठाकर थके नहीं ? ये देग-देगान्तर में भटकने क्या खोज रहे हैं ?”

गुलियाना ने एक लम्बी साँस लेकर मुसकरा दिया। जय विभी की हँसी में एक विश्वास घुला हुआ हो, उस समय उस की आँखों में जो चमक उतर आता है, मैं ने वह चमक गुलियाना की आँखा में देखी।

‘मैं ने अभी तक लिना कुछ नहीं, पर लिखना बहुत कुछ चाहती हूँ। अगर कुछ भी लिखन से पहले मैं यह दुनिया देखना चाहता हूँ। अभी बहुत दुनिया बाकी पनी है जा मैं ने देखी नहीं है, इसलिए मैं अभी थकने की नहीं। पहले चली गयी

“ईरान में। मैं ऐतिहासिक इमारतों का दूर दूर तक जाकर देखना चाहती थी, पर मेरे होटलवाला ने मुझे कहीं भी अकेले जाने से मना कर दिया। मैं वहां दिन में भी अकेले नहीं घूम सकती थी।”

“फिर ?”

“बीच-बीच में कुछ अच्छे लोग भी होते हैं। उसी होटल में एक आदमी ठहरा हुआ था जिस के पास अपनी गाड़ी थी। उस ने मुझ से कहा कि जब तक वह होटल में है, मैं उस की गाड़ी ले जाया करूँ। वह मेरे साथ कभी कहीं न गया, पर उस ने अपनी गाड़ी मुझे दे दी। ड्राइवर भी दे दिया। मुझे वह सहारा ओढ़ना पड़ा। पर ऐसा कोई भी सहारा हमें क्या ओढ़ना पड़े ?”

“जापान में भी मुश्किल आयी ?”

“वहाँ मुझे सब से बड़ी मुश्किल पड़ी। सिर्फ एक रात एक धरावी ने मेरे कमरे का दरवाजा खटखटाया था। मैं ने उसी समय कमरे में से टेलिफोन कर के होटल वालों को बुला लिया था। एक बार फ्रांस में जाने क्या हो जाता, अगर कहीं जोरो की बरसात न शुरू हो गया होती। मैं एक बगीचे में बठी हुई थी। सामने कुछ दूरी पर एक पहाड़ था। मैं वहाँ जाना चाहती थी। दो आदमी काफी देर से मेरा पीछा कर रहे थे। मैं जानती थी कि अगर मैं पहाड़ की किसी निजन जगह पर चली गयी, तो ये आदमी वहाँ जाकर जाने क्या करें। पर मेरे दिल में गुस्सा खोल रहा था कि मैं इन गुण्डों से डरकर पहाड़ पर क्या न जाऊँ। इसलिए मैं बगीचे में से उठकर उस तरफ चले पड़ी। कुछ दूर गयी थी कि जोरो से बरपात होने लगी। मुझे अपने होटल में लौटना पड़ा। पर यह सब गलत है। मैं यही साचती हुई चले जाती हूँ कि आखिर यह सब अभी तक इतना गलत क्या बना हुआ है जब मनुष्य अपने को इतना सम्य और इतना उन्नत मानने लगा है।”

‘तुम अपने गुजारे के लिए क्या करती हो गुल ?’

“छोटे छोटे सफरनामों लिखता हूँ। छपने के लिए अपने दश में भज दती हूँ। कुछ पैसे मिल जाते हैं। कुछ अनुवाद कर के भी कमा लेती हूँ। मुझे फ्रेंच अच्छी आती है। मैं फ्रेंच की पुस्तकों का अपनी भाषा में अनुवाद करती हूँ। वापस जाकर मैं एक बड़ा सफरनामा लिखूंगी। शायद गीत भी लिखूँ। आजकल जब मैं सोती हूँ, तो एक गीत मेरे दिल में मँजराने लगता है। पर जब मैं जागती हूँ तो मैं उसे खोज नहीं पाती।’

‘अच्छा गुलियाना और बातें छाँटा मुझे उस गीत की बात सुनाओ। मैं ने गीत नहीं कहा गीत का बात कही है।’

बात ही तो मुझे अभी तक मालूम नहीं है। मैं वह बात खोज रहा हूँ जिस में स गीत उगते हैं। बिना बात के ही दा पत्तियाँ जाती हैं। इस से आगे नहीं जुटती। बात के बिना भला गीत कैसे जुड़गा ? गुलियाना ने कहा और एक टूटे हुए गीत की

तरह मेरी जोर देखा । फिर गुलियाना ने गीत की दा कड़िया सुनायी—

“आज किम ने आसमान का जादू तोड़ा ?
आज किस ने तारों का गुच्छा उतारा ?
और चाबियों के गुच्छे की तरह बाधा,
मेरी कमर से चाबिया का बाधा ?

और गुलियाना ने अपनी कमर की आर सकेत कर मुझ से कहा—‘ यहाँ चाबिया के गुच्छे की तरह मुझे कई बार तारे बंधे हुए महसूस होते हैं । ’

मैं गुलियाना के चेहर की आर देखने लगी । तिजारिया की चाबियों का चांदी के छरलों में पिरोकर बना गुच्छा उम ने अपनी कमर में बांधने से इनकार कर दिया था और उम की जगह वह तारा के गुच्छे अपनी कमर में बाधना चाहती थी । गुलियाना के चेहरे की आर देखती हुई मैं साधने लगी कि इस घरती पर वे घर बच बनेंगे जिन के दरवाज़ तारों की चाबिया स खुलते हैं ।

तुम क्या साध रहा है । ’

‘ साधती थी कि तुम्हारे दर में भी ओरतें अपनी कमर में चाबिया का गुच्छा बाधती हूँ ? ’

हमारी मा-दादिया अपनी कमर में चाबिया बाधा करती थी । ’

‘ चाबिया स घर का खयाल आता है और घर स ओरत के आदिम सपने का । ’

देखा, इस सपने की खाजती-खाजती में कहा पहुँच गयी हूँ । अब मैं अपने गीतों का यह सपना अमानत द जाऊंगी ।

“घरती के सिर तुम्हारा कज और बड़ जायेगा । ”

कज की बात सुनकर गुलियाना हँसने लगी । उम की हँसी उस लेनदार की तरह थी जिस के कागज़ा पर लिखा हुई कज की सागी गवाहियाँ झूठी निकल आयी हों ।

गुलियाना के चेहर की आर देखते मुझे ऐसा लगा कि थाने के बिसी सिपाही का अगर गुलियाना का हुलिया अपने कागज़ा म दज करना पड़े, तो वह इस तरह लिखेगा—

नाम गुलियाना सायेनोबिया ।

बाप का नाम निकोलियन सायेनोबिया ।

जन्म गहर मसेनानिया ।

व्रद पाच फुट तान इंच ।

बालों का रंग भूरा ।

आँखों का रंग सलेटी ।

पहचान का निशान उस क निचले हाठ पर एक तिल है और बायीं आर की भी पर छाटे-से ज़रम का निशान ह ।

जीर गुलियाना की बातें सुनने हुए मुझे इस तरह लगा कि किसी दिलवाले इन्सान का अगर अपनी जिन्दगी के कागज़ा में गुलियाना का हुलिया दज करना हो, ता वह इस तरह लिखेगा—

नाम फूल की महक-सी एक औरत ।

बाप का नाम इन्सान का एक सपना ।

जन्म शहर धरती का बड़ी ज़रखेज मिट्टी ।

कद उस का माथा तारा से छूता ह ।

बाला का रंग धरती के रंग जसा ।

आखा का रंग आममान के रंग जमा ।

पहचान का निशान उस के होठा पर जिन्दगी की प्यास ह और उस के रोम-रोम पर सपना का बौर पडा हुआ ह ।

हरानी की बात यह था कि जिन्दगी ने गुलियाना को जन्म दिया था पर जन्म देकर उस की खबर पूछना भूल गयी थी । पर मैं हरान नही थी, क्याकि मुझे मालूम था कि जिन्दगी को बिसार देनेवाली बटी पुरानी आदत है । मैं ने हँसकर गुलियाना से कहा “हमारे देश म एक बूटी होती ह जिसे हम ब्राह्मी बूटी कहने ह । हमारी पुरानी किताबा में लिखा हुआ ह कि ब्राह्मी बूटी पीसकर जा कुछ दिन पी ले, उस की स्मरणशक्ति लौट आती ह । मेरा खयाल ह कि जिन्दगी को ब्राह्मी बूटी पीसकर पीना चाहिए ।

गुलियाना इस पची और कहने लगा, तुम जब कोई प्यारा गीत लिखती हा, या कोई भी जब कोई बडा प्यारा लिखता ह तो वह जगल म स ब्राह्मी बूटी की पत्तियाँ ही ताड रहा होता ह । शायद कभी वह दिन आयेगा जब जिन्दगी को हम अपनी बूटी पिग देंगे कि उसे भूल जान की यह आदत नही रहेगी ।”

गुलियाना उस दिन चली गयी, पर ब्राह्मी बूटी की बात पीछे छोड गयी । मैं जब भी कही कोई प्यारा गीत पढ़ती, मुझे उस की बात याद आ जाती कि हम सब मन के जगल में से ब्राह्मी बूटी की पत्तियाँ बीन रहे ह । हम किसी दिन जिन्दगी को शायद इतनी बूटी पिला देंगे कि उसे हम याद आ जायेंगे ।

पाच महीने होने की ह । मुझे गुलियाना का एक भी खत नही मिला । और अब महीने पर महीने बीतते जायेंगे गुलियाना का खत कभी नही आयेगा । क्याकि आज के अबबार में यह खबर छपी हुई ह कि दो दशा की सीमा पर कुछ फौजिया ने एक परदगी औरत को सेतो में घेर लिया । औरत को बड़ी चिन्ताजनक हालत म अस्पताल पहुँचाया गया । अस्पताल म पहुँचते ही उस की मौत हो गयी । उस का पासपोर्ट और उस के कागज़ आग से जली हुई हालत में मिल । औरत का कद पाच

फुट तीन इंच ह । उम के बाला का रंग भूरा और आखा का रंग सलेटी ह । उस के निचले होठ पर एक तिल ह और उस की बायीं भों पर एक छोटे-से ज़रम का निगान ह ।

यह अखवार की खबर नहीं । साच रही हूँ यह गुलियाना का एक खत ह । ज़िन्दगी के घर से जाते हुए उस ने ज़िन्दगी का एक खत लिखा है और उस ने खत में ज़िन्दगी से सब से पहला सवाल पूछा ह कि आखिर इस घरती में उस फूल को आने का अधिकार क्या नहीं दिया जाता जिस का नाम औरत ह ? और साथ ही उस ने पूछा ह कि सम्पत्ता का वह युग कब आयेगा जब औरत की मरज़ी के बिना कोई मर्द किसी औरत के जिस्म का हाथ नहीं लगा सकेगा ? और तीसरा सवाल उस ने यह पूछा है कि जिस घर का दरवाज़ा खोलने के लिए उस ने अपनी कमर में तांग के गुच्छे को चाबिया के गुच्छे की तरह बाधा था, उस घर का दरवाज़ा कहा ह ?

घाड़ी हिनहिनायी । गुलेरी दौडकर आदर से बाहर आयी । उस ने घाड़ी की आवाज पहचान ली थी । वह घोड़ी उस के मायके की थी । उस ने घोड़ी की गरदन के साथ अपना सिर टेक दिया । जसे वह घोड़ी की गरदन न होकर उस के मायके का द्वार हो ।

गुलेरी का मायका चम्बे शहर में था । समुराज का गांव लक्कडमण्डी एव राजियार के रास्ते में एक ऊँची समतल जगह पर था । राजियार से लगभग एक मील आगे चलकर पहाड़ी का एक ऐसा मोड़ आता था, जहा पर खड़े हाकर चम्बा शहर बहुत दूर और बहुत नीचा दिखाई देता था । कभी कभी गुलेरी जब उदास हा जाती तो अपने मानक को साथ लेकर उस मोड़ पर आकर खड़ी हो जाती । चम्बे शहर के मकान उस का एक जगमगाते बिंदु के समान दिखाई देते, फिर वे बिंदु उम के मन में एक चमक पदा कर देते ।

मायके वह बप भर में एक बार आश्विन के महीने में जाती थी । हर साल इन दिना उस के मायके म चुगान का मेला लगता था । माता पिता उस को लिवाने के लिए आत्मी भेज दते थे । सिफ गुलेरी के ही नहीं गुलेरी की सभी सहेलियों के मायके अपनी लडकिया का बुलावा भेज देते थे । सभी सहेलिया जब एक दूसरे के गले मिटती तो बप भर की सभी ऋतुआ के दुख-सुख की बातें एक दूसरी से कह सुन लेती और अपने मायके की गलियों में हिरनियों के समान चौकड़ी भरती स्पच्छंद घूमती ।

दो दो तीन तीन बच्चों का माताएँ बडे बच्चा को उन के दादा-दादी के पास छाड आती और गोदशाले को मायके पहुँचते ही ननिहालवाला के हवात्रे कर देती । मेले के लिए नये कपडे सिलवाती । चुनरिया को रगवाती और अबरक लगवाती । मेले में से काच की चूडिया और चादी की बालिया खरीदती । मेले म से खरीदा हुई मुगधित साबुन की टिकिया को अपने बदन पर एमे मलती जसे वह अपने खाये हुए कुँआरे यौवन की गंध को फिर सूँघना चाहती हा ।

गुलेरी कितने ही लिना से आज के दिन की इन्तजार कर रही थी । आश्विन का आममान जब सावन भादो की बरसात के साथ हाथ पाव बाकर निखर बठता था, गुलेरी और गुलेरी जसी समुराल में बठी लडकियाँ पंगुओ को दाना-पानी डालती, सास समुर के लिए दाल चावल राधती और हर राज हाथ-पाव धाकर बन सँवर बठती तो मन म सोचने लगती आज नहीं तो कल, कल नहीं तो परमा काई न कोई उन के मायके से उन को लेने के लिए आता होगा ।

आज गुलेरी के घर के दरवाजे के सामने उस के मायके की घोड़ी हिनहिनायी ता गुलेरी चचल हो उठी। घाड़ी लेकर आये नत्थू कामे को गुलेरी ने बैठने के लिए चौकी दी।

गुलेरी को कुछ कहन की जरूरत नहीं थी। उस के मुह का रंग स्वयं सब कुछ बता रहा था। मानक ने तम्बाकू का एक लम्बा कश खींचा और आखें बन्द कर ली जाने उस से तम्बाकू का नशा न झेला गया या गुलेरी के मुह का रंग।

“इस बार ता मेला देखने आयेगा न, चाहे दिन का दिन ही सही।” गुलेरी ने मानक के पाम बैठकर बड़ दुलार से कहा।

मानक के हाथ कापे, उस ने हाथों में पकड़ी हुई चिल्लम को एक ओर रख दिया।

“बोलता क्या नहीं?” गुलेरी ने रोप के साथ कहा।

“गुलेरी, एक बात कहूँ?”

“मैं जानती हूँ, तू ने क्या कहना है। क्या यह बात तुझे कहनी चाहिए? साल भर में एक बार तो मैं मायके जाती हूँ। फिर तू मुझे ऐसे क्यों रोक्ता है?”

“आग ता मैं ने तुझे कभी भी कुछ नहीं कहा?”

“फिर दस बार क्या कहता है?”

“इस बार बस इस बार मानक के मुँह से एक लम्बी आह निकल गयी।

तेरी माँ ता मुझे कुछ कहती नहीं, फिर तू क्या रोक्ता है? गुलेरी की आवाज में बच्चा जमी ज़िद थी।

“मेरी माँ” मानक ने अपना मुँह बंद कर लिया। जस आगे की बात को उस ने दाँतों तले दबा लिया हो।

दूसरे दिन गुलेरी मुँह अंधेरे बन-सँवरकर तयार हो गयी। गुलेरी का न कोई बड़ा बच्चा था न गोद का। न किसी को समुदाल में छाड़ना था, न किसी को मायके ले जाना था। नत्थू ने घोड़ी पर बाठी कसी और गुलेरी के सास-ससुर ने उस के मिर पर प्यार लिया।

“चल दा काम मैं भी तरे साथ चलूँगा।” मानक ने कहा। गुलेरी ने खुश होकर मानक की बाँसुरी अपने आँचल में रख ला।

व सजियार पार कर गये। आगे एक काम और टाप गये। फिर चम्ब की उतराई आरम्भ हो गयी। गुलेरी ने आँचल में से बाँसुरी निकाली और मानक के हाथ में थमा दी।

सामने कठिन उतराई थी। पाँव जम फिसल रहे थे। गुलेरी ने मानक का हाथ पकड़ा और रखकर कहने लगी “बजाता क्या नहीं बाँसुरी?”

मोच भी जम उतराई उतर रही थी। मानक का मन फिसलता जा रहा था। गुलेरी ने जब मानक का हाथ पकड़ा ता मानक ने चौंकर उस की ओर देखा।

“बजाता क्या नहीं बांसुरी ?” गुलेरी ने फिर कहा ।

मानक ने बांसुरी होठ के साथ लगायी, पूँव मारी पर बांसुरी में से ऐमा स्वर निकला जमे बांसुरी की जवान पर छात्रे पड गये हा ।

‘गुलेरी तू मत जा ! मैं तुझे फिर कहता हूँ, मत जा । इस बार मत जा ।’

मानक ने हाथ की बांसुरी गुलेरी को वापस कर दी ।

“कोई बात भी तो हो ? अच्छा तू मेले के दिन चला आइया । मैं तेर साथ लौट आऊँगी । पीछे नहीं रहूँगी सच कहती हूँ, पक्की बात ।’

मानक ने कुछ न कहा पर उस ने गुलेरी के मुँह की ओर ऐमे दया जमे वह कहना चाहता हो, ‘गुलेरी यह बात पक्की नहीं । यह बहुत कच्चा ह । पर मानक ने कुछ न कहा जैसे उस को कुछ कहना न आता हो ।

गुलेरी और मानक सड़क से थोड़ा-सा हटकर एक पत्थर के साथ अपनी पीठ टेककर खडे हो गये । नत्थू ने दस इदम आगे बढकर घाड़ी खडी कर दी थी पर मानक का मन कही भी खडा नहीं हो रहा था ।

मानक का मन घूमता फिमलता आज से सात वष पीछे तब चला गया । यही दिन थे जव मानक अपने मित्रो के साथ इस सड़क को लांघता हुआ चौगान का मेला देखने चम्प गया था । मेले में काच की चूड़िया से लेकर गायो-बकरियों तक कुछ न कुछ खरीद और बेच रहे थे । इसी मेले में मानक ने गुलेरी का देखा था और मानक का गुलेरी ने । फिर दोनो ने एक-दूसरे का दिल खरीद लिया था ।

वे दाना अवसर देखकर एक दूसरे को मिले थे । तू तो रुधिया भुटटे जसी ह । मानक ने यह कहकर गुलेरी का हाथ पकड लिया था ।

पर कच्चे भुटटे का पंगु मुँह मारते ह ।’ यह कहकर गुलेरी ने हाथ छुडा लिया था और मुमकराते हुए कहा था इनसान ता भुटटे को भूनकर खाते ह । यदि साहस ह तो मेरे पिता से मेरा रिश्ता माग ले ।’

मानक के दूर-पास के सम्बन्धियों में जब भी किसी का याह हाता था तो लम्बेबाले मूल्य चुकाते थे ।

मानक डर रहा था कि पता नहीं गुलेरी का पिता कितना रुपया माग ले । पर गुलेरी का बाप खाता पीता जादमी था । और फिर वह दूर गहर में भी रह आया था । वह अपने मन में यह निश्चय किये हुए था कि बरवाला स बेटी के पैसे नहीं लूँगा । जहा पर अच्छा घर और वर मिलेगा वहीं पर अपनी लडकी का ब्याह कर दूँगा । मानक के इस काम में कोई कठिनाई नहीं हुई । दोना के दिल मिले हुए थे । दोनो ने याह का रास्ता ढूँढ लिया था ।

आज तू क्या सोच रहा ह ? तू मुझे अपने मन की बात क्या नहीं बताता ?’ गुलेरा ने मानक के कंधे का हिलाते हुए कहा ।

मानक ने गुलेरी की ओर ऐमे दया जमे उस की जवान पर छाले पड गये हो ।

घोड़ी हिनहियायी। गुलेरी का आगे का रास्ता स्मरण हो आया। वह चला के लिए तयार हुई और मानक से कहने लगी, "आगे चलकर नीले फूल का बन आता है। कोई दा मील होगा। तू जानता है न, उस बन का पार करनेवालों के कान बहरे हो जाते हैं।"

"हाँ," मानक ने धीरे से कहा।

"मुझे ऐसा लग रहा है जैसे हम उम्र बन में से गुजर रहे हैं। तुझे मेरी कोई बात सुनाई ही नहीं देती है।

"तू सच कहती है, गुलेरी। मुझे तुम्हारी कोई बात सुनाई नहीं देती और तुझे मेरी कोई बात सुनाई नहीं देती।" मानक ने एक लम्बी सांस ली।

दोनों ने एक-दूसरे के मुँह की जोर देखा। पर दोनों एक-दूसरे की बात नहीं समझ सके।

"मैं अब जाऊँ? तू वापस चला जा। तू बड़ी दूर आ गया है।" गुलेरी ने धीरे से कहा।

"तू इतना रास्ता पैदल चलाती आयी, घोड़ी पर नहीं बठी। अब घोड़ी पर बैठ जाना।" मानक ने उसी प्रकार धीरे से कहा।

"यह ले पकड़ अपनी बासुरी।"

"तू अपने साथ ही ले जा।"

"मेले के दिन आकर बजायेगा? गुलेरी हँस दी। उस की आँखा में धूप चमक रही थी।

मानक ने अपना मुँह दूसरी ओर कर लिया। शायद उम्र की आँखा में बादल उमड़ आये थे।

गुलेरी ने मायके का रास्ता लिया और मानक जैट आया।

मा । घर पहुँचकर मानक इस तरह खाट पर गिर पड़ा जैसे वह बड़ी मुश्किल से खाट तक पहुँच पाया हो।

'बड़ी दूर लगायी। मैं तो सोचता था शायद तू उस को आखिर तक छानने चला गया है।' मा ने कहा।

"नहीं, मा, आखिर तक नहीं गया। रास्ते के बीच ही छाड़ आया हूँ।" मानक का गला रूँध गया।

"औरता की तरह रोता क्या है? मद बन। मा ने रोप से कहा।

मानक के मन में आया कि वह मा से कहे, पर तू तो औरत है, एक बार औरता की तरह राती क्यों नहीं?"

मानक का गुलेरी की एक बात स्मरण हो आयी।

'हम नीले फूलवाले बन में से गुजर रहे हैं जहाँ पर सभी के कान बहरे हो जाते हैं। मानक का ऐसे महसूस हुआ कि आज किसी का उम्र की बात सुनाई नहीं

देती । सारा ससार जसे नीले फूलों का वह वन ह और सभी के कान बहरे हा गये ह ।

सात वष हा गये थे । गुलेरी की अभी तक कोख नहीं हरियायी थी । माँ कहती थी, "अब मैं आठवाँ वष नहीं लगने दूँगी ।" मा ने पाँच सौ रुपया देकर भीतर ही भीतर मानक के दूसरे व्याह की बात पक्की कर ली थी । वह उस समय के इन्तजार में था कि जब गुलेरी मायक जायेगी वह नयी बहू का डोला घर ले आयेगी ।

इस के बाद मानक को ऐसे महसूस हुआ जमे उस के दिल का मास सा गया था । गुलेरी का प्यार उस के दिल में चुटकी भर रहा था । पर उस के दिल को कुछ महसूस नहीं हो रहा था । नयी बहू की काख से उत्पन्न होनेवाले बच्चे की हँसी उस के दिल को गुदगुना रही थी, पर उस के दिल को कुछ नहीं हो रहा था । जाने उस के दिल का मास सो गया था ।

सातवें दिन मानक के घर उस की नयी बहू बठी हुई थी ।

मानक के सभी अंग जाग रहे थे, एक उस के दिल का मास सोया हुआ था । दिल के सोये हुए मास को उम के जाग रहे अंग सभी स्थानों पर ले गये थे । नयी ससुराल में भी और नयी बहू के बिछोने पर भी ।

मानक मुँह अँधेरे अपने खेत में बठा हुआ तम्बाकू पी रहा था जब मानक का एक पुराना मित्र वहाँ से गुजरा ।

"इतने बड़े सवेरे कहा चला है भवानी ?"

भवानी एक मिनट चौंकर उठर गया । चाहे उस ने अपने कंधे पर एक छाटो-मा गठरी उठायी हुई थी फिर भी धीरे से कहने लगा "कही नहीं ।"

'कही ता चला ह । आ बठ तम्बाकू पी ले ।' मानक ने आवाज दी ।

भवानी बैठ गया और मानक के हाथ से चिलम लेकर पीता हुआ कहने लगा, 'चम्बे चला हूँ, आज वहाँ मेला ह ।'

मेले के शब्द ने मानक के दिल में जाने वसी सुई चुभो दी, मानक को महसूस हुआ उम के भीतर कही पीडा हुई थी ।

'आज मेला ह ? मानक के मुँह से निकला ।

"हर वष आज के दिन ही होता ह । भवानी ने कहा । फिर मानक की ओर ऐसे देगा जमे वह यह भी कह रहा हो तू भूल गया ह इम मेले को ? सात वष हुए जब तू मेले में गया था । मैं भी तो तेरे साथ था । तूने ता इमी मेले में मुहब्बत की थी ।

भवानी स कहा कुछ नहीं पर मानक का ऐमे महसूस हुआ कि जसे उम ने सब कुछ मुन लिया था । उम का भवानी पर गुस्सा आ रहा था कि वह सब कुछ क्यों मुन रहा ह ।

भवानी मानक की चिलम छाटकर उठ खड़ा हुआ । उम की पाठ पर लटक रही गठरी में से उस की धाँपुरी का सिरा बाहर निकला हुआ था । भवानी चलता

जा रहा था ।

मानक उस की पीठ का देखता रहा । पीठ पर रखी हुई छाटी-सी गठरी का देखता रहा । गठरी में से निकले हुए वासुरी के सिरे को देखता रहा ।

‘भवानी और भवाना की वासुरी मेले जा रहे ह ।’ मानक को अपनी वासुरी स्मरण हो आयी जब उस ने भायवे जा रही गुलेरी को अपनी वासुरी दते हुए कहा था, इसे तू साथ ले जाना’ फिर मानक को खयाल आया, ‘और मैं ?’

मानक का मन आया कि वह भी भवाना के पीछे-पीछे दौड़ पड़े । वह अपनी उस वासुरी के पीछे दौड़ पड़े, जो उस से पहले मेले में चली गयी थी ।

मानक ने हाथ से चिलम फेंक दी और भवानी के पीछे-पीछे दौड़ पड़ा । फिर मानक की टांगें कापने लग पड़ी । वह चट्टी का बही बठ गया ।

मानक को सारा दिन और सारी रात मेले जा रहे भवानी की पीठ दिखाई देती रही ।

दूमरे दिन तीसरे पहर का समय था जब मानक अपने खेत में बठा हुआ था । उस का मेले में से आते हुए भवानी का मुँह दिखाई दिया ।

मानक ने मुँह एक ओर कर लिया । उस ने सोचा कि मुझ को न ता भवानी का मुह दिखाई दे और न भवानी की पीठ । इस भवानी को देखकर उस को मेले की याद आ जाती था और यह मेला उस के साये हुए दिल के मांस को जगा देता था । और जब वह मांस जाग पड़ता था उस में बहुत पीडा हाती थी ।

मानक ने मुह फेर लिया पर भवानी चक्कर काटकर भी मानक के सामने आ बैठा । भवानी का मुह ऐसा था, जम किसी ने जल रहे कोयले पर अभी अभी पानी डाला हो । और उस के ताप का रंग अब लाल न होकर काला हा ।

मानक ने डरकर भवानी के मुह की ओर देखा ।

“गुलेरी मर गयी ।”

“गुलेरी मर गयी ?”

‘उस ने तुम्हारे विवाह की बात सुनी और मिट्टी का तेल अपने ऊपर डालकर जल मरी ।’

‘मिट्टी का तेल ’’ इस क धाद मानक बोला नहीं ।

पहले भवानी डरा । फिर मानक के मा-बाप डर गये, और फिर मानक की नयी बहू डर गयी कि मानक को पता नहीं क्या हो गया था । वह न किसी के साथ बोलता था, और न किसी का पहचानता देखता था ।

कई दिन बीत गये । मानक समय पर राटी खाता, खेती का काम भी करता और सभा के मुँह की ओर ऐसे देखता जैसे वह किसी को भी न पहचानता हो ।

“मैं उस की ओरत बाहे की हूँ ? मैं तो सिर्फ इस के फेरो की धार हूँ ।” नयी बहू दिन रात राने लगी । यह फेरो की चोरी अगले महीने मानक की नयी बहू

की और मानक का मा की आशा बन गयी। वही के दिन चढ़ गये थे। माँ ने मानक को अकेले में बैठाकर यह बात सुनायी। पर मानक ने मा के मुँह की ओर ऐसे देखा जैसे यह बात उस की समझ में न आयी हो।

मानक को चाहे कुछ समझ में नहीं आया था पर वह बात बहुत बड़ी थी। मा ने नयी बू को हीमला दिया कि तू हिम्मत से यह बेला काट ले। जिस दिन मैं तुम्हारा बच्चा मानक की झाली में रखूँगी तो मानक की सभी सुबिया पलट आयेंगी। फिर वह बेला भी बट गयी। मानक के घर बेटा पदा हुआ। मा ने बालक का नहलाया धुलाया कामल रेशमी कनड में लपेटकर मानक की झाली में डाल दिया।

मानक झाली में पड़े हुए बच्चे का देखता रहा फिर जैसे चाख उठा, “इस का दूर करो, दूर करो। मुझे इस में मिट्टी के तल की बू आती है।

न जाने क्या, लोकनाथ का अपने जीवन की हर बात किनी न किमी जानवर की सूरत में याग आती थी। वचपन के कितने ही पल एक अघायी हुई बिल्ली की तरह म्याऊँ-म्याऊँ करते हुए उस के पास से गुजर जाते थे। इन पल का जमे उस की माँ ने अभी अभी दून से भरी हुई कटारी पिलायी हा, और उस के भूरे पदरले बाला को उस के बाप ने उस अभी-अभी अपने हाथ से सहलाया हो।

लोकनाथ का छाग भाई प्रेमनाथ अब नेवी में था। इन्हें वदन का खूबसूरत सा नौजवान। पर छुटपन में वह पगई में भी उतना ही कमजोर था जितना कि वह शरीर से दुबला था। लोकनाथ जब उस पढ़ाने के लिए कभी अपने पास बिठाता था तो किताने के अशरों पर निकुटी हुई उस की आँखें कई बार अचानक सहमते-मे पल कर लोकनाथ का चेहरा ताकने लगती थी। और फिर जब लोकनाथ उसे दिलासा देता था तो जम मित्रता-सी करती हुई उस की आँखें पिघलने लग जाती थी। और अब नेवी का अपना वनकर वह नये-नये बदरगाहा पर जाता था और वहा से तसवीरें खींचकर लोकनाथ को भेजता था तो लोकनाथ को उस के माथे चित्ताये हुए पल की याद ऐसे आती था जम एक छाटा-सा पिल्ला पूँछ हिलाते हुए अपनी सीली जीभ से उस की तली का चाटने लगा हा।

उस ने किसी राजनीतिक पार्टी में कभी दखल देना नहीं चाहा था। पर अनुभव की भूख कई बार उस मीटिंग में ले जाता थी। वह नहीं जानता अब सुक्रिया पुलिस ने अपने बागड़ा में उस का नाम दर्ज कर लिया था और उस के द्वार में अपनी लम्बी चौड़ी राय बना रखी था। उस की डिपारिमा से पदराकर जब कभी कोई मरकारी दफ्तर उस नौकरी का वचन दे देता तो पुलिस की यही लम्बी-चौड़ी राय उस वचन का एक ही बटवे में ताड़कर रख देती। अब जब कि लोकनाथ एक कॉन्ज का प्राफ़ेसर था और अपने लिए उस न एक निश्चित स्थान बना लिया था तो कई परेशान समझा की याद उसे उन चौला और बदरों का सूरत में याद आती थी जा न जाने कहा से आने थे और उस के हाथों को मराचकर रोटी का टुकड़ा छीनकर ले जाने थे।

सरकारा दफ्तरा की बीली रफ्तार उस कँचुआ-सी लगती। किसी भी बाव-लियत के रास्ते में पग आनेवाला ईर्ष्या उम साप की तरह फुँकारती मुनाई देती। कदया की ईर्ष्या और जलन का उस ने अपने शरीर पर खेला था—भस के सीगा की तरह। अपने सग-सम्यन्धिया के फुजूर उलाहना और रुठने के पल उसे अलमारी में घुसे

हुए चूहे मालूम हाते थे जा कीमती कागजा का कुतरत चले जात ह ।

लावनाथ का अपनी बीवी बहुत पसंद थी । इस बीवा का, लावनाथ का दिल बहता था, कि उस ने किस्सा-कथाओं के इशर से भी उषाग इशक किया था । उस क साथ बितायी और बीत रही घड़ियाँ लावनाथ की नज़र में ऐसे थी जसे नन्ही-नन्ही चिड़ियाँ उग क आमपाग चहकती हो, जसे कुर्जों की एक बतार बादल को काटकर गुज़री हा, जस घुगिया क कुछ जोड़े उस की सिडकी में आवर बँठ गये हा, जस सुग्गा का एक झुण्ड उस के आँगन के पेड पर आ बठा हो । अपनी बीवी के छत, और बीवी के नाम लिखे हुए अपने छत लोकनाथ को हमेशा उन कबूतरा मे लगते थे जो किमी दीवार की ओट में घामला बनान के लिए तिनके जाडते रहते ह ।

विवाह स पहले लोकनाथ अपनी बीवी को उम के जन्मदिन पर एक किताब भेंट किया करता था । विवाह क बाद हर साल उस क जन्मदिन पर उस के होठ चूमता था और कहता था, 'मरी उमर का यह साल एक किताब की तरह सुन्हारी नज़र ।' इस तरह लोकनाथ अपनी बीवी को अब तक अपनी उमर क पचीस साल पचीस किताबा की तरह सौगात में द चुका था । उस यकीन था कि उस के जात जी उस की बीवी का कोई ऐसा जन्मदिन नहीं जायेगा जब कि वह अपनी जिंदगी का काई साल एक खुली किताब की तरह उसे भेंट नहीं करेगा ।

सिर्फ एक बार ऐसा हुआ था—बाईस साल पहले की बात ह—एक सुबह लावनाथ चारपाई से उठा तो उस का बन्न तप रहा था । रात को वह अच्छा भला साया था । गरीबाला एक बेक लाकर उस ने अपनी अलमारी में रखा था । इस बार न जाने कसे उस की बीवी को अपना जन्मदिन याद नहीं रहा था । शायद इसलिए कि उस की एक बहुत पुरानी सहेला बई साला बाद उस दिन विदश स लौट रही थी और उस ने उस मिलने के लिए जाना था । लोकनाथ ने सुबह अपनी बीवी को चौकाने के लिए बेक लाकर अलमारी म छिपा दिया था । पर सुबह जब वह उठा तो उस क माथ में जोरा का दद हा रहा था । बीवी क साथ उस ने चाय भी पी और कक भी खाया, उस चौकाया भी उस के हाठ चूमकर उसे अपनी उमर का एक साल किताब की तरह सौगात में भी दिया । पर उस के बाद वह सारा दिन चारपाई से नहीं उठ सका । उस दिन वह सोच रहा था कि जो किताब इस बार उस न अपनी बीवी को दी था, उस किताब का एक पन्ना उस में से फटा हुआ था । उस रात वह फटा हुआ पन्ना किसी जानवर के टूटे हुए पंख की तरह उस की छाती में हिलता रहा ।

लोकनाथ की जिंदगी के कुछ पल मासूम उडते परिण की तरह थे, कुछ पालनू परिण की तरह और कुछ जगल के जानवरों की तरह । पर किसी पं से वह कभी डरा नहीं था चौंका भी नहीं था । पर एक—लावनाथ की जिंदगी में एक वह घड़ी भी आयी थी—मुश्किल से पन्द्रह मिनटा के लिए—जा एक बार एक चमगाण्ड की तरह उस क मन में चली आया थी और बेशक होश-हवास को सारी खिड़किया

खुली थी, पर वह घड़ी एक अर्धे चमगादड़ की तरह बार-बार दीवारों से टकराती रहा थी और बार-बार लाकनाथ के कानों पर झपटती रही थी। लोकनाथ ने घबराकर कानों पर हाथ रख लिये थे और कुछ मिनटों के लिए उसे आवाजें सुनाई नहीं दी थी, उस की जमीर का आवाज भी नहीं, पर एक आवाज थी जो उस समय भी कनपटियों में उसे सुनाई देती रही थी, और खून की इस आवाज से छुटकारा पाने के लिए उस ने

बारह साल बीत गये थे। पर वह घड़ी, मुश्किल से पंद्रह मिनटों की वह घड़ी, लोकनाथ को जब कभी याद आ जाता—याद नहीं आता थी बल्कि चमगादड़ की तरह उस के गिर पर उड़ती थी—तो लोकनाथ घबराकर उठे जल्दी बाहर निकाल देने के लिए उस के पीछे दौड़ने लगता था।

इस चमगादड़ जैसी घड़ी के आने का कोई समय नहीं था। कभी 'फ्रायड' के पत्रे उलटते हुए वह अचानक आ जाती थी तो कभी किसी खूबसूरत कविता को पढ़ते हुए भी वह दिखाई दे जाती। एक बार अपने नये जनमे बेटे की गरदन में से दूध की महक सूँघते हुए भी लाकनाथ का वह चमगादड़ दिखाई दी थी। और आज जब लाकनाथ की बड़ी बेटी सुचेता, मायके में प्रसूत काल काटकर समुद्राल जान लगी थी, और नहसे बालक को झोली में लेकर जब उस ने अपने बाप से मिनत की थी कि उस की छोटी बहन रीता को वह कुछ दिना के लिए उस के साथ समुद्राल भेज दें क्योंकि छोटा सा बालक बापद उस से अकेले न सँभले, तो लोकनाथ के चेहर का रंग पीला पड़ गया था। एक चमगादड़ उस के सिर पर मँडराने लगा था। आगन में बठी उस की बीबी, उस की बेटी, उसे लेने आया उस का छाबिल्ल, झाली में पड़ा बच्चा, कुछ दूर पर बठी उस की दूसरी बेटी, आगन में कँरम खेल रहा उस का बेटा—सारे के सारे जमे ओझल हो गये। हाश हवास की सारी सिडकियाँ खुली थी, पर एक अर्धे चमगादड़ दीवारों से सिर पटक रहा था, लोकनाथ के कानों पर झपट रहा था, और लाकनाथ उस जल्दी से बाहर निकाल देने के लिए अपने मन की चारा नुक्कड़ों में दौड़ने लगा।

यह चमगादड़ एक स्मृति थी। बात बारह साल पहले की थी—लाकनाथ के घर जब पहला बच्चा हुआ था, यही सुचेता। लोकनाथ की बीबी रेहद कमजोर हो आयी थी। अपनी बीबी का मायके से अपने घर लाने की जगह वह उस पहाड़ पर ले गया था। छोटा-सा बच्चा न उस से सँभल पा रहा था न उस की बाबी से। इसलिए वह अपनी बीबी की छाती बहन का भी अपने साथ पहाड़ पर ले गया था। पंद्रह सालों की वह उम्रों उस बिलकुल अपनी बहन-सी दिव्दाई देती थी या अपनी बेटी का तरह जो कुछ साला बाप उम्रों की उमर की हा जानी थी। कई बार बच्ची जब सो रही होती थी तो उम्रों को घुमाने के लिए वह अपने साथ ले जाता था। उस की बाबी अभा रह नहीं गवती थी। बहो-बहो चीड़ के पेड़ों के नीचे झरे हुए तिनकों की तहें बठ जाती

थी। उर्मो दौट पत्ती थी ता लोकनाथ उसे फिमलने से बचाने के लिए उम का हाथ पकड़ लेता था। उस ने यह कभी नहीं साचा था कि इस उर्मो को उम के हाथा कभी ठेग भी लग सकती था। एक बार सग के लिए जाते वकत उम ने अपनी बच्ची की गरदन को चूमा। सा रही बच्ची में से सौंफिया दूध और पाउडर की अजीब सी गंध आ रही थी। बच्ची की माँ भी बच्ची के पाम लेटी हुई थी। लोकनाथ ने उस के कान के पाम हाकर धीर स अपने होठ छुआय ता बच्चीवाली गंध उसे अपनी बीबी के बाला में स भी आयी। और फिर उमी दिन की बात ह सार करतें हुए जब उस ने उर्मो का हाथ पकड़कर उसे फिमलती चलाई पर चढ़ने के लिए सहारा दिया तो उस के कंधे का छूना हुई उम की सास में से भां वहा गंध आयी। लोकनाथ अपना बीबी का मजाक करता आया था और उर्मो न भी बोला, बरी का सौंफिया दूध, लगता ह तुम दाना को भी अच्छा लगने लगा ह।'

इस के आगे लोकनाथ को नहीं मानूम कि क्या कैसे हुआ। एक गंध थी जो उम के गले सिमट आयी था—सौंफिया दूध की पाउडर की गुन्गल चमड़ी की औरत के अंगा की और चीड के पेडा की। और लोकनाथ का लगा कि जगल की खुली हवा में भी उम का दम घुट रहा ह। और फिर यह गंध बुहाने की तरह उठी और उम के गले से हाकर माथे में छा गयी। और फिर सार चेहरे उस बुहाने की आट म छिप गये—उर्मो का चेहरा उस की बीबी का चेहरा, उम की बच्ची का चेहरा। चेहरा का अहसास हाता था—पर पहचाने नहीं जात थे। फिर लोकनाथ को लगा कि दूर पाग वही काई बस्ती नहा थी। जहाँ तक नजर जाती थी—वहाँ तक मिफ खँहर ही थे। फिर किसी गडहर में मे चमगादडा की एक तेज गंध उठी और उम के गिर म छा गया। फिर उम लगा कि किसी दीवार की ओट से निक्कर एक चमगादर उम के काना पर टापटने लगा था। उम ने धबराकर दानो हाथ काना पर रख लिये थे। कुछ मिनटो के लिए उसे काई आवाज सुनाई नहीं दो थी—जमीर की आवाज भी नहीं, पर एक आवाज उमे अब भी सुनाइ द रही था—सुनाई काना न नहीं दे रही थी बकि गून की हरेक घूँ स उठ रही गिरती थी।

यह जमे एक बहुत बनी साजिग थी। जमीर की आवाज के मिगफ गून की आवाज की साजिग थी—चेहर की हर पहचान के मिगफ एक घूँ की साजिग थी—जगल का गुगी हवा के खिलाफ एक गंध का साजिग थी—हर आवाजी के खिलाफ हर गँडहर का साजिग थी।

लोकनाथ किसी की काई साजिग न समझ सता। पंद्रह मिनटों का वह समय जब उम का उमर स टूटकर एक अंग की तरह दूर जा पडा ता लोकनाथ का लगा कि उम की सांग जिल्लगी अगाहिज बनकर रह गयी थी।

उम नाम अब वह घर लोग उम का बीबी के कमर में जो मामरता जल रही थी। लोकनाथ का लगा उम मामरता की तरह उम के चेहरे का सग्न दगवर

थरथराती हुई जमे जल्दी से बुझ जाना चाहती थी ।

जब रात घिर आयी तो अँधेरा लोकनाथ का अच्छा लगा । पर फिर उसे लगा कि एक अँधेरा उस की छाती में घिर आया था । अँधेरे का एक टुकड़ा रात के अँधेरे से टूटकर अलग जा पड़ा था । रात का अँधेरा तालाब के पानी की तरह ठहरा हुआ था जिस में से एक गंध उठ रही थी । उस रात लोकनाथ को कितने ही खयाल आये । उसे लगा कि वे सारे खयाल इस तालाब में तैरते हुए मच्छर जमे थे ।

दूम्मेरे दिन वह पहाड़ से लौट आया था । उर्मों को उस के मा-बाप के पास छोड़ आया था । और फिर उर्मों को उस के विवाह के दिन एक बार भरे आँगन में मिलने के मित्र वह कभी नहीं मिला था । यह एक माफ़ी थी जिसे वह सारी उमर अपने का गरहाज़िर रखकर उर्मों से मागता रहा था ।

“पापाजी !” सुचेता ने एक मिनत से लोकनाथ की खामोशी तोड़नी चाही । और धीरे से बोली, “आप क्या सोच रहे हैं पापा ? वैसे मैं जानती हूँ, आप ‘न’ नहीं करेंगे ।”

“क्या ?” लोकनाथ ने हुरात होकर अपनी बेटी की तरफ देखा । यह बेटी उसे बहुत प्यारी थी । उस का बात उस ने कभी नहीं टाली थी । पर वह हुरात था कि अगर कोई होनी वक्त के साथ मिलकर एक साजिश करने लगी था, तो उस की बेटी को इस साजिश की समझ क्या नहीं लग रहा थी ।

“रीता का कुछ दिन मैं अपने साथ ले जाऊँ ? यह सानी मुझ से सँभलती नहीं ” सुचेता फिर कह रहा थी । साथ में मा ने भी हामी भरी, “एक महीने तक रीता का कॉन्जि खुल जायेगा । यही छुट्टियाँ का एक महीना ही हैं एक महीना ही सही राजेन्द्र भी जोर डाल रहे हैं ।”

“राजेन्द्र बड़ा होनहार है,” लोकनाथ को खयाल आया और फिर अपने जैवाई के चेहरे की तरफ देखते हुए उस लगा कि कोई हानी एक पागल कुत्ते की तरह—इस अच्छे लड़के को काटने के लिए तिलमिल रही थी । वह तनकर खड़ा हो गया ऐसे जैसे वह उस पागल कुत्ते से बचा सकता था । ‘मैं अगले महीने खुद आकर रीता को छोट जाऊँगा ’ राजेन्द्र ने धारे से कहा ।

“नहीं चिन्तुल नहीं ।” लोकनाथ ने जरा सख्ती से कहा । सब ने धबराकर पढ़े लोकनाथ का आर देखा, फिर एक-दूम्मेरे की आर, ऐसे जम उन्होंने लोकनाथ की आवाज़ नहीं सुनी थी, किसी बड़े अजनबी की आवाज़ सुनी थी ।

एक निश्वास

करमो ने लोटे में लस्सी डलवायी और फिर आधे से भा कम भर हुए लोटे का देगती हुई वाली 'आज बड़ी सरदारिन नहीं मिलती कहा। राखी-मुंगी ता ह ?

सरदारिन निहालकौर अभी एक घड़ा पहले चौके में आयी थी। चूल्ह पर रानी खीर के नीचे ज्वाला आँच देकर उस ने लकड़ियाँ पीछे खींच ली थी, 'क्या री, वारो ! खीर भी क्या इतनी आँच पर बनी ह ? इस के नीचे बहुत हल्का आँच चाहिए। उस ने कहा था और फिर चूल्हे के पाम लकड़ी की पटरी रखकर और उस पर बैठकर पताते में कलछी घुमाने लग गयी थी। मुबह दही उस ने खुद बिलाया था पर लस्सी छानते हुए उस ने बीरो को कहा था कि वह कुछ पल अब आराम करेगी। जा भी आये, बीरो उसे लस्सी दे दे।

शायद औरो ने लस्सी लेते हुए यह बात पूछी थी पर निहालकौर नहीं जानता। वह अन्दर के कमरे में थी। पर अब जब वह आँगन में थी ता दहलीजा के बाहर बँटी करमो की आवाज उस ने खुद सुनी थी।

राखी हूँ करमो ! तुम तो ठीक हो ? निहालकौर ने अन्दर से पूछा।

करमो ने जल्दी से दहलीज के पास आकर झाँका और अपने एक हाथ को माथे से छुआती हुई वाली जुग-जुग जिया सरदारिन आज तुम्हें देखा नहीं था। मैं ने सोचा मेरी सरदारिन ठीक तो हूँ।'

सभी लोग निहालकौर की बलाएँ लेते थे। यह नयी बात नहीं थी फिर भी निहालकौर को लगा कि लस्सी लेते हुए करमो ने उस याद किया था ता जरूर कोई बात होगी। तभी जब निहालकौर ने करमो की तरफ देखा तो वह लोटा निहालकौर की तरफ शुकावर रखी हुई थी। निहालकौर समझ गयी। वह बीरो की तरफ दखती हुई बोली, 'सुना। करमो का लोटा भर दिया कर। इस के छोटे छोटे बच्चे लस्सी पर पलते ह।

राम तुम्हें दुगना द। तुम्हारे हाथ इतने सन्तोषी ह कि अनजाने ही दो-दो बार लस्सी बार जाने ह।' लोटे में और लस्सी लेता हुई करमा वाली। और चाहे इस समय उस को तसल्ली देनेवाले हाथ बीरो के थे, पर वह कह रही थी निहालकौर के हाथों को।

करमो के चले जाने पर निहालकौर उस की दाँ हुई दुआएँ भूल गयी, उस का कहा हुआ सिर्फ एक शब्द उसे याद रह गया बड़ी सरदारिन

निहालकौर एक हा दिन में सरदारिन स बड़ी सरदारिन बन गया थी । मालूम नहा उसे बड़ी सरदारिन कहने का खयाल सब से पहले किसे आया था । शायद सत्र को एक साथ ही आ गया था । घर की महरी से लेकर कारखाने के सारे मुशी, मुनीम उसे बड़ी सरदारिन कहकर बुलाने लगे थे । यहा तक कि घर के मालिक सरदार ने भी कल उसे बड़ी सरदारिन कहकर बुलाया था । और फिर निहालकौर को खयाल आया कि परसा उस ने खुद ही तो महरा से कहा था कि जाकर छाटी सरदारिन का कमरे स बुग लाये । अगर कोई छाटी सरदारिन हो तो बड़ी सरदारिन खुद ही बन जानी थी । निहालकौर ने सोचा और फिर कितने ही खयाल छाटे छटे घान के दाना की तरह उस के मन के दूध में रखने लगे ।

रंधते हुए खयालो में एक खयाल यह भी था कि वीरा जब स इस घर में छाटी सरदारिन बनकर आयी था, तभी से वह रात को सोने से पहले नियमपूर्वक निहालकौर के कमरे म आती थी और उस की चारपाई के पाये पर बैठकर उस के पावा को दबाती थी । निहालकौर ने न तो बेटी की डोली भेजनी थी न बटे की डोली लानी थी, पर जब उस के हाथा व्याही वीरो उस के पावा को दबाती थी ता उसे लगता था कि उस ने बेटी भी पा ली थी और बहू भी । और निहालकौर ने एक गहरा सास लेकर हँसते हुए होठो स अपनेआप को मना लिया था कि वीरो उस की बेटी भी थी और बहू भी ।

निहालकौर ने अपने सरदार क दूसरे विवाह के लिए यह लडकी वीरो खुद ही तलाश की थी । गिस्ते अच्छे घर से भी मिल रहे थे पर वे सारे सरदार के लिए नहीं मिल रहे थे, सरदार की हवेली के निमित्त थे । सरदार की बगता हुई उमर से ढरते हुए जो भी लाग रिश्ता लेकर आते थे वे रिश्ता करने से पहले हवेली का अपनी बेटी के नाम करवा लेना चाहते थे । सरदार अपनी हवेली का वारिस तो जरूर खाज रहा था, पर हवेली का उस औरत के नाम नहीं लिख सकता था जिस की कोख ने किसी वारिस को जाने कब जम दना था, और फिलहाल जिस ने वारिस की भविष्य बाणी ही करनी थी ।

और सरदार ने दूसरा विवाह करने से इनकार कर दिया था । पर इस इनकार में एक निश्वास मिला हुआ था । निहालकौर ने इस निश्वास को सुना था और इस तरह उस ने एक अदने-मे परिवार का यह वीरो खोजकर अपने सरदार को दे दी थी, और उस के बदले में उस का निश्वास खुद ले लिया था ।

एक दिन सरदार ने दीवार में लगी अपनी लाहे की अलमारी खाली तो बहू कितनी ही देर खुली अलमारी के सामने खड़ा कुछ साचता रहा । 'बड़ी सरदारिन कहाँ गयी ह ?' सरदार ने वारा स जदी से पूछा । बड़ी सरदारिन घर नहीं थी । सरदार ने अलमारी का बंद कर दिया और चाबी जेब में रख ला और कारखाने को जाते हुए वीरो से कह गया कि निहालकौर जब भी घर आये, वह नाचे से मुनी का आवाज

दरदर उग बाग्याने म बुला ले। जब निहालखोर घर पहुँचा ता बीरा बाहर के दरवाजे में पबगयी हुई बैठा थी उस ने अभी क थी था।

निहालखोर ने बारा का हाथ धामा उस के कंधे दबाये और उग चारपाई पर लिटाया। पर बारा बीपते पैरा से चारपाई न नीचे उतरा और निहालखोर के पाँवों से निपट गया।

सरलारिन तुम ने मुझ तक दिा कहा था कि मैं तुम्हारा बटी भी हूँ और बहू भी। आज तू मुझ अपनी बनी समझकर बचा ल और चाहे वह समझकर। बीरा बिगड़ उठी। बिलगल बिलगल बीरो ने निहालखोर को बताया कि जब कुछ दिन पहले उग का भाई उग से मिलने आया था ता उग के भाई का कुछ पगल भी बहूत जम्मत था। बारा ने उग कुछ पैर भी दिए थे पर पैर उग के पाग बहुत कम थे। इसलिए उग ने सरलार की जब मे चाचा भुराकर लाहे की अलमारी खाली थी और अलमारी में स चाँगी के बरतन निहालखोर अपने भाई को द न्ये थे।

यह तुम्हारा अपना घर है बीरा ! अगर तुम अपने घर को अपने हाथ बगबा करोगी— बाउ अभी निहालखोर के मुँह में हा थी कि बीरा समझकर बोला "मह पर मुझ अपना न कभी लगा है न कभी लगगा। पर यह मैं तुम से इतरा करती हूँ, सरलारिन, आदम मैं इस घर की बाद बाउ कभी बाहर नहा दूँगी। मैं न उग नि भा गच्छा का था। यों ही कर बटा। बाँ में पड़तायी भा। तुम्हें ता पता है मर बिनाह के समय मर बाप न मर भाई के बाराबार का बाउजा दर तुम से दा हज़ार खपा मोगा था। तुम न यह द निया था। मर बाप न बिनाह कर निया। मुझ बचा में कगर हा कता रह गया ? दा हज़ार खप के नि मग इस बूढ़ मुँह ग बीप निया गया। बाप और भाई भी कता मग हूँ—मैं निया था पर बगबा कर उग का घर ना कता भई।'

बाग ! ' निहालखोर बीरकर बीरा के चेहर की उरक लभन लगी।

निहालखोर : बीरा का लाउ खप ला। उग ने सरलार म कह निया कि अजमारा मैं रहा था। के दगलन दुगने ठब के थे। उग ने यह दगलन निहालखोर गाय में कुछ और बीरा निहालखोर मुझ की नय बगलन बनान की निया था।

सरलार का बिन्ना जाना रही। पर निहालखोर अब भी बाग के चहर का तरफ दगल ला गग के मन में एक बिन्ना घर कर जाना। बारा का बाँ भवग जैसी बने था। रंग के बरा गौरव था पर गौरव रंग में जवाना लम्ब आँ का लख मुँदी हुई था। उग का बड़े बजनों की तरह लख और लम्ब था। माँ में उँगला का एक पग भा लगी लम्ब था। सरलारिन का लगा कि सरलार म जा निहालखोर उग ने अपने बिम के निहा था बाग न दा निहालखोर अपना लख म दगल निया था।

और फिर बाग के पद भाग, हा लय। हाउ बहूत बनी था, पर मुबारक इमन की कि हजल में लम्बा लगी था। सरलार का पर जमान पर नया परता ल

और निहालकौर वीरा का पैर जमीन पर नहीं लगने देती थी। पर लोग न सरदार का इतना मुबारक दे रहे थे न वीरो का ही, जितनी मुबारक वे निहालकौर को दे रहे थे।

“मैं इस का जनम होते ही इसे अपनी शोली में ले लूँ? बाद में मत कहना मैं बड़ी सरदारिन हूँ तुम छोटी सरदारिन। पहला बेटा बड़ी का हागा। बाद में जो जनम लेंगे वे तुम्हारे निहालकौर हंसकर वीरो से कहती। निहालकौर खुद ही नहीं जान पा रही थी कि उस के मन में जरा-सी भी मलाल क्या नहीं था। उस ने अपने हाथ अपना खाब्रिद एक परायी औरत को दे दिया था और अब उस ने मारी जमीन जायदाद भी एक पराये बेटे को दे देनी थी।

“जरी टोनाहारिन। मैं ने कसे तुम्ह अपनी बेटा और बहू कहा था। मैं इस समय सचमुच एक मा की तरह खुश हूँ। मुझे यह कभी याद ही नहीं रहता कि तू मेरी” निहालकौर की इस बात पर वीरो बीच में ही हंसकर कहती, “सरदारिन। मैं बेशक तुम्हारी और कुछ लगती होऊँ या नहीं पर यह तुम जानती हो कि मैं तुम्हारी सोत नहीं लगती।’

निहालकौर ने बर्तई से जो झूला बनवाया, उस झूले में चादी के धुंधले बाघे। सच्चे रेशम की उस ने छोटी-सी रजाई बनवायी। शहर का एक अंगरेज अप्सर एक महीने की छुट्टी पर विलायत जा रहा था, ‘विलायती स्वेटर रेशम जैसे हात ह’ निहालकौर ने कहा और अंगरेज से दो छोटे छोटे स्वेटर विलायत से लाने की बात पक्की कर ली।

अपने समय में निहालकौर ने खुद का दाइया को भी दिखाया था और बड़े शहर में जाकर डाक्टर का भी, पर उस ने अपने समय में कभी किसी देवता की मनौती नहीं की थी। बारा को जब पूरे तीन दिन कमर में दर्द हाता रहा, और फिर एक दिन जब जरा-सा सूत का दाग भी नजर आया तो निहालकौर ने पहली बार अपनी जिंदगी में मनौती मानी।

यह ‘मान’ करने का समय था। वीरा चाहती तो अन्त देश-दधान्तरा की फर मादों कर सकती थी। सरदार उस की आवाज के लिए अब उस का चेहरा ताकता रहता था। पर निहालकौर जानती थी कि अब भी वीरा अचार के एक छोटे-म टुकड़े के लिए शिक्ककर दा बार उस का चेहरा निहारती थी। इसलिए निहालकौर खुद ही वीरा की इच्छाओं का ध्यान रखती। इन सारे दिनों में वीरो ने अपने मुँह से ज़ार देकर किसी बात को कहा था तो सिर्फ इतनी-सी बात को कि आँगन में रस्मी से टांगे हुए शलजमा के डार उतारकर परे रख लिये जायें। “इन्हें दक्कर मेरे मन में कुछ होता ह। शलजमा का लटकना इस तरह लगता ह जमे किसी की चमड़ी लिजलिजा गयी हो।’ वीरो ने कहा था और मूखते हुए शलजमों का देखती हुई उबकाने लगी थी।

फिर बारा के मन में जाने क्या आया, जब उसे नवा महीना हो आया तो उस

ने जिद्द पकड़ ली कि वह अपने मायके जाकर ही प्रसून जाल वापसी। सरदार उम की जिद्द नहीं मान रहा था। निहालकौर उस की मिन्नतें कर रही थी, पर बीरा ने एह हा जिद्द पकड़ रखी थी कि उस के गाँव की एक बूढ़ी दाई बहुत सयानी है। उम मिक उसी दाई पर भरासा है, और किसी पर नहीं। और उम का विश्वास था कि अगर वह यही रहेगी तो शहरी डाक्टरनिया के हाथों वह मर जायगी।

यह डर बड़ी बुरी बला है' डॉक्टरों ने भी सरदार का साथ दिया। पर सरदार के मन में दूसरा ही डर था। वह निहालकौर को अलग ले जाकर बोला, "मझे डर है कि अगर उसे वहाँ लड़की हुई तो वह किसी के लटके से उसे बदल देगी। मैं ने पहले भी ऐसी कई बातें सुनी हैं। उसे लालच है कि अगर लड़ना हुआ तो बड़ा हाकर जयदाद का वारिस होगा।"

तो फिर इस का तो एक ही इलाज है। मैं इस के साथ चली जाता हूँ। मेरे पास रहते वह कुछ नहीं कर सकेगी।' निहालकौर ने कुछ दूर सोचने के बाद कहा।

सरदार मान गया। बीरा ने भी कोई आपत्ति नहीं की। निहालकौर ने घर की महरी को भी विदमत के लिए साथ ले लिया और बीरा के साथ उस के मायके चली गयी।

बीरा का प्रसन्न कठिन नहीं था। वह भर-जवान थी और तन्दुरुस्त भी थी। उस की माँ और भाभी चुटकी काटती हुई उसे कहती 'या ही डर जा रही है। जनम देने में क्या लगता है। एक बार चाख भर दिया कि बेटे ने जनम लिया।

निहालकौर बीरा के मायके पर किसी तरह भी भार नहीं बनी। खुले हाथ खर्च करता थी। घर के सब लोग उस सरदारिन-सरदारिन कहते अपाते नहीं थे। निहालकौर हँसकर कहती, 'एक बार चीख दिया कि बेटे ने जनम लिया। पर अगर बेटे का जनम देना हो तो ?

बीरा की भाभी खिलखिलाकर हँसता हुई कहती, "दा बार चीखने से बेटे को जनम दिया जा सकता है।"

"बेटे के लिए दो चीखें ? निहालकौर हँसकर पूछती।

एक चीख पीटा की और एक चीख राम की बीरा की भाभी कहती, 'खुशी तो बेटे की होती है। बेटियाँ की क्या खुशी होगी।'

निहालकौर के दिल में एक गहरी टीस उठी। उस ने सोचा, मैं ने ज़िन्गी में न एक बार चीखकर देखा न दा बार। पर उम ने अपना मुसकराते हुए होठों से अपनी बसब को इस तरह पी लिया कि उस का दूध भी उस के चेहरों के देखकर लज्जित होकर रह गया।

और फिर जिस रात बीरा का प्रसन्न की पीड़ाएँ गुरू हुई तो दातो तले दबे उम के जवान हाथों ने उन पीड़ाओं का इस तरह सह लिया कि किसी को खबर भी न हुई। सिर्फ एक बार उस की एक चीख सुनाई दी तो बीरा के सिरहाने बड़ी

निहालकौर की तरफ देखकर दाई ने कहा, "सरदारिन, मुबारक हा ! आजा तुम्हारी शाली बेटे स भर हूँ ।"

निहालकौर ने बेटे को भी आचल म ले लिया और मुबारकवाद को भी । पर मुबह होते ही जब वह सरदार को तार भेजने लगी तो बीरो ने निहालकौर को अपने पाग बुलाकर अपने दोना हाथ उम के पावा पर रख दिये और बाली, "सरदारिन ! मैं दुनिया से झूठ बोल सकती हूँ, पर तुम से नहीं । यह लडका तुम्हारे सरदार का नहीं "

"बीरो ' निहालकौर को लगा जैसे उस की जवान लडखडाकर रह गयी हो ।

"मैं सरदार की किसी तरह ऋणी नहीं हूँ । पर मैं तुम्हारी ऋणी हूँ । अगर यह लडका सिर्फ सरदार के आगम में हा खेलता ता मुझे कोई उजर नहीं था । पर डमे मैं तुम्हारी शोली में नहीं डाल सकती । यह तुम्हारी बोली के योग्य नहीं ह ।

' क्या कह रही हो बीरो । '

"किया तो मैंने हँसी हँसी म था, शायद हँसो को समय इसी तरह डँसता ह । गच कहती हूँ तुम से, मुझे अपने लिए कोई पछतावा नहीं । अगर दिल में पछतावा ह तो तुम्हारे लिए '

"बी रा ।"

'तुम्हें याद हागा कि मैं पिछले साल एक बार मायके आयी थी आप का मुशी मेरे साथ आया था मुझे मायके मिलकर ले जाने के लिए । यहाँ सारे गाँव में यह बात फनी हुई थी कि मेरे मा-बाप ने रुपया लेकर मेरा विवाह एक बूढे सरदार स कर दिया था । सरदार कभी इस गाव में नहीं आया । मेरा बाप ही मुझे आप के गहर ले गया था और गुरदारे में विवाह के बाद मुझे आप के घर छाड आया था मेरे गाव आने पर हर कोई मुझ मे पूछने लगा कि मेरा सरदार कितना बूढ़ा था ? मुझे जाने क्या सूझा मैं ने उन स पोछा छुडाने के लिए कह दिया कि मेरा विवाह बूढ़े से नहीं हुआ था । आप का मुगी बडा जवान था, सुन्दर भा था । उसे दिखाकर मैं ने उन से कहा कि यह मेरा घरवाला ह । सारी की सारी वस्ती हरान हाकर रह गयी । मुशी का मैं ने यह बात बता दी । मुशी ने भी बूठ का आड लिया । जब मेरी सहेलियों ने उम स बुन्ना की माँग की तो अपने सुनार से चाँगे के बुदे खरीदकर उन्हें दे दिये । पाच-छह दिन में यहा रही । राज हँसने-हँसाते मुझे भी यह महगूम हाने लगा कि मेरा विवाह उमी के साथ हुआ था, और किमी के साथ नहीं ।

"हमारा मुगी मर्नसिह "

' मैं अब लौटकर सरदार क घर नहीं जाऊँगी । न हा इम लडके का ले जाऊँगी । इसलिए जिन् पकडकर मैं यहाँ आयी हूँ । मेरा किया मेरे सामने आवेगा । मैं तुम से और कुछ नहा माँगती सरदारिन । बस एक बात माँगती हूँ कि सरदार को उम मुगी का नाम मन बताना । नहीं ता उस मुगी का वह नौकरा स निवाल देगा । '

"पर मर्नसिह विवाहित ह वारा । उम के घर दो बच्चे ह "

‘इसो लिए वह डरता हूँ कि सरदार का पता चल गया तो उम की नौकरी जाती रहेगा। उम ने बीन-गा मुझे अपने घर बगाना हूँ कि मैं उम की नौकरी तुम्हारे यह जहाँ भा रहे गुन रहे मैं ने एक बार दगा ता सही कि जमान आदमी बगा होता हूँ—’

निहालबीर ने धरारकर आँखें बन्द कर ली। और फिर जब उम न आँखें खाली ता उम ने दगा कि बीरो की झाली में पना हुआ उम का घेटा उम की छाती का दूध पीने के लिए मुँह बिरा रहा था।

और निहालबीर को लगा—‘भरदार का जा निदवाग’ उम ने अपने जिम्मे ले लिया था और वारा न उम से वही निदवाग लेकर अपनी छाती में रख लिया था, यह लम्बा बीरो की छाता में ग उसी निदवाग का पान की बीगिंग कर रहा था।

लटिया की छोकरी

पावती ने जब डोली में से पैर उतारा, सब से पहले उस के समुर ने रुपया की शैली में उस का हाथ ढाँकाया, फिर उस की सास ने सोने की कण्ठी उसे मुँह दिखाई दी, फिर उस के देवर ने उसे सफेद मोतिया की अँगूठी घूँघट-उठायी में दी और फिर बाकी सगे-सम्बन्धिया ने अपने अपने सम्बन्ध के अनुसार पाँच-पाँच या दो-दो रुपये उस की मुट्ठी में लिये। देसरज की बारी आधी रात के करीब आनी था। सुहाग की सेज पर बठी पावती सोच रही थी कि उस के समुर ने उस का घर में स्वागत कर उसे बहू से बेनी बना लिया था उस की साम ने उस का मुँह देखते हुए उसे घर का सिंगार कहा था, उस के देवर ने उस के रूप को सराहते हुए उसे फूँग जसी भाभी कहा था और सगे सम्बन्धिया ने उसे चन्दन की डाली कह-कहकर प्रशंसा की थी और वह सोच रही थी कि अगर देसरज उस का मुँह देखकर उसे अपने मन में उतार लेगा तब ही यह सब कुछ सायब होगा, नहीं तो यह सब कुछ निष्फल जायेगा।

देसरज ने बड़ी कोमलता से पावती का घूँघट उठाया और नज़र भरकर उस के मुँह की ओर निहारते हुए धीरे से कहने लगा “पागे !”

जिस कोमल आवाज़ में देसरज ने पावती को पारो बना दिया—पावती का तन मन पूर गया। उस ने पलकें झपककर देसरज के मुँह की ओर देखा। देसरज के मुँह पर एक गहरी तसली थी उस ने कोट की जेब में से एक तमबीर निकाली और पागे की आंखों में डालकर कहने लगा, ‘तुम्हारी मुँह दिखाई।’

पारो तसबीर की ओर देखती की देखती रह गयी। यह एक भरपूर जवान लड़की की तसबीर थी। लड़की के बदन पर एक छाटी सी चोली थी, लाँगवाली धाती बंधा थी और बालों में फूल के गुच्छे टके थे। लड़की के मुख पर रूप का ज्वार था और यह रूप जगली फूला जसा था। पारो को क्षण भर के लिए ऐसा लगा जैसे उस का दिल धड़कने से रह गया हो।

हमारे क्षण देसरज ने पारो को उस के दिल की धड़कन लौटा दी। वहने लगा, “यह चारु की तसबीर ह। मैं साचता था, अगर तुम्हारा मुख उतना ही सुन्दर हुआ जितना मेरे मन में बसा हुआ ह तो मैं चारु की तसबीर तुम्हें मुँह दिखाई दूँगा।”

और देसरज ने पावती को अपनी पारो बनाकर चारु की बहानी इस तरह सुनायी

‘एक बार हमारा हाथ बहुत तंग हा गया था। पिताजी किसी के साथ

साझेदारी कर बैठे थे। अधिक विश्वास का बदला हमें यह मिला था कि घर का सारा छाप छल्ला बचकर बाजार का बज्र चुकाया था। लेना डूब गया था और हम राटी के भी मुहताज थे। मेरे ताऊ व बेटे बाघराज और कमचंद, पिछले कुछ सालों से मध्य प्रदेश में रहते थे। मुना था ठेकेगारी करते ह। वे कुछ सालों में ही बड़ी अमाफी बन गये थे। उन्होंने मुझे लिख भेजा कि मैं भी अगर कुछ थोड़ा-बहुत पैसा लेकर उन के पास पहुँच जाऊँ तो कुछ दिनों में ही घर की हालत सुधर सकती है।

‘मैं सोनीपत छाड़कर विलासपुर चला गया। बाघराज और कमचंद जिन ढंग से लकड़पती बन थे, वह ढंग देखकर मेरा दिल काप गया। वे बीस रुपये सब्जी ब्याज लेकर अपना रुपया याज पर दे देते थे। दाव लगे तो पचीस रुपये भी लगा लेते थे। आसपास के गावों में गरीबों का जीना भी गिरखी पड़ा हुआ था और मरना भी। मैं साहूकारी का काम न कर पाया लेकिन पाम-पड़ान के गाँवों में काम का अन्तर देखने हुए मैं ने विलासपुर से उन्नीस मील दूर अकलतरे में सावुन का कारखाना खोल लिया।

‘जो गांव रलवे लाइन के पाम पड़ते ह वहाँ के आदिवासी चाहे अपनी जंगल की आज्ञानी को खो बैठे ह फिर भी नाच-गाने की आज्ञानी उन की हड्डियाँ में रमी हुई है। होली के दिनों में मैं ने किसी से पूछा कि अगर मैं लामा के नाच गाना की महफिल में चला जाऊँ तो किसी को एतराज तो नहीं? मामूम हुआ कि किसी को एतराज नहीं था। मैं एक साँझ को गाँव के उस इक्कठ में चला गया जहाँ मृदंग और बामुरी बज रही थी स्त्रियाँ और पुष्प कासे की बटोरियाँ में ताड़ी पी रहे थे और गा रहे थे। ताल-मोले रग में डूबी हुई औरतों ने पूरे हाथों में बाच की चूड़ियाँ पहनी हुई थी परा में ताल की नाग भोरियाँ और नाक में मोटी मोटी तोलियाँ। गैर के फूँ उन के बालों में बंधे हुए थे। उन का गीत आज तक याद है

‘मोर जंगल में आयो रसिया

का कल्ले दाई एक न माने।

चले न मोरे बमिया

मोर अँगना में आयो रसिया।’

‘यह जंगल लकड़ी गड्ढ की खुसमूरत थी। उस ने सारे ‘इक्कठ की फेरी ली और बाह लटकाकर एक लम्बा सा गान गाया। उस गीत की एक ही पंक्ति मुझे याद रह गयी है लटपट पाग से लपेट मन ले गयो।—हर बार जब वह यह पंक्ति बोलती थी सारे इक्कठ की स्त्रियाँ उस के साथ मिलकर इस पंक्ति को गुँजा देती थी। उस ने बराबर रग बाँधा। पर मृदंगवाला उस से भा अधिक मस्ती में था उस ने बनी लकड़ से एक गीत गाया

‘ताला देखे रहियो री

लटिया की छारी मारे जिया में भा गयी।

नागन सा छारा मारे हिया म छा गयी ।

जहिर चडह गया री,

तोला देखे रहियो री ।'

“लाग यह गीत गा रहे थे और साथ म गुटन रहे थे । मैं ने देखा कि मृदग वाला भी और कई दूसर भी, बार बार जिस आर देस रहे थे, वहाँ पन्द्रह-सोल्ह साल की एक बड़ा लडकी खडी थी जिस ने लडका की तरह बमर म एक अगोछा बाँधा हुआ था और गले म एक चारमानी कुरती पहनी हुई था । उस आर औरतें अपने बाल खूब लम्बे रखती ह । पर उम ठडका ने लडका की तरह अपने बाल काटे हुए थे और गानेवाला औरता से परे खडा बीडा पी रही थी ।

मैं ने पिछले दिना गाव की वाली सीख ली थी । मेरे पास साबुन की फेरी लगानेवाला चेटू काका खडा था, मैं ने उस से पूछा कि यह लडकी कौन थी । चेटू काका ने बडा ताकीद से मुझे बताया, 'अरे, ए छाकरी चारु' । ए बडी चट ए । एकर नजीक नन जावे, याड कुन कोना एला छी से, कि जूती एकर हाथ में आयी से । ए जौन ननकी मृदग बजावत ए, एकर मोत आवे ऐमना मोला दीयत ए, ए चारु ला प्यार करत ए । और चेटू काका ने मुझे यह भी बताया कि यह चारु लटियापारे में रहती थी इसी लिए यह मृदगवाला ननकी अपने गीत म कह रहा था कि लटिया की छोरी मार जिया में भा गया ।

'मैं कितनी ही दूर चारु की आर देखता रहा । मैं हरात था कि चारु ने जान बूझकर अपना रूप क्या बिगाडा हुआ था । वह अगर दूसरी लडकियो की तरह रंगीली धाती बाधती, बाँहा में काच के गजरे पहनती आखा में काजल डालती और लम्बे बाला का जूडा बनाकर उम म फूल टाकता, तो वह बहुत सुंदर लग सकती थी पर बाला जमी वह लडकी उस समय बिलकुल लडकी नहीं लग रही थी । सिर्फ उस के मुख पर उस की आँखें ऐसी थी जो उस के रूप की चुगली खा रही था । नहीं तो उम की ओर दूसरी बार देखने का भी खयाल न जाता ।

“दूसरे दिन चेटू काका ने मुझे फिर बताया कि वह लटियापारे का छाकरी बडा सतरगाक थी । आठ आने महीना पर एक खपरल किराये पर लेकर अकेली रहती थी । छुटपन म माँ डूबकर मर गयी थी । बाप पागल हा गया था और अब वह शेरनी की तरह हिमा से भी नहीं डरता थी । बीडिया फूँकती थी, जुआ खेलती थी और ठेके पर जाकर पडवा गराव एक ही बार चला लेती थी । कभी वह ओखली में लाग़ा का घान कूटकर चार पाँच आने राज कमा लेती थी और कभी वह स्टेशन पर जाकर एक एक आने म लाग़ा का सामान दो दती थी । और चेटू काका ने मुझे बताया कि कभी राह तान में उस बुला न लें । वह किसी की इरजत नहीं देखती थी और दूसरे का हाथ झगवकर पाँव में स जूनी निकाल लेती थी ।

'यह सब कुछ बडा अजीब था । मैं अकसर बठा-बठा चारु के बारे में सोचता

लटिया की छोकरी

गया थी। पर वह जन्म आया, बड़ी बपरवाही से भज की आर खड़ी हाजर बीड़ी पीने लगी। भज पर इन्स्पेक्टर ने अपने बागड़ा आदि के साथ शराब का पत्रा रखा हुआ था। गांव के मुखिया से बागड़ा पर दस्तखत करवाने हुए, उस ने बातल दिखायी। बातल का हाथ में लेकर जब एक आत्मी ने हिलाया तो शराब की भाग न उठा। दूसर ने हरान हावर ढक्कन उतारा और उस मूँसा। शराब का बू भा नहीं था। एक आत्मी का एक घूँट पिलाया गया तो उस ने बताया कि यह तो निरा पानी है। इन्स्पेक्टर बड़ा हरान हुआ। ऊँची ऊँची गालियाँ सिपाहिया को देने लगा कि उन्होंने रात को चारू से रिश्वत लेकर शराब को पानी में बदल लिया था। इन्स्पेक्टर ने भक्का गालिया दी। पर अब क्या हो सकता था। बात टल गयी और चारू उसी तरह बीड़ी पाती हुई धान से सुपन हाकर चली गयी।

एक-दो दिना के बाद मैं ने चारू का अपने पास बुलाया और कहा देख चारू ! त जक्ले रहत अस ना ? ऐकर सातर तार ऊपर ए सब मुसावत आत ह ए !

“ मैं जानत हूँ ठाकुर ! चारू ने बड़ी हलीमी से जवाब दिया।

‘ मैं न फिर उस से कहा, मार समग म ननकी बहुत जच्छा छाकरा ए, अऊ तौर सिऊ प्यार करत हूँ ए।

‘मैं जानत हूँ। उस न फिर वही जवाब दिया।

त उकर सेया ब्याह काहे नही कर ऐत अस ?’ मैं ने उस से सीधा सवाल किया।

‘ करिआ पर थाड़ा ठहरि के ? चारू ने बड़ी तसल्ली से मुझ बताया।

‘ कतव दिन ठहरि के के ? मैं ने उस से जब पूछा तो चारू कितना देर कुछ न कह सकी फिर धीरे से यह कहकर कि को जाने यह बीड़ी पीता मेर कमरे म से चली गयी।

चारू के मन की गहराई काई न नाप पाया। दिन उसी तरह गुमसुम बीतने लगे। सिफ मर कहने पर चारू ने इत्ता कर लिया कि उस ने अगाछ बांधन की जगह जोरतो की तरह रगदार घोता बाधनी शुरू कर दी और जोरतो का तरह बाल भी लम्बे करने लगी।

एक दिन गाँव में बड़ा शोर मचा कि गाँव का पुराना मालगुजार कितने ही दिना के बाद गांव लौटा था और रात अपने खेतों का शापनी में सोया पड़ा था कि शापडी को आग लग गयी। मालगुजार बीच म ही जल मरा था। चेटू काका न मुझे विस्तार से बताया ‘जर, ओ मारनाह मालगुजार रही म ना ! जीन गाजा के चिलम में अफीम डाल के नगा करत रही से, आज रात के उतर शापडी म आग लग गये, उई म बिचारा जल मरी म। लाग कहते थे कि सठियामे हुए धूने ने शायद रात को चिलम में अफीम की डली अधिक डाल ली थी जिस के मरो में चिलम उस के हाथ से छूट गिरी थी और उस की खाट का आग लगती लगती पूरी खपरैल म लग गयी थी।

फिर धीरे धीरे यह खबर भी चल निकली कि रात का मालगुजार ने अपने किसी आत्मी के हाथ चारू का अपनी झपड़ी में बुलवाया था और उस पर जबरदस्ती हाथ डालना चाहा था। यह सारे गाँव को मालूम था कि अगर कोई चारू को हाथ डालना चाहे तो उस का क्या हज़ार हाता था। लोग कहते थे कि चारू ने जरूर उसे अपनी जूती से पीटा होगा और थोपड़ी से भाग गयी होगी। दूँ के का उमी की आह लग गयी थी, इसलिए वह रात को दबी आग से जल मरा था।

“चारू से पूछने की किसी की हिम्मत नहीं थी। मैं न भी कुछ न पूछा।

“तीसरे दिन पूर्णिमा थी। पूर्णिमा के दिन ननकी दौड़ता-पौड़ता मेरे पास आया उस की साँस फूला हुई थी। कहने लगा, ‘ठाकुर साहिब! आज मार मन खूब खुग ए! का जाने लटिया की छोकरी के मन म का आयी से कि मौला बुला के आपन मुँह ले मार सग याह बरे बर कही से।

सच?’ मैं ननकी की तरह खुग भी हुआ और हुरान भी।

“‘सच ठाकुर साहिब! मैं तो तुमन ला योता दे बर आये हा। आज रात के चारू तुमन ला आपन घर में खाये पिये बर बुलायो से। ननकी ने मुझे कहा और मुझ से दिन भर की छुट्टी लेकर चला गया।

‘मैं ने उपहार के रूप में चारू के लिए एक रंगीली धाती खरीदी और रात को उस के घर चला गया। चारू की खपरल में ढालकी बज रही थी। खपरल के दरवाजे में बहुत-से फूल टाँके गये थे और बरामदे में चावल पन रहे थे।

रायाता की जाति में और दूसरी छाटी जातियाँ में विवाह की कोई रस्म नहीं होती। लटमा लड़की के हाथों में बाँच की चूड़िया पहना दता ह बस विवाह हो जाता ह। ननकी की माँ रायातो की तीन चार और स्त्रियाँ और गाँव के न मुखिया इस दावत में आये हुए थे। बस और कोई नहीं था। राह मठली पकी हुई थी, लुचई चावल बने हुए थे और चारू सब का महफ की शराब पिला रही थी। बने चारू आज कोई दूमरी ही चारू दिखाई दे रही थी। उस ने पीछे रंग की कुरती पहनी हुई थी, लाल रंग की धाता बांधी थी हाथों में बाँच की चूड़िया और गीशे के गजर पहने हुए थे। माथे पर बिंदु लगाया था और बालों में मांगरे के फूँट गुँथे हुए थे।

रायोता की स्त्रियाँ और गाँव के मुखिया जय सा-पीकर बिदा हो गये तो मैं ने शराब की बोतलों की ओर देखकर चारू से पूछा चारू, ताला डर नहीं लगे जो ऊपर ले थानेदार आ जाये ता?

‘चारू के मुख पर पहले रूप ही चढ़ा हुआ था, अब अब और चमक आ गयी और वह बिजली की तरह चमककर बोली अब मौला थानेदार कबो तग बगेसे तो मैं उला उही जगा भेजू जहा मालगुजार गये से।

‘मैं भीचका रह गया। मेरी तरह ननकी का मुँह भी खुले का खुला रह गया। ननकी धोल न पाया मैं ने ही चारू से पूछा ‘मच बता, चारू! मालगुजार ला

लटिया का छोकरी

तही मारे अस ?

“ मैं कातर मारीआ उकर पाप ही उला मारे ई ।’ चारु तमवर बोली ।

“ ओ तोला छेडी रही से ? इम बार ननकी ने चारु से पूछा ।

“ चारु ने दाँत पीसकर जवाब दिया, ‘ओ बरऊ के का हिम्मत रही से जग मोला छेडताम ।’

“ फिर ?’ मैं ने और ननकी ने हरान होमर पूछा ।

ओ मार दाई ला मरवाये रही स ।’ चारु के मुस पर रोप का एक नया रूप चर गया ।

‘ तोर दाई ला ? मेरे मुँह से निरला ।

‘ चारु ने हाथ में पकड़ी हुई सराब की कटोरी एक आर रग दी और अँगुली लेकर कहने लगी मोर दाई गाऊँ भर में सब से खूबसूरत रही स । मालगुजार के मन सराब हो गयी से । मो दाई एला खूब डाँटा स । आउ एक दिन जब मार दाई कुआ ले पानी भरत रहा से तो ए आपन कानो आदमी के हाथ उला कुआँ में धकेल देई से । मोर दाद मर गये । एइ दुग मा मार दादा पागल हो गये । मैं आपन मन में कसम खाये रहिया के अपन दाई के बदला चुका के छाडिया ।

‘ चारु ! इहि खातर तें ब्याह नही करत रहे अम ? ननकी ने चारु की बाह अपने हाथ में पकड़ ली और उसे गव से पूछा ।

‘हाँ, ननकी ! मैं आपन मन में प्रतय्या करे रहओ कि मैं आपन हाथ में बाँच की एक बूनी तक ना पहुँचूँ ।’

“ननकी ने चारु को गले से लगा लिया । उस के मुँह से बार-बार यही निमल रहा था, ‘ए मार चारु ! ओ मोर लटिया की छोकरी ! त अतका दुल जकेले बोटे-वाहे घूमत रहे अस मोला पहिले काबर नही बताय अम । मैं तोर राव के सब दुग ला आपन ऊपर ले लेत ।’

“चारु ने ननकी को बडा दुलराया और कहने लगी ‘आ ननकी ! मैं तोल गुरु ले प्यार करत रहिया । मैं तोला कोई खतरा में कसे डालत ? अऊ फिर जब तक मैं आपन हाथ ले बदला नही लेते, मोर दाई के आत्मा कसे चर पातीस ।’

और पारो ’ कहानी सुनाते हुए देसराज की आवाज भर्रा गयी थी, वह पारो को गले से लगाकर कहने लगा

‘चारु के रूप में मैं ने औरत के मन का जो रूप देगा ह उस के आगे मेरा सिर झुक जाता ह । मैं ने इमो लिए चारु की तमवीर तुम्हें मुह दिसाई में दी ह ।’

देसराज के सीने से सिर लगाकर पारो ने एक बार फिर चारु की तसवीर की ओर देखा और उसे अपनी जाया म सजोती हुई साधने लगी कि वह चारु के रूप को अपने रोम रोम में बसा लेगी और वह देसराज के मन म उसी तरह अवित्त हो गायेगी जिम तरह उस के मन में चारु के मन का रूप अवित्त है ।

गाँजे की कली

“अघनिया ! ओ अघनिया !”

‘जा मैं नहीं गुठियाऊँ ।’

“काबर नहीं गुठियावे ?”

‘त मोर नाम अघनिया काबर रखे अस ?’

‘मैं तोला क बार बता चुके हूँ कि त ‘अघन’ में पदा होए रहे जम, एकरे सेती तोर दादा तोर नाम अघनिया रख दे रही से, ए मा माँ का बसूर ए ?’

‘दाई, माला तो ए नाम अच्छा नहीं लगे । अच्छा बता ता भला जो मैं वही जेसठ म पैदा हुआ जाती तो मोर दादा मोर नाम जेसठी रख दतीस ?’

अघनिया का मा मन म गुटक उठी । अघनिया उस की बड़की बेटी थी । और वह भी ढलती उमर में हुई थी । वह कई साल पीपला तले नहती रही थी । कोई टोना उस ने छोड़ा नहीं था । एक बार किसी अघारी के कहने पर उस ने अपनेआप को शिवर्णिग का भा समर्पित किया था । और फिर कही जाकर यह बेटी उस की बाब में पड़ी थी । एक ता बेटी लाडली और वह भी शलमला गाँव के मालगुजार की बेटी । और वह भी किस्मतवाली । क्योंकि उम के बाद उम की माँ ने एक के बाद एक तीन बेटे जन्मे थे । मा ने लाड से पूछा

“तोर का नाम रखे के मन ए ? जौन नाम तोर मन ला अच्छा लग त ओई रख ल । सगुणा नाम ताला अच्छा लागत ए ? सगुणा शबरी पोखरी मगली पर एमन सब नाम तो नीच जातीवाला मन के नाम हैं । हमर जाति में तो पुस्कर, राधा, सीता ऐसना नाम अच्छा लगे ।’

‘ना दाई ना । मार ता गुलबत्ती नाम रखे के मन हैं । एई नाम माला खूब अच्छा लागत ए ।’

‘तो जा नारियल ले क मंदिर में चडा आ, और पुजारी जी ला कहो आज ले मैं आपन नाम गुलबत्ती रख ल हा ।’

अघनिया उफ गुलबत्ती खुशी से मचल उठी और दानो बाहें माँ के गले में डालकर कहने लगी

‘देख दाई त आज मोर एक और बात ला मान ले, बता तो मानवे ना ?’

‘स ल, मोर गला ला तो छाड । त जौन बात कवे ओई ला मैं मान लूँ ।’

“ओ जो दादा टीपा में सौंफिया दाँव रखे एना ओमा के थोडकुन मोला द दे,

आज मोर पिए के अडबड मन ए ।”

“चल हट । देख ता एकर घात ला, बाल के छोनरी अऊ दाहू पिए घर मागत ए कौनो सुनी ता का कही ?

“ल अब मैं बारह साल के तो हा गये आ ।”

‘बारह साल के हो गये अस ता कौन मार त जवान हो गये अस, दाहू पिए घर दाहू पिए घर करत ए, जाना जा के खेत मन ला, देख मव तो खेता होत ए ओती दादा दाहू म जूआ में उडान ए ओती नौकर मन सब कुछ खावजात ए ।’

‘त फिकर छन कर मैं सब देव लूँ अब तो मैं बडे हो गये ऊँ ।’

बडे हो गये अस तो तैवर सेती तो तोर दादा तोला घर से निकालत ।”

“मोर दादा माला घर से निकाली ?”

“हाँ अब तो तोर व्याह के सब बात पक्का हो गये हुए ।”

अधनिया से अभी-अभी बनी गुलबत्ती के मन में एक घरघाट-भी उठी । वह नारियल की घात भी भूल गयी और दाहू की भी । कमर में बंधी हुई चाँदी की बरघनी जसे उस के गले में लिपट गयी । और वह खुल्लर सांस लेने के लिए एक ही शटक से बरघनी उतारकर बाहर बँवल फूलों के तालाब की ओर चल दी ।

गुलबत्ती को लडकिया के साथ मिलकर आंगमिचोनी खेलना बिलकुल पसन्द नहीं था । वह जब गांव के जवान लडका को ‘डुडुया । बबट्टी । खेलते देखती थी तो वह भी सास राककर ‘डा डो करती हुई उन को जवानी के बराबर उतरना चाहती थी । पर गुलबत्ती हमेशा अपनी माँ के कहने में रहती थी, उस की माँ ने उसे लडकों के साथ खेलने से मना किया हुआ था इसलिए गुलबत्ती ने अपने मन को एक लगाम डाली हुई थी—आज जब वह तागाव की आर जा रही थी, मंदिर के पीछे कितने ही कुर्मी लडके डुडुया खल रहे थे—गुलबत्ती को लगा कि आज उस के मन की लगाम टूट जायेगी । यों तो जवानी सब की खूबमूरत होती ह वह सोचने लगी ‘पर चमारों (चमारों) राउता (माशकिया) और पनको (जुलाहो) क लडको से कुर्मी लडके बडे सीखे-सने हाते ह’ गुलबत्ती साचने लगी शायद इसलिए कि वे मछलिया का पकन्ते हुए पानी में मछलिया की तरह तरना भी जानते ह ।

गुलबत्ती कुछ दूर जवान कुर्मी लडका के तेल से चुपड हुए बदन देखती रही । उन की बाहो म मछलियाँ फडक रही थी । और गुलबत्ती को लगा कि अगर वह भी डो डा करती हुई उन के पास खेलने चली जाये ता वह इन लडको की बाँहो में से मछलियाँ पकड सकती थी ।

शिवाले का घण्टा बजा और गुलबत्ती ने देखा कि उस की सहेली सानिया मन्दिर से प्रसाद लेकर बाहर निकल रही थी । गुलबत्ती को नारियल की घात याद हो आयी और कुर्मी लडको का बाहो में से मछलिया पकडने की बात भूल गयी ।

गुलबत्ती ने सहेली का साथ लेकर मंदिर में नाग्यल चढ़ाया और शिव की

मूर्ति के सामने खड़ी हावर अघनिया स पक्की तरह गुलबत्ती बन गयी ।

गुलबत्ती बनकर वह खुश थी पर उतनी खुश नहीं जितनी खुश उसे होना चाहिए था । आज मा ने उस जा विवाह की बात बतायी थी, वह बात उस के दिल में डूब उतरा रही थी । वह अपनी सहेली का साथ लेकर जब केवल फूलों के तालाब की ओर गयी ता फूलों की नीली ओर गुलाबी आभा उस के कलेजे में घिर उठी । गुलबत्ती की सहेली गुलबत्ती स दो साल बड़ी थी । वह कभी-कभी एक गीत गाया करती थी जो गुलबत्ता की समझ में कभी नहीं आया था । आज गुलबत्ती ने उसे वही गीत गाने के लिए कहा

“घर ला फाड़ के बनाये हो कुरिया

तोर मया के मारे जाया नहीं दुःरिया ।

सहेली ने आज जब यह गीत गाया ता गुलबत्ती का लगा कि आज यह गात उस की समझ में आ गया था । उसे लगा कि केवल फूलों का नाली और गुलाबी आभा थी जिस की माया उस के मन का लग गयी थी । वह इस माया की मारी कहीं दूर नहीं जा सकती थी और साबद इसी लिए विवाह की बात से उस का मन धवरा रहा था ।

गुलबत्ती का बाप इस झलमला गांव का मालगुजार था—कचकौलप्रसाद पुष्करणा । गांव में कोई सौ घर होंगे । ये सभी कुमिया, पनका और नीची जातिवालों के घर थे । पुष्करणा के केवल चार घर थे और उन में से भी कचकौलप्रसाद का एक घर था जा पक्का बना हुआ था बाकी सभी खपरलें थी ।

कचकौलप्रसाद की ढलती आयु में जीलाद हुई थी । अब चाहे इस बड़की बेटी के अलावा उस के घर तान बेंटे थे पर तीना बेटे अभी बहुत छोटे थे । एक ता अभी पालने में था । कचकौलप्रसाद का कामकाज संभालने के लिए सहारा चाहिए था, इसलिए वह चाहता था कि अपनी बेटी को किसी समयदार आदमी से ग्राह कर अपना सहायक बना ले ।

झलमला गांव से कुछ कोस के पासले पर चण्डीपारा गांव था । इस चण्डीपारे का मालगुजार रंगीलाल कचकौलप्रसाद के मिलने-जुलनेवालों में से था । कई बार वे नशा-पानी भी एक साथ बरते थे । रंगीलाल की औरत जब मर गयी ता कचकौलप्रसाद ने इस मौके को जाने नहीं दिया । रंगीलाल कचकौलप्रसाद जमा बड़ा मालगुजार नहीं था पर कचकौलप्रसाद जानता था कि वह कारोबार में उस से भी बढकर था । बीस साल आयु का अन्तर कचकौलप्रसाद का दृष्टि में कोई बड़ा अंतर नहीं था । उस ने गुलबत्ता की सगाई रंगीलाल से कर दी ।

अबस्मान गुलबत्ता ने देखा कि एक दिन उस के परा का महावर लगने लगा । घर के आगन में शामियाना लगा और गांव की ओरतें गुलबत्ती के गिद घेरा डालकर गाने लगी

गाँजे का कला

“ऐ बेरा कौन जगी

जगी ता दुलहन छारी

ऐ बेरा कौन जगी ।

दुलहन जगी तो काहे जगी

गोरी नहाये तो काबर नहाये

गारी घर दूल्हा के जाये

ऐ बेरा कौन जगी ।”

गुलबत्ती की भावरें पड़ी । महाने भर म उस का गाना हुआ, उस की पठौनी । पठौनी की रात गुलबत्ती ने देखा कि एक जो अवेड उमर का काला काल सा आदमी बठक में बठकर दाना तलिया में गाँजे की कलियाँ मसलकर गुडगुडी पा रहा था वह उस का खाविद रगोलाल था । उस का दूल्हा । जिस के लिए वह मल-मल न्हायी था, और जिस के लिए गाव की ओरता ने गीत गाये थे, ‘गोरी नहाये ता काबर नहाये, गारी घर दूल्हा के जाये ।’

रौतायन । आ रौतायन । चूल्हा ले घाउकुन आगि तो ला ।” गुडगुडी पीते हुए रगोलाल ने महरी को जब एक बार आवाज दी तो गुलबत्ती का जाने क्या यह खयाल आया कि वह गाँजे की एक कली थी नसे की एक कली, जिसे इस रगोलाल ने सारी उमर अपनी तलिया में मसलकर अपनी गुडगुडी की आग में फूँकना था । गुलबत्ती का मन डूबने लगा । वह किसी के मन की आग में जलना जरूर चाहती थी, किसी का नशा भी बनना चाहती थी पर जाने क्या उस का कटेजा छीज रहा था कि वह इस रगोलाल की गुडगुडी में जलने के लिए नहीं बनी था ।

उस ने एक एक कर कई जवान कुर्मी युवका की कल्पना का । पर किसी भी देखे हुए और परिचित चेहरे का उसे ध्यान न आया । शायद इसलिए कि उस की माँ ने उसे आरम्भ से ही चेता दिया था कि कुर्मी युवक बहुत नीची जाति के थे, और गुलबत्ती हमेशा अपनी माँ के कहने में रहती थी । गुलबत्ती का न कोई कुर्मी युवक याद आया और न कोई और । पर उस का मन उस से पूछ रहा था कि यह रगोलाल किस जाति से था । पर फिर उस का मन उसे खुद ही कह रहा था कि यह रगोलाल चाहे कितनी भी ऊँची जाति का हो, उस की अपनी जाति से मेल नहीं खाता ।

समाज की बनायी हुई जाति मल खा गयी, पर गुलबत्ती व सपना से सपना की जाति न मिली, और गुलबत्ता रगोलाल की गुडगुडी में गाँजे का कली की तरह सुलगने लगी । सुलगती का एक-एक कर पाँच वप हा गये ।

हर साल की तरह इस साल भी धान के खेत लहलहा उठे । रौताही का त्योहार आया । मुजारा के गाता से घरती गुनगुना उठी—और हर साल की तरह इस साल भी गुलबत्ता सूनी आँखा स यह सब कुछ देखती रही । फिर प्रमला की घटाई हुई । वर्षा ऋतु आ गयी और माजली का त्योहार आ गया । ओग्तो ने थालिया में जो

बोये और हरियायी थालिया म दिये जलाकर मंदिरा में चड़ा आयी ।

गुलबत्ती की महंगी सोगिया बात बात पर चहक उठती थी । वह जबरदस्ती गुलबत्ती को रंगीला 'लुंगडा' पहनाती, उस की कुरती पर कौडिया टाक देती और आती जाती उस के मन को बचोट जाती । इस बार भी माडली के मेले पर जाने का गुलबत्ती का मन नहीं था, पर सोगिया ने उस का प्यार से सिंगार किया और हठ ठान कर उसे मेले में ले गयी ।

मेले में तरह-तरह की चीजें थी । कलकत्ता अधिक दूर नहीं पड़ता था । कई बजारों शहरों की सौगातें लाये थे । गुलबत्ती साबुनों की खुशबूदार टिकिया को सूँघती रही, तरह-तरह के मातिया की मालाएँ देखती रही । दो मालाएँ उस ने खरीदी भी । पर मेले में घूमते एक फेरीवाले ने उस के मन को विचलित कर दिया, जिस से खींच कर उस ने सोगिया से कितनी बार कहा कि वह मेला देखते-देखते थक गयी है इसलिए अब वह घर लौटना चाहती है ।

फेरीवाला छरहरे बदन का बाका जवान था । पर वह इतना गार रंग का था कि उस का परदेशी होना गुलबत्ती को खल रहा था । उस की आँखें शोख भी लगती थी और शर्मिली भी । उस ने कितनी ही बार गुलबत्ती के मुख की आर देखते हुए होका लगाया, "कुरती जम्पर वर कपडा ले लो, धाती ले ला लुंगडा ले लो ।" पर जब गुलबत्ती नज़र भरकर उस की ओर देखती थी तो वह अपनी आँखें झुका लेता था । गुलबत्ती चाहती तो कपडा की गठरी खुलवाकर जितनी देर मन म आता देखती रहती पर वह गठरी खुलवाकर कपडे देखने की जगह उस से आँखें चुराने लगी । आँखें चुराते हुए उस ने कितनी ही बार रास्ता बदला । पर जान यह किस्मत का कौन सा छल था, कि गुलबत्ती का बार-बार उस फेरीवाले से सामना हो जाता । आँखों में वह पवराकर मेले से लौट पड़ी । इस बार जब फेरीवाला लौटती हुई गुलबत्ती के सामने पड़ा तो उस के मुँह से अनायास निकल पड़ा

'ठाकुर कौन गाव के अस ?'

"नरिएरा के ।" फेरीवाल ने चौककर जवाब दिया ।

"कौन देग से आये अस ? गुलबत्ती फिर पूछ बठी ।

'पजाय रे ।

'कतन दूर ए इयाँ त ? गुलबत्ती के मुँह से यो आहिस्ता से निकला जम वह मन ही मन में ये दूरी नाप रही हा ।

'खूब दूर पडत ए ।'

खूब दूर पडत ए ? गुलबत्ती होठों में इन गिनती के अंकों को दोहराती मेले में से लौट आयी ।

घर लौटकर आयी गुलबत्ता ने जब रसोई की, और फिर बाहर आँगन में दीया जलाया तो उस ने बाहर चौककर देखा कि सामने मंदिर के बरामदे में बही गौज की कली

फेरीवाला चटाई बिछाकर बठा हुआ था और उपला की आग जलाकर अपने लिए राटी सेंक रहा था। गुलबत्ती जल्दी से बाहर का दरवाजा भिड़काकर चौके में लौट आयी और अपने उखड़ हुए मन का भुगाने लगी।

उस दिन तो नहीं पर दूसरे दिन गुलबत्ती की रीतायन न टक्करी बांधकर गुलबत्ता का ओर देखा और फिर हँसकर पूछने लगी, “नोनी ! आज त बस चुप के चुपे अस ? बाल मेला में कुछ गवा ता नही आये अस ?”

“भला में ?” गुलबत्ता ने हुरान हाकर सागिया की ओर देखा, पर आग न कुछ महरी ने कहा और न गुलबत्ती ने बात का बढ़ाया।

महरी जब माध्या समय अपने घर चली गयी ता गुलबत्ती न बाहर का दरवाजा भिड़काते हुए मन्दिर के बरामदे की ओर देखा। वही फेरीवाला आज फिर उपले जगकर राटी सेंक रहा था। गुलबत्ती आज फिर जल्दी से चौके में लौट आयी और मन का संभालने के लिए अपना निचला हाठ दाता में बाटने लगी।

बाहर के दवाजे पर आहट हुई। महरी जाने क्या लौट आयी थी फिर और हँसकर गुलबत्ती से पूछ रही थी ‘नोनी ! आज कौन चावल रांधे अस ? खून सूखा आवत ए।

‘क्यू तोर खाये के मन ए का ? आज मैं ता तिलक्स्तूरी चावल राधे हो।

‘ए नानी ! हमर एसन भाग कहा, हमन लाइ ता गुरमटिया ही तिलक्स्तूरी ए।

‘चल आज ता खा क दव ले। रमबेलिया के साग औ राहर के दाल के साथ तिलक्स्तूरी चावल कमना मिठात ए ?

‘ए दाई त अतन कुछ राधे अस, तार घर क सामने जीन पजाबी ठाकुर पड ए, ओ ला सुक्या बाटी खात ए।’

माला का करना।’ गुलबत्ती ने एक लापरवाही से कहा। पर उस का दिल ज़ार-ज़ोर से धड़कने लगा।

सागिया हँस उठी और कहने लगी, ‘अच्छा ता नोनी थोडकुन आमा के अथान ही द द में आ बेचारा ला द आओ।

“चल कुटनी ! तोर आपन खाये के मन हाई ना ?”

नही नानी ! तोर कम।”

सोगिया कसम खाती रही गुलबत्ती हँसकर यही कहती रही कि उस का अपना मन था अचार खाने का। वह यो ही पजाबी ठाकुर का बहाना बना रही थी। पर साथ ही गुलबत्ता ने एक बटारी में आम का अचार डाल दिया। एक में अरहर की दाल, और एक डहन म तिलक्स्तूरी चावल।

कई दिन बीत चले। फेरीवाले ने मन्दिर के बरामदे में डेरा लगा दिया। दिन भर वह इस गांव म और आसपास के गाँवों म कपड़ा बेचता। रात को इस मन्दिर के

घरामदे में लौट आता। रोज उपले जलाता गेहूँ का आटा मलकर उस के पड़े बनाता, उन में घी भरता और उन्हें उपलो की आग पर सेंक लेता। रोटी बनाने का यह ढंग पंजाबी नहीं था। और इस पंजाबी यात्री ने मध्यप्रदेश की छत्तीसगढ़ी भाषा की तरह यह ढंग भी सीख लिया था। और इस तरह वह रोटी जिसे मध्यप्रदेश की भाषा में बाटी कहते हैं, सेंक लेता। गुलबत्ती की महरी ने राज उम दाल, सब्जी या अचार देने का नियम बना लिया था।

‘कमे सोगिया तोर फेरीवाला ठाकुर के का हाल चाल ए ? आजकाल तो तोर-ओकर खूब पटत ए कभी अथान ले जात अम कभी साग ले जात अम, ए का रग ढग ए ?’

एक दिन गुलबत्ती ने महरी को घुटकी भरी।

सोगिया ने हँसकर ऐसी नज़रा से गुलबत्ती को देखा कि गुलबत्ती को लगा यह नज़र गहरे तक उस के मन में झाँक गयी थी। गुलबत्ती ने खुद ही सोगिया से मज़ाक किया था, खुद हाँ लूँगी। सोगिया का साहम बना। कहने लगी ‘हमन ला तो मालिक के मन ला देखना पटत ए।’

मोर मन ? गुलबत्ती ने घबराकर पूछा।

‘त घबरा काबर गये अस नोनी ? तोर मन के बात, मार मन के बात ए। मार जा छूट जाई, तो छूट जाई, पर तार बर ता मार जान भी हाजर ए।’

सोगिया ने यह बात जाने कितने सच्चे दिल से की थी। गुलबत्ती का मन स्नेह के सेंक से पिघल गया और दो माटे मोटे आँसू उस की आँखों में भर आये।

तार दुखा ला मैं जानत ओ नोनी, तोर दादा तोला चण्नीपारा में व्याह के भारी गलती करी से।

गुलबत्ती को महिरम मिल गयी। गुलबत्ती की जिंदगी में यह पहली रात थी जिस रात उस ने अपने मन में सुलकर सोचा कि—उस की जिन्दगी अगर गाँजे की बनी थी तो वह इस पंजाबी ठाकुर की तलियाँ में मसली आकर उस की उपलों की आग में सुलगना चाहती थी। वह एक तीखा नंगा बनकर इस गोर, चिट्टे और गुकुमार युवक का आँखों में चट जाना चाहती थी, वह गुलबत्ती आगे सावती-मोचती काँप भी गयी और झूम भी गयी।

दूसरे दिन प्रातः काल गुलबत्ती ने घर के पीछे बने बँवल पूँछ के तालाब पर जाकर गहुँत-मे फूल तोड़े और घाली में डालकर मंदिर में ले गयी। मंदिर के घरामदे में से गुजरते हुए गुलबत्ती ने पंजाबी ठाकुर को जी भरकर देखा और आज सौ पाँच साल पहले की एक छाँटे-नी बात उभर बहुत याद आयी।—आज मे पाँच साल पहले, जिस दिन उस ने अपनी याद से अपना नाम गुलबत्ती रखा था और अपना सहेली सानिया को लेकर बँवल पूँछ के तालाब पर गया थी, उस दिन जब उस की सहेली ने गाया था, ‘घर ला फोड़ो बनाय हा कुरिया, तार मया के मारे जाआ नहीं दुरिया’

और उस दिन उसे लगा था कि बँवल फूला की नीली जीर गुठबी आभा की उसे माया लग गयी थी। वह वास्तव में बँवल फूला की माया नहीं थी, वह इस आनेवाली घटना की परछाई थी। वह इस पंजाबी ठाकुर की बँवल फूला जसी माटी और काली आखा की माया थी।

पंजाबी सरदार ने बड़ी तरसी हुई आत्मा से गुलबत्ती की आत्मा का हुकारा भरा जसे कह रहा हो, माया तुझे तो नहीं लगी सुंदरी! माया तो मुझे लग गयी तुम्हारी— देख मैं कितने दिना से तुम्हारे घर के आगे घूनी लगाकर बठा हूँ।’

पंजाबी सरदार हेमसिंह से गुलबत्ती का मन मिल गया। सोनिया के बगैर और चाँद-तारों के बगैर इस बात की खबर किसी को न हुई। पर गुलबत्ती जानती थी कि यह खुशबू अधिक देर गाँठ में बाँधकर नहीं रखी जा सकता था। इसलिए एक रात गुलबत्ती ने हेमसिंह के हाथा का सहारा लेकर चण्डीपारा गाँव छोड़ दिया।

रात गुजरनी थी, गुजर गयी। पर चण्डीपारे का दिन नहीं गुजर सकता था। रंगीलाल ने पहले अपना गाँव ढूँढवाया। फिर गुलबत्ती के बाप कचकौत्प्रसाद को साथ लेकर आसपास के गाँव ढूँढवाये और अगली रात ढलने में पहले नरिएरा गाँव में उस ने गुलबत्ती का और हेमसिंह का पता पा लिया।

एक ओर चण्डीपारे वाले और झलमला गाँव के लोग थे और दूसरी ओर नरिएरे के। नरिएरवालों का कहना था कि उन के गाँव में जो भी कोई औरत सहारा लेने के लिए आयी थी वे उसे जरूर सहारा देंगे। दोना गाँव के मुखिया मिल बैठे और बात को लड़ाई झगड़े से बचाने के लिए उन्होंने पचायत बाध ली। गुलबत्ती ने हेमसिंह का हाथ पकड़ा। भरी पचायत में बैठकर अपने हाथों की चूड़ियाँ ताड़ दी और रंगीलाल से कहने लगी, ‘ले ए पड़े ए तोर चूडी आज ले तोर मोर कोई रिश्ता नहीं ए।’

पचायत ने हेमसिंह को दो सौ रुपये का दण्ड दिया और रंगीलाल को दो सौ रुपया लिलाकर गुलबत्ती हेमसिंह के साथ कर दी।

हेमसिंह की खपरेल में जब गुलबत्ती ने पचायत की ओर से मुखरू होकर चूल्हा जगया तो उस के अंगों में स खजूर के चौर खाये हुए तने स बूँद-बूँद बहता ताड़ी की तरह मस्ती टपक रही थी।

उम रात, और हर रात जब गुलबत्ती हेमसिंह की बाहाम साती थी तो उसे एक ही मयाल आता था कि वह गाजे की कली थी जा हेमसिंह के सामों की जाग में सुलगकर पूरी नशा बन गयी थी। वह जी भरकर हेमसिंह की आत्मा में देखती। उम का आखो में एक बावलापन होता और वह साचती, यह उसी के नशे की गुलाबी धारिया थी। और वह माचती कि उस की निष्फल जाती जिंदगी सफल हो गयी थी।

तीन महीने बीत गये। एक दिन बड़ी-बड़ी गुलबत्ती के अंतर से एक ललक

उठी, 'को जाने का बात ए, आज मोर मन बीह खाये वर करत ए,' और गुलबत्ती ने जय तक तान बड़े बड़े अमरुद न खा लिये उस का मन अमरुदा में भटकता रहा। एक दिन, दो दिन, और फिर गुलबत्ती का मन शकरबंदी खाने के लिए मचलने लगा। गुलबत्ती ने शकरबंदी भूरी और पेट भरकर खायी। अगले दिन गुलबत्ती हरान थी, 'आज मोर जादरी खाये के मन ए।' और गुलबत्ती ने दूधिया भुट्टे भूनकर खाये। घर में झीना परागी चावल भी पड़े हुए थे और लुचई चावल भी, पर गुलबत्ती के अन्तर से उठकर उस की नाक को दुबराज चावलो का सुशबू चढ़ गयी थी। चावलो के माँड से उस के मन को उतकाई आ रही थी। उस ने प्याज भूनकर दुबराज चावला का पुलाव पकाया। साय तेल में मछली भूनी और उस का मन खिल उठा। 'आज मोर समय म आयी स। मैं भी कहीं कसे मार मन खाये-खाये कर करत ए।' और गुलबत्ती मटक मटक उठी कि आज जब हेमसिंह रात को घर आयेगा तो वे दोनों मिल-कर अपने आनेवाले बच्चे की बातें बगेंगे।

हेमसिंह फेरी लगाकर अभी घर नहीं लौटा था, मालगुजार के घर से एक आदमी ने आकर एक खत दिया। हेमसिंह को पहले भी कभी-कभी अपने गाँव से अपने मा-बाप का खत आया करता था और हमेशा मालगुजार के पते पर आता था। गुलबत्ती ने खत को संभालकर रख दिया और बाहर दहलीज में बैठकर हेमसिंह की राह देखने लगी—आज वह मन में हेमसिंह के लिए दोहरी खुशी लेकर बठी हुई थी।

हेमसिंह की शलक वह घने कुहाम में भी पहचान लेती थी। आन तो अभी साँव झीनी थीनी थी। उस ने सामने खेत की मँड पर से आते हुए हेमसिंह को देख लिया। खुशी की एक लहर उम के मन में उठी और वह साचने लगी कि वह हेमसिंह का पहले कौन-सी बात बतायेगी। बच्चेवाली बात बहुत बड़ी थी। और बड़ी बात हमेशा अन्त में खोली जाती है। गुलबत्ती ने सोचा और अदर से जत लाकर अपने आँचल में छिपाती वह आगे उलबकर हेमसिंह से मिले।

तोर वर एक ठा चीज लये हों बता ता भला का ए।

"महूँ तोर वर एक ठा चीज लये हा। मोर सऊँ बदली कर ले।"

पहले तो गुलबत्ती ने हेमसिंह को बनाया और कहने लगी, 'पहले मार मन के साय आपन मन के बदला-बदली कर ले।'

पर जब हेमसिंह ने गुलबत्ती को अपनी बाँहा में लेकर कहा, "आ ता कव के हो चुके ए। अब मैं ओ नया मन कहाँ ल लाऊँ," ता गुलबत्ती ने आँचल में छिपाया हुआ खत हेमसिंह का दे दिया और हेमसिंह स मोंगरे के फूल लेकर अपने बाला में टाँगने लगी।

हेमसिंह ने रत पग और उस के माथे पर पनीने की बूँदें शलक आयी। गुलबत्ती ने जल्दी से हेमसिंह का हाथ थामा और अपनी खपरल में चले आये। पर हेमसिंह का मुख इस तरह हो आया था जये भरे दरिया में उम के हाथ से चप्पू छूट

गोंज की कली

गया हो। गुलबत्ती ने महुए का गारा बगोर में डाली और बगोरा हेमसिंह के आगे बढ़ाती हुई कहने लगी, "ए मा घबराये के बा बात ए ? जितना पैसा का ताला जखरत होई, मैं दहा।"

पिछले दिना हेमसिंह को जब गुलबत्ती के बाले इकट्ठे दा सौ रुपये देने पड़े थे ता उस का हाथ तग हा गया था। उस ने बताया था कि पाछे पंजाब में उस के बूढ़े माँ-बाप उसी के सहार थे। वह उन्हें हर महाने कम स कम डढ़ सौ रुपया भेजा करता था तो गुलबत्ती ने एक रात अपने बाप से चोरी अपनी माँ स हेमसिंह को दो सौ रुपये ला दिये थे। इसलिए अब भी गुलबत्ती ने यही सोचा कि हेमसिंह का रुपये की जरूरत आ पनी थी।

हेमसिंह की आँखा से आँसू बह निकले और वह गुलबत्ती के मुँह की ओर बनी ऋणी आँखा से देखने लगा। गुलबत्ता घबरायी भी पर घबराहट की ओघा वह दिल धामकर तन बठी। उस का मा हेमसिंह के हिस्से का हिस्मत भी अपने पास से जुटा रहा था। धीर धीर हेमसिंह ने मन की बात कही। और उस ने गुलबत्ती का जो प्रेम किया था वह प्रेम सच्चा था। पर वह एक बहुत बड़ा झूठ बोल बठा जा उस ने गुलबत्ती का यह नहीं बताया था कि पीछे गाँव म उस की एक औरत भी थी और एक बच्चा भी। और आज उस की औरत का भिन्नत भरा खत आया था कि उन का इक्लीता बेटा एक मोटर के नाचे आ गया था और अब वह अस्पताल में पड़ा हुआ था। और उस की औरत ने दुहाई दा थी कि वह घर लौट आये।

हरी टहनी जसी गुलबत्ती एक पल भर म पर गयी। बोली कुछ नहीं केवल हेमसिंह के मुँह की ओर देखती रही। देखते-देखते उस क मन म आया कि उस की सूखे पत्ता जमी जा अपनी आग से आप हा जल उठे। वह भी जलकर राख हा जाये और उस की डाल पर बठा हुआ यह पछी भी जलकर राख हा जाये।

उदासी का एक सियाह बादल गुलबत्ती के मन में उठा और अंधेरी रात जसे इस बादल को गुलबत्ती के मन में आयी एक बात बिजली की तरह चार गयी। गुलबत्ती का गारा बलन बिजली की तरह चमका और बिजली की तरह कापा। उस ने बिजली की लकीर की तरह हेमसिंह की आर देखा और कहने लगी, मा ताला एक टन बात बतात हा।

"बा ?

'मोर बच्चा हाइ लागत ए।'

हेमसिंह चकित रह गया। उस ने सोचा कि चाह वह गुलबत्ती को पचायत के सामने अपनी औरत बनाकर उसे पूर अधिकार दे चुका था पर इस समय गुलबत्ती ने अपने अधिकार को और पक्का करने के लिए शायद बच्चेवाली बात अपने मन में गढ़ ली थी।

'राच कहत अस ?'

“मैं ताला सच कहत हों, ठाठुर ! जोन दिन मैं तार घर आये रहूँ, माला विलकुल मालम नही रही से कि मार घर में कुछ हानेवाला ह ”

“तोर कहे के मतलब ए कि ए बच्चा रगीलाल के हैव ? ”
हा ।”

हेमसिंह के मन से एक्बारगी सारा भार उतर गया । उस ने सुखरू होकर गुलबत्ती की आर देखा । पहले ता गुलबत्ती के मन में घरती को बँपा देनेवाली बिजली की कड़क उठा, पर फिर यह कड़क उस के मन के सूने आसमानो म ही खो गयी । और गुलबत्ती ने शांत हानर हेमसिंह का गाव लौटने के लिए तयार कर दिया । अपने बारे में उस ने यही कहा कि वह रगीलाल के पास लौट जायेगी और उस के बच्चे का उस के बाप के घर जन्म दगी ।

हेमसिंह को रात की गाड़ी से गाव भेजकर गुलबत्ती ने वह रात नरिएरा गाव में ही काटी । रात का चौथा पहर था जब वह झलमला गाव के लिए चल पड़ी ।

गुलबत्ती से भी पहले गुलबत्ती की बात गाव में पहुँच गयी थी । हेमसिंह जाते हुए नरिएरा गांव के मालगुजार का मिलकर गया था । उस ने मालगुजार को यह बात बताया थी और उस ने यह बात राता रात गुलबत्ती के बाप को पहुँचा दी थी ।

गुलबत्ती जब झलमला गाव में पहुँची, बाप का मुख खिंचा हुआ था पर गुलबत्ती की माँ ने उसे गले से लगा लिया और उस का दिल बहलाने लगी ।

गिनती के तीन दिन निकल थे कि कचकौलप्रसाद ने रगीलाल को बुला भेजा । रगीलाल ने कुछ हेकड़ी ता दिखायी पर मन से शायद वह खुश था । उस ने कचकौलप्रसाद के घर आकर दारू पानी पिया और गुलबत्ती को फिर से अपने घर डालने के लिए मान गया । गुलबत्ती पहले अपने बाप से उलझी, फिर रगीलाल के सामने जाकर तन गयी, “तोर सच कहत हो, ए तोर नाह ।” और उस ने रगीलाल के घर बसने से इनकार कर दिया ।

मा हरान थी । सारा गाँव हरान था । पर गुलबत्ती के लिए जैसे कुछ हुआ ही नहीं था । उस ने धय से मा की सयानी बेटे की तरह मा का चौका-चूल्हा संभाल लिया और बाप के सयाने बेटे की तरह बाप के खेतों का काम संभाल लिया और अपने मन को समझा लिया कि हेमसिंह की आखा में दिखते कँवल फूल की जो माया उस के मन को लग गयी थी वह वास्तव में हेमसिंह की आँखा की माया नहीं थी, वह उस की अपनी कोस से पदा होनगले कँवल फूल जैसे बच्चे की माया थी । और वह बड़ी उत्सुकता से अपने बच्चे के जन्म का इन्तजार करने लगी ।

गुलबत्ती के मन की गहराई किसी ने न पायी । गाव की औरतें और गाँव के मद कुछ इयर-उघर की चर्चा करते—खेता की कटाई का बात कर सकते थे और मामले का बात भी कर सकते थे, पर कोई गुलबत्ती की छाती में घडकते हुए दिल की बात गाँवे ली कली

नहीं कर सकता था, गुलजरा की बात में पड़ हुआ बच्चा का बात नहीं कर सकता था।
 केवल एक बार जब उस के बचपन की सभी सानिया जब समुद्राल से आयी, उस न
 हिम्मत बाँध ली और गुलजरा का बनेरा के तले बटानर पूछने लगी

“गया। एक ठन बात पूछत हा बताव ?”

‘पूछ ना। या पूछत अग ?’

ए तोर बच्चा बाबर अग ए ?’

“मोर ए।

‘एकर दाग बोन ए ?’

मैं ही एकर दाई हा, मैं ही एकर दाग।’

सानिया की जगे डवान घपटा गयी। पर फिर भी उस न हिया बाँधकर पूछा,

“तोर मद बोन ए गुलबती ?”

‘मार मल अवा पग नही होए ए। जौन बच्चा मार पर म जनमे आई हर
 मार मल आई। ना ता रंगीलाल मार मच्चा मद ए अऊ ता हमसिंह। अब मोर सच्चा
 मद मोर पट ले जम मार बच्चा मोर मद और गुलबती एक नगे में भूम
 गयी। उमे लगा कि वह गाँजे की बली जरूर थी पर किसी भी मद के पाग उमे पीने
 के लिए दिल की आग नहीं थी। इस बली को पीने के लिए, उस आग भी अपने दिल
 में ही जलानी पडा थी। बली भी वह खुद था आग भा वह खुद था पीनवाली भी
 वह खुद थी।

पाँच बरस लम्बी सड़क

सैंक मौमम का था, मन का नहीं ।

हवाई जहाज बकत पर आया था, पर नीचे एयरपोर्ट से अभी सिगनल नहीं मिल रहा था । जहाज को दिल्ली पहुँचने का खबर दकर भी, अभी दस मिनट और गुजारने थे, इसलिए शहर के ऊपर उस को कुछ चक्कर लगाने थे ।

उस ने खिडकी में से बाहर झाँकते हुए शहर के मुँडरे पहचाने, मुँडरे, किले, खंडहर, खेत

‘क्या पहचान सिफ आखा की होती ह ? आखें इस पहचान को अपने से आगे, वही नीचे तक, क्या नहीं उतारती ?’—उसे खयाल आया । पर एक धुन जैसी साब की तरह नहीं, ऐसे हाँ राह जाता खयाल ।

मुँडरे, किले, खंडहर, खेत—उस ने कई देशों के देखे थे । हर देश में इन चीज़ा के यही नाम होते ह चाहे हर देश में इन चीज़ा का अलग-अलग इतिहास होता ह । इन के रंग, इन के बंद, इन की मुँह मुहार भी अलग अलग होती ह—एक इनसान से अलग दूसरे इनसान की तरह । पर फिर भी इनसान का नाम इनसान ही रहता है । मुँडरो का नाम भी मुँडरे ही रहता ह, किले का नाम भी किला ही

सिफ एक हलका-सा फक था—हर देश में इन चीज़ो को देखते बकत एक खयाल सा रहता था कि वह इन्हें पहली बार देख रहा था । पर आज अपने देश में इन्हें देखकर उस लग रहा था कि वह इन्हें दूसरी बार देख रहा था और उसे खयाल आया अगर वह फिर कुछ दिना बाद परदेश गया तो वहाँ जाकर, उन्हें देखकर भी, इसी तरह लगेगा कि वह उा को दूसरी बार देख रहा ह । बिल्कुल आज की तरह । यह देश और परदेश का फक नहीं था । यह सिफ पहली बार, और दूसरी बार देखने का फक था ।

जहाज ने ‘लण्ड किया । एयरपोर्ट भी जाना-महचाना-सा लगा, दूसरी बार देखने की तरह । इस से ज्यादा उस के मन में कोई सैंक नहीं था ।

ओवरकोट उस के हाथ में था । गले का स्वेटर भी उतारकर उस ने बंधे पर रख लिया ।

सैंक मौमम का था, मन का नहीं ।

बस्टम में से गुजरते बकत उसे एक फाम भरना था कि पिछले नौ दिन वह कहाँ-वहाँ रहा था । पिछले नौ दिन वह सिफ जर्मनी में रहा था । उस ने फाम भर

दिया। और उसे खयाल आया—अच्छा है, कस्टमवाले सिर्फ नौ गिना का रेटा पूछते हैं, बास-मचीस दिना का नहीं। नहीं तो उस सिलसिलेवार याद करना पड़ता कि कौन सी तारीख वह किस देश में रहा था। उस ने वापस आते समय वाई एक महीना सिर्फ इसी तरह गुजारा था—कभी किसी देश का टिकट ले लेता था कभी किसी देश का। अगर किसी देश का बीजा उस नहीं मिलता था तो वह दूसरे देश चल पड़ता था।

पासपाट की चेकिंग करते समय और पासपोर्ट वापस करत हुए एक अफमर ने मुसकरा के कहा था, 'जनाब पाच बरस बाट दस आ रहे ह।'।

बिल्कुल उस तरह जिस तरह एयर हास्टेन ने राह में कई बार बताया था कि इस वकत तक हम इतने हजार विलामाटर तय कर चुके हैं। गिनती अजीब चीज होती है चाहे मीलों की हो या बरसों की। उसे हँसी-सी आयी।

जहाज में से उस के साथ उतर हुए लोगो को लेने आये हुए लोग—हाथ मिलाकर भी मिल रहे थे, गले में बाहों डालकर भी मिल रहे थे। कइयों के गले में फूला के हार भी थे। पसीने की और फूलों की गंध से शायद एक तीसरी गंध और भी होती है उसे खयाल आया। पर तीसरी गंध की बात उसे एक थोसिम लिखने के बराबर लगी। वह अभी-अभी एक परदेसी जवान सीखकर और उस के लिटरचर पर थोसिस लिख के, एक डिगरी लेकर आया था। नये थोसिस की कोई बात वह अभी नहीं साचना चाहता था। इसलिए सिर्फ पसीने और फूला की गंध सूँघता हुआ वह एयरपोर्ट से बाहर आ गया।

घर में सिर्फ मा थी।

जाते वकत बाप भी था छाटा भाई भी और एक लडकी नहीं वह लडकी घर में नहीं थी वह सिर्फ उसी दिन उस के जानेवाले दिन आयी थी। मा को सिर्फ ऐसे ही कुछ घण्टों के लिए भ्रम हुआ था कि वह लडकी छाटा भाई ब्याह करा के अब दूर नौबरी पर रहता था, घर में नहीं था। बाप अब इस दुनिया में कहीं नहीं था। इसलिए घर में सिर्फ मा था।

कई चीजें अंदर से बदल जाता है, पर बाहर से वही रहता है। कई चीजें बाहर से बदल जाती हैं, पर अंदर से वही रहती हैं।

उस का कमरा बिल्कुल उसी तरह था—उस का पीला सलीचा उस की खिडकी के टसरी परदे, उस की मेज पर पड़ा हुआ हरी धारिया का फूदान और दहलीजा में पड़ा हुआ गहरा लाली पायदान। चादनी का पौधा भी उस की खिडकी के आगे उसी तरह खिला हुआ था। पर पहले इस सब कुछ की गंध—दीवारों की ठण्डी गंध के समेत—उस के साथ लिपट-सी जाती थी। और अब उसे लगा कि वह उस के साथ लिपटने से सजुचाती सिर्फ उस के पास से गुजरती थी और फिर परे हो जाती थी। पता नहीं, उस के अंदर कहा क्या बदल गया था।

माँ कश्मीरी सिल्क की तरह नरम हाती थी और तनी-सी भी । पर उम्र ने उसे जैसे धो-सा दिया था । वह सारी की सारी सिकुड़ गयी लगती थी । मा से मिलते वक़्त उस का हाथ मा के मुँह पर ऐसे चला गया था जैसे उसे हथेली से मास की सारी सिकुड़नें निकाल देनी हों । माँ की आवाज़ भी बड़ी धीमी और क्षीण-सी हो गयी लगती थी । शायद पहले उस की आवाज़ का जोर उस के कद जितना नहीं, उस के मद के बराबर जितना था और उस के बिना अब वह नीचा हो गया था, मुश्किल से उस के अपने कद जितना । जब उम ने बटे का मुँह देखा था उस की आँखें उसी तरह सजग हो उठी थीं जैसे हमेशा होती थीं । उस के सीने की साँस उसी तरह उतावली हो गयी थी, जैसे हमेशा होती थी । वह वही किसी जगह बिल्कुल वही थी, जो हमेशा होती थी । सिर्फ उस के बाहर बहुत कुछ बदल गया था ।

“मुझे पता था, तू आज या कल किसी दिन भी अचानक आ जायेगा,” माँ ने कहा ।

उम ने अपने कमरे में लगे हुए ताजे फूलों को देखा और फिर मा की तरफ । मा का आवाज़ सकुचा-नी गयी—‘यह तो मैं राज ही रखती थी ।

‘रोज ? कितने दिनों से ?’ वह हँस पड़ा ।

“राज” मा की आवाज़ उम के जिस्म की तरह और सिकुड़ गयी, ‘जिस दिन से तू गया था ।’

“पाच बरसों से ? वह चौक-मा गया ।

मा सकुचाहट से बचने के लिए रसोई में चली गयी थी ।

उस ने जेब में से सिगरेट का पैकेट निकाला । लाइट पर उँगली रखी, तो उस का हाथ ठिठक गया । उम ने मा के सामने आज तक सिगरेट नहीं पी थी ।

मा ने शायद उस के हाथ में पकड़ा हुआ सिगरेट का पैकेट देख लिया था । वह घीरे से रसाई में से बाहर आकर, और धँठक में से ऐस-टे लाकर उस की मेज़ पर रख गयी ।

उसे याद आया—छाटे होते हुए मा ने उसे एक बार चोरी से सिगरेट पीते देख लिया था, और उस के हाथ से सिगरेट छीनकर खिड़की से बाहर फेंक दी थी

मा शायद वही थी पर बसत बल गया था ।

मा फिर रसोई में चली गयी । वह चुपचाप सिगरेट पीने लगा ।

‘मुझे पता था, तू आज या कल किसी दिन भी आ जायेगा’ उसे मा की अभी कही गयी बात याद आयी । और उस के साथ मिलती-जुलती एक बात भी याद आयी । ‘मुझे पता लग जायेगा जिस दिन तुम्हें आना होगा, मैं खुद उस दिन तुम्हारे पास आ जाऊँगी ।’

बहुत दूर हुई जब वह परदेस जाने लगा था, उसे एक लड़की ने यह बात कही थी ।

उस लड़की से उस की दोस्ती पुरानी नहीं थी, वाकफियत पुरानी थी, दोस्ती नहीं थी। पर पाँच बरसों के लिए परदेस जाने के वक़्त जाने की ख़बर सुनकर, अचानक उस लड़की का उस के साथ मुहब्बत हो गयी थी—जमे जहाज़ में बठे किसी मुसाफ़िर का अगले बन्दरगाह पर उतर जानेवाले मुसाफ़िर से अचानक ऐसी तार जुड़ी-सी लगन लगती है कि पलों में वह उसे बहुत कुछ दे देना और उस से बहुत कुछ ले लेना चाहता है।

और ऐसे वक़्त पर बरसों में गुज़रनेवाला पला में गुज़रता है।

उस ने यह गुज़रना देखा था। अपने साथ नहीं उस लड़की के साथ।

‘तुम्हारा क्या खयाल है, मैं जा कुछ जाने वक़्त हूँ, वही आते वक़्त होऊँगा?’

उस ने कहा था।

‘मैं तुम्हारी बात नहीं कहती, मैं अपनी बात कहती हूँ’ लड़की ने जवाब दिया था।

‘तुम यही होगी यह तुम्हें किस तरह पता है?’

‘लड़कियों को पता होता है।’

‘तो लड़कियाँ बावरी हाती हैं।’

वह हँस पड़ा था। लड़की रो पड़ी थी।

जाने में बहुत थोड़ा दिन था। पाँच दिन और पाच रातें लगाकर उस लड़की ने एक पूरी बाँहासाला स्वेटर बुना था। उसे पहनाया था और कहा था, ‘बस एक शर्करा माँगती हूँ और कुछ नहीं। जिस दिन तुम वापस लौटो गले में यही स्वेटर पहनकर आना।’

‘तुम्हारा क्या खयाल है, मैं वहाँ पाँच बरसों’ उस ने जो कुछ लड़की को कहना चाहा था, लड़का ने समझ लिया था।

जवाब दिया था, मैं तुम से अनहाने शर्करा नहीं माँगती। सिर्फ यह चाहती हूँ कि यहाँ का वहाँ ही छोड़ आऊँ।’

वह जितनी देर तक उस लड़की के मुँह की तरफ़ देखता रहा था।

और फिर उस का यह सब कुछ एक अनादि औरत का अनादि छल लगा था। वह बेवफ़ाई की छूट दे रही थी पर उस पर बफ़ा का भार लादकर।

वह रही थी, ‘मैं तुम्हें खत लिखने के लिए भी नहीं कहूँगी। सिर्फ उस दिन तुम्हारे पास आऊँगी, जिस दिन वापस आऊँगी।’

‘तुम्हें किस तरह पता लगेगा, मैं किस दिन वापस आऊँगा?’ लड़की को टीका करने के लिए उस ने कहा था।

और उस ने जवाब दिया था ‘मुझे पता लग जायेगा, जिन दिन तुम्हें आना होगा।’

उस दिन वह हँस दिया था।

उम ने परदेस देखे थे, बरस देखे थे, लडकिया भी देखी थी ।

पर किसी चीज में उस ने टूटकर नहीं देखा था, सिफ बिनारो से छूकर ।

और वह सोचता रहा था—शायद डूबना उस का स्वभाव नहीं, या वह चलता ह, ता एक भार भी उम के साथ चलता ह और उस के पैरो को हर जगह कुछ रोक्सा लेता ह

इन बरसा में उम ने कभी उस लटकी को छत नहीं लिखा था । लडकी ने कहा भी इसी तरह था ।

हर देश की दोस्ती उस ने उसी देश में छोड दी थी । यह शायद उस का अपना ही स्वभाव था, या इसलिए कि उस लडका ने कहा था ।

सिफ वापस आते वक्त, जब वह अपना सामान पैक कर रहा था, उस स्वेटर को हाथ में पकडकर वह कितनी देर सोचता रहा था कि वह उस और चीजों के साथ पैक कर दे या उस लडकी की बात रख ले, और उसे पहन ले ।

जो स्वेटर पहनकर जाना पाच बरसा बाद वही पहनकर आना, उसे एक मूखता की सी बात लगी थी । मूखता की सी भी और जज्बाती भी ।

और एक हद तक झूठी भी । क्योंकि जिस बदन पर यह स्वेटर पहनना था वह उस तरह नहीं था जिस तरह वह लेकर गया था ।

पर उस ने स्वेटर का पक नहीं किया । गले म डाल लिया । ऐसे जब वह स्वेटर पहनकर शीशे के सामने खडा हुआ—उसे आट गलरिया में बठे वे आर्टिस्ट याद आ गये, जा पुरानी और क्लासिक पेंटिंग्स की डूबहू नकलें तैयार करते ह ।

और स्वेटर पहनकर उसे लगा—उस ने भी अपनी एक नकल तैयार कर ली थी ।

इस नकल से वह शर्मिन्दा नहीं था, सिफ इस नकल पर वह हँस रहा था ।

मा को वह सब कुछ याद था, जो कभी उसे अच्छा लगता था । लेकिन वह स्वयं भूल गया था ।

“देख ता अच्छा बना ह ? ” माँ ने जब पनीर का पराठा बनाकर उस के आगे रखा, ता उम का याद आया कि पनीर का पराठा उन बहुत अच्छा लगता था । मा ने जानेबाल टिन भी बनाया था ।

उम ने एक कौर तोकर मक्खन में डुगाया और फिर माँ के मुँह में जालकर हँस पडा—‘वहा लाग पनीर ता बहुत खाते ह पर पनीर का पराँठा कोई नहीं बनाता ।’

यह छुटपन स उस की आदत थी । जब वह बडा गे में हाता था, राटी का पहला कौर ताकर मा के मुँह में डाल देता था ।

‘तू सात बिलायत घूमकर भी वही का वही ह,’ माँ के मुँह से निकला और उस की आँखा में पानी भर आया । मरी आत्मा से वह कह रही थी, ‘तू आया ह, सब कुछ फिर उमी तरह हो गया ह ।’

वह 'वह नहीं था। कुछ भी वह नहीं था, जाते वक्त जो कुछ था वह सब बदल गया था। उस ने बाप की बात नहीं छोड़ी थी, सिर्फ उस के खाली पलंग की तरफ देखा था, और फिर जानें परे कर ली थी। मा के दिना-दिन मुरझाते मुँह की बात भा नहीं की थी। छोटे भाई की खर-खबर पूछी था, पर यह नहीं कहा था कि माँ को अक्ल छान्खर उसे इतनी दूर नहीं जाना चाहिए था। पर माँ कह रही थी 'सब कुछ फिर उसी तरह हो गया है'

'झटपट जो काई भुलावा पड़ जाये क्या हरज ह ' उस ने सोचा भी यही था। मा के मुँह में अपनी रोटी का कौर भी इसी लिए डाला था।

उस ने काई और भी मा की मरजा की बात करनी चाही। पूछा, 'भाभी कसी ह ? तुम्हें पसन्द आयी ह ?

माँ ने जवाब नहीं दिया। मिफ सवा-सा किया, 'मेरा खयाल था, तू विलायत से काई लडकी '

वह हँस पड़ा।

'बोलता क्या नहीं ?

विलायत की लडकियाँ विलायत में ही अच्छी लगती ह सब वही छोड़ आया है।'

'मैं ने तो इस महीने पिछले दोना कमरे खाली करवा लिये थे। सोचा था तुझे जरूरत होगी।'

'ये कमरे किराय पर लिये हुए थे ?

'छोटा भी चला गया था। घर बड़ा खाली था इसलिए पिछले कमर चला दिये थे। जरा हाथ भी खला हो गया था

तुम्हें पसा की धमी थी ? उसे परेशानी-सी हुई।

नहीं पर हाथ में चार पैसे ही तो अच्छा होता ह।

'छोटे की तनखाह थागी नहीं वह '

पर वह भी अब परिवारवाला ह आजकल में हा उस के घर

'सो मरो मा दानी बन जायेगी

उम ने पा का हँमाना गाहा, पर मा कह रहा थी मुझे तो काई उज्र नहीं था जो तू विलायत से कोई लडकी '

वह माँ की हसाने के यत्न में था। इसलिए कहने लगा, 'लाने ला लगा था पर याद आया कि तुम ने जात समय पक्की की थी कि मैं विलायत से किसी को माय न लाऊँ।

उसे याद आया—जानेवाले दिन, वह लडकी जब मितने आयी थी वह मा को अच्छी लगी थी। माँ ने उन दोना का इक्ठ्ठे दखकर, ताकीद दी थी, देख, कही विलायत स न कोई ले आना। कोई भी अपने देश की लडकी की रीस नहीं कर

पर इस बात माँ कह रही थी “वह तो मैं ने वैसे ही कहा था । तेरी सुशी से मैं ने मुनक्किर क्या हाना था । पीछे एक खत में मैं ने तुम्हें लिखा भी था कि जा तेरा जी चाहता ही ”

“यह तो मैं ने सोचा, तुम ने ऐसे ही लिख दिया होगा, वह हँस पड़ा और फिर कहने लगा, “अच्छा, जा तुम कहो तो मैं जगली बार ले आऊँगा ।

‘तू फिर जायेगा ?’ माँ धबधब-सी गयी ।

“वह भी जो तुम कहो तो, नहीं तो नहीं ।”

उस लगा, उसे आते ही जाने की बात नहीं करनी चाहिए थी । आते वक्त उसे एक यूनिवर्सिटी से एक नौकरी आफर हुई थी । पर वह इतने बरसों बाद एक बार वापस आना चाहता था । चाहे महीना के लिए ही ।

‘जो तुम कहोगी तो नहीं जाऊँगा,’ उस ने फिर एक बार कहा ।

माँ को कुछ तसल्ली आ गयी । कहने लगी, ‘तू सामने हागा, चूल्हे में आग जलाने की ती हिम्मत आ जायेगी, बमे ता कई बार चारपाई पर से नहीं उठा जाता ।”

“माँ, तुम इतनी उदास थी, तो छाटे के साथ, उस के घर ”

मैं यहाँ अपने घर अच्छी हूँ । अब तू आ गया हूँ, मुझे और क्या चाहिए ।”

उस का रंगा माँ बहुत उदास थी । और शायद उस की उदासी का सम्बन्ध सिर्फ उस के अकेलेपन से नहीं, किसी और चीज से भी था ।

खिड़की में से आती धूप की लकीर दीवार पर बड़ी शोख-सी दिख रही थी । उस ने खिड़की के परदे का सरकाया । और उसे गलीचे का पीला रंग ऐसे लगा जैसे निश्चित-सा होकर कमरे में सा गया था ।

“तू थक गया होगा । कुछ सा ले,” माँ ने कहा, और मेज पर से प्लेटें उठा कर कमरे में जाने लगी ।

‘नहीं, मुझे नींद नहीं आ रही,” उस ने हल्का-सा झूठ बोला, और कहा, “मैं तुम्हारे किए एक-दा चीजें लाया हूँ देखूँ पूरी आती है कि नहीं ।”

उस ने सूटकेस खोला । एक गरम काली ऊन की शॉर्ट्स थी, पखी जनी हल्की । माँ के कंधों पर डालकर कहने लगा “यह जाड़े की चीज है, पर एक मिनट अपने ऊपर ओढ़कर दिखावा । यह तुम्हें बड़ी अच्छी लगेगी ।’

फिर उस ने फर के स्लीपर निकाले । माँ के पैरों में पहनाकर कहने लगा, ‘देखो, कितने पूरे आये हैं ! मुझे डर था, छाटे ने हा ।”

“इस उम्र में मुझे अच्छे लगे ? माँ की आवाज में पानी सा भर आया था ।

वह माँ का ध्यान घटाने के लिए और चीजें दिखाने लगा । प्लास्टिक की एक छाटो-सी डब्बी में कुछ सिक्के थे—इटली के लीरा यूगोस्लाविया के दानार, बल्गारिया के लेवा, हंगरी के फॉरेंटस, रामानिया के लेई, जर्मनी के दीनार । उस ने सिक्कों को

सब की, जिन्हें तुम ने पार्टी पर बुलाया था व माग व डर से ”

“मैं उन की बात नहीं कर रहा, सिर्फ अपनी कर रहा हूँ ।”

‘हाँ देख ला गीरो म—तुम्हारा वही चन्दन की गेली जसा जिस्म । माया, आँखें नाक जैसे खुश ने फुरसत में बठकर गडे हा औरत ने कहा । वह अभी भी लिजाई का री में थी ।

“यह शादावती शायरा व गिए रहने दा ’ मन् खीझ-भा गया ।

मेरा खयाल ह तुम थक गये हो । वमे भी रात आधी हाने का ह

‘पर तुम शीगे म क्या नहीं देखती ? दखन से डरती हो ?

‘शीगे में कुछ और हो जायेगा ?’

“हो जायेगा नहीं, हा गया ह ।”

वहाँ ? कुछ भी नहीं हुआ ”

अभी हुआ था मैं न खुद बता था मैं जब हँसा था, शीशे म मेरा यही मुँह रो पड़ा था यह शीशा डारियन ग्रे की पेंटिंग की तरह ”

मैं गुमलवाने में स नाइट-सूट ला देती हूँ, तुम कपडे बदल ला ।”

कपड सम्मता की निगानी हाते ह, इस निगानी के बगर मैं क्या हाऊगा तुम ने ही कहा था कि इस पार्टी व लिए मुझे नया सूट सिलवाना चाहिए

‘मैं न ठीक कहा था, वह सज तुम से बडे इम्प्रेस हुए लगते थ ’

“इसलिए मैं यह सूट उतारना नहीं चाहता ।’

‘पर अब घर में कोई नहीं ।

‘अभी मैं हूँ ’

औरत का अब यकान हो गया था कि वह अब बहक गया ह इसलिए वाली नहीं ।

मद ने ही कहा “उस वकत मैं न उन का इम्प्रेस किया था, पर इस वकत अपनेआप को करना ह, इसलिए अभी यह सूट नहीं उतार सकता ।

औरत चुप थी ।

कुछ ह्विस्की बची ह ? मद न पूछा ।

औरत के मुँह पर स एक सोच की परछाई गुजर गया । परछाई का पसीने की तरह पाछकर बाली बह, ‘नहीं ।’

मेरा खयाल है, तुम्हें झूठ बोलने का अभा ढग नहीं आया । मद हँस दिया ।

“पर इस वकत मैं और नहीं पाने दूँगी ।”

‘सिर्फ एक गिलास ’

नहीं ।

“तुम ने उहे किसी गिलास के लिए मना नहीं किया था ।

“वे गेस्ट थे

“रिस्पेक्टेबल गेस्ट रिस्पेक्टेबल सिफ वे थे, मैं नहीं ?”

“मैं ने रिस्पेक्टेबल नहीं कहा, मिफ गेस्ट कहा ह ।”

“तुम मुझे भी अपना गेस्ट समझ लो ”

“क्या ?”

“यह घर तुम्हारा है, मैं तुम्हारा गेस्ट हूँ ।”

“यह घर मिफ मेरा है ?”

“घर सिफ औरत का होता है ।

औरत को इस वक़्त कुछ भी कहना ठीक नहीं लगा । उसे लगा कि इस वक़्त सिफ सा जाना चाहिए । वह चुपचाप गुसलखाने में गयी, और मद का नाइट-सूट लाकर, पलंग की बाँह पर रख दिया ।

मद ने कमरे के हलके नीले आयल-मेण्ट की तरफ देखा, पलंग की रेशमी सलेटी चादर का तरफ, फिर टेबल लैम्प के आसमानी शेड की तरफ और उस का जो चाहा, वह औरत से कहे—इस कमरे का मारा कुछ बरसा से उम की कल्पना थी । इस कमरे की भी और बाहर के घड़े कमरे की भी इस सज़ कुछ की चाहती वह खुद कहती थी कि उस के दफ़्तर से उमे कोई वास्ता नहीं, पर अपना घर वह अपनी मरज़ी से बनायेगी, घर औरत का हाता ह

फिर उस ने नाइट-सूट की तरफ देखा । और सिफ इतना कहा, “यू आर ए वण्डरफुल हास्ट आई मीन हास्टेस ”^१

औरत अभी भी चुप थी ।

सिफ वही कह रहा था, “मेरी मेहरबान, अब एक गिलास व्हिस्की दे दो ।”

औरत का लगा कि इस वक़्त गिलासवाली बात को टाला नहीं जा सकता । वह बाहर के कमरे में गयी, और कुछ मिनटों के बाद, उस ने एक गिलास लाकर मेज़ पर रख दिया ।

“यू आर रीयली ए डार्लिंग ।”^२ मद ने व्हिस्की के पहले नहीं, पर तीसरे घूँट के साथ कहा ।

औरत को कुछ याद आया—और वह खोल सी गयी—“मुझे यह शब्द अच्छे नहीं लगते ।

“क्या ?”

“आज की पार्टी में बिल्कुल यही शब्द तुम्हारे एक मेहमान ने तुम्हारी सेक्रेटरी को कहे थे ।

“पर वह नाराज़ नहा हुई थी ।”

“वह सेक्रेटरी है, मैं बाकी हूँ ।”

१ तुम बहुत अच्छी मेज़बान हो

२ तुम सब में प्रिय हो ।

“डिस्गस्टिंग ।”^१

“डिस्गस्टिंग बीबी हाना या बि सेक्रेटरी हाना ?”

‘मेरे सवाल म सेक्रेटरी होना ।’

‘यू आर राइट ।’

“मन ने हिस्सा का घूँट भरा और कहने लगा, “एब” मरिड औरत की पोशासन सचमुच बनी शानदार हाती ह। वह जब चाहे नाराज हो सकती ह। जिस बात पर, और जब चाहे पर बचारा मेक्रेटरा ।’

“इस तज का मतलब ?

‘यह तज नहीं ।’

‘फिर यह क्या ह ?’

‘एक फक्ट ।’

“उस से बड़ी हमदर्दी है ?”

“उस के साथ नहीं सिफ उस के सेक्रेटरी हाने से ।’

‘इसी लिए उस की हर दूसरे महीने तरक्की हो जाती है ?’

‘यह तरक्की नहीं डियर, यह रिस्वत ह। सिफ यह रिस्वत का नया तरीका ह।’

‘किस चीज की रिस्वत ?’

“हमारी एजेन्सी को जिस सेठ ने अपने मिल का ऐडवरटाइजिंग एवाउण्ट दिया ह, यह उस की शत थी उस लड़की की तरक्की भी उसी की शक्ति ह

‘यह उस सेठ की

‘ए क्विंट विमन’^२

“इट इज आल डिस्गस्टिंग ।”^३

येस इट इज आल डिस्गस्टिंग ।

‘पर तुम्हें उस से हमदर्दी किस बात की है ?’

‘क्योंकि मैं उस का हमपेशा हूँ ।

“क्या मतलब ?

‘हम सब सब उस के हमपेशा ह ”

‘किस तरह ?’

“बी आर नाट मरिड टु अवर बक थी आर आल लाइव क्विंट विमन ”^४

मद हँसा फिर कहन लगा आज की पार्टी से भी यह जाहिर था । मैं ने उन को सुना

१ धुनित ।

२ रखेल ।

३ यह सब क्या धुनित है ।

४ हमारी गान्गी अपने काम से नहीं जुड़े है हम सब रखेलों का तरह हैं ।

करने के लिए यह सब कुछ किया था। पाँच लाख एक साल के बिज़नेस का सवाल था ”

मद ने ह्लिस्की के गिलास का आखिरी घूँट भरा, शीशे की तरफ़ दखा। पता नहीं उसे क्या नज़र आया, उम ने एक बार आँखें बन्द-सी कर ली। फिर खोली तो वे उम शीशे की तरफ़ नहीं, खाली गिलास की तरफ़ देख रही थी।

“मेरी मेहरबान, एक गिलास और।”

“नहीं, और नहीं।”

c

“आज जरूरी-गुलामी ह।”

औरत ने अपनी घमराहट का माथे पर से पसीने की तरह पोछा।

“देख मेरी जान, आज की पार्टों ने अगले साल का बिज़नेस भी पकड़ा कर दिया है। इस का मतलब है—अगले साल भी पाँच लाख का बिज़नेस। इसलिए मैं ने नया सूट पहना था वे औरतें मेरा मतलब है कष्ट विमन इसी तरह नयी साडी पहनती हैं फिर सारा वक्त दिल परेव बातें उन्हें किसी भी बात से नाराज़ होने का हक़ नहीं होता मैं भी किसी बात से नाराज़ नहीं हुआ ”

औरत ने मन् के पास होकर उस के कोट के बटन खाले। बटन खालते हुए वह काफी देर तक उम के सीने के पाम खट्टी रही। शायद मन् के हाथ की किसी हरकत का इन्तज़ार कर रही थी

रात कमरे में भी अडोल थी, दूर परे तक भी अडोल थी। मद के अंगों की तरह।

और फिर अचानक एक कुत्ते के भूँकने की आवाज़ आयी। और औरत को लगा—उस की छाती में भी कुछ था, जो इस वक़्त

कुत्ते के भूँकने की आवाज़ वार्यें हाथवाली काठी की तरफ़ से आयी थी। फिर अगले मिनट दायें हाथवाली कोठी की तरफ़ से भी आयी। शायद ज़वार की सूरत में।

“क्लॉट ए बुगट ” मद ने खाली गिलास की तरफ़ देखा, और औरत को हाथ से परे करवा दिया, बाहर के कमरे में से और ह्लिस्की लाने के लिए चला गया।

गिलास में वफ़ का टुकड़ा शायद उम ने ऊपर से और डाला था, गिलास छलक सा गया था। गिलास को छलकने से बचाने के लिए उम ने दहलीज़ ही में खड़े होकर एक घूँट भरा, और फिर कमरे में जाता हुआ कहते लगा, “आई एम सलीब्रेटिंग दिस ड्रिंक”

कुत्ते भूँक रहे थे—वारी वारी।

‘ दिस इज़ फ़ार द हेल्थ ऑफ़ डारज़ ’”

१ मैं इस युगल्लान का ज़हन मना रहा हूँ।

२ वह जान कुत्तों का सेहत के लिए।

एक मद एक औरत

उस ने गिलाम में से एक घूट भरा ।

औरत ने घबराकर पहले कमरे का बायीं दीवार की तरफ देखा, और फिर दायी की तरफ । बाहर भूँकने कुत्ता की आवाज़ में से, एक आवाज़ बायीं दीवार से टकरा रही थी, एक दायी से ।

“रात को सिर्फ डुइंट होता है ।” मद हम-सा पड़ा और बहने लगा ‘पर सवर पूरा कारस होता है । बायें हाथवाली काठी में कोई अमरीकन है । उस के सारे कमरे एयरक्ण्डोण्ड ह इसलिए उस कोई पक्क नहीं पड़ता पर सुन्ने के वक्त उस का खानगामाँ उस का बरा, और कोठा का जमानार, ज़िम तरह एक्-डूगर पर भूँकते हैं, रंगता है काठी में एक नहीं पूरा चार कुत्त भँव रहे हैं

‘डालिंग तुम माने की कागिग क्या नहीं करते ?’ औरत ने, पक्क गयी औरत ने, कहा ।

‘आई एम ड्रिंकिंग फार दी हेल्थ आफ डाग्स’

औरत चुप-सी पलंग की बाँही पर बठ गयी ।

‘तुम ने मेरा पूरा बात नहीं सुनी । मैं तुम्हें बता रहा था सुबह बिस्कुल सुबह एक कोरम होता है हर रात । क्या तुम नहीं सुनती ? बायें हाथवाली काठी अमरीकन की है, पर दायें हाथवाली किसी देगा बनल की । वह एयरक्ण्डोण्ड नहीं — इसलिए उस के हरेक कमरे में स आवाज़ आता है । उस की बीबी—वह कर्नेलिनी—रात सवरे अपने नौकरों पर कुत्ते की तरह भूँकती है सिर्फ नौकरा पर नहा बनल पर भी वो आर सराउण्डेड बाई डाग्स सी हाऊ मनो डाग्स’ और फिर मरे दफ्तर में रोज़ किसी मिल मालिक की चिट्ठी, बाई शिकापत कोई तवाज़ा कोई और नयी डिमाण्ड माई गाड आई वाण्ट काउण्ट दीज़ डाग्स

प्लीज़ डालिंग औरत ने पलंग की बाँही से उठकर, मद की बाँह पकड़ी और उसे पलंग के पास लाकर बिठाना चाहा । उस के हाथ का गिलास उस ने मेज़ पर रख दिया ।

क्या अपनी रात बीतान करत हो औरत ने हल्लीमी से कहा ।

‘रात नहीं डालिंग, उम्र

तुम इस सब कुछ का बीरानी बने कहते हो ? औरत ने ज़रा ज़ार स कहा अभा नया कारोबार है शुरू में कुछ रिश्तों, खुशामदें हाती ही हैं फिर जब अपने पैरा पर हा जायेगा’

यह अपने पग पर हा जायेगा यानी मैं अपने परों पर अपने परा पर कभी कुछ नहीं होता डालिंग । यहा जो किसी को चलना है तो किसी दूसरे के पैर लेकर चलना है एक ने दूसरे के, दूसरे ने तीसरे के तीसरे ने चौथे के सब ने

१ हम कुत्ता से घिरे थे कितने कुत्ते हैं

२ मैं इन कुत्तों की गिनती नहीं कर पाता

उधार लिये पैरा स, अपाहिज हावर यह मेरा काराबार नया है, पर बाकी और सब के ”

“डालिग ”

‘मेरे पैर ’’ मद ने एक बल सा खाय़ा, पलग की बाही पर से उठकर खड़ा हुआ गया । फिर शीशे के सामने आया—“देख सामने । यह मैं बूटों के तसमे खालता हूँ उस में देख किम के पर है—माई गाड । निरे उस सठ के पर यह शीशा आज डोरियन ग्रे की पेण्टिंग का तरह

“इस बरस यह एक सेठ के पैर ह पिछले बरस यह ज़रूर एक बकर के पैर हागे । पिछले बरस मैं ने यह शीशा नहीं देखा था । इस तरह नहीं देगा था और उस से पिछले बरस ” मद ने एक बार बोखलाकर औरत की तरफ देखा, और पूछा, “कितने बरस हुए ह ? जिस बरस मैं ने तुम्हारे साथ विवाह किया था उसी बरस ”

‘सिफ पाच बरस ’ औरत न धीरे से बहा ।

और सिफ पाच बरसों में मेरी शकल बदल गयी ह ? और पाच में या और पाच में यह शकल ”

‘तुम्हारी शकल उसी तरह ह ।’ औरत ने बहना चाहा । पर बहा नहीं । पहले भी वह यह बात कह चुकी थी । काई फक नहीं पडा था ।

तुम चुप क्या हो ? मद ने अचानक पूछा ।

औरत फिर भी नहीं बोली ।

‘हवाई डाण्ट यू वाक लाइव ए डाग ’’

औरत के मन म एक बेचनी सी हुई । उस लगा कि वह सचमुच कुछ बहना चाहती थी—बहना नहीं, एक कुत्ते की तरह और औरत ने अपनी छाती पर एक हाथ रख लिया । उसे लगा, उस की छाती धीक रही थी ।

‘तुम अब भी चुप हो, उस वक़्त भी चुप थी ’’ अचानक मद ने बहा ।

“उस वक़्त ? किस वक़्त ? ’ औरत चौक-सी गयी ।

मद फिर हँस-सा पडा, कहने लगा, “तुम्हारा खयाल ह मैं ने देखा नहीं था ? जिस वक़्त उस सेठ ने तुम से हाथ मिलाया था, बहा था ‘धक यू मडम ’ और उस ने तुम्हारा हाथ भीचा था तुम्हारी तरफ देखते हुए उस की नज़र एक शिकारी कुत्ते का तरह ”

औरत कुछ देर मद की तरफ देखती रही फिर कहने लगी ‘एक हमारे पहले घर की पडासिन थी, उस का मद आये दिन घर म नयी औरत लाता था । वह हमेशा चुप रहती थी । मुने भी कुछ ऐसा ही लगा था उस बात का इस बात से कोई

१ तुम कुत्ते का तरह क्यों नहीं भूँकते

एक मदें एक औरत

सम्बन्ध नहीं, पर फिर भी कुछ इसी तरह लगा था मैं ने सोचा, मेरे कुछ बालने से तुम्हारा बाराबार

औरत ने आँखा में आये हुए पानी का पसीने की तरह पाछा ।

‘मैं भी चुप रहा था,’ मद ने कहा और मेज पर रखा हुआ गिलास फिर हाथ में पकड़ लिया । गिलास का आगिरी घूट तब पीता हुआ बहने लगा, “इट इज फ़ार आज़ द डायज़ * मद वस द हर्षिंग वस द बार्किंग वस एण्ड” मद ने पहले मुमक़रानर औरत की तरफ़ देखा, फिर शीशे में, और कहा— एण्ड द साइलेंट वन

* द द ज़न द कुली के लिए है.. वज़न कुली के लिए लिखार कानसाज कुली के लिए
मूकनेल कुली के लिए और

१ और उन कुली के लिए वा पुन रहत है

शाह की कजरी

उसे अब नीलम काई नहीं बहता था, सब शाह की कजरी बहते थे ।

नीलम को लाहौर हीरामण्डी के एक चौपारे में जवानी चढ़ी थी । और वहा ही एक रियासती सरदार के हाथ पुरे पाच हजार में उस की नय उतरी थी । और वहा ही उस के हुस्न ने आग जलाकर सारा शहर झुलम दिया था । पर फिर एक दिन वह हीरामण्डी का सस्ता चौबारा छाड़कर शहर के सत्र से बड़े होटल फ्लैटी में आ गयी थी ।

वही शहर था, पर सारा शहर जैसे रातारात उस का नाम भूल गया हो, सब के मुँह से सुनाई देता था—शाह की कजरी ।

ग्रजब का गाती थी । काई गानेवाली उस की तरह गिरजे की 'सद नहीं रैगा सकती था । इसलिए लोग चाहे उस का नाम भूल गये थे पर उस की आवाज नहीं भूल सके । शहर म जिस के घर भी तवेवाला बाजा था, वह उस के भरे हुए तवे ज़रूर खरीदता था । पर मब घर म तवे को प्रग्माइश के बक्त हर काई यही कहता था, 'आज शाह की कजरीवाला तवा ज़रूर सुनना ह ।'

रुकी छिपी बात नहीं थी शाह के घरवाला को भी पता था । सिफ पता ही नहीं था, उन के लिए बात भी पुरानी हा गयी थी । शाह का बड़ा लडका जो अब ब्याहने लायक था, जब माद में था तो सेठानी ने ज़हर खाकर मरने की धमकी दी थी, पर शाह ने उस के गले म भातिया का हार डालकर उमे बहा था, "शाहनीये ! वह तेरे घर की बरकत है । मेरी आँख जौहरी की आख ह, तू ने सुना हुआ नहीं कि नीलम ऐसी चीज़ होता ह, जो लाखा का खाक कर देता ह और खाक को लाख बनाता है । जिमे उलटा पड जाये, उस के लाख के खाक बना देता ह । पर जिसे सीधा पड जाये उस खाक से लाख बना देता है । वह भी नीलम ह, हमारी राशि से मिल गया है । जिस दिन से साथ बना ह, मैं मिट्टा में हाथ डालूँ तो सोना हो जाती है ।"

"पर वही एक दिन घर उजाड दगी, लाखा को खाक कर देगी," शाहनी ने छाती की साल सहकर उसी तरफ से दलील दी थी, जिस तरफ से शाह ने बात चलायी थी ।

"मैं ता बक्कि डरता हूँ कि इन कजरिया का क्या भरोसा, कल बिसी और ने स'ब्रग दिवाये, और जा यह हाथ से निकल गयी, तो लाख से खाक बन जाना ह ।" शाह ने फिर अपनी दलील दी थी ।

और शाहनी के पास और दलील नहीं रह गया थी। सिर्फ वक्त के पास रह गयी थी और वक्त चुप था, कई बरसा से चुप था। शाह सचमुच जितने रुपये नालम पर बहाता उस से कई गुना ज्यादा पता नहीं कहा-वहाँ से बहकर उस के घर आ जात थे। पहले उस की छाटी-नी दुकान शहर के छाटे-से बाजार में होती थी पर अब सब से बड़े बाजार में लाहे के जँगलवाली सड़ से बड़ी दुकान उस की थी। घर की जगह पूरा महल्ला ही उस का था जिम में बड़ खाते-पीते किरायदार थे। और जिस में तहखानेवाले घर का शाहनी एक दिन के लिए भी अकेला नहीं छोड़ता थी।

बहुत बरस हुए शाहनी ने एक दिन माहाराजे ट्रक का ताला लगाते हुए शाह से कहा था 'उमे चाहे होटल में रहो और चाहे उमे ताजमहल बनवा दो, पर बाहर की बला बाहर हा रहो उसे मरे घर ना लाना। मैं उस के माये नहीं लगूंगी।'

और सचमुच शाहनी ने अभी तक उस का मुह नहीं देखा था। अब उस ने यह बात कही थी उस का बड़ा लड़का स्कूल में पढ़ता था और अब वह ब्याहो लामब हो गया था पर शाहनी ने न उस के गानेवाले तबे घर में आने दिये और न घर में किसी का उस का नाम लेने दिया था।

वस उस के बेटा ने दुकान दुकान पर उस के गाने सुन रहे थे, और जने-जने से सुन रहा था—'शाह की कजरी।

बड़े लड़के का ब्याह था। घर पर चार महीने से दर्जी बठ हुए थे बाई सूटो पर सलमा काट रहा था, बाई तिलग, कोई किनारी और बाई दुपट्टे पर मितारे जड़ रहा था। शाहनी के हाथ भर हुए थे—रूपया की थली निवालती खाकती फिर और थला भरने के लिए तहखाने में चली जाता।

शाह के पार दास्ता ने शाह की दोस्ती का वास्ता डाला कि लड्डे के ग्राह पर कजरी जरूर गवाना है। वस बात उन्होंने बड़े तराके से कहा था ताकि शाह कभी बल न खा जाये "बस ता शाहजी का बहुनरी गाने-नाचनवाली है जिसे मरजी हो बुलाओ। पर यहा मलिका ए-तरनुम जरूर आये, चाहे मिरजे की एक ही 'सद लगा जाये।

फलटी हाटल आम होटल जसा नहीं था। वहा ज्यादातर अंगरेज लाम ही आत और ठहरते थे। उस में अकेले-अकेले कमर भी थे पर उबे बड़े तीन कमरा के सट भी। एस ही एक सट में नीलम रहती थी। और शाह ने सोचा—दोस्ती यारा का दिल खुश करने के लिए वह एक दिन नीलम के यहा एक रात की महफिज रखे लागा।

यह ता चौवार पर जानेवाला बात हुई" एक ने उच्च किया ता सारे बाल 'पड 'नहीं शाहजा। वह तो सिर्फ तुम्हारा ही हक बनता है। पहले कभी इतने बरस हम ने कुछ कहा है? उस जगह का भी नाम नहीं लिया। वह जगह तुम्हारी अमानत है। हमें तो भतीजे के ब्याह की खुशी मनाना है उसे खानदानी घरानो की

तरह अपने घर बुलाओ, हमारी भाभी के घर ।”

बात शाह के मन भा गयी । इसलिए कि वह दास्ता-यारो को नीलम की राह दिखाना नहीं चाहता था (चाहे उस वं काना में भनक पड़ती रहती थी कि उस की गैर-हाजिरी में कोई-कौड़ी अमीरजाना नीलम के पास आन लगा था)—दूसरे इसलिए भी कि वह चाहता था नीलम एक बार उस के घर आकर उस के घर की तडक भडक देख जाये । पर वह गाहनी से डरता था, दोस्तो को हामी न भर सका ।

दास्ता-यारा में से दो ने राह निकाली और शाहनी के पाम जाकर बहने लगे, ‘भाभा, तुम लडके की शान्ति के गीत नहीं गवाजाओ ? हम ता सारी खुशियाँ मनायेंगे । गाह ने सलाह की है कि एक रात यारा की महफिल नालम की तरफ हो जाये । बात ता ठीक ह पर हजारों उजड़ जायेंगे । आखिर घर ता तुम्हारा है, पहले उस कजरी को थाना तिलाफा ह ? तुम सपानी बनो । उसे गाने बजाने के लिए एक दिन यहाँ बुला लो । लडके के ब्याह की खुशा भी हा जायगी और रुपया उजड़न से बच जायेगा ।

गाहना पहले तो, भरी भरायी वाली, ‘मैं उस कजरी के माथे नहीं लगना चाहती,’ पर जब दूसरा ने बड़े धारज से कहा, यहा तो भाभी तुम्हारा राज है । वह बादी बनकर आयेगी तुम्हारे हुकम में बँधी हुई, तुम्हारा बेटे की खुशी मनाने के लिए । हठी ता उम की ह, तुम्हारी बाहे की ? जम कमीन-कुमने आये, डोम मिरासी, तमी वह ।”

बात शाहनी के मन भा गयी । वैंम भी कभी सोते-बठते उस मयाल आता था—एक बार देखूँ तो सही कमी है ?

उस ने उसे कभी देखा नहीं था पर कल्पना जरूर की थी—चाहे डरकर, सहम-बर, चाहे एक नफरत से । और शहर में स गुजरने हुए, अगर किसी कजरी को टागे में बठी देखती ता न सोचते हुए ही सोच जाती—क्या पता, वही हो ?

“बलो एक बार मैं भी देख लूँ,” वह मन में घुल-सी गयी, “जो उस को मेरा बिगाडना था, बिगाट लिया, अब और उसे क्या कर लेना ह । एक बार चन्दा का दम ता लूँ ।”

गाहनी ने हामा भर दी, पर एक गत रखी—“यहा न गराव उडेगी, न कसरा । भले घरा में जिंग तरह गीत गाये जाते हैं, उमी तरह गीत कगवाउँगी । तुम मन्-मानग भी बठ जाना । वह आये और गीधी तरह गाकर चली जाये । मैं वही चार बनाने उन की मोला में भी डाल दूँगी जा और लडकिया-बडकियों को दूँगी, जा बने, महर गायेंगा ।’

‘यही ता भाभी, हम कहते ह । गाह वं दास्ता ने पँव दा, “तुम्हारी समय-दाने से ही ता घर बना ह नहीं तो क्या खबर क्या हा गुजरना था ।

वह आयी। शाहनी ने खुद अपनी बग़ी भेजी थी। घर मेहमाना से भरा हुआ था। बड़े कमरे में सफ़ेद चादरें बिछाकर, बीच में ढोलक रखी हुई थी। घर की औरतों ने बड़े-सेहरे गाने गुरु कर रखे थे।

बग़ी दरवाज़े पर आ रुकी, तो कुछ उतावली औरतें दौड़कर खिड़की की एक तरफ़ चली गयी और कुछ सानियों की तरफ़

‘अरी बदशगुनी क्यों करती हो, सेहरा बीच में ही छाड़ दिया।’ शाहनी ने टाट-सी दी। पर उस की आवाज़ खुद ही धीमी-सी लगी। ज़ने उस के दिल पर एक घमक-सी हुई हो।

वह सीनिया चक्कर दरवाज़े तक आ गयी थी। शाहनी ने अपनी गुलाबी साड़ी का पल्ला सँवारा ज़से सामने देगने के लिए वह साड़ी के शगुनवाले रंग का सहारा ले रही हो।

सामने उस ने हरे रंग का बावड़ीवाग़ गरारा पहना हुआ था, गले में लाल रंग की कमीज़ थी और मिर से पर तक ढाँका हुई हर रेशम की चुनरा। एक झिल मिल-सी हुई। शाहनी को सिर्फ़ एक पल यही लगा—जमे हरा रंग सारे दरवाज़े में फैल गया था।

फिर हरे काच की चूड़िया की छनछन हुई तो शाहनी ने देखा—एक गोग मोरा हाथ एक झुके हुए माथे को छूकर आदाय बजा रहा है और माथ ही एक वन कता हुई सी आवाज़—‘बहुत-बहुत मुबारक शाहनी। बहुत-बहुत मुबारक’

वह बड़ी नाजुक-नी पुतली सी थी। हाथ लगते ही दाहरी होती थी। शाहनी ने उसे गाव-तकिये के सहारे हाथ के इशार से बठने को कहा तो शाहनी को लगा कि उस की मासल बाँह बड़ी ही बेडौल लग रही थी।

कमर के एक कोने में ग़ाह भी था। दोस्त भी थे, कुछ रिस्तेगार मद भी। उस नाज़नान ने उस कोने की तरफ़ देखकर भी एक बार सलाम किया और फिर परे गाव-तकिये के सहारे ठुमककर बठ गयी। बैठते बकन काच की चूड़िया फिर छनकी थी, शाहनी ने एक बार फिर उस का बाँहा को देखा हरे काच की चूड़िया की जोर फिर स्वाभाविक ही अपनी बाह में पड़ हुए सोने के चूड़े का देखने लगी।

कमरे में एक चकाचौंध-सी छा गयी थी। हरक की आँखें ज़से एक ही तरफ़ उलट गयी थी शाहनी की अपना आँखें भी, पर उसे अपनी आँखा को छाँककर सब की आँखा पर एक गुस्सा मा आ गया।

वह फिर एक बार कहना चाहती था—अरी बदशगुनी क्यों करती हो? सहने गाओ ना पर उस की आवाज़ गले में घुटती-नी गयी थी। शायद औरो की आवाज़ भी गले में घुट गयी थी। कमरे में एक खामाशी छा गयी थी। वह अघबोच रखी हुई ढोलक की तरफ़ लवने लगी और उस का जी किया कि वह बड़ी जोर से ढालक बजाये।

खामोशी उस ने ही तोड़ी जिस के लिए खामोशी छापी थी। कहने लगी, “मैं तो सब से पहले घाड़ी गाऊँगी, लडके का ‘सगन’ कहूँगी, क्या शाहनी ?” और शाहनी की नग्न ताकती, हँसती हुई घाड़ी गाने लगी ‘निककी निककी बूँदी निकिया मोहू वे बरे, तेरी मा वे सुहागन तेर सगन करे ”

शाहनी को अचानक तसल्ली सी हुई—शायद इसलिए कि गीत के बीच की माँ वही थी, और उस का मद भी सिर्फ उस का मद था—तभी ता मा सुहागन थी

शाहनी हँसने से मुँह से उस के बिगुल सामन बैठ गयी—जो उस वक्त उस के बटे के सगन कर रही थी

घाड़ी खत्म हुई तो कमरे की बोलचाल फिर से लौट आयी। फिर कुछ स्वाभाबिक-सा हो गया। औरता की तरफ से फरमाइश की गयी—“ढालकी राडेवाला गीत।’ मर्दों की तरफ से फरमाइश की गयी—“मिरजे दिया सदा।’

गानेवाली ने मर्दों की फरमाइश सुनी-अनसुनी कर दी, और ढोलकी को अपनी तरफ खींचकर उस ने ढोलकी से अपना घुटना जोड़ लिया। शाहनी कुछ रौ म आ गयी—शायद इसलिए कि गावाला मर्दों की फरमाइश पूरी करने के बजाय औरता की फरमाइश पूरी करने लगी थी

मेहमान औरता में से शायद कुछ एक को पता नहीं था। वह एक दूसरे से कुछ पूछ रही थी, और कई उन के कान के पास कह रही थी—“यहा ह शाह की कजरी ”

कहनेवाली ने शायद बहुत धीरे से कहा था—खुमुर-खुमुर-मा, पर शाह की के कान में आवाज पड़ रही थी, काना म टकरा रही थी—शाह की कजरी शाह की कजरी और शाहनी के मुँह का रंग फिर पीका पड़ गया।

इतने में ढोलक की आवाज ऊँची हो गयी और साथ ही गानेवाली की आवाज, “सूहे वे चीरे वालिया मैं कहना हूँ ” और शाहनी का कलेजा यम-मा गया—यह सूहे चारवाला मेरा ही बेटा है, मुख से आज घोड़ी पर चढ़ेवाला मेरा बेटा

फरमाइश का अन्त नहीं था। एक गीत खत्म होता, दूसरा गीत शुरू हो जाता। गानेवाली कभी औरता की तरफ की फरमाइश पूरी करती, कभी मर्दों की। बीच बीच में कह देती, “काइ और भी गाया ना मुझे सास निला दो।’ पर जिस की हिम्मत थी, उस के सामने हाने की, उस की टल्ली भी आवाज वह भी शायद कहने का कह रही थी, कने एक के पीछे बट दूसरा गीत छेड़ देती थी।

गीतों की बात और थी, पर जब उस ने मिरजे की हँक लगायी, ‘उठ जी साहिवा सुत्तीये। उठ के दे पीदार ” हवा का कलेजा हिल गया। कमरे में बड़े मद बुत बन गये थे। शाहनी का फिर घबराहट-सी हुई, उस ने बड़े गौर से शाह के मुँह की तरफ देखा। शाह भी और बुता सरोखा बुत बना हुआ था, पर शाहनी को लगा वह पत्थर का हो गया था

गाहनी के कलेजे में हील-या हुआ, और उसे लगा अगर यह घटी छिन गया तो वह आप भी हमेशा के लिए वुत बन जायेगी वह करे, कुछ कर, कुछ भी करे पर मिट्टी का वुत ना बने

काफ़ी शाम हो गयी, महफ़िल खत्म होनेवाली थी

शाहनी का कहना था आज वह उसी तरह बतसे बाटेगी जिस तरह लोग उम दिन बाटते ह जिस दिन गीत बढाये जाते ह । पर जब गाना खत्म हुआ तो कमरे में चाप और कई तरह की मिठाई आ गयी

और गाहनी ने मट्टी म लपेटा हुआ सौ का नोट निकालकर अपने बटे के मिर पर से गारा और फिर उसे पकड़ा लिया जिसे लोग शाह की कजरी कहते थे ।

“रहने दे शाहनी । आगे भी तेरा ही खाता हू । उम ने जवाब दिया और हँस पड़ी । उस की हसी उम के रूप की तरह झिलमिल कर रही थी ।

गाहनी के मुँह का रंग हल्का पड़ गया । उसे लगा जैसे शाह का कजरी ने आज भरी सभा में शाह से अपना सम्बन्ध जोड़कर उस की हतक कर दा थी । पर शाहनी ने अपनाआप थाम लिया । एक जेरामा किया कि आज उम ने हार नहीं रानी थी । और वह जार से हम पनी । नाट पकड़ाती हुई कहने लगी ‘ शाह मे तू ने नित लेना ह पर मेर हाथ से तू ने फिर कब लेना ह ? चल जाज ले ले

और शाह की कजरी सौ के नोट का पकड़ती हुई एक ही बार म हीनी सी हो गयी

कमर में गाहनी की सागी का सगुनवाला गुलाबी रंग फैला गया

-

दो खिड़कियाँ

इमारत जमी इमारत थी, पाच मजिलावाला । जमी जौर, धमी वह । जौर जमे औरा में पद्रह पद्रह घर थे, वसे ही उस म भी । बाहर मे कुछ भी भिन नहा था सिफ अन्दर म

‘यह जो एक सा दिखने हुए भी एन-सा नही हाता, यह ” डाका इस ‘यह के जाने की खाली जगह को देखने लगती

‘खाली जगह का क्या हाता ह उमे जब तक चाहे देखने रहा पर जा खाली दिखता ह क्या सचमुच ही खाली हाता है ” और डाका का लगता जस ऐसी बरुत सी बातें थी जिन के बाद उम के पाम रह गये थे और अथ उस खाली जगह चले गये थे

आज भा डाका अपने बडे कमरे की एक एक चीज को दगता हुई शब्दा को ढूँढने लगी, “न सही अथ, गद्द ही सही, पर वे भी कहा ह ?

डाका क बडे कमरे में दो खिड़किया थी । आगवाली खिड़की की तरफ बडी सड़क थी, वहाँ बडी रात तक लाग आते जाने रहते थे । पर पीछे का खिड़की की तरफ एक जगह था, जिस के पड कही आते जाते नही थे । और डाका दोना खिड़किया का देखने देखते रा-सी पडती, लगता ह, गद्द आगवाली खिड़की म से निकलकर बाहर बडी सड़क पर चले गये हैं, और अथ पीछे की खिड़की में से निकलकर बाहर जगल म चले गये हैं ”

और उन दानों खिड़किया के बाच जा जगह थी डाका को लगा—वह दो देशो की सरहदा के बीच छाडा गयी थाडी-सी जगह थी, जहा वह कई वर्षों स खडी थी । बडी अकेला थी, पर वर्षों से वही खडी थी । उसे खयाल आया कि वह कभी इधर की या उधर की सरहद पार कर किसी एक तरफ क्या नही चली गयी थी ? पर उसे लगा—उस के पाव जस वर्षों से हिलने नही थे । और वह हमेशा वही की वही खडी रही थी ।

आगे की खिड़की में मे बडा गार आता था—गंगा के पाव¹ ट्रामा के पहिय—जसे गंगा का खडाक हाता ह—पर पीछे की खिड़की में से काई खडाक नही आता था—जमे अर्थों का कोई गन्नाक नही होता और वे सिफ पेडा के पत्ता की तरह चुपचाप उग आते ह, और चुपचाप झट जाते ह ।

कमरे की चीजें भी वैसी ही थी, जमी वह आप । एक गहरा लाल मखमल दो खिड़कियों

का शाह किम्म का दीवान था, जिस के ऊँचे दानुआ पर सोने के रंग का पत्तर चढ़ा हुआ था। एक तरफ काला और चमकती हुई लकड़ी का मेज था, जिस पर तबकानी का काम किया हुआ था। एक तरफ अलमारी थी जिस में लम्बा गरदनावाली काच की सुरहियाँ थी, नीले फूलों से चित्रित प्लेटें थी और चादी के काटे और चादी के चम्मच थे। तीना दावारों पर आयल पेण्ट की तीन बनी तसवीरें थी, जिन के बड़े-बड़े चौखटे साने के रंग के पत्तरों से मढ़े हुए थे। और इस बड़े कमरे के दूसरे कोने में खाना खाने के लिए एक बहुत बड़ी मेज थी जिस के गिद मखमल की, बड़ा ऊँची पीठवाली आठ कुर्सियाँ थी। इन्हीं बड़े कमरे में से एक दरवाजा एक छोटे कमरे में खुलता था जिस में एक पलंग था जिस पर रेशम की एक बहुत बड़ी चादर बिछी हुई थी। उस के दोनों तरफ रखी हुई पीतल का तिपाइया पर मीनाकारी की हुई थी। इसी कमरे की एक दीवार के साथ किनासा की अलमारी थी, जिस के खाना में बड़ी महँगी जिदावाग बितायें चुनी हुई थी।

इस सब कुछ की उमर भी डाँका जितनी थी—क्याकिं डाँका के बाप ने बताया था कि उस ने यह सब डाँका के जन्म पर खरीदा था। और अब जैसे डाँका की जवानी ढल गयी थी इन चीजों की चमक-दमक भी ढल गयी थी—साने के रंग के पत्तर धुल गये थे, मखमल फीका पड़ गया था।

ये चीजें भा डाँका का तरह बड़ी जरेला थी—वह मेज पर खाना खाने बटती ता आठ में से सात कुर्सियाँ खाली रह जाती। नीचे फूलवागी प्लेटों में से सिर्फ एक पानी से धुलती। चाँदी के चम्मचों में से सिर्फ एक चम्मच इस्तेमाल होता। और रेशमी चादरवाले बड़ पलंग का सिर्फ एक काना किसी जिंदा आत्मी की साँसें सुनता।

आज पीछ का पिडका में खड़े-खड़े डाँका का वह बदन याद आ गया—जब ये सब की सब चीजें वही अलौप हो गयी थी। उम्र उस की माँ की, और उस के बाप का बागिया ने आधी रात का उस के घर से निकाल दिया था। घर और घर की एक-एक चीज छीन ली थी। फिर उन तीना का एक कमरे में रखा गया था, जहाँ से वे एक दिन उस के बाप का वहाँ ल गये थे जहाँ से वह कभी वापस नहीं आया था। और मौ पगलाया-मी मास का एक गठरी बन गयी थी। तब डाँका—एक कुँआरी बच्चा

उस का बीमार्य डाँका का लगा एक मद ने नहीं राजनीति की एक घटना ने भग किया था। राज्य बगला और राज्य का प्रबन्ध बगला। किसी का किसी चीज पर कोई हक नहीं रह गया था। किसी का किसी तरह के एतराज पर कोई अधिकार नहीं रह गया था। काम भा वही करना होता था, जिस का हुक्म मिले सोचना भी वहाँ होता था जिस का फरमान हा। डाँका का उम्र के बाप ने तीन जुवाना का तानीम दी था—एक अपने देश का जुवाना एक फ्रेंच और एक जर्मन। इतनी सालीम किसी बिरले के पास था इसलिए नयी राजनीति का उम्र की जन्मत था। और डाँका ने जब उन जुवानों में वही लिखना शुरू किया जिस का उस हुक्म मिला था, ता उम्र लगा

जैसे सरकारी हुक्म ने एक उक्कड़ मद की तरह उम का कौमाय भग कर दिया था।

बाप कल्ल हुआ था, पर डाका ने कल्ल हाने अपना आखा से नहीं देखा था। मा जिस तरह से जी रही थी, उसे तब आखा से देखना ऐसे था जमे काई राज किसी का तिल तिल ब्रल्ल हाते दये। मा चारा तरफ देखा करता थी पर पहचानती कुछ नहीं थी। कभी डाका का हाथ पकड़कर दूर तक दखते हुए पूछा करती, “हम कहा आ गये ह ? हमारा शहर कहा गया ? यह किस का घर ह ? तो डाका राने राने का हो उठती थी

और जब कुछ शान्ति-भी हुई थी डाका का रहने के लिए यह घर मिला था, तब डाका का एक खयाल आया था—उस ने ऊँची पदवी के अधिकारिया की मिनत की थी कि वह पहले से भी ज्यादा उन के हुक्म में रहेंगी सिफ़ अगर कभी उस की खिदमतों के बदले में उसे कुछ वह सामान लौटा दिया जाये जो कभी उम के बाप के वक़्त घर में हुआ करता था।

डाका की यह दर-वास्त मज़ूर हो गयी थी और डाँका के इम खयाल ने सचमुच ही उस की मदद की थी—माँ की आखा में कुछ पहचान लौट आयी थी। कई बार वह उठकर मेज़ा और कुरसिया का खुद पाउने लगती थी। और फिर उस ने यह पूछना छाड़ दिया था कि यह किस का घर ह।

सो डाँका के घर में कुछे वही चीज़ें थी, जो एक दिन अगोप भी हुई थी और प्रकट भी।

‘पर, डाका साचा करती, जो कुछ खयाला और सपना में स अलाप हो गया है, वह ?’ और डाँका उस ‘वह’ के आगे की खाली जगह का कितनी कितनी देर तक धूरती रहती

(२)

डाँका ने मेज़ की एक दरार माली। इस दरार में वह कुछ सिगरेट रखा करती थी, जो उन वाज़िल पल में पिया करती थी—जब उम के प्राण, सिगरेट के धुएँ की तरह, एक धुआँ-सा बन हवा में घुल जाना चाहते थे

उसे वह दिन भी याद था, जब उम ने पहला मिगरेट पिया था। एक दिन मा पलग की रेशमी चादर को पग पर बिठा रही थी कि उसे अचानक याद हा आया था, “डाका ! यह चादर तुम्हारे पिता चीन से ख़राद कर लाये थे। दखा, मैं ने इसे कितना सँभाल कर रखा है !”

जवाब में डाँका का आवाज़ काँप गयी थी, उस खोफ़-मा हुआ था कि अभी मा का अपने मद की याद आ जायेगी और फिर वह बड़ी-बैठी राने लगेगी। पहले भी कई बार उसे बैठे-बैठे कुछ हा जाया करता था, पर ग़नामत यह था कि उस की माँ का यह नहीं पता था कि उस क मल का ब्रल्ल हा चुका ह। उस के अचानक गुम हो जाने क

सदमे ने उस के होन कुछ इस तरह छान गिये थे कि उम न गुन हो साया और गुन ही विश्वास बना लिया कि उस का मद किसी दूर देग म तिजारत बग्ने व गि चला गया, पर उस दिन डाँका को लगा—माँ के हास लौट रहे थे, पर का चाड़ा न उम को कुछ पहचान लौटा दी थी और अगर उस बम्प के दिनाशाया लागा की गुगुरगुमुर याद हा आयी

डाँका ने उम का ध्यान चीजा में ही लगाये रगन के लिए जल्ती स पूछा था, 'माँ, यह इतना खूबमूरत पलग वहाँ स बनवाया था ?'

"तुम्हारे पिता एव तसबीरावाली बिताव लाये थ । मातूम नहा वहाँ स । उस में इस पलग का नमूना था

कुरसिया का नमूना भी उस में था ? '

'हा कुरमिया का भी ऐसी रगीला तगवारें था जम कुरमिया पर सचमुच हा मयमग लगी हुई हा '

और माँ, ऐसी प्लेटें भी ता किसी और के पास नही

"ये ता वह फाम से लाये थे देगा मैं ने इन में स एक भा तहा टूटने दी, अभा तक पूरी बारह ह गिनो ता भला "

डाँका चाहती थी कि माँ का ध्यान वही लगा रहे भलें ही प्लेट और चम्मच गिनन में ही । पर उस इस में भी कठिनाई सी अनुभव हाती थी जम माँ को कुछ और ऐसी ही चीजें याद आ जाती थी जो अब वहाँ नही थी । एक दिन ता माँ ने मातिया की एक कधी के लिए सारा दिन मुसीबत बिये रखी था—एक एक चीज का खालता और रखती वह कधी का ऐस दूढ़ रही थी जस सुनह वह खुद हा वही रसकर भूल गया हो ।

पर उस दिन मा का किसी और चीज की याद नही आयी थी । डाँका कुछ आश्चस्त हो चली थी कि अचानक माँ ने मज की एक टराज खालत हुए पूछा था, "अरी डाँका, तुम्हार पिता का यहा खन पडा हुआ था वहाँ गया ?

खत डाँका चौंक उठी ।

कल तुम्हारे पिता का खत आया था कि अब वह बडी जल्दी आ जायगा, मैं ने कल तुम्हें बताया नही था ?

'नही ।

'फिर खुशी म भूल गयी होगी ? मैं न यहाँ मज की दराज म रखा था '

डाँका को लगा—जसे मा को रात बाई सपना आया हा ।

वाक़्ती क्या नही ? तुम ने लिया ह मत ? ' माँ पूछ रही था पर डाँका से कुछ नहा बोका जा रहा था ।

मा फिर खु ही पूछ रही थी 'परिस से आया था न ? ' और खुद ही दलाला में पडकर कह रही थी वहा से वह वही इटली ना चला जाय अगर इटली

चला गया ।

“इटली डाका ने मा का ध्यान दूसरी तरफ लगाने के लिए धीरे से कहा, ‘मा, तुम कभी इटली गयी हो?’”

“नहीं पर मुझे यह पता है कि इटली गया मद जल्दी नहीं लौटता । कई तो लौटते ही नहीं । क्या पता, तुम्हारे पिता भी ” और मा कुछ ऐसी दलीला में पड़ गयी थी कि वह खंडो नहीं रट सकती थी । वह पलंग की एक बाही पर गुमसुम-सी बठ गयी थी ।

डाका के लिए मा की यह हालत भी बुरी थी, जब वह पत्थर सी हो जाया करती थी । उस ने मा को एक अमीम चुप्पी से बचाने के लिए पूछा, ‘पर मा, लोग इटली जाकर लौटते क्या नहीं?’”

मा बितनी ही देर उस के मुह की तरफ देखती रही फिर हँस-सी पड़ी मद किसी दंग भी जाये उस की ओरत डरती नहीं, पर अगर इटला जाये ता ओरत को उस का भरोसा नहीं रहता ।

‘पर क्या?’ डाका भी हस-सी पड़ी थी ।

“तुम ता पगली हो ” मा को यह बात बताने में शम-सी आ रही था पर फिर वह सकाच से कहने लगी थी, इटला की औरतें मर्तों पर जादू कर देती हैं ।

और फिर मा ने एक गहरी साँस लेकर कहा था, हाय रे ! वह कही इटली न चला जाये ! फिर मैं उमर भर यहाँ इतजार करती रहूँगी वह नहीं आयेगा ।

उम दिन अकेले बटकर डाका ने जिन्दगी में पहला मिगरेट पिया था

(३)

‘मिगरेट का इतिहास कौन लिखेगा ? डाका को एक खयाल-मा आया “देखने का लगता है कि सिगरेट का इतिहास उस के नाम में होता है । अलग-अलग नाम में अलग अलग ब्राण्ड म—किमी का इतिहास पैंतीस वष का, किसी का पचास वष का—किल्मा में जब किसी का इतिहास रहता है, उस का इतिहास ऐसे ही बताया जाता है—पर यह मिगरेट का इतिहास कैसे हुआ ? यह तो उस कम्पनी विशेष का इतिहास हुआ ।’

टाँका न हायनाटे सिगरेट की आविरी आग से एक और सिगरेट मुलगाया और सोचने लगी “एक बार मेरे पिता ने मुझे खुद बताया था कि उम ने पहला मिगरेट अपनी पहली कमाई के जशान के मोके पर पिया था । उम दिन वह बहुत खुश था । पचाई के दिना में उम ने इस तरह से समय रखा था और मन से इत्तार कर लिया था कि जब तक वह अपनी हथेली पर अपनी कमाई के पत्त नहीं रखेगा, तब तक वह गुप्त का काई चीज नहीं खरीदगा । मा उस के लिए यह गुप्त का निशानी थी ”

टाँका के मिर का एक चक्कर-मा आया—गायद डमलिंग कि उस ने सुबह से

कुछ नहीं खाया था। रविवार था काम पर नहीं जाना था इसलिए कुछ भी बनाने का उपक्रम नहीं किया था। काफी की जगह भी उस ने सिगरेट पी थी रोटी और पनीर के टुकड़े की जगह भी सिगरेट और सिगरेट की जगह भी सिगरेट।

और डाँका को खयाल आया कि एक बार उस ने खलील जिब्रान की एक किताब में पढ़ा था खलील के अपने हाथ का लिखा हुआ खत, कि उस ने एक दिन में दस लाख सिगरेट पिय थे

डाँका फिर खयाला में डूब गयी—सिगरेट का असली इतिहास यह होता है कि किसी को किस वक़्त सिगरेट की तलब महसूस होता है

और डाँका का पहाड़ी पर का वह गिरजा याद हो आया—जिस में पत्थरा की कुछ कदराएँ बनी हुई थी। कहते हैं कि दा बप पहले जय महा तुकों का राज्य स्थापित हुआ था लागा पर बड़े जलम हुए थे। तब कुछ विद्वान इन कदराओं में चले गये थे और तुकों का नज़र से छिपकर समय का इतिहास लिखते रह गये जगला के बाद मूल और तम्बाकू के पत्ते खाकर वे गुज़ारा करते और इतिहास लिखते

डाँका के मन में पहाड़ा की कदराओं में बठवर इतिहास लिखनेवालों के चेहरे और खलील जिब्रान का उस की तसवीरों में से दगा हुआ चेहरा गड़बड़मंड-से हो गये। सोचने लगी—सा यह भा सिगरेट का इतिहास है—किमी रचना की ज़रूरत के वक़्त

फिर एक जोर या उस के बदन में झुरझुरी सी पैदा कर गयी। यह कोमारक की याद थी। उस का अंदर भूल की एक लहर दौड़ गयी—एक जिस्म की रोटी की भूख भी लगती है और दूसरे जिस्म की भी

डाँका ने सिगरेट का लम्बा कश लिया और जाखें भीच ली। हाथ वहीं उस के होठों के पास सा सा गया। सिगरेट के साथ झट्टी होती रही रात जब झडकर उस के मुह पर गिरी तो उस की तपिस से वह चौक उठी।

कमरागन न जाने कहा होगा? डाँका के मन में कुछ हुआ तो उसे लगा—उस के कमरे की दाना खिड़किया अचानक बंद हो गयी थी। और हर रात जो आगे की खिड़की में से बाहर चला गया था हमेशा के लिए बाहर रह गया था। और हर अजब जा पीछ की खिड़की में से बाहर चला गया था, हमेशा के लिए बाहर रह गया था

कमरे में सिगरेट जलता रहा डाँका सुलगती रही

'सिगरेट का इतिहास' डाँका की आत्मा के आगे धुँव सी छा गयी—शायद सिगरेट का धुआँ।

यह पल यह घड़ी इस जसे कई पल, कई घड़िया ये भी सिगरेट का इतिहास है बेशक इन के लिए शब्द भी कोई नहीं और जय भी कोई नहीं " डाँका ने पोरो में थामे हुए सिगरेट का आगिरी टुकड़ा को वहीं पर फेंक दिया।

वह छुद बुझे हुए सिगरेट की तरह वहीं निढाल हा गयी जहा बैठे हुई थी ।

“डाका, तुम्हें मेरी कसम अपना ध्यान रखना । बोलो, रखोगी ?”

‘रखूंगी ।’

“यह मैं तुम्ह अमानत दे रहा हूँ ।’

‘अमानत ?’

“यह मेरो डाका, मेरी अमानत ।”

डाका बुझी हुई भी सुलग उठी । उस के कानो में कामारक की आवाज भर रही थी

“कामारक कहा ह ? कहीं भी नहीं ” डाका का मन यातुल हो उठा,
“यहा मिफ मैं रह गयी हूँ, और उस की आवाज ”

डाका को एक बेचनी भी महसूस हुई, एक चैन-मा भी मिला, “अगर व्यतीत की कुछ आवाजें भी आदमी के पास न रहती आदमी का क्या बाता ”

साथ ही डाका का अपना इकरार याद हो आया कि वह कोमारक की अमानत थी, और उसे अमानत का ध्यान रखना था । उस ने उठकर काफी का प्याला बनाया, पनीर का एक टुकड़ा प्लेट में रखा, और जब खाने लगी उसे याद हो आया—कोमारक का जो नरम कभी जल्मा में बड़े जोग के साथ सुनी जाती थी वह नरम लिखने वक्त उस ने कोई एक सौ सिगरेट पिये थे । कोमारक घर में भी कभी-कभी वह नरम बड़े मन से पटा करता था—

“मैं शहीदो की कब्र पर जाकर

इक छुरी तेज कर रहा हूँ—

इस छुरी के दम से, इक बगावत आयेगी

औ उन के लहू का बदला चुकायेगी

और डाका हँसा करती थी ‘एक नरम लिखते हुए तुम ने एक सौ सिगरेट पिये ह अभी ता तुम छुरी का तेज ही कर रहे हो, जब इस स बगावत लाओगे तब कितने सिगरेट पीजोग ?’

पुरानी हँगा में से डाका को नयी रुलाई आ गया, “इन सिगरेटो का इतिहास कौन लिखेगा ? ये जा कामारक ने इस नरम का लिखते वक्त पिये थे ?’

डाका ने काफी का आखिरी घूँट भरा, और फिर एक सिगरेट पीते हुए ख्याला में डूब गयी—“इस नरम का इतिहास भी कौन जानता ह ? उस ने न जाने किस के लिए लिखी थी, लागो ने किस के लिए समझी ”

‘लाग जब इस नरम पर तालियाँ बजाने ह, मैं कुछ हरान हा जाता हूँ,” कोमारक कहा करता था ।

‘वे समझते ह, यह जो बगावत ह, यह नरम उस का इतिहास है,’ डाका उसे जवाब दिया करता थी ।

दो रिश्कियों

“यही तो मुन्किल ह यह जा कच्ची-मक्खी-मा बगावत आया ह, इस से क्या बदला ह ? हुक्म नहीं बदल सिफ हाकिमा थ मुँह बन्दे ह, कामारक की आवाज कुछ ऊँची हा जाया करती थी ।

डाँका उस की आवाज को अपने हाँठा से ढक दिया करता थी, “सुन का वास्ता ह यह बात किसी और के आगे न कहना ।”

‘मुझे कुछ भा कहने में बिश्वास नहीं सिफ करने में बिश्वास ह,’ कामारक हँस पड़ा करता था ।

‘पर तुम्हारे मर किये क्या होता ह डाँका उन्म-मा हा जाया करती थी ।

तुम्हें एक बात बताऊँ ? एक दिन कामारक न अचानक तेम कहा था कि डाँका बिल्कुल ही नहीं जान सकती थी कि वह कौन-सी बात कहने लगा था, जिम का पहले उसे पता नहीं था ।

‘क्या ?’

“वह मेरी नज़म ह न ’

‘कौन-सी ? मरे हुआ का कब्र पर छुरी तेज करनेवाली कि कार्र और ?’

‘वही ।

हाँ ।

यह कभी देर स मेरे मन में था तब से जब इस पिछली बगावत का चहरा कुछ निखर रहा था

सो यह नज़म इसी की दन ह ?

जब इस की कल्पना का थी, तब इसी की थी पर जब लिखी तो इस की न रही ।

जिम तरह ?

‘इसलिए कि यह बगावत अपने ही कहे पर कायम न रही । जो हथियार इस की हिफाजत के लिए पाड़ा था वही फिर इस स बचने के लिए पक्कना पड़ गया डाँका ।

हा ।

तुम्हारे पिता एक अमीर तاجر थे न ?

हाँ ।

इम बगावत ने उसे इसलिए मरवाया कि धरती पर गट्टे और टाले न रहें पर बाज़ में अगर नय गट्टे और टाले ही बनाने थे

डाँका ने जहाँ तक अपने बाप का देखा था एक रहमदिल इनसान हा पाया था । साचा करती थी शायद उम जमी जगहवाल बाकी लोग उस जैसे न होने हो पर जा था उस के लिए यह मजा क्यों था ?

जवाब वही से भी नहीं मिला था इसलिए उसे जवमर चुप रह जाने की

आन्त पड़ गयी थी ।

‘क्या डाँका ?’ कामारख के मन में जा कुँट था, उस दिन उस के मन में समा नहीं रहा था ।

‘तुम्हें पता है, मैं कभी गिरजे में क्या नहीं जाती ? मैं कई बार जाने की जिद करती हूँ, पर मैं टाल जाती हूँ । डाँका कुछ कहने-कहने को हाँ उठी थी । कहने लगी, “वहाँ के लामा के उदासी चेहर मुझ से देखे नहीं जाते । शायद वही एक ऐसी जगह है जो लामा का उदासी का पनाह देती है—या लाग ही उस से तसल्ली का भ्रम लेते जाते हैं—जान से कुछ नहीं सँवरता, पर जाते हैं—कामारख !”

“हाँ ।”

“असल में कल तो उन की उदासी का करना था ।” डाँका के ये शब्द उस के मुँह में ही थे कि कामारख ने उस बाह में भर उस के शब्द चूम लिये थे । डाँका का आँगा में पाना भर आया था । उस ने सहमकर कामारख के चेहरे की तरफ देखा था, जस भरी दुनिया में उस मुश्किल से इस जसा एक ही चेहरा मिला है, और उसे विश्वास नहीं हो रहा है कि यह चेहरा उस सदा दिखाई देता रहेगा ।

(४)

आज डाँका का कामारख याद आया तो इस तरह याद आया जिस तरह उस याद करने से वह मुदत में डर रही थी, और आज उस डर की मियाद खत्म हो गयी थी ।

कामारख का गम हुए पाँच वर्ष हो गये थे । डाँका उमरे जी भरकर याद करने का मौका बने यत्ना से टालती रही थी । जानता थी—वह इस तरह याद आया तो जिन्दगी का एक दिन भी उस से, उस के बिना गुजारा नहीं जा सकेगा । पर दिन तो गुजारने ही थे यह कामारख का नमीहत भी थी और जिन्दगी का निलागा भी ।

जब कामारख का उस ने खुद अपने हाथों बिदा किया था डाँका के हाथ यह कह मजबूर थे

‘यह भाँजिन्दगी का रहस्य था—यह जिन्दगी में मिल गया, तीन साल में मैंने उस के साथ गुजार लिये ।’ डाँका का अपनी उमर के गारे वर्ष इस तरह याद आये, जैसे उस ने रेत के बिनार पर बैठकर कुछ खाली सीपियाँ बटाती है । और कामारख से मिलन इस तरह, जग एक दिन अचानक एक सापा में से माती निकल आया है ।

उन की मुलाकात एक सरगारा दफ्तर में हुई थी—एक गहरी और लम्बा छुप में से । दफने का तो डाँका उमरे राज देना करता थी, पर चेहरा की पहचान तो मिलाप नहीं होता

एक दिन डाँका त्पतर में बनी उदाग थी । जा लिये रहीं थी उस से नहीं लिखा जा रहा था । और दफ्तर में ही उस की आँखें भर भर आया थी । कामारख

न उस बीमार समझा था। हाल पूछा था। पर डाँका ज़र तेज़ गिर दद बहुर, दफ़तर से छुट्टी लेकर घर लौटी थी, कामारव उस घर तक छाड़ने आया था। घर आकर डाँका ने उस के और अपने लिए बाफ़ा बनायी था। किंगी पर विनाग करने की टाका की आदत नहीं थी पर उस गिन बाँफ़ी पीत हूए कामारव के गामने उन के मुह से निबल गया 'रोज़ इतना कुफ़ नहा तोला जाता हिम्मत नहीं रह गयी' "

और डाँका की आँखा में फिर पानी भर आया था, 'लग साँग रोके जी रह ह, मैं रोज़ उन की सुसा के इतिहास लिखती हूँ। यह सब कुछ किंग लिए करती हूँ, इसी लिए न कि जिंदा रह सकूँ' "

यही विवास एक जड था जिस म स डाँका और कोमारव की दास्ती उगा थी। और फिर कुछ महीना के बाद उन्होंने विवाह कर के अपने मयाल भी एक कर लिये थे और सपने भी।

माँ के चहर पर एक रौनक-सी लौट आयी थी। मिक एक दिन उस ने कहा था, 'डाँका तुम इटला अपने पिता को सत लिए दती ता तुम्हारा खत पडकर वह जरूर आ गात। तुम उन के आने पर विवाह करती ता अच्छा था पर फिर कभी उस ने कुछ नहीं कहा था।

कोमारव न ही एक बार माँ के चेहर की तरफ़ दगकर डाँका से अकल में कहा था 'डाँका वह जा नरम ह न—कत्रो पर छुरी बा तेज़ बनरवाली तुम्ह पता है के कौन-सी कत्रें ह ?

'नहीदा की। डाँका न जवाब लिया था।

हा शहीदा की पर इस शान्त व बड अय हान ह

बिस तरह ?'

'ये उन मामूम लोग की कत्रें भी ह, जिन व स्वाहमवाह कल हात ह—जसे तुम्हार बाप की कत्र—और मे उन उगासिया की कत्रें भी ह, जिन म मर हुए नहीं, जिंदा लाग रहने ह जस माँ

उस दिन कोमारव की छाती से सिर सटा डाँका बहुत रायी थी।

डाँका और कोमारव का रिस्ता एक विश्वास की जड म स उगा था। और इस वं साथ बेगुमार आसू थे, जो शायद इस पौधे का पानी दन के लिए बने थे। डाँका को यह याद आया—कि वह अपने विवाह की पहली रात भी रोयी थी

यह वह रात थी—जब एक पूरी औरत एक पूरे मद स मितता ह—और उस रात डाँका ने कोमारव को बताया था, 'दफ़तर म जब भी बहुत झूठे लेख लिखती हूँ घर आकर गगता ह जसे पराये मद के साथ सोकर आयी हूँ। सारा जिस्म गलीज लगता ह' और डाँका की आरा म पानी भर आया था सिफ़ आज पहली बार दगा ह कि जिस्म पवित्र कैसे होता ह।'

उस रात कोमारव की बाहें डाँका के गिद से खुलती नहीं थी। बार-बार

बहुता था, “तुम इतनी पाकीजा हो कि साचता हूँ तुम्हें कहा छियाऊँ।”

फिर साल गुजर गया, दा गुजर गये, तीसरा भी गुजरने को हो आया। डाका औरत थी उस ने एक मन् का पाकर अपनी सारी दुनिया उस तक समेट ली। पर कोमारक मद था उस के लिए दुनिया के अर्थों का बड़ा विस्तार था। इद गिद जो कुछ भी बदला था, मिफ शदो म बदला था, जय वही थे जा एक हुक्मत के हुआ करते हैं। और नयी हुक्मत के और भी सख्त हुआ करते ह। कोमारक इन वर्षों में जो कुछ भी देख रहा था उस बार म किसी से कुछ नहीं कहता रहा था, पर अपनी नज्मा को बताता रहा था—शायद चुप की कत्र पर वह कुछ तेज करता रहा था।

और फिर अचानक खबर मिली कि कामारक की जान खतरे म थी

शायद एक् रात का भी भरासा नहीं था। सिफ एक ही रास्ता था कि कोमारक रात रात में ही दश में से निकल जाये, सरहद पार कर जाये

डाँका सारी-की-नारी उस म समा जाना चाहती थी। उस ने कोमारक का जाने के लिए तयार किया था, पर उम की छाती से अलग किये अलग नहीं हो रही थी

पीछे मा थी, मा का वही भी अकेला नहीं छाड़ा जा सकता था। नहीं ता एक बार ता डाका अनहानी सोच गयी थी

“अगर वही अनहानी हा जाती—” डाका की छाती में उबाल आया मा ता बाद म एक् माल भी जिन्दा नहीं रहती, वही जिन्दा रहती—यहा वस में रह गयी और ये दोवारें ”

और डाका के लिए मा का दुख भा ताजा हा आया—कामारक ने जाते वक्त मा स प्यार लिया। बताया कि उसे दूसरे देश में कुछ काम पड गया है इसलिए वह अरसे बाद लौटेगा और मा ने उसे ताकीद की थी कि वह चाहे जिस देश जाये पर इटला नहीं ”

आज डाँका की आत्मा में जस मा के जामू भर आये, ‘मा जितनी दर जिन्दा रही, कहती रहा—डाँका। उस का वाइ सत आया ? नहीं आया ? वह ज़रूर इटली चला गया होगा

खत डाका ने यह शब्द ज़हर के घूँट की तरह पी लिया—उस सिफ एक् खत का पता था जा उम ने एक् बार आत्मा से देखा था। उमे पुलिस के महकमे में बुलाकर उस के नाम से आया हुआ कामारक का खत उसे दिखाया गया था। उस म सिफ इतनी भर खबर थी कि वह जिन्ना फ्राम पहुँच गया था। तब से डाँका का पुलिस स वास्ता पडा हुआ था, उसी रात स जिस रात कामारक घर से गया था। उस के जाने और पुलिस के आने म कुछ घण्टा का फामन रहा था। कइ महीने तो उम यही चिन्ता रही थी कि वह जिन्दा भी था कि नहा। फिर पुलिस ने उम का खत दिखाकर बेगन उस कई हियायतें दी थी कि अगर फिर कभी उस का खत जाया और उस ने खत का दो गिड़कियाँ

जवाब दिया तो अपनी जान की वह खुद जिम्मेदार होगी, पर डाका की एक चिन्ता दूर हो गया थी और उस घड़ा वहीं तगरली उस के लिए काफी थी कि कामारक जिंदा था।

डाका ने कभी उस के खत का इतज़ार नहीं किया था। उस मातूम था कि कभी बाइ खत उस तक नहीं पहुँचेगा। पर वह साल बिताती जा रही थी। थ साल चुप थे यथ थे और डाका का लग रहा था कि इन के शब्द आगे का खिड़की में से बाहर चले गये थे और इन के जय पाछे वाली खिड़की में से बाहर गिर पड़ थे—पर पर

और डाका पर के जाग पड़ो हुई खाली जगह पर जमे खुद खड़ी हो गया, “कामारक ! मैं तुम्हारा इतज़ार करूंगी तब तक इतज़ार करूंगा जब तक तुम सब कत्रा पर जाकर अपनी छुरी तब नहीं कर त्त ।’

डाका का लगा—इत बेगुमार कत्रा में एक कत्रा उस के इतज़ार के साला की भी थी

और डाका ने उठकर एक आग से कमर का दाना खिड़किया खाल दी—एक गन्ना के लौट जाने के लिए और एक अर्थों के पलट आने के लिए। पता नहीं कत्रा—पर कभी

एक शहर की मौत

अपनी बात करने से पहले पामपेई का बात करूंगी। पामपेई नेपलज के पाम इटली का एक प्राचीन शहर था। इस से भी पहले यह समुद्री किनारे का शहर ईसापूर्व आठवीं शताब्दी में यूनान के समुद्री जहाजों का बंदरगाह हुआ करता था। ३१० ई. पू. में एक रामन जहाज यहां आया था, पर पामपेई ने उसे तट से लौटा दिया था। पर आगिर यह शहर जात गया था, और ८० ई. पू. में यह रामन बालानी का गया था।

फिर इस ने रोमन जवान रामा कानून और रामन वास्तुकला अपना ली। बागवानी जगह के साथ साथ यह आरामगाह भी था। इस की आबादी बीस या बीस हज़ार थी।

फरवरी '६३ में यहां एक भयानक भूचाल आया। बहुत कुछ ढहकर ढेरी हो गया। पर उस का निर्माण फिर शुरू हो गया।

निर्माण जारी था कि २४ अगस्त '७९ का यहां लावा फूट पड़ा। और ह्यूमा शहर आग की गरम राख के नीचे डूब गया।

यह गरम राख में ही की तरह बरसी थी—घग्गी में छह फुट ऊंची इस की तह जम गयी थी। और इस के लोग जहाँ बैठे या खड़े थे वम के बने उस गरम राख में दब गये थे।

और इस तरह साग शहर गरम राख और कपड़ों धूल की बारह फुट ऊंची तह के नीचे दब गया। और कई सन्तियों तक दबा रहा।

सालहवी सन्ती में एक नहर निकालने हुए कुछ इमारतों के निशान मिले। और नेपलज के बादशाह ने मार्च १७४८ में बाबायदा खुदाई शुरू करवायी। और १७६३ में गिलाआ की लिखाई से पता लगा कि वह पामपेई के शहर है।

पहली चीज जो मिली, इस के बूत थे। फिर १८६० में इस में से मरे हुए लावा के निशान मिले। राख में गड़े जहाँ-जहाँ भी थे वहाँ प्लास्टर आफ पार्मि डाल कर ठीक वही रूपगंगा राजी—जम लाग खड़े हुए बैठे, या भागते उस राख में गिर गये थे।

और वही तरह खोजा कि उस शहर के घर किस तरह के हुआ करते थे पीने पसल और पान्ने के हुआ करते थे। हाउस आफ सिल्वर वर्निंग, हाउस ऑफ गोड्डा क्यूपिड और बहुत ही मति कला यानी बुतकारी और वास्तु कला में यह एक बड़ा

अमीर शहर था

मैं भी थी पामपेई की तरह

पूरे पन्द्रह बरस मैं अपनी चुप और लज्जत की धुंध में लिपटी रही। रोज सबेरे उठ कर मिन सिंह का जामा पहन लेती था, और ईलिंग के एक स्कूल में नौवरी पर चली जाती थी।

पर इन छट्टियाँ मैं मैं रोम गयी थी। मैं न राम के गिरजे देग, वहाँ कई औरतें मामवसिया जला रही थी, पर मुझे कोई मामवसती जलाने का सवाल नहीं आया था। राम का वह चश्मा भा दखा, जिस में एक सिक्का जल कर लग मुरादेँ माँगते हैं। पर मैं ने जेब में हाथ डाल कर कोई सिक्का नहीं निकाला था। फिर रोम से फ्लोरेंस गयी थी। वहाँ माइकल एंजलो के चौक में लोग बबूतरो का चुगगा चुगा रहे थे और उन की हुबेली पर बिठा कर तसवारें उतरवा रहे थे पर मुझे अपना तसवीर उत्तराने का कोई खयाल नहीं आया था। फिर एक दिन रोम से नेपल्स गयी थी और वहाँ से आती बार रास्ते में पामपेई देखा था। पर पामपेई के खडहरा में से घूम कर जब शहर के दरवाजे के पास आयी तो लाहे के दरवाजे ने मेरा हाथ पकड़ लिया था।

इस तरह तो कभी किसी मद ने भी मेरा हाथ नहीं पकड़ा था मैं काप गयी।

और लाहे का दरवाजा पिछली तरफ—उन खडहरा की तरफ ताकन लगा।

जहाँ कई स्तम्भ और कई दीवारों के टुकड़े खड़े थे।

और उम के कहने पर मैं भी उन्हें देखने लगी

कहीं कोई भी और नहीं थी—कभी हाती हागी—कुछ चारा तरफ से बंद कमरे रहे होंगे। और फिर उन व भी अन्दर कुछ कोठरिया। पर अब सब कुछ चौपट खुल हुआ था। सारे रहस्य नीचे बिछे हुए थे। और पता नहीं लगता था कि कौन सी राह बिधर निकलती थी और जाता कहाँ थी। राह राहा के गले लगी हुई थी

एक लाहे व हाथ ने मेरा हाथ पकड़ा हुआ था—मेरा हाथ सुन-सा होने लग पण

पहले मर दाया हाथ सुन हुआ, फिर दाया बाँह, दाया कंधा। फिर बायाँ हाथ बायी बाह और बाया कंधा।

मैं ने लाहे के दरवाजे से पर हाने के लिए एक जोर लगाया—पर अब मेरे पर भी सुन हो गये थे लातें भी।

लगा—मैं भा पामपेई शहर का बीस हजार गारा की तरह एक लाश था वहाँ से जल्दी से बाहर निकलने के लिए दाया पैर आगे किया हुआ था और बायें को आगे करने के लिए उम की एडा जरा-सी उठी हुई—और फिर वही की वही एक गरम राख में हमेशा के लिए लाग बन कर खड़ा रह गयी

मैं किस दरवाज म से निकली थी, और किस राह पर जाना था कुछ पता नहीं।

अब ता सब घर ढह गये थे, और सभी राहें रा रोकर एक-दूसरे से गले लग रही थी

फिर पता नहीं कितनी देर तक मेरी आँखें जलती और बुझती रही

और फिर मेरा छाती में कुछ सुबकने लगा कि इस पामपेई शहर की तरह मैं भी कभी हुआ करती थी

पिछले पंद्रह बरस मैं अपनी चुप में और लड़न की धुंध में डूबी रही हूँ। पता नहीं यह चुप और यह धुंध कितने फुट ऊँची थी—छह फुट ज़रूर होगी—मेरे बंद से दो बालिशत ऊँची कि मैं सारी की सारा उम्र व नीचे आ गया थी

और मैं ने भी इस 'मैं' का कभी नहीं देखा था

अब देख रही हूँ, मेरी छाती में एक शहर हुआ करता था, जमे हुए जवान हो रही लड़की की छाती में एक शहर होता है।

और मेरे शहर में एक सब से बड़े आगनवाला घर था—मेरे मा-बाप का घर, जहाँ एक सघन छायावाला पीपल का पेड़ था, एक लम्बी गली थी मेरी सग-सहेलियों की और गली के माथे पर एक बड़ का पड़ था जो उनके राहिया का सुख की मास देता था और वहाँ, मेरी गली के माथे से, दूर एक ऊँची अटारी दिया करती थी जहाँ रात को कितनी ही बत्तिया तारा मरीखी जलती थी और रोज़ सुबह सबरे जिस की दीवार में से सूरज उगता था और मैं भी जैसे हुए जवान हो रही लड़की अपने शहर की ऊँची अटारी को देखती हूँ इस अटारी को बार-बार देखा करती थी

यह मेरा छाटा-मा शहर फिर बड़ा हो गया। मैं कॉलेज में पढ़ती थी, और कॉलेज के नाटका में खलती थी। अगर हज़ारा नहीं तो सक्डो वह पात्र मेरे शहर में बस गये थे, जिन्हें बहुनिदा में स निकालकर मैं मंच पर लायी थी।

मेरा कितना बड़ा शहर था—कितना सुन्दर पामपेई सरीखा।

यह भी समुद्र के किनारे था—मेरा दिल समुद्र की तरह बहता था। और जब दूसरे देश की किताबें पढ़ती थी उन के पात्र नावों में बैठकर मेरे उदरगाह पर आ जाते थे

और फिर एक दिन लावा फूटा, काली और बलती राख मेह की तरह बरगता रही थी और सारा शहर उस राख के नीचे तब गया था

मैं ने—आज से पंद्रह बरस पहले—जब उस शहर में से भाग निकलने के लिए बायाँ पर आगे रखा था, और बायाँ पर की आगे करने के लिए उस की एंडी ज़रा-सी उठायी थी ता वही की वही उस बलती राख में हमेशा के लिए लाग बन गयी थी

पामपेई शहर का, और मेरे शहर का इतिहास एक-सा है। शायद इसा लिए मैं पामपेई खंडहरा में चलती पता नहीं किम वक्त अपने शहर के खंडहरा में पहुँच गयी

सिफ़ एक पत्र है—पामपेई के किसी इनमान का अपनी लाग देखनी नमीब नहीं

हुई थी और मैं खुद अपनी लाग का दस्त रही हूँ ।

बाकी सब कुछ उसी तरह हुआ। यह भी कि जग पामपई बु विद्या ना आदमी को बफन नगीब नहा हुआ था। मेरे मर हुए शहर के भी किसी आदमी का बफन नसाब नहीं हुआ। उस लाग के मुँह 'म' ह पहचान सकती है—और उस पहचान में से सब के नयन-नाश याद कर सकती है।

यह मेरी लाग—लाल-लाल जिसमें पर एक बगल गलोना चहुरा था। साधो माँग निहालकर डकैतों वाल सबारे हाने थे। कमर में गन्ना रंगमा गन्ना और गले में आगर हर रंग की बमोज और हरे रंग का दुपट्टा होता था। कानों में पतली तार की घालियाँ। चहुरा भाग्य भी था पर उस पर ताँबे रेंगी डिग भी हाता थी, जिग म वह बभी बड़ा बामल गिता था बभी बगल साज ।

गानियार और इतवार स्क्रू बंद हाता ह। कभी-कभी यह दा जिन अकेली का मुहाल हा जाने थे। इगा लिए एन्टियों में रोम गयी थी नही ता इन्टो पन्ह दिन घर के कमर में रहती ता चारा दीवार के बीच में पाँचमी दावार बन जाती। पर रोम से आकर मैं लदा के अपने कमर में नही राइहों में बर रही हूँ।

रौंइहों में मैं अकेली नही, और कितनी ही लागें ह।

आज गानियार गल इतवार सोचा था—दा जिन इन गडहरा म रहूँगी, और एक-एक लाग को पहचानूँगी। पर रात जाज का फोन आया। उस 'ए' एक किम के लिए दा टिकट लिए हुए थे—एक अपने लिए, एक मेरे लिए। और मुग मे 'ग' न की गयी। गाम को उस के माथ किम दबने चली गयी।

डो कमरन—मगाहूर द्वावली फिल्म थी। इस में एक जवान हो रही लडकी को एक लडका अच्छा गता ह। लडका लडकी को सलाह देता ह कि आज रात वह कमरे में सान के बजाय अपने घर की छत पर सो जाये वह आधी रात घर के पिछवाड़े छत पर आ जायेगा। लडकी अपनी माँ से गाम के बकन कहती ह कि आज रात वह छत पर अपना बिस्तर बिछायेगी और बुलबुल का गीत सुनेगी। माँ मान जाती ह, बाप भी। और फिर वह लडकी उस रात छत पर जाकर सो जाती ह। सुबह-अधेर लडकी का बाप जब जागता ह सोचता है कि छत पर जाकर लडकी का दखू कही उसे ठण्ड न लग गया हो। और वह जरा छत पर जाता ह—वहाँ उस की बेटी के पाग एक लडका सापा हाता ह। दाना के गले में कोई बफन नही होता। यह घबराकर बाप आ जाता ह और बेटी की माँ को जगता ह कहता, 'तेरी बेटी आज कोठे पर मायी थी क्योंकि उस बुलबुल का गीत सुनता था। जाकर देख। उस ने बुलबुल पकड ली ह'।

जॉज मेरे साथ की सीट पर बठा हुआ था। फिल्म दबने हुए उस ने मेरा हाथ अपनी टाँग पर रख लिया और कहन लगा 'यह बुलबुल तेरी ह ले ले।'।

और फिल्म के बाद वह मुझे मेरे घर छानने के लिए आया। रात मेरे पास रह

गया। और रात फिल्म की उस लड़की की तरह मैं ने वुल्लुल पकड़ी था।

इस तरह की रात मैं ने जाज के साथ पहली बार गुजारी है, पर बमे पहली बार नहीं। ऐसी रातें कभी-कभी गुजार लेती हूँ—किसी के साथ भी।

पहली बार—बहुत धबराकर ऐसी रात गुजारी थी। एक दिन मेरे जिस्म का रोम रोम इस तरह बग उठा था जैसे मेरे जिस्म का एक ही अंग मेरे अंग-अंग में समा गया हो—और मेरे एक-एक रोम का मुँह रहम की तरह खुल गया हा।

उस दिन एक अजीब सबब बना था, नहीं तो मेरे सस्वार मेरे गिद इस तरह बसे हुए थे कि मैं गरम पानी की जगह रात को ठण्डे पानी से नहाकर जिस्म को बर्फ की ढली बना लेती और रजाई में बेसुध सा जाती। पर उम दिन मैं अपनी एक दोस्त औरत का मिलने चली गयी। यह मेरी अँगरेज दोस्त क्लेअर बड़ी उमर की औरत ह। उम दिन उस ने मुझे एक चीज दिखायी—एक मरणांग अंग, जो उसी हफ्ते वह बाजार से खरीदकर लायी थी। उस में बटरी के दो सेल पडे हुए थे। उस ने बताया कि वह बटरी के चार स चलता ह और उस के लफज जैसे उस दिन उस पर तरस खा रहे थे 'क्या कहें, अब इस उमर में बाइ मद पास नहीं पटकता। तलाक लिये सात बरस हाँ गये ह। पहले तो कभी दो चार दिन के लिए काई जुट जाता था, पर अब ज्या-ज्या उमर ढल रही है ' और मुझे लगा, अगर मैं ने अपनी जवानी अपने मस्कारो को दे दी तो आनेवाली उमर में मुझे भी एक दिन क्लेअर की तरह बाजार जाना पड़ेगा, और बटरीवाला यह रबड का टुकडा मेरी किस्मत बन जायेगा।

और उम शाम मैं ने अपने एक थोडे से वाक्फ आदमी को खाना खाने बुलाया था। अपने मरण दिन को अपना जन्म दिन बताया था। फिर जतदी से खाना बनाया था। उस के लिए 'स्वाच' खरीद कर लायी थी, और कमरे का ताजे फूल से सजाया था। अक्ली औरत के पास अकेले मद ने मुश्किल से घण्टा भर किताबों और फिर्मों की बातें की था फिर उम ने लालमा से मेरा हाथ पक लिया था। मेरा हाथ बेजान भी हा गया था, पर याकुल-मा भी। और मेरे हाथ की तरह मेरा अंग अंग

उम दिन की तरह जाज भी पछतावा नहीं। सिफ रात जब जाज मेरे पास सोया पग था, तब मैं आया कि आज इसे अपने साथ अपने मर हुए शहर में ले जाऊँ। जिस तरह लाग पामपेई के खंडहरा को देखने जाते है, मैं जाज को साथ ले जाऊँ और उसे अपने शहर के खंडहर दिखाऊँ।

फिर पता नहीं क्या, मैं ने जाँज को कुछ नहीं बताया। सुबह उठकर वह चाय का प्याग पीकर चला गया ह, और मैं अकेली अपने शहर के खंडहरा में लौट आयी हूँ

यह मेरा लाग

और वे ऊँची ऊँची दीवारें उस जटारी की ह, जिम में बीरेद्र रहा चरता था यह दीवार के पास उस की लाश उम के सारे नक्श मेरी चाय में उभर आये

एक शहर की माँत

ह—चोड़ कथा पर तना हुआ सिर, चेहरे का रंग गेहूँआ, पर जाखे बड़ी काली, गहरी और तराशी हुई। वह आखा से मेरा जान का खींच लिया करता था

उस की इस अटारी में मैं कई बार रात सपना में गयी थी, और अपने महनी रचे हाथा से उस की चारपाई पर उस का बिछोना किया था

उस के कौल-करारा से भरी हुई मैं उस को उस की गली के भांड पर मिलकर, जब अपने बाप के खुले आगनवाले घर में आया करती थी तो घर की दीवारों मेरे जिस्म को भीच लिया करती थी। मेरे बाप की गुस्सल नज़र से पीपल के पत्ते घर जाते थे और मैं धूप में झुलस जाती थी

और एक दिन मेरा अछूता कुँआरा जिस्म छिन गया। घर पर आयी ता मा ने अगारा जमी आँखा से दखा चूल्हे में से एक लकड़ी ग्योचकर कहा 'तुझे उस की इतनी आग लगी हुई है, ता यह बलती लकड़ी अपने अंदर डाल दे' सपना में और सहेलिया से मदों की बातें सुनी हुई थी, महक सरीखी बातें पर मा की बात सुनकर ऐसा लगा जैसे एक बलता लकड़ी मेरी टांगों में रख दी गयी हो

मैं कितन दिन तक अपने कमरे में बंद पना राती रही। और एक दिन मा बिसा साधु का पक्डकर ले आयी और उस का दिमा हुआ तावीज घालकर मुझे जवरन पिला लिया। सारी रात मैं चारी चारा से उलटिया करता रही पर सुबह जब वह मुझे मेरी सगाई का छुहाग खिलाने लगी पता लगा कि किसी दुहाजू के साथ वह मेरा ब्याह करने लगी थी। वीरद्र हमार मजहब का नहीं था और यह दुहाजू हमार मजहब का था। मैं ने छुहारे को मुँह में से धूक दिया और मा के हाथ से बाह छुड़ाकर वीरद्र के घर की ओर दौड़ पड़ी

और अचानक धरती में से लावा निकल पड़ा—चारों तरफ काली और बलता राख उड़ने लगा—वीरद्र ने पिछले हफ्ते किसी लडकी से ब्याह कर लिया था

और उस बलते गहर में से निकलने के लिए मैं ने दाया पैर उठाया हुआ था, और बायाँ पर जागे रगन के लिए एडी उठायी हुई थी कि मैं बसी का वैसी उस गरम राख में एक लाग बन गया

और यह हमारे गहर के सँडहरा में मेरी लाग



कविताएँ

ते मर दोस्त ! मर अजनबी !	३१७
अक्षमध यज्ञ	३१८
मै	३१९
एक मुलाकात	३२०
एक घटना	३२२
कुमारी	३२४
गला का कुत्ता	३२५
सफरनामा	३२७
रचना प्रक्रिया	३२८
शहर	३३०
पेदा-दे	३३१
बैराग्य	३३२
एक सोच	३३३
एक खत	३३४
राजनीति	३३५
टोस्ट	३३६
स्टिल लाइफ	३३७
मरा पता	३३९
चुप की साजिदा	३४०
काजान जाकिस	३४१
हमरोज चित्रकार	३४२
अमृता प्रातम	३४३

ऐ मेरे दोस्त । मेरे अजनबी ।

एक बार अचानक तू आया
ता वक्त बिल्कुल हैरान मेरे कमरे में खड़ा रह गया ।
साँप का सूरज अस्त होने का था पर हो न सवा
और टूटने की निश्चित वह भूल-सा गया ।
फिर अजल के अमूल ने एक दुहाई दी,
और वक्त ने उन राइतों को देखा
और खिड़की के रास्ते बाहर का भागा ।
वह बीते और ठहरे क्षणों की घटना—
अब तुझे भी एक बड़ा आश्चर्य हाता है
और मुझे भी एक बड़ा आश्चर्य हाता है
और शायद वक्त का भी फिर वह गलती गवारा नहीं,
अब सूरज राज वक्त पर डूब जाता है
और अँधेरा रोज मेरी छाती में उतर आता है ।
पर बीते और ठहरे क्षणों का एक सच है—
अब तू और मैं मानना चाहें या नहीं यह और बात है ।
पर उस दिन वक्त जब खिड़की के रास्ते बाहर का भागा
और उस दिन जो खून उस के घुटना से रिसा
वह खून मेरी खिड़की के नीचे अभी तक जमा हुआ है ।

अश्वमेध यज्ञ

एक चतुर्ष्वी पूनम थी
कि दूधिया श्वेत मर इस्क का घाडा
देग और विदेश में विचरने चला
सारा शरीर सच सा श्वन
और श्यामकण किरही रंग के ।
एक स्वर्णपत्र उम के मस्तक पर
यह दिग्बिजय का घाडा—
काई सबल हूँ तो इसे पकड़े और जीत'
और जसे इम यग का एक नियम हूँ
यह जहा भी ठहरा मैं ने गीत दान किये
और कई जगह हवन रचा
सो जो भी जीतने को आया वह हारा ।
आज उमर की अवधि चुक गयी हूँ
और यह सकुशल मेरे पास लौटा हूँ
पर कसी अनहोनी—
कि पुण्य की इच्छा नहीं, न फल की लालसा शेष
यह दूधिया श्वेत मेरे इस्क का घोडा
मारा नहीं जाता मारा नहीं जाता
बस यही सकुशल रहे पूरा रहे ।
मेरा अश्वमेध यग अधूरा है, अधूरा रहे ।

बहुत समकालीन है—

सिर्फ एक 'मैं' मेरा समकालीन नहीं ।

'मैं' बिना मेरा जन्म—

पुण्य की थाली में पड़ा अपराध था एक सगुन ह ।

मास में बन्दी हुआ मास का एक क्षण है ।

जोर मास की हर जीभ पर

जब भी कोई लपज आता, खुदकुशी करता,

जो खुदकुशी से बचता—

कागज पर उतरता, ता कल होता ह ।

बन्दूक की गोली—

जो एक बार मुझे हनोई में लगती ह

ता दूसरी बार प्राग में लगता है

और एक धुआ हवा में तरता ह,

और मेरा 'मैं' अठवासे बच्चे की तरह मरता ह ।

क्या किसी दिन यह मेरा 'मैं' मेरा समकालीन बनेगा ?

एक मुलाकात

मैं चुप शान्त और अडोल खड़ी थी
सिर्फ पास बहते समुद्र में तूफान था
फिर समुद्र को खुश जाने क्या खयाल आया
उस ने तूफान की एक फोटली सी बाँधी
मेरे हाथों में थमायी और हमकर कुछ दूर हा गया ।

हरान था पर उस का चमत्कार ले लिया
पता था कि इस तरह की घटना कभी सदिया में हाती ह

लाखा खयाल आये—

माथे में गिलमिलाये

पर खड़ी रह गयी कि इस को उठाकर
अब अपने शहर में मैं कस जाऊँगी ?
मेरे शहर की हर गली तग ह
मेरे शहर की हर छत नीची ह
मेरे शहर की हर दीवार चुगली ह ।

सोचा अगर तू वही मिले
तो समुद्र की तरह इसे छाती पर रखकर
हम दो किनारा की तरह होंग मक्ते ये
और नाचा छतों—
और सँकरी गलियों के शहर में बस सकते थे

पर सारी दोपहर तुझे ढूँढ़ते बीती
और अपनी आग को मैं न खुद ही पी लिया
मैं एक अकेला किनारा किनारे का मैं ने खोर लिया
और जब दिन ढलने को था—
समुद्र का तूफान समुद्र को लौटा दिया

अब रात घिरने लगी तो तू मिला
तू भी उदास, चुप, शान्त और अडोल
मैं भी उदास, चुप, शान्त और अडाल
सिफ—दूर बहते समुद्र में तूफान ह

एक घटना

तेरी यादें

बहुत दिन बीते जलावतन हुई
जीती कि मरी—कुछ पता नहीं ।

सिर्फ एक बार—एक घटना घटी
खयाला की रात बड़ी गहरी था
और इतनी स्तब्ध था
कि पत्ता भी हिले
तो बरसा के कान चौकते ।

फिर तीन बार लगा
जमे काई छाती का द्वार खटखटाये
और दबे पाँव छत पर चढ़ता कोई
और नाखूना से पिठली दीवार को कुरेदता

तीन बार उठकर मैं ने साँवल टटोली
अँधर को जमे एक गम-पीड़ा थी
वह कभी कुछ कहता और कभी चुप होता
ज्यो अपनी आवाज़ को दाँता में दबाता
फिर जीती-जागती एक चीज़
और जीती जागती आवाज़ ।

‘ मैं काले कोसो से आयी हू
प्रहरिया की आँख से इस बन्दन को चुराती
धीमे से आती
पता ह मुझे कि तेरा दिल आवाज़ ह
पर नहीं बीरान सूनी काई जगह मेरे लिए ।

सूनापन बहुत ह पर तू ”

चौककर मैं ने कहा—

“तू जलावतन नहीं कोई जगह नहीं
मैं ठीक कहती हूँ कि कोई जगह नहीं तेरे लिए
यह मेरे मस्तक, मेरे आका का हुक्म है ”

और फिर जैसे सारा अधियारा वाप जाता है
वह पीछे को लौटी
पर जाने से पहले कुछ पास आयी
और मेरे वजूद को एक बार छुआ
घीरे से—
ऐसे, जैसे कोई वतन की मिट्टी को छूता है

कुमारी

मैं ने जत्र तेरी सेज पर पर रखा था
मैं एक नहीं थी—दो थी
एक समूची पाही और एक समूची कुमारी
तेरे भोग की खातिर—
मुझे उस कुमारी को कत्ल करना था
मैं न कत्ल किया था—
यह कत्ल, जो कानूनन जायज हाते ह
सिफ़ उन की जिल्लत नाजायज हाती ह ।
और मैं ने उस जिल्लत का जहर पिया था
फिर मुबह के वक़्त—
एक खून म भीगे अपने हाथ देख थे
हाथ धाये थे—
बिलकुल उस तरह ज्या और गैन्ग्ले अग़ ग़ोन थे ।
पर ज्या ही मैं शीशे के सामने आयी
वह सामने खड़ा थी
वही जा अपनी तरफ़ से मैं ने रात कत्ल की थी
और खुदाया ।
क्या सेज का ओंघरा बहुत गाढ़ा था ?
मैं ने किसे कत्ल करना था और किसे कत्ल कर बठी

गली का कुत्ता

कई बरसा की बात है—

जब तू और मैं बिछुड़े

कोई पश्चात्ताप नहीं

सिफ—एक बात कुछ समझ में नहीं आती

तू जोर में जब बिदा कह रहे थे

और हमारा भकान बिक रहा था

चौके के खाली बरतन आगन में पड़े थे—

शायद मेरी या तेरी आखों में देखते,

कुछ औंखें भी थे—

शायद मुह छिपा रहे थे ।

एक द्वार की लत्ता, मुरझायी-सी

शायद मुझे और तुझे कुछ कह रही थी

—या पाना के नल का उलाहना दे रही थी

यह सब कुछ और इस सरीखा

कभी याद नहीं आता

सिफ एक बात कुछ हुबहू याद आती है—

कि एक सड़क का कुत्ता—

बसे, और क्या सूँघता

एक खाला कमरे में जा घुसा

और कमरे का द्वार बाहर से बंद हो गया

फिर तीसरे दिन—

भकान का सौदा जब निबट गया

और चाबियाँ सब हम ने नाट बदलाये,

नये मालिक को हर ताला जब सौंपा

और एक-एक कमरा दिखाया
ता एक कमरे में उस कुत्ते की लाश थी

मैं ने उस का भूँवना कभी वाता न सुना
सिर्फ उस की बू सूँघी थी
और वही बू अब भी अचानक—
मुझे कई चीज़ा से आती है

सफरनामा

गगाजल से लेकर बोदवा तक,
यह सफरनामा हूँ मेरी प्याम का
सादा पवित्र जन्म के, सादा अपवित्र कम का, एक सादा इलाज
जोर किसी महबूब चेहरे को एक छलकते गिलास में देखने का यत्न
और अपने वदन से एक बिल्कुल बेगाने ज़रम को भूलने की ज़रूरत

यह कितने तिकान पत्थर ह—
जो किसी पानी के घूट से गले से उतारे ह
कितने भविष्य ह जो वतमान से बचाये हैं
और शायद वतमान भी—मैं ने वतमान से बचाया ह

सिफ एक खयाल आया है
कई बार आता ह—
ज्यो कई बार एक सारंगी का गज—
अचानक किसी राग की छाती में चुभता है ।
या चुपचाप एक पिघाना—
काले और श्वेत दाता में संगीत चाबता ह ।

एक खयाल आता ह—
पर जमे बाई मौज का एक घूंट मरे
छरे, और फिर जतदी से उस खयाल की कं सी करे
पर मरे सीनो में भी कुछ साँस जोबित ह
और अटके साँसा के साथ आज मैं कह सकती हूँ
कि हर एक सफर सिफ वही शुरू होता है
—जहाँ यह सफरनामा खत्म होने ह ।

रचना प्रक्रिया

नरम कभी कागज को दगने और या मुँह मोड़
ज्या कागज पराया मन् हाता ह

पर कभी, एक कुआरी जमे करवे का व्रत रगती ह
और उस रात उमे एक सपना-मा आता ह ।
सहसा कोई मरदाना अग छूता ह
और सपने में उस का बन् बन गता ह

पर कभी आग चाटती वह चौक जाती
जाग पडती
गदराये अग को टटोलती
चोली के बटना को खालती
चाँनी के चुल्लू तन पर डालती
और तन को सुखाती का हाथ सिगन-मा जाता ह

बन् का अंधेरा चटाई-मा बिछता
वह औंधी चटाई पर लेटती
उस के तिनके से ताडती
और उस का जग-अग मुलग पडता
और उसे लगता ह कि उस क बन् का अंधेरा
किसी सबल बाँहा में टूटना चाहता ह

अचानक एक कागज आगे को बढ़ता है
और उस के कापत हाथो को छूता ह
एक अग जलता ह
एक अग पिघलता ह
और वह एक अजनबी गंध सूँघती
और उस का हाथ तन म उतर आयी लकीरा को देखता ह

हाथ ऊँपता बदन छटपटाता
 और माथे पर एक पसीना-भा छूटता
 एक लम्बी लकीर टूटती
 और साँस—
 जन्म की और मौत की दोहरी गंध में भीग जाता है

यह सब बाली और पतली लकीरें
 जमे एक लम्बी चीख के कुछ टुकड़े-से होत
 वह चुप और ह्रान निचुडी-सी खड़ी, देखती
 साचती—
 कि कोई अयाय हुआ ह
 उस का काई अग मर गया है
 शायद एक कुँआरी का गमपात ऐसे ही होता ह

शहर

मेरा शहर एक लम्बी बहस की तरह
सड़ने—बेतुकी दलीला सी
और गलिया इस तरह—
जने एक बात को कोई इधर घसीटे काई उधर

हर मकान एक मुट्ठी सा भिंचा हुआ
दीवारें बिचबिचानी-सी
और नालियाँ, ज्यो मुह से झाग बहती ह

यह बहस जाने सूरज से गुरू हुई थी
जो उमे देखकर यह और गरमाती
और हर द्वार के मुँह स
फिर साइकिला और स्कूटरो के पहिये
गालियो की तरह निबलते
और घण्टियाँ-हान एक-दूसरे पर झपटते

जो भी बच्चा इस शहर में जनमता
पूछता कि किस बात पर यह बहस हो रही ह ?
फिर उस का प्रश्न भी एक बहस बनता
बहस से निबलता, बहस में मिलता

शख घण्टा के श्वास सूखे
रात आती सिर पटकती और चली जाती
पर नींद में भी बहस खत्म न होती
मेरा शहर एक लम्बी बहस की तरह

इलहाम क धुए से लेकर सिगरेट की राख तक
उम्र का सूरज ढले
माघे की साच बले
एक फेफड़ा गले
एक बीमत्तनाम जले

और रागनी—जंधेरे का वदन ज्या ज्वर में तपे
और ज्वर की अचेतना में—
हर मजहब बरडाये
हर फलसफा लेंगडाये
हर नरम तुतलाये
और कहना-सा चाहे
कि हर सल्तनत सिक्के की हाती ह बाब्द की हाती ह
और हर जमपनी—
आदम व जम की एक झूठी गवाही देती ह ।

पर में लोहा डले
कान में पत्थर ढले
सोचा का हिसाब रुके
सिक्के का हिसाब चले
और मैं आदम—अन्त में बनता मास की एक ऐश-ट्रे
इलहाम के धुएँ से लेकर सिगरेट की राख तक
मैं ने जो पत्र पिये
उन की राख झाड़ी था
तुम भी झाड़ सकते हो

और चाहा ता मास की यह ऐश-ट्रे मेज पर सजाओ
या गा-धी, लूणर और बनेडी बहकर
चाहो ता तोड़ सकते हा

वैराग्य

मुदत से एक बात चली आती थी
कि वक्त का ताकत रिस्वर्त देती
इतिहास से चोरी इतिहास के पन्ना का खरीदती,
वह जब भी चाहती रही
कुछ पक्षियाँ बदलती और कुछ मिटाती रही
इतिहास हँसता रहा, खीझता रहा
और हर इतिहासकार को वह भाफ करता रहा ।
पर आज शायद बहुत ही उदास हूँ—
एक हाथ उस कौ जिल्द का उठाकर
कुछ पन्नों को फाड़ता
और उन की जगह कुछ और पन्ने सा रहा हूँ
और इतिहास—चुपक से उन पन्ना से निकालकर
एक पेड के नीचे खड़ा एक मिगरेट पा रहा हूँ

भारत की गलियाँ म भटकती हवा
चूल्हे की बुझती आग को कुरेदती
उधार लिये अन्न का एक ग्रास तोड़ती
और घुटनो पे हाथ रख के फिर उठती ह

चीन के पीले ओ ज़ेद हाठा के छाले
आज बिलखकर एक आवाज़ देते हैं
वह जाती और हर एक गले में मूखती
और चीख़ मारकर वह वीर्यतनाम म गिरती ह

श्मशान घरा में स एक गंध सी आता
और मागर पार बटे—श्मशान घरा के वारिस
वारुद की श्म गंध का शराब की गंध म भिगात ह ।

बिल्कुल उस तरह, जिस तरह—

कि श्मशान घरा के दूसरे वारिस
भूख का एक गंध का तक्दीर की गंध में भिगाने ह
और लोग के दुखा की गंध का—

तक्दीर की गंध में भिगाते ह

और इज़राइल की नयी-सी माटा
या पुरानी रेत अरब की जा खून में ह भोगती
और जिस की गंध—खामखाह शहादत के जाम म है डूबता

छाती की गलियाँ म भटकती हवा
यह सभी गंधें सौंपता और साचती—
नि घरती के आँगन स सूतक की महक कब आयगी ?
बाई इडा—किसी माये की नाटी
—वच गभवती हागी ?

गुलाबी माग का सपना—

आज सदियों के गान से वाय का बूँद माँगता

एक खत

मैं—एक आले म पड़ी पुस्तक !
शायद सन्त-वचन हूँ, या भजन माला हूँ,
या काम सून का एक बाण्ड
या कुछ आसन, और गुप्त रोगो क टोटके
पर लगता ह मैं इन में स कुछ भी नहीं ।
(कुछ हाती तो जरूर कोई पढ़ता ।)

और लगता—कि क्रान्तिकारियों की सभा हुई थी
और सभा में जो प्रस्ताव रखा गया
मैं उसी की एक प्रतिलिपि हूँ
और फिर पुलिस का छापा
और जा पास हुआ कभी लागू न हुआ
सिफ बाररमाई की खातिर सँभालकर रखा गया ।

और अब सिफ कुछ चिड़ियाँ आता ह
चाव में कुछ तिनके लाती ह
और मेरे बदन पर बटवर
वह दूसरी पीढ़ी की फिक्र करता ह
(दूसरी पीढ़ी का फिक्र कितना हसीन फिक्र ह !)
पर किसी भी यत्न के लिए चिड़ियों के पख हाते ह
पर किसी प्रस्ताव का कोई पख नहीं हाता ।
(या किसी प्रस्ताव की कोई दूसरा पीढ़ा नहीं हाती ?)
सिफ कभी साचती ह कि सूँघकर देखू
कि मेरा भविष्य कहा ह ?
और इस फिक्र म मेरी कुछ जिल्द उतरती ह
पर जय भी कुछ सूचना चाहू
सिफ बीटों की गंध आती ह
आ मेरी घरती के भविष्य ।

मैं—तेरी बतमान दशा ।

सुना है, राजनीति एक क्लासिक फ़िल्म है
 हीरो बहुमुखी प्रतिभा का मालिक रोज अपना नाम बदलता
 हीरोइन हुक्मत की कुरसी, बही रहती है
 ऐक्स्ट्रा राजसभा और लोकसभा के मेम्बर
 फाइनान्सर दिहाड़ी के मजदूर, और खेतिहर
 (फाइनांस करते नहीं, करवाये जाते हैं)
 ससद इनडोर गूटिंग का स्थान
 अखबार आजटडार गूटिंग के साधन
 यह फिल्म मैं ने देखी नहीं सिफ सुनी है
 क्याकि मन्तर को कहना है---'नाट फार अडल्टस ।

कल शींगे की सुराही में
 मैं ने खयालों की शराब भरी थी
 खयाल बढ सुख थे
 दोस्तो ने जाम पिये थे
 और उन लपजा के टोस्ट दिय थे
 जो छाती में नही उगते ।
 वह कौन-से पेड़ों पे उगते ह
 और हाठा क गमला में किस तरह आने ह !
 यह सोचने का वक़्त न था
 या इस तरह कहूँ कि साचने में खोफ लगता था
 यह लपजो का जदन था
 भुलावा की बपगाठ
 मैं थी रात थी खयाला की गराब थी और बहुत दोस्त
 दोस्त जो कुछ बुलाने पर आये थे कुछ बिन बुलाये ।
 सिफ एक कोई 'वह' था
 जो बहुत बार बुलाने पर भी नही आया ।

अभी सुबह हुई ह—

लाती को चीरकर छाती में सूरज की विरण पगी ह
 अभी मैं ने एक सघन वन देखा है
 खुदगज़िया के पेड देखे ह
 और पेडा पर आयी अजीब पतझड भी देखी ह
 पतझड—जो लपजा पर नही आती
 सिफ अर्थों पर आती ह,
 दोस्तों के लपज अभी भी गुलाबी ह
 बहार क फूटन की तरह
 सिफ अब झरते देख रही हूँ
 और भरे जगल में मैं बिल्कुल अकेली हूँ

मैं हूँ, चुप है, एक किरण ह और गीशे की खाली सुराही है ।

यह बैसी चुप ह कि जिस में पैरा की आहट शामिल है
काई चुपके से आया ह—

चुप से टूटा हुआ—चुप का टुकड़ा
किरण से टूटा हुआ किरण का टुकड़ा

यह एक काई वह ह

जो बहुत बार बुलाने पर भी नहीं आया था ।

और जब मैं अकेली नहीं, मैं आप अपने सग खड़ी हूँ

शाशे की सुराही में नज़रों की गराब भरी ह—

और हम दोना जाम पी रहे हैं

वह टास्ट दे रहा है उन लपझा के

जो सिफ छाती में उगते ह ।

यह अर्थों का जन्म ह—

मैं हूँ, वह ह और गीशे की सुराही में नज़रा की शराब है

स्टिल लाइफ

यह जलियाँवाला—

और उस की दीवार में चुपके से बटे गोलियाँ के छे

यह सायबेरिया—

और उस की जमीन पर चीखों के टुकड़े बर्फ में जमे

कासेटेशन कम्प—

इनसानों मांस की गंध भट्टियाँ की राग में सोयी

यह बरगुम्याच—

जिस की कुल आवाज़ी एक पथर के बूत में सिमटी

यह हीरोसिमा ह—

जो एक काने में एक फटे हुए त्स्तावज की तरह पना है

और यह प्राग—

जो साम राज आज समर की मट्टी में बठा ह ।

हर चीज चुप और अडाल ह

सिफ भरी छाता में से एक गहरा उच्छवास निकलता ह

और धरती का हर टुकड़ा हिल सा जाता ह ।

मेरा पता

आज मैं ने अपने घर का नम्बर मिटाया हू
और गली के माथे पर लगा गली का नाम हटाया हू
और हर सड़क की दिशा का नाम पाछ दिया हू
पर अगर आप ने मुझे जरूर पाना है
ता हर देश के, हर शहर की हर गली का द्वार खटखटाओ
यह एक शाप है, एक वर है
और जहा भी जाजाद रूह की चल्क पड़े
—समझना, वह मेरा घर है ।

चुप की साजिश

रात ऊँघ रही ह
किसी ने इनसान की छाती में सेंध लगायी ह
हर चोरी से भयानक यह सपनों की चारी ह ।

चारी के निगान—

हर देश के हर शहर की हर सड़क पर बठ ह
पर कोई आस देखती नही, न चौकती ह ।
सिर्फ एक् कुत्ते की तरह एक् ज़जोर से बँधी
किसी वक़्त किसी की कोई मज़म भौंकती ह ।

काजान ज़ाकिस

मैं ने जिन्दगी को इश्क किया था
पर जिन्दगी एक वेश्या की तरह
मेरे इश्क पर हँसती रही
और मैं उदास एक नामुराद आशिक
सोचा मैं घुलता रहा
पर जब इस वेश्या की हँसी
मैं ने कागज़ पर उतारी
ता हर अक्षर के गले से एक चीख निकली
और खुदा का तलत कितनी ही देर हिलता रहा ।

इमरोज चित्रकार

मेरे सामने ईज़ल पर एक बनवस पड़ी ह
कुछ इस तरह लगता ह—
कि बनवस पर लगा रंग का टुकड़ा
एक लाल कपड़ा बनकर हिलता है
और हर इनाम के अन्दर का पगु
एक सींग उठाता ह ।
सींग तनता ह—
और हर कूचा गली बाज़ार एक 'रिंग' बनता ह
मेरी पजाबी रंगो में एक स्पेनी परम्परा खोलती
गोया की मिथ—बुल फाइटिंग—टिल डथ

अमृता प्रीतम

एक दद था—

जा सिगरेट की तरह मैं ने चुपचाप पिया ह

सिफ कुछ नश्वें ह—

जो मिगरेट से मैं ने राग की तरह खादी हैं ।



नेपाल की एक गाता हुई रात	३४५
तारों की हुंकार	३४९
धरती का सम्बन्ध	३५६
ऑसुओं का रिश्ता	३६१
नाचते पानियों के किनारे एक शाम	३६७
पेतालास बसाय शहर बिरवान	३७१
स्वामोदी का गीत	३७५
सुष की बंद गली	३७७
एक गीत का जन्म, एक अक्षर का जन्म	३७९
टुयोचनित्र (छत्वीस थियेट्रों का शहर)	३८५
आग के फूल आग की लकीर	३९१
एक बैठक एक दुपहर	३९६
इनालची धरती	४००

नेपाल की एक गाती हुई रात

सारा नेपाल जसे एक वृक्ष है, मन्दिर के फूलों से ढका हुआ। सभी मौसम पास से गुजर जाते हैं, किसी का साहस नहीं कि कोई इन फूलों को छू ले। सदिया मनुष्य के मन की भटकन इन फूलों को प्रणाम करती है। गरीबी के आँचल में वसे ही प्रणाम के बिना कुछ नहीं होता। बत्ती-चढ़ी अमोरी भी, जो अपनी रात किसी कुँआरे यौवन की खुशबू में गुजार लेती, सुनह उठकर सौ तोला सोना इन मन्दिरों की पड़ी पर रख जाती। आज भी इन कलाकृतियों के माथे पर सोना मड़ा हुआ है, होठों में आँहें जमी हुई हैं।

एक बार बागमती नदी है। लोक की हार, परलोक की जीत में विश्वास कर के, हमेशा गुजर करती रही है। इस नदी का पानी लोग के विश्वास को अच्छी तरह धाने के लिए सदा बहता रहता है। किसी आदमी को सास रकती हुई लगे, तो उस के रिश्ते-नाते के लोग उसे इस नदी के किनारे पर ले आते हैं। चाहे उस की साँस कोई ज़िद ही कर बैठे और आठ-आठ, दम-दस दिन उस के मुँह में अटकी रहे, पर वह इस के पानी की ओर देख-देखकर अपना विश्वास भँला नहीं हाने देता कि उस का परलोक सँवर जायेगा।

पवनों के माथे सदियों से ऊँचे हैं। यद्यपि वादी का एक एक राजा सौ-सौ जवान कैरियों के आसुआ में डूबता रहा और वादी का एक एक श्रमिक सौ-सौ श्रमों के पसीने में। और फिर इस वादी की मिट्टी में से व्रान्ति उगी। गुबराज को जिस वृक्ष के साथ फाँसी दी गयी, लागो ने पहरेंदारा की आँख बचा ली, और उस वृक्ष को अगल राज ही फूल-चंदन से पूज लिया। गगालाल, धर्मभक्त और दशरथचन्द को जिस जमीन पर खड़ा कर के गोलिए से मारा गया, लागो ने वहाँ की मिट्टी का माथे पर लगा-लगाकर वहाँ गढ़े डाल दिये।

“आज हमारे कवि बेसक बसर से मर रहे हैं और बेगव तपेदिक से, पर यह हिमालय हमारा गवाह है। हमारा कविता के साथ प्रेम नहीं टूट सकता।” एक नेपाली कवि ने कहा और फिर काठमाण्डू की शरद् सन्ध्या में जमे एक चिनगारी बल उठी।

पजाबी कविता ने कहा—

विरह की इस रात में कुछ आगे बढ़ आ रहा है।

फिर याद की बत्ती कुछ और ऊँची हो गयी है।

इस बत्ती के गिद जाने कितनी धत्तिया बल उठी। विरह की रात जिसे नमीब नहीं हुई थी।

एक घटना, एक घाव और एक टीस दिल के पास थी
रात को यह सितारा की रक्म जरबें दे गयी ।

और रात ने सारे दिलवाला की टीसा को सितारा से जरब दे दी । सुमन
ने टैगोर के शब्दों में कहा—

दौलत भी ह रूप भी, शोहरत भी
फिर यह पीडा कसी ?
लगता ह कोई सदियों की विरहिन
मेरे सीने में बठी हुई ह ।

बर्फ से ढके हुए पर्वतों की शान्ति में आग जल गयी । दीवाने इस आग को
लोहड़ी (पंजाब का एक त्योहार) बनाकर सँवने लग गये । काई लकड़ी नेपाली कविता
की थी, कोई हिन्दी कविता की काई बंगाली की और काई पंजाबी की ।

धमराज थापा ने किसी नेपाली लोकगीत की एक लकड़ी इस लाहूँ की आग
में डाल दी ।

वृक्ष अपनी बेलों से लदा हुआ है,
मैं दुःख की बेला से ढका हुआ हूँ ।
वृक्ष से यह जादू जाने किस बीज ने किया था,
मेरे साथ ये जादू तेरी लाल बेनी ने किया ह ।

माधवप्रसाद घौसी ने लाटा को ऊँचा किया—

जब कोई किन्तरी रोती ह, तब पर्वतों के कोने से पहला
बादल उठता ह ।
जहाँ मेरी प्रेमिका अकेली बठकर राती ह,
यह सतरंगी पेंग उभी गुफा से निकले है

गंगा बहती बहती जाने वहाँ पहुँच गयी
जिन्दगी भी राती रोती जाने वहाँ चली जायेगी
जमे बादल आ गये
और पर्वतों की चोटियाँ नीली साँवली हो गयी
ऐसे ही तेरा विरह मुझ पर छा गया ह ।

जैसे फूलों की पत्तियाँ ने
ओम-वर्णों को अपनी बाहों में समेट लिया ह
ऐसे ही मैं ने अपनी पलकों में तेरा आँसू छिपा लिया ह ।

उस महफिल में वीर था, जिस ने अपनी पलकों में किसी न किसी का आँसू
नहीं छिपाया था ? जिस का दिल था जिस ने किसी न किसी के वृक्षों पर सपनों का

घोसला नहीं बाधा हागा कि नेपाली लोकगीत के होठ हिले—

कई सुन्दर वृक्ष होंगे

बील को जो ऊँचा वृक्ष पहले दिखाई दिया,

उसी पर वह बठ गयी ।

मैं ने तुझे ही सब से पहले देखा,

और मेरे दिल ने नीड बना लिया ।

यह नीड क्या बनते हैं, जहाँ कोई रह नहीं सकता ? इस राह में वे राही क्या मिलते ह, जो दा कदम भी साथ नहीं चल सकते ? किसी को मालूम नहीं । सुमन को गालिब की तरह कोई राह-गुजर याद आया—

ज़िन्दगी ता मिल गयी थी

चाही या अनचाही,

बीच में यह तुम, वहाँ से मिल गये राही ।

निराला वहाँ नहीं था, पर उस का स्वर वहाँ था—

बाघो न नाव इस ठाव बंधू—पूछेगा सारा गाव बंधू !

सिद्धिचरण श्रेष्ठ की एक पत्ति ने कभी उसे साढ़े पाच बरस जेल में रखा था 'क्रान्ति बिना शांति नहीं ।' आज उस की प्यार-क्रान्ति कह रही थी—

मेरे कितने आँसू और कितनी आँहें खच हो गयी,

मैं कुछ नहीं कहता ।

पर मेरी मृत्यु के पश्चात तू मेरी कविता पढ़ेगी,

आकाश से पूछेगी, "उस ने मुझे प्यार किया था ?"

एक बूँद तेरी आँखा में अटक जायेगी

एक आह तेरे होठ पर जम जायेगी ।

नेपाल का एक लोकगीत तिड तिड कर के बलने लगा—

मेरे हाथा की चूड़िया ने

मेरे हाथ छील दिये

मेरे गाँव को बाता ने

मेरा मन खरोच डाला ।

गकर लामो छाने की कविता 'भरा-भूरा जाडा जस रक्थी (नेपाल की शराब) का प्याला था—

आज पासर के किनारे की मारी हवाएँ चुपचाप खड़ी हुई ह,

उन की उँगलियाँ आज पानी का नहीं छेड़ती,

सारे सरोवर पर कुहरा जम गया है ।

नेपाल में दसहरे के दिन बलि के समय पगु के सिर पर पानी का छिडकाव होता है, जिस से वह बाँपता ह । उस बाँपने को उस की इच्छा समझा जाता ह ।

नेपाल की एक माती हुई रात

तू आज किसी छिन्वाव से मत काप जाना

आज हिमालय की विजयादशमी ह

और वह सारी धूप की सराब पीकर मतवाला हा गया ह ।

धूप की सराब हिमालय ने पी होगी । सुननेवाला ने इस खयाल की सराब का घूँट भरा और 'चीसो चूल्हो (ठण्डे चूल्हे) महाकाय लिखनेवाले बालकृष्ण सम ने झूमकर कहा—

मैं कभी नहीं मरूँगा

मैं अमर—मैं खोऊंगा नहीं ।

अँधेर आकाश के खुले खेत में

मैं कल्पना की सीमा से भी पार गया

अनन्त समय बीत गया,

काल मर गया, मैं नहीं मरा ।

अणु-परमाणुओं का आटा भूँधकर

आकाश के चकल पर

हवा के बेलन से बेल बेल,

म ने बान्लों की रोटियाँ पकायी

मैं ने ब्रह्माण्ड का अण्डा फोड़ा

असत्य से सत्य बना

किरणा की कूँची से मैं ने आकाश का रेंगा

प्रवाधकुमार सायबाल स्वयं कवि था, अस्सी पुस्तका का लेखक, अठारह फिल्मों का कहानी-लेखक । पर आज उस की ज़बान पर सिर्फ टैगोर बैठे थे । सुमन के पास सिर्फ अपनी हिन्दी कविता की ही आग नहीं थी, उस ने बिहारी, कालिदास, निराला, नवीन टगोर, गालिव फ़ज और जाने किस किस की आग सेमालबर रखी हुई थी ।

“ये नेपाल के कवि पहले दिन के सूरज की अन्तिम किरण को दूसरे दिन के सूरज की पहली किरण से गाठना जानते ह ।’ डा सुमन ने कहा, और सच ही यह वह रात थी जिस के हाथ से मैं ने किरणा की गाँठ पड़ती देखी ।

तारों की हुंकार

“शली बड़ी कि विषय ?” यह एक प्रश्न था । परन्तु दिनकरजी ने एक ही मिनट में इसे हल कर दिया, “अभी वह कारखाना नहीं बना, जहाँ ऐसी आरी का निर्माण किया जा सके, जिस के साथ शली और विषय को चीरकर अलग-अलग किया जा सके ।”

शचि रावत राय ने कहा—

मेरा गाँव छोटा-सा था
मेरा दिल पत्थर का टुकड़ा था
मेरे गाँव में चन्न आया
उस ने मुझे कवि बना दिया
मेरे स्वप्नों ने सात रंगी झूला डाला
मेरी कल्पना उस झूले पर झूलने लगा

दिनकरजी की कल्पना ने भी इसी झूले पर बैठकर कहा—

चांद क्षीर में उतर आया
आकाश बित्तना शान्त प्रतीत होता ह
तारा की खेती जल में तरती ह
शायद चाँद द्राति बन फमल काटने आया ह ।

मनोरमा महापात्र ने विकृत अक्षरों में विश्वास की चिनगारी का मुलगाते हुए कहा—

मेरे हृदय-वन में एक बात भटक रही है
मेरे हाथ वह आती नहीं
वह बात मैं तुम्हें सुनाऊँगी
मैं ने कितने मुँह देखे हैं
तेरा चेहरा नहीं मिला
जिस दिन तू मिल जायेगा
हृदय-आरण्य में भटकती
वह बात भी मुझे मिल जायेगी ।

रमाकान्त रथ की आयु छाटी थी, परन्तु भटवन की एक बड़ी घटना उस के हृदय के साथ घट गयी थी ।

तारों की हुंकार

उदित हा रहा मूय मेरे आँगुओं से भाग गया
 खेता की बाड से जाती हुए
 मैं ने अपनी जूती को कई बार सिलवाया
 इन पाँवों से मैं ने बड़ी
 ऊँची-नीची धरतियाँ पार की ह
 मेरा कमीज की जेबा में
 आला व आँसू भर हुए ह
 आज प्रभात के मुख पर
 भर खून के छीटे पड़े हुए ह

यह रमाकान्त का ही नहीं, हम सब का भाग्य था । कला निमित्त होती है ।
 कलाकार उस की नीचा मैं अपनाआप डालता ह । निनकरजी न पहले उन गीतों की
 पीड़ा का उल्लेख किया और फिर उस के निर्माण का—

नित्य प्रात एव नयी नाव आती ह
 सागर वही होता ह तीर भी वही
 प्रत्येक नया दिन एक नूतन घाव दे जाता ह
 पीड़ा वही ह आँखा व आँसू भी वही
 कवि, रत पर पड़ रहे मानव व पद चिह्ना का सभाल
 भविष्य की भेंट चढ़ा देता ह ।

युनियादेँ बहुत गहरी होती ह । उन की पीड़ा का उल्लेख इतनी गीम्रता से
 समाप्त होनेवाला नहीं था । कुमारी तुलसीदास कह रही थी—

मैं न अपना सवस्व अपण कर दिया
 कुछ भी तो पास नहा रखा
 विश्वास का सर नीचा हा गया
 आराधना हार गयी
 मेरे प्राण एव विष पी गये

दिनकरजी ने भी इस विष का एक घूँट भरत हुए कहा—

तुम जाता बार
 उन शब्दा को भी साथ ले गये
 जिन के साथ अर्थों का आलिंगन था
 और तुम छंद पीछ छोड़ गये
 वह छंद उस वायु के समान ह
 जो हवा से भरे वन में तड़प-तड़पकर चलती है
 परन्तु किसी फूँट को स्पश नहीं कर सकती

यह पीड़ा जिस अनुकम्पा का द्वार पार कर के आती ह, वनकलता देवी ने उस

मनुकम्पा की देहली पर खड़े होकर कहा—

किस का स्पर्श हुआ
सूना हृदय खिल गया
कहाँ से एक चिनगारी आयी
अँधेरी रात का शरीर प्रकाशित हा उठा
कहा से आयी ये पवित्र बूँदें
मेरा भीतर बाहर सब घुग गया
यह किस के बोल मेरे बाना म पड़े
जीवन के सन्तप्त स्थल शांत हो गये
कौन ह वह मोहन जिस ने बाँसुरी में फूँक मारी
मेरे हृत्पथ के सुप्त स्वर जाग्रत हो गये
यह किस का इशारा था
जीवन के शब्दा में अथ भर गये ।
यह क्या मन्त्र था
मुझे छाड़कर चले गये
यह तेरा जादू
मेरे शरीर से दुखों का शाड गया
तू मेरी पारस मणि

यहा ऐसा कौन था जिस ने जीवन के शब्दा में अथ भरते हुए नहीं देखे थे ।
कौन ऐसा था जिस स उम का 'वह' नहा बिछुड़ा था जो जाते हुए उन शब्दों को भी
साथ ले जाता है, जिन से अर्थों के प्रगाढालिंगन होते ह ।

मनोरमा की पीडा कई गुना थी । कलाकार हाने के नाते, एक पीडा उसे
परम्परा से मिली थी और नारी होने के नाते दुनिया ने उस की पीडा का भी प्रति
बन्धों से गुणा कर दिया था । वह कहने लगी—

कितनी ही पीडाएँ
मेरे हृदय में मुलम मुलम उठती ह,
तुम उन की जबान क्यों बन्द करते हो ।
इतने अँधेरों में
मुझे गीतों का प्रकाश हूँ लेने दो,
लेखनी की डण्डी पर
कल्पना का फूल खिलने दो
मेरे प्राणा में
इन फूलों के बीज सुरक्षित पड़े ह—
इन सुमनों को लिखने दो ।

मेरे हृदय की सारी पीड़ा
 सौरभ का रूप धारण कर लेगी,
 मेरा नाम साग हूँ
 स्वप्ना की लहरों उस में आती है,
 एक दिन वे शब्दों के माती
 मेरे हाथ में दे जायेंगी,
 मेरी बला अभी एक छोटी बली है
 यह बली एक दिन फूल बन जायेगी,
 तुम इस बली की झण्डी मत मसलो
 मेरी अचना के दीप को फूँके न मारो,
 मेरी वरपना के आकाश पर
 गूरज अस्त हो जायेगा
 मैं फिर बला की मूर्ति नहीं
 बला की वस्त्र बन जाऊँगी।

मनोरमा के बोल देखकर मुझे मोहनसिंह के बाल धाद आ गये, “एक मद, दूसरा बादशाह, तीसरा सप्ताह का बेटा। नूरजहाँ, तू ने फिर उस से वफ़ा को आशा कर ली।” मैं ने मनोरमा से कहा “तुम एक बलाकार, और फिर नारी इन पीड़ाओं का अन्त कहाँ होगा ?”

नारी, माँ होती है अथवा प्रेमिका। दो लोकगीत कह रहे थे—

मेरे बच्चे तुम विवाह करने जा रहे हो,
 मेरे दूध का मूल्य चुका जाना,
 मेरे प्यारे, तुम मुझे छोड़कर जा रहे हो
 मेरे प्राणा का मूल्य देते जाना।

तमिल कवि वहाँ कोई नहीं था, परन्तु एक तमिल गीत वहाँ था। उस गीत में जिस माँ का उल्लेख था, वह सार विश्व की माताआ के हृदय की सामूहिक आवाज थी—

ओ शिवजी,
 तुम्हारी माँ कोई नहीं
 क्या इसी लिए तुम भग पीने लग गये हो ?
 तुम्हारी माँ कोई नहीं
 क्या इसी लिए तुम गले में सापो की माला पहन रहे हो ?
 तुम्हारी माँ कोई नहीं
 क्या इसी लिए तुम श्मशाना में जा बठे हो ?
 भाले गकर,

अब तुम्हें मा कहीं से मित्रेगी ।

आओ, तुम मुझे अपनी मा बना लो ।

पीड़ा और उस को सहन करने की क्षमता के सत्कार से कौन इनकार करेगा ?
अपना स्वयं भी इस से इनकार नहीं कर सकता । अनन्त पटनायक कह रहा था—

यह मेरी वन्दना

अपनेआप को

आसुआ की नदी

ऊपर ममता का पुल

पास ही निर्माण हुआ

मिश्रता का सफेद ताज

क्या यह मैं ने नहीं देखा ?

खेता का जन्म

गेहूँ की मुसकराहट

और बालियों का संगीत

क्या यह मैं ने नहीं सुना ?

मैं दुखा से पिघल रहा हूँ

मेरा मौन मेरी मौत से सघप कर रहा है

इस मौन का मेरा प्रणाम

यह मेरी वन्दना

अपनेआप को

दिनकरजी ने अनन्त पटनायक की वन्दना में एक पंक्ति और जोड़ दी—

मैं वह शरोखा हूँ

जिम में से समार बाहर की ओर देखता ह ।

बात भीतर की ही बहुत बनी थी, परन्तु बाहर ता कही इस का पार ही
निश्चाई नहीं देता था । शशि रावत राय ने कहा—

मैं शशि रावत राय—

मैं टैगोर नहीं,

मैं शैली नहीं

मेरे कागजों पर आकषक चित्र नहीं,

मेरी पुस्तक को खोचना

इस में नये मानव का स्पर्श है,

इस के हाँठा पर गाथा है,

मानवता की गाथा है ।

एक भीतर के तूफान थे और आधी बाहर से आ रही थी । झराखे खुले थे ।

घासों की हुंकार

शचि रावत राय ने कहा—

एक प्रणाम

इस आ रही आँधी को ।

मेरा प्रणाम

यह पवत यह दरिया, यह सागर—

इस सब को प्रणाम ।

तुम निल हलका नहीं करना,

अपने घर का कोई द्वार बंद न करना,

अपने घर की कोई खिटकी बंद न करना

स्वागत हम आनेवाली आँधी का

प्रणाम इस आ रही आँधी को ।

१९३८ की बात थी इस उड़ीसा में एक रियासत थी डेकानल । एक ओर लोनजागृति थी दूसरी ओर रियासती दमनचक्र । एक रात रियासती पुलिस को नयी पार करनी थी । किनार पर एक ही नाव थी, नील कण्ठापुर का बारह वर्षीय नाविक पुत्र नाव के पास खड़ा था । पुलिस ने आवाज दी परन्तु नाविक-पुत्र ने दूबारा न दिया । पुलिस ने पुन आवाज दी । नाविक-पुत्र ने कहा ' मैं हत्यारा के लिए नाव नहीं चलाऊंगा । ' पुलिस ने तत्क्षण मामूम नाविक-पुत्र को गोली मार दी । उस का नाम बाजी राजत था । उस की लाश बटक में लायी गयी । शचि रावत राय ने उस का मुख देखा तो उसे प्रतात हुआ वह भारत की मिट्टी से उत्पन्न हुआ लाल फूल था । उस दिन शचि रावत राय का ऐसा प्रतीत हुआ था कि नन्हे बाजी राजत की मौत उसे कह रही थी—

मेरे कवि

अब तू जीवन का दुभापिसा बन जा

अब तू लोग के रिसते घावा के गीत लिखना,

लोगों की आँखों से वह रहे अश्रुओं के गीत गाना ।

उस दिन शचि रावत राय ने विद्रोह की आँधी को प्रणाम कर के बाजी राजत की माँ को कहा था—

माँ ! अपने आँसू पाल ले,

आज लोग गीत गा रहे ह

तरे रक्त की विजय के गीत

जा कभी तेरा था

आज उस को समस्त विश्व ने अपना लिया है,

देख तेरा बेटा पुन जन्म ले रहा ह

इस बार विद्रव के गर्भ से उस का जन्म हुआ ह ।

आज रावत राय कह रहे थे—

इस सतादी के बड़े द्वार से

एक दूत आया है

उस ने भविष्य का सन्देश दिया है

भविष्य

जहाँ जीवन जीवन के लिए हागा ।

आज के बानो में चाहे दुखा की सलाइया चुभी हुई थी, परन्तु वे बान फिर भी भविष्य का सन्देश लेकर आनेवाले दूत के शब्दों को चूम रहे थे ।

कभी नाग ने फण फलाया था, तो कृष्ण ने उस पर खड़े हा वासुरी बजायी था । दिनकरजी ने आज साप को जीवन और कृष्ण को मानव कहा । मानव कह रहा था—

ऐ जीवन ! जिस ने तुम्हें

विष का उपहार दिया

उसी ने मुझे गीतों की सौगात दी ।

तुम सोच रही हो, तुम्हारा विष पराजित नहीं हागा,

मैं साच रहा हूँ, मेरे गीत नहीं हारेंगे ।

पञ्चाक्षी कविता ने कहा, “यह मुहूर्त्त की बात, गीतों की कहानी वैसे समाप्त करेंगे, प्रति दिन तारे रात को इस बात का हुकारा भरते आ जाते हैं ।

वासा के सहारे चटाइयों की छत डाली हुई थी । भीतर एक कपड़ा तना हुआ था । चटाइयों में से छनकर जो सूरज का प्रकाश आ रहा था, पहले कपड़ा उसे समेट लेता था और जितना प्रकाश उस के हाथों बचता, वह छोटे छोटे तारों का रूप धारण कर रहा था ।

पाँवा के नीचे उड़ीसा की धरती थी । सिर पर तारों की छत । मुहूर्त्त अपनी कहानी सुना रही थी—एक मानव की मुहूर्त्त—तांगे मानवता की मुहूर्त्त, और तार हुकारा भर रहे थे ।

धरती का सम्बन्ध

‘यदि मेरा सम्बन्ध धरती से शेष रह गया होगा, तो यह हवाई जहाज अवश्य फिर से नीचे उतरगा।’ दिनकर ने मुझे स वहा। मुझे अनुभव हुआ कि जमे निनकर एक ऐसी सरल युवती हू जो अपनी सहेलियों की नकल करती हुई श्रत रग बटा ह। श्रत के नियम के अनुसार सारा दिन भूखे रहकर रात चांद निकलने पर ही जल-स्नान करना होता ह। चांद निकलने पर ही नही आता तो तग आकर वह युवती गुप्ता कण्ठ से जल मांगता हुई कहती ह अजी यह चांद ह कौन जान इम का लीला। निकले निकले, नही निकले तो नही निकले। ठीक यही अवस्था मुझे दिनकर की लगी।

वसे देखा जाये ता दिनकर ने यह श्रत आज प्रथम बार नहा रता था इस क पूर्व भी कई बार अपनी सखिया था अनुसरण करते हुए व इम परीक्षा से निबल चुक थे—चीन जाते हुए पार्लैण्ड जाते हुए, फ्रांस जाते हुए। प्रत्येक बार दिनकर की यही अनुभव हुआ ‘यह चांद का मामला ह यह हवाई जहाज की बात है क्या पता चांद निकले भी कि नही क्या पता हवाई जहाज नाचे उतरे भी कि नही।’

‘मुझे धरती और नींद से बहुत प्यार ह अमृता! प्रत्येक बार साते समय में भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि यदि भारत परतंत्र होने लग ता मुझे जगा लेना नही तो मुझे सो लेने देना।’

कलकत्ता से भुवनेश्वर तक जाते हुए हवाई जहाज में हम कुल नौ यात्री थ। परन्तु तीन बड़े टोकरे छोटे छोटे मुर्गों से भर हुए थे। यात्रिया से उन की सख्या कई गुना अधिक थी। उन की आवाज का शोर इतना था कि कोई बात सुन सकना सम्भव नही था। मैं ने यह शिकायत की तो दिनकर ने कहा ‘ये हमारे आलाचक ह अमृता! कला की कोई बात ये बानो में जाने ही नही देते।’

हिन्दी लेखक निनकर जब यह कह रहे थे मुझे स्मरण हा आया कि जब हम काठमाण्डू म पशुपतिनाथ के मंदिर की सीढ़ियाँ चढ़ रहे थे, तो बम्बई माटे बत्तर हमार पास चलने फिरने लगे थे। मैं डर गयी थी ता बंगाली लेखक साय्याल ने कहा था “वस इन से बचने का एक ही उपाय है इन से आख मत मिलाओ फिर ये कुछ नही कहेंगे अमृता। ये हमारे समालाचन ह। हमें इन से आखें चार नही करनी चाहिए, मोन रहते हुए अपने कला के माग पर बढ़ते रहना चाहिए।”

मेरे हाथ में ‘लाइफ पत्रिका थी। उस म सामरसट माम कह रहे थे

“समालोचक महाशय ! तुम्हारे मन में जा आये लिखा, मुझे तुम्हारा लेख पढ़ना ही नहीं ।”

सामरमट मामबाली बात पर हम ने भी अमन किया । मुर्गों का कुडकुड की आर से जब हम ने कान ही बंद कर लिये ता दिनकर ने कहा, “मैं कवि हूँ, एक कवि हूँ, एक शराबा हूँ, जिस से समार बाहर की आर दखता हूँ ।”

इन शराबा से मसार को देखने के लिए ही ता उडीमा के लागा ने दिनकर का बुलाया था । अब वे भुवनेश्वर के हवाई अड्डे पर हमारा स्वागत करने के लिए खड़े थे ।

अपने प्रदश के अतिथिगृह में बठाकर वे पूछने लगे, “आप क्या खाना पसंद करेंगे ?”

“एक साप और एक कछुए के अतिरिक्त आप जा कुछ मुझे खिलायेंगे, मैं खा लूँगा ।” दिनकर ने कहा और जब उन्होंने प्लेटों में मछली और मुर्गा परामा ता दिनकर ने मुसकराकर कहा, ‘बाह बाह यह मछली भगवान का प्रथम अवतार है इसे ता मैं अवश्य खाऊँगा । मुगा यह ता भगवान राम का पक्षी है, इसे भी जरूर खाऊँगा ।”

सापबाली बात शायद दिनकर को भूली नहीं थी । कटक के पण्डाल में दिनकर ने कविता पढ़ी—

नागराज के व्यापक फणों पर खड़े हो

राधावर ने अपनी वामुरी का तान अलापा

आज अखिल विश्व साप का विस्तृत पण है

मैं मानवता की वामुरी बजाता हुआ मानवता के गीत

गा रहा हूँ ।

जिंदगा ! जिस ने तुम्हें विष का उपहार दिया है,

मुझे उम ने ही गीता का वरदान दिया है

तुम साच रही हो, तेरा विष पराजित नहीं हागा

मैं साच रहा हूँ, मेरा गीत कदापि पराजित नहीं हागे ।

धरता का विष मानव से बार-बार अपना सम्बन्ध विच्छेद करता था, परन्तु मानव गीत के रक्त में यह सम्बन्ध इतना आत प्राप्त था कि यह सम्बन्ध टूटता ही नहीं था ।

मेरे ओर उड़िया लोगा के वाच भाषा की एक दीवार थी । मैं ने कहा ‘आप ने मुझे बुलाया मैं आ गयी, परन्तु मेरे हृदय की बात आप तक पहुँच जाये, यह कैसे हा ?’

कैसे जब हम भाषा की दीवारों पार कर देखते हैं ता दूसरी ओर भी वही हृदय, और वही हमारी चिरपरिचित घटवन ही हमें सुनाई दता है । पञ्जाबी का लोकगीत कहता है—

अय बनजारे, मुझे आकाश का लहंगा सिला दो

और उस पर धरती की किनारी लगी हा ।

उडासा का लावगीत जब यह कहता है
मेरा द्राप गुद्ध स्वर्ण से निर्मित ह
मुझे चन्दन का तेल ला दा रामजी !
प्रवास से यही अनुनय विनय ह,
प्रभु मेरा मेर प्यार स मेल हो ।

यह माग केवल उडिया युवता की ही नहीं । हमें समस्त देशों का मुनितियाँ
दिये जलाकर अपने प्यारे से मिलाप की आवाज़ा करती दिखाई देती ह ।

जब नेपाल का कवि कहता है—

मैं ने आकाश के चक्के पर वायु के बेलने से बेलकर
बादल की राटियाँ पकायी ह ।

हम सब का अनुभव हाता है कि नेपाल के कविवर ने ही बादल की राटियाँ
नहीं पकायी प्रत्युत हम सब न भी ऐसी रोटियाँ बनायी ह ।

जब तिब्बत का गीत वाल उठता ह—

बायें हाथ में जगूठी बायें हाथ द्रान्ती

हमें अनुभव हाता ह कि प्रेम और परिश्रम के ये दाना चिह्ना युगों से हम सब
निरन्तर अपने हाथों में लिये हुए ह ।

चकास्लीवाकिया की आवाज़ गूँज उठती ह—

सूरज मेरा कवि ह

उस के कर-बमला में स्वर्णिम लेखनी ह

घरा उम का कागज ह

उस पर वह सुन्दर कविता की रचना कर रहा ह ।

वीर बाकुरे परिश्रम करते ह

नवयुवतिया रगीन वेश धारण कर रही ह

बच्चे नयी उपमाओं की भौंति है

और सूरज का गीत बढता जा रहा ह ।

हम अनुभव हाता ह मूल्य हमारा सभी का कवि ह । उस का कागज हमारी
समस्त धरती का कागज ह । उस के गीत में केवल चैव बच्चे ही नवीन तुलनाएँ नहीं,
हमारे बच्चे भी उस की नयी उपमाएँ ह ।

जब मैं ने कहा ' वैसे ता इतने बड़े हिन्दी लेखक, दिनकर के समक्ष अगुद्ध
हिन्दी में बातचीत करना गुस्ताखी ह परन्तु इस गुस्ताखी के भाग से गुजरकर ही
मेरी बातें आप तक पहुँच सकती ह " तब दिनकर ने गुद्ध हिंदी की उपेक्षा और
हृदय की भाषा का आदर करते हुए कहा, नहीं अमृता ! तुम्हारी हिन्दी असुद्ध
नहीं । तुम्हारे पास एक शली ह, शबनम की शली, उस के लिए कोई भी भाषा हो
ठीक ह ।'

इतने उदारहृदय कवि को जब मोटर में बैठा, हमारे मेज़बान बाज़ार से चीज़ें खरीदने के लिए चले गये, तो लम्बी प्रतीक्षा के पश्चात् दिनकर ने कहा, “इस प्रकार तो हम बैठे-बैठे दलाई लामा बन जायेंगे आओ बाहर घूमें।”

“कितने बजे कोणाक चलेंगे ?” हमारे मेज़बानों ने पूछा।

“सूर्योदय हम रास्ते में ही देखेंगे।” मैं ने कहा।

“इतनी प्रात जायेंगे कसे ?” दिनकर ने पूछा।

“मैं जगा दूँगी, मुझे रात को नीद नहीं आती।”

‘हे भगवान, पहले तो मैं प्रायना करता था, ‘जब मेरा भारत गुलाम होने लगे’ तो मुझे जगा देना, नहीं तो मुझे सोने देना।’ आज प्रायना करता हूँ कि अमृता का प्रगाढ निद्रा प्रदान करना।”

दिनकर की नीद में मैं ने तो बिघ्न नहीं डाला, परन्तु सूर्य ने ऐसा कर दिया। जब हम कोणाक से होते हुए जगन्नाथपुरी पहुँचे, तो पुरी के मागर के तीर पर खड़े दिनकर कह रहे थे

हम देर से आये ह

सागर हँस रहा ह

आकाश का मुख खुला ह

और उस में शाम के सफेद दाँत दिखाई दे रहे ह।

भगवान के प्रथम अवतार मछली और राम पक्षी मुर्गों को बड़े प्रेम से खानेवाले दिनकर के सामने आज उबले हुए मटर परोसे गये थे क्योंकि पुरी भगवान की नगरी में दिनकर ने मांस नहीं खाया था।

दिनकर ने एक लम्बी सांस लेते हुए कहा “देखो आज मेरी स्थिति क्या हो गयी ह मुझे यह भी दिन देखना था। आप सब की प्लेटों में मछली और मुर्गा और मेरी प्लेट में उबले हुए मटर”

‘यह इस बात की सज़ा ह, दिनकरजी, आप ने भगवान की घरती केवल पुरी की सीमाओं में ही सिक्कोड़ ली है हमारे लिए पुरी की सीमा के बाहर भी भगवान की घरती ह।’ मैं ने कहा।

“भई क्या कहें ? यहाँ साखी गोपाल का मन्दिर ह वही उम ने मेरी उल्टी साक्षी दे दी ता मेरा सस्कार”

“रात को भी आप यही खाना खायेंगे—उबले हुए मटर, दाल और चावल ?” मेज़बानों ने पूछा।

अरे रात को क्या ? पुरी से आठ बजे गाड़ी चलती ह। आप डबे में मछली और मुर्गा बंद कर के दे दो, जसे ही भगवान की पीठ दिखाई दगी अर्थात् पुरी की सीमा पार हो जायेगी, मैं सब कुछ खा लूँगा।”

अभी भगवान के बिल्कुल सामने ही बैठे थे। चाय का समय था, मेज़ के धरती का सम्बन्ध

ऊपर केव पत्ता था। दिनकर ने कहा, “इस केव में अण्डा पड़ा दिखाई ही नहीं देता। भगवान को भी दिखाई नहीं देगा यह मैं खा लेता हूँ।” अन्ततोगत्वा सस्कारा का गाँठा ने एक चूल ढीली कर ही दी।

‘ये ह चिक्न सटविचेज इन में भी ता सब कुछ दाना जोर स ढका हुआ ह। यह भी खा ला। किमी ने कहा। दिनकर ने बड़े ध्यान स प्लेट की ओर देखा और कहा, ‘भई! किनारा से भगवान का दिखाई दे जायेगा।

रात आठ बजे गाड़ी चली। जसे-जसे पुरी पीठे छू रही थी भगवान पीठ करता चला जा रहा था हम डब्बे खोत्र रहे थे। सामने भगवान का प्रथम अवतार था राम का पत्नी था।

चाहे दिनकर के एक सस्कार ने चाय के समय अपनी एक गाठ ढीली कर ली थी, परन्तु दूसरे सस्कार ने ढील नहीं दिवायी “यदि मेरी घरती के साथ सम्बन्ध शेष हुआ ता।’ अब चाहे हम हवाई जहाज म नहीं बैठे थे गाड़ी में बठे हुए थे, जिस के पग पहले ही घरती को छू रहे थे परन्तु बलकत्ता ही नहा आ रहा था। रात यतीत हो गया थी दिन निकल आया था। लगता अगला स्टेशन अवश्य कलकत्ता होगा। स्टेशन आता पर वह बलकत्ता न होता। दिनकर कह रहे थे— हे भगवान! क्या अब इस समार म बलकत्ता किमी और जगह चला गया ह?

आँसुओं का रिश्ता

जुलफिया के दिल का जाम मुहब्बत से भरा हुआ था और जुलफिया के दस्तख्तान पर शीशे का प्याला अनारो के रस से । दानो प्याला में से मैं धारी बारी घूट भरती उजबेक की किताबों के पष्ठ उलट रही थी । मेरे और किताबों के बीच भापा की दीवार थी, परन्तु एक किताब की जिल्द पर बहुत ही सुन्दर लड़की की तस्वीर थी, और एक आसू उस लड़की की आँखों में लटक रहा था । मुझे महसूस हुआ, जाने वह आसू भापा की दीवार फादकर मेरी झाली में आ पड़ा था । मैं ने कहा

“जुलफिया ! इन आँसुओं का औरत की आँखों के साथ पता नहीं क्या रिश्ता है ! कोई दस हो, यह रिश्ता चिरमहचर महसूस होता है ।”

जब कभी दो व्यक्ति इस रिश्ते को समझ जाते हैं, इस समय की बदौलत उन दो व्यक्तियों में भी एक रिश्ता बन जाता है—अटूट रिश्ता । मुझे महसूस होता है कि अमृता और जुलफिया जाने एक ही चीज के दो नाम हैं । इसी तरह जमे आसू और औरत की आँखें एक ही चीज के दो नाम हैं ।”

इस किताब में उजबेक औरतों का कलाम था १९वीं सदी की नादिरा कह रही थी

मेरे दोस्त,
यदि मेरे पास आने को
तुझे कोई बहाना चाहिए
तो मुझे दोस्तों का तरीका
सिखाने के बहाने आ जा,
तुझे हक है
हम इश्रतवाला को मारने का ।
जफ़ा का तार पकड़ ले
और मेरे सीने को बँध दे ।

नादिरा के बाद इसी १९वीं सदी की महिजूना ने अपना कलाम पढ़ा और उस के एक समकालीन फज़ली ने कहा

मैं ने तेरा मुँह नहीं देखा
तेरी आवाज़ सुनी है,
उस शीशे की क्या त्रिस्मत

वह निष्ठुर निबदरा
अच्छा मैं उस का नाम नहीं पूछती
तेरी जवान छाला से भर जायेगी ।

तू एक खाली आकाश था
उस के मेल ने इन्द्रधनुष डाल दिया
और फिर साता रंग खुर गये
आकाश और साबला हो गया ।

और जुलफिया ने मुझ से पूछा, 'अमृता ! तू ने भी कभी उस आसमान का
गीत लिखा है जिस पर सतरंगा झूला पड़ा हुआ है ?'

—हाँ अनेक गीत

तेरा खत हम आज मिला है
जाने साता आममाना पर घटा छा गयी
दोना मरी जाखें झूम गयी
भाये म भाग्य का मोर नाच उठा ।

'और फिर उस आममान का गीत जिस पर स साता रंग खुर गये हो ?

—हाँ बहुत गीत

क्यों किसी की नींद को स्वप्ना ने बुलावा दिया
तारे खड़े रह गये अम्बर ने द्वार बंद कर लिया
यह किस तरह की रात थी, आज जब भाग गुजरी
चांद का एक फूल था
परो के नीचे रौंदा गया

'और फिर वह गीत जिन में शिक्वे का धुआं हो ?

—हाँ वह गीत भी

रात जाने पीतल की कटारी थी
सफेद चाँद की कलई उतर गयी,
आज कल्पना कसर गयी है
स्वप्न जसे कसर जाये
नींद जसे कड़वी हा गयी है ।

'और अब ?'

—अब एक चुप है

मन की इम घंटोंची पर
साचावाली गागर खाली है,
चुप मेरी प्यासी बठी हुई

होठा पर जिह्वा फेरती

दो शब्द का पानी कही नहीं मिलता ।

समरकन्द के एक कवि जारिफ लाला के दो फूल लाये और हम दाना का एक एक फूल द दिया । दाना फूलों का एक जमा लाल रंग था और दोना की एक जसी खुशबू थी । मैं ने और जुलफिया ने आपस में फूला का विनिमय कर लिया जैसे दो सहैलिया अपनी चुनरी का विनिमय करती ह । और मैं ने कहा, 'दा फूल, पर एक खुशबू ।'

'दा देश, दो भापाएँ, दा दिल पर एक दास्ती । और जुलफिया ने मेरी बाहों में अपनी बाहें डाल दी ।

"लाला फूला का रंग हमारे दिल का रंग है ।' मैं ने कहा ।

"पर इन फूला में दद का दाग कोई नहीं । हमारे दिल में दद के दाग हैं ।' जुलफिया ने जवाब दिया ।

मुझे नादिरा का शेर याद आ गया है, उस ने बुलबुल को कहा था 'यदि तेरे गले में गीत समाप्त हो गये ह तो इस नादिरा के कलाम में से फरियाद ले जा ।' मैं लाला के इन फूल का कहती हूँ यदि इसे अपने दिल के लिए दद के दाग नहीं मिलते तो मुझ से अथवा जुलफिया से कुछ दाग उधार ले जायें

जुलफिया को कुछ याद हो जाया, वह कहने लगी लाला का वे फूल भी हाते ह जिन की छाती में काले दाग होते ह—चल खेता में वे फूल तोड़ें "

खेता की जार जाती कच्ची सड़क के किनारे किनारे शीशम के वृक्ष थे, जुलफिया ने उन वृक्ष की आर देखा और कहने लगी "यह ताल का वृक्ष शायद सफल मुहब्बत का वृक्ष है, पर इसी जात का एक वृक्ष हाता है मजनूताल । यहाँ नहीं, वह केवल पानी का किनारे उगता है पहले उस के पत्ते आममान की ओर जाते ह और फिर उस की शाखाएँ झुककर घरती की आर लटक जाती ह, जमे पानी में अपने महबूब के चेहरे का तलाश कर रही हा हम जब असफल मुहब्बत की किसी वृक्ष के साथ तुलना करते ह, तो उस मजनूताल के वृक्ष के साथ ।

आसपास गहूँ के खेत थे । अभी पीछे छाटे छाटे थे, किनारे किनारे कई स्थानों पर लाला-फूल उगे हुए थे ।

'इन फूला के सीने में काले दाग होते ह, चल ये दागदार फूल तोड़ें ।'

मैं और जुलफिया फूल तोड़ रही थी कि एक बड़ा बाँका उजबेक मद लाला का बड़ा-सा फूल तोड़ लाया और मुझे कहने लगा, "इस फूल के सीने में हिंस का काले दाग नहीं, ये रोगनी के दाग हैं ।'

लाला-फूल के सीने में उभरे हुए दाग सचमुच सित्की रंग के थे । मैं ने उस का धन्यवाद किया परन्तु कहा

"दाग चाहे सियाह हों अथवा सित्की—दाग दाग ही हाने ह । ये दाग गायद

भ्रातृभों का शिक्षा



किनारे रास्ता जाता ह । जब कभी नगर से ऊब जाते ह मिर्जा तुरसद जादा अपने एक और दोस्त मिम इद मिश्ताकार का साथ लेकर इस दरें म चले जाते ह । सारा दिन अपने हाथ स पकाते खाते और लिखत ह । आज वे इस जगह हम सब को ले गये थे ।

यह एक हजार एकड़ से भी विस्तृत वह स्थान है जहा मदानी और पहाड़ी बन्धा का मिलाकर पहाड़ पर नये वृक्ष उगाने का प्रयाग किया जा रहा ह । पहाड़ तथा जंगल की छाती में एक बूना कश्मारी और नीली आखावाली उम की रूसी प्रेमिका—ये दाना भी रहते ह । गत बीम वर्षों से इस तरह दाना आशिका ने अपने निवास के लिए यह स्थान चुना हुआ ह । इस समय दोना का उमर साठ-साठ वर्ष से ऊपर ह । मद का चेहरा बड़ा हँसमुख और औरत की आँखें बड़ी चमकीली ह । दाना यास के नीले फूल ताँ लये और शीशे की सुराही में नदी का ठण्डा पानी भर लाये ।

“लिखारी घर हम राह में छोड़ आये ह अब हम वहा जायेंगे ।” मिर्जा ने कहा ये लिखारी घर जिस नदी के किनारे पर बने हुए ह उस नदी का नाम ह बरख्खाब (नाचते हुए पानी) ।

शीगे के बरामदावाले य सात घर ह और आठवा घर सम्मिलित रूप स मगीतमय गानें गुजारने के लिए बाकिया स बना और अलग से बना हुआ ह । इस घर क बरामद में बहुत बड़ा मेज़ सजी हुई थी । बाहर टीन की छत क नीचे बड़े-बड़े टीन चूल्हे बने हुए थे जहा कुछ लेखक हाडियाँ चढ़ा रहे और पुलाव पका रहे थे ।

अमन के, दोस्ती क और कल्मो की अमीरी के नाम पर जाम भरते हुए मिर्जा तुरमन जान ने कहा, ‘ आज नगमा के पाँव लगाकर तुम ने जो पवत चोर लिये ह कभी मैं ने भी इन पत्रतो का कहा था कि तुम राह में कितने भी तनकर खट रहो मेरा सलाम तुम्हारे ऊपर से गुजर जायेगा ।

आज के युवक और बड़े मकबूल शायर गुफार मिर्जा ने पास से कहा, ‘ दिल की मुट्ठी में लावा आम्तियाँ समा सकती ह परन्तु इतने बड़े आकाश में एक भी दुश्मन का उड़ान नहीं समा सकती ।

कुछ थाड़ी दूर पहाड़ का कटाई हो रही थी । कभी-कभी बाहद की आवाज से घमाका उठता था । मिर्जा तुरमन जान ने कहा ‘ पहाड़ का दिउ कितना भी पत्यर का क्या न हो, लावे का अपनी छाती में नहीं सँभाल सकता आशिक का दिउ कितना भी दन स छग्नो हुआ हो हिच की आग को सँभाल लेता ह ।”

‘ और कभी जा कुछ नहीं सँभाल जाता, वह कविता बन जाता ह । मैं ने कहा सज ने इस का समयन किया और मैं ने फिर मिर्जा तुरमन जादा स कहा, “कभा जा कुछ आप से न सँभाठा गया हा और वह किमी कविता में प्रवाहित हो गया हा, यह दमने का हमें अधिकार ह ।

तरी इस तीगमी फरमाइश का हम ब्रद करते ह और अपनी फरमाइश भी साथ मिगने ह— पहले नियाजी और फिर सब न इस सत्राल को उँचा कर दिया ।

“अमृता ने सवाल बड़ा गहरा डाला है, परन्तु मुझे जवाब देना ही पड़ेगा।”

मिजा ने कहा और कविता पढ़ी—

उजबेक सन्दरी । जरा दल

आज सारा जमाना सिला हुआ

बन्द कली की एक पाशाक

पर पत्तियाँ के बदन अलग-अलग ह

तेर जोर मेरे मन पर मुहबत की एक हा पाशाक ।

ताजिक शायरा की आवाज म पता नहीं क्या जार था आकाश के बादल हिल गये और बूँदें पचने लगी ।

‘हम आज इस मिट्टी में दास्ती का बीज डालने ह । बूँदें पानी देने आ गयी ह ।’
मिर्जा तुरसन जादा ने कहा ।

जमूता एक शेर ? नियाजी ने फरमाइश की ।

मैं जानती हूँ कि यह एक नामुराद षक् के बीज ह, पर बाज जाखिर बीज ह यह पत्र भी सकते ह । मैं न जवाब दिया । सभी के स्वर में फिर एक ताजिक लावगीत भर गया

मैं राम लिवाइ देता हूँ

पर इस राख में जाग दबी ह

मैं किसी का दुखाता नहा

मेरा एक हा दोष ह,

मैं ने तुम्हें प्यार किया

और अब इस आग को

राख में छिपाये फिरता हू ।

बादल गरजे और वर्षा तीखी हो गयी । ताजिकी शायरा में एक उजबेक युवक भा था कहने लगा ‘हिज्र की घनी नज़्नीक आ गया आकाश जार जोर से राने लग पड़ा ह ।’

बिजली चमकी और मिर्जा तुरसन जान ने कहा एक सौदागर घोड पर नमक लादकर ल जा रहा था । मेंह बरसा और नमक गल गया । बादल गरजे और घाडा डरकर भाग गया फिर बिजली चमकी तो सौदागर कहने लगा, “हे आसमान की बल पहले तू ने मेरा नमक ल लिया फिर घोडा । और अब हाथ में लिया लेकर मेरी तलाश में आयी ह ? आज का मह बादल और अब ऊपर म बिजली ’

गारे मेज पर हँसी की वर्षा होने लगी उजबेक युवक ने पानी की तरह बिह्वल ऊँचा स्वर निवाण और एक हिन्दुस्तानी गीत छेना ‘तू गंगा की मौज मैं यमुना की धारा और फिर जग ने मुझ स पूछा मैं ने सुना ह कि आप के देश में एक आगिका का दरिषा ह उस का नाम क्या ह ?’

रतार ।”

स्तागिनामा की इस नया का नाम ह ‘वर्जज्राय और दोना का बाफ़िया मिग्ना ह । मिर्जा तुग्मन जान ने कहा और पानिया का नाच और तीखा हो गया ।

पैतालीस वर्षीय शहर यिरेवान

पत्थर जसी छाती में फूल जैसा दिल आरमीनिया की राजधानी यिरेवान का दम्बकर उस दिन कई बार ये शब्द मेरी ज़बान पर आये। सारे का सारा शहर दूधिया और स्लेटी पत्थरों की ऊँची ऊँची इमारतों का बना हुआ—वास्तु-कला के कई नमूने हैं। इस शहर की रचना चाहे दा हजार साल से पचास साल पुरानी है, पर इस का अस्तित्व भयानक हमला से बहुत बार बरबनकर मिटा है मिट मिटकर बना हुआ। आज से पचास साल पहले १९१५ में यह घमासान युद्ध का भूत था। टर्की ने इस के अस्तित्व का अपनी तर्फ से मानो खतम ही कर दिया था। पर १९२१ में इस ने सावियत शक्ति के साथ अपनी शक्ति जोड़कर शांति और सुरक्षा का माग तलाश कर लिया। कई छोटी छोटी पहाड़ियों के पहलू में यह शहर इस तरह फला हुआ कि किसी भी पहाड़ी पर खड़े होकर किसी भी दलता शाम के वक़्त इस का जगमग करता हुआ सौंदर्य देखा जा सकता है। पत्थर की इमारतों के इस नये पैतालीस वर्षीय शहर की बाहों में जगह जगह फूलों की बगियाँ और पानी की झीलें बनी हुई हैं। फूलों की बगियाँ और पानी की झीलें के बिना कोई पचास वर्षों के लोग, जिन में से कई बड़े बहुत सीधे-सादे शब्दों में 'श्रीशे के कमरे' कहा जा सकता है। वास्तु-कला के ये प्रयोग शायद इसलिए भी बहुत प्यारे हैं कि आरमीनिया की वास्तु-कला का अंश बहुत पुराना है। दुनिया का सबसे पहला चर्च आरमीनिया में बना था—चौथी शताब्दी के आरम्भ में। और आठवीं शताब्दी में फाम ने आरमीनिया का एक वास्तुकार बुलाकर अपने देश में एक चर्च बनवाया था।

आरमीनिया के लोग के पास अपनी विरासत का संभालने और उसे प्यार करने के अजीब तरीके हैं। मुश्किल घड़ियों में ये लोग दुनिया के बहुत सारे हिस्सों में बिखरते रहे हैं, पर एक सच्चाई सब जगह पायी गयी है कि ये लोग जहाँ भी गये हैं इन्होंने सबसे पहला काम उम्र देग में जाकर यह किया है कि अपना छापाखाना स्थापित कर अपना साहित्य हर वक़्त मुद्रित किया (छपा) और उसे संभाला है। पुरालेखागार संग्रहालय में जहाँ इन्होंने विद्वान मासटोट्स का यहाँ संभालकर रखी है जिन्होंने पाँचवीं शताब्दी में आरमीनियन लिपि बनायी थी, वही तामिल भाषा में लिखे इन के इतिहास के व पष्ठ भी संभालकर रखे हुए हैं। इन्होंने कभी दक्षिण भारत में बसने के समय लिखे थे। वर्तमान शहर का शृंगार इन्होंने अपने दार्शनिक और लेखकों की मूर्तियों से किया है। सयातनावा इन का बहुत प्यारा कवि हुआ है।

पैतालीस वर्षीय शहर यिरेवान

पौधा जोर पूला स ढकी एक बगिया में सफे पत्थर की दीवार बनाकर इन्होंने सयातनामा की बहुत खूबसूरत—बहुत प्यारा मूर्ति बनाया है, जिस के नीचे उम की बकिता का एक पत्ति लिखा है 'मैं न इस घरती का वह पानी पिया है जो बिना न नहीं पिया । मेरा अतीत रेत का नहीं मेरा अतीत एक चट्टान का है ।'

गिरवान के सत्र से बड़ हाटल आरमानिया में उस रात जा सगीत बज रहा था इन के एक कवि की रचना है एक शब्द पत्नी 'तुम किस दग से आये हो ? तुम उड़ते-उड़ते मेरी खिड़की के सम्मुख बैठ गये हो, तुम निश्चित हो मर दग से आये होगे । आओ, मेरी इस खिड़की में बैठ जाओ और मुझे मेरे दश का हाल सुनाओ । यह गात कामिताम ने अपने दश से दूर पास में रहते हुए लिखा था ।

इटली के साथ इन दश की दास्ती का हज़ार साल पुरानी है । इस दास्ती की निशानी, एक बहुत बड़े पत्थर में तराशे दो हाथ—एक इतालवा और एक आरमी नियन । —कुछ पहले इटली ने इस दश का उपहारस्वरूप भेजे थे । यह निशाना—दा हाथ—आज इन्होंने बहुत ही सुन्दर बगिया में मजावर रखे हैं ।

हमारी दास्ती हिन्दुस्तान के साथ भी उतनी ही पुरानी है । क्या मानूँ हमारा परदादा, लकड़दादा के दादा कभी एक ही हाथ । तभी तो आज हम ने तुम्हें आरमी नियन स्त्री समझ लिया था । मेरे मेज़वान हसकर मुझ से कह रहे थे । उस दिन सचमुच ऐसा ही हुआ था कि सबर हवाई अड्डे पर मर मज़बान जब मुझे लाने जाय तो मुझे देखकर भा उन्होंने मुझे नहीं पहचाना । मुझ उन्होंने अपने ही दश की बाई आरमीनियन स्त्री समझ लिया और हिन्दुस्तान से आनेवाली परदेशी स्त्रा का तलाश करने के लिए कितनी देर तक वे चारों तरफ देखते रहे ।

'तुम्हें कभी किसी देश के लोग म कोई खास तरह की समानता लगी है ? तबिलिसी म बरतानिया के एक लेखक ने मुझ से पूछा था और मैं ने उन्हें जवाब दिया था, 'इस तरह मुझे किसी दग म कभी नहीं लगी पर कई बार कई किताबों के कई पात्रों में ज़रूर महसूस होने लगती है और उसी दिन आरमीनिया के अज़नवा शहर के वीरान काने म एक पहाड़ी पर बनी आक के बीच खड़े हुए मेरी आँखें आस-पास का कुछ समझकर अपने अन्दर जाड़न लग गयी थी । परों में माह की एक कपकपी-सी उतर आयी थी—यह शायद सामने बर्फ से लदे हुए पहाड़ की ठण्ट थी । सामने दूरा पर एक बग-सा पहाड़ इस आक की बाँहा में लिपटी हुई किसी चीज़ की तरह है, शायद चाँद की तरह नहीं, एक खयाल की तरह बाँहा के बीच भी है और बाँहा से बहुत दूर भी । नज़दीक के पहाड़ों पर कोई पेड़ नहीं है उन के शरीर की नग्नता उन की अपनी ही बाँहा में लपटी हुई लगती थी । हल्की सी धूप उन के बदन को छूती और कापती सी महसूस हो रही थी

कुछ दूर तरहवी सग्री का एक चब है—एक उंचे गिखर का बाँट-तराशकर बनाया हुआ चब । यह रविवार था, इसी लिए लोग का एक मेला सा यहाँ लगा हुआ

था। छाटा छाटी ढालकिया और दासुरिया धिक् रही थी, बड़ जोर लाल बेरा की तरह किमी फूट के हार पिरावर लडकिया उन्हें बेच रही थी। चच के बाहर कई लोग भडा का बलि देने के लिए हाथ में चाकू पकड़े खड़े थे और कई लोग चच के अंदर मोमवत्तिया जलाकर बम्पित हाठा से ब्रास को चूमते हुए प्रार्थना कर रहे थे। एक स्थान पर चच के घेर में एक छाटा-सा चश्मा ह। लोग उस में सिकके पेंकते, मजतें मानते और चुन्लू भरकर उन का पानी पी रहे थे। मैं सब कुछ एक मेले की तरह देख रही थी—उसी की आवाज में भेडा का लहू मनुष्य के झुके हुए माथे का विश्वास एक ऊँच से चबूतरे पर एक छाटी-नी सीढ़ी पत्थर की एक बन्दरा (गुफा) में जाती ह इस के प्रति मेरा एक माह सा हो गया था और मैं ने भित्तवत्ते हुए किमी से पूछा था, “मैं इस चबूतरे पर चढकर उस पत्थर की सीढ़ी को लाधकर उस बन्दरा में जा सकती हूँ ? ” ‘शायद नहीं, मैं ने स्वय ही झिथककर कह दिया था क्याकि मैं देख रही थी कि उस चबूतरे का कइ लाग हाठा से चूम रहे थे। पर नजरें बन्दरा के उम दायरे में से बाहर नहीं निकल रही थी और मुझ जवाब मिला था, ‘उस बन्दरा में दीया जलाकर हमार लेखक कभी इतिहास लिखते थे और प्राचीन दस्तावजा, पाण्डुलिपिया की नकल उतारते थे। तुम इस चबूतरे को लाधकर उस बन्दरा में जितना देर चाहो, बठ सकती हा ” साच रहा थी कि भित्तावा के पात्र ही नहीं कोई कान किनारे भी इस तरह के हात हैं जो कि अजनबी दश में बरबस ही कुछ अपने-अपने जान पड़ते ह।

दुनिया का सन से पहला चच चौथी शताब्दी के गुरु के वर्षों में बना था, समय के साथ इस का ढाँचा अपना आकार प्रकार बदलता रहा ह, पर इस के परा के नाचे जमीन वही ह। इस जमीन की मिट्टी ने पता नहीं मनुष्य की कितनी प्रायनाएँ सुना हैं, पर इस के काना के पाम कई बहुत बडा धय लगता ह, लाग हजारों की गिनता में मिलकर आज भी प्रायनाएँ कर रहे ह और यह बडी धीरज के साथ चुपचाप उन्हें सुन रही ह। यहाँ हर समय मोमवत्तिया की रासनी बपती रहनी ह पता नहीं लोंगा का प्रायनाआ के भार से या मिट्टी के धय का देगकर।

इस चच के सब में बडे पादरी की इस पत्थी के लिए उम दिन ग्याह्वी बरसी थी। प्रायना समाप्त हुई ता मैं भगालों की रोगना में एक पालकी के आगे-आगे चलते पादरी के प्रभाव का आर देखती रही—माथे पर चमकीला ताज, गले में मलमल का चमकीला चागा, पैरा में मलमल के रलापर और हाथ में मातिया से जडित ब्रॉम। छाटे पादरिया के गलों में काला वरु और काले धाँगे पर पड़े हुए खरी के चमकाले चूमे। गिर पर काले कपड और गल में साने के ब्रॉम।

सगमरमर का मादिया बड़वर एक बहुत बडा हाल ह—मिहामन पर सब से बडा पादरा बडा हुआ पा—बहुत गम्भीर चहुरा, बहुत गम्भार नजर। सामन दो बतारा में गेय सार पादरा सडे हा गये और एक-एक कर के देग के इतिहास में इस

पैसालाम बर्पाय शहर विरवान

गिरजे की दन का दाहराने हुए कुछ दिनों में पत्ते रह और फिर बारी-बारी आगे हो कर ब्रास का चूमने रह । बहुत से लोग आस पाग खड़े थे नम्रता के साथ धुन हुए । मुने बुरमी पर बैठने के लिए कहा गया—मेरे परदेसी हान का लिहाज । बड़ा मेहरबान सलूक था, पर सारा घातावरण बिग्री इतिहास का वह हिस्सा लगता था जिस हिस्से में खड़ा हुई भा मैं उस हिस्से से बाहर थी—विलकुल अजनबी और अकेली । बमरा के बत्त जलने थे और बुझ जाने थे—बई शताब्दियाँ माना मिलकर एक स्थान पर खी हो गयीं हों और इन शताब्दियों में चौथी शताब्दी भी थी और बासवी शताब्दी भी । मानवीय हृदय की आवश्यकता के इन सामने दीखते पष्ठ का मैं पत्ते का बहुत कागि करती रही, पर इस पष्ठ का हर शब्द मेरे लिए उस बिग्री सिक्के की तरह था, जिग का मैं अपने मन की सीमा में आकर न ही खच कर सकती थी न ही बदल सकती थी । घबराकर मैं ने पष्ठ पलटा पर अगला पष्ठ अभी खाला था । साच रही था, इस अगले पष्ठ पर पता नहीं काइ कलम बर कुछ लिखेगा और जिग के शब्द उस सिक्के की तरह होंगे, जा नि मेरे जग अजनबा मन के दश में भी खच किये जा सकेंगे

पर ऐसा मोचना भी गायद बहुत ठीक नहीं ह—बिदगी मिक्का की कामत अपने स्थान पर हाती ह । मजहबी मन के शासन में चलनेवाले सिक्के, मैं या मेरे जग कुछ लोग यदि खच नहीं कर सकते तो न सही—हरख के लिए उन्हें खच करना ही क्या आवश्यक ह ? उस दिन शाम के बक्क अमराका में रहता एक आरमीनियन मिला था पचीस साल के बाद अपने देश लौटा था वह भी कुछ दिनों के लिए । शहर की हर गली का मोड़ वह परदेशियों की तरह देख रहा था पर वह मेरे जमा परदेशी नहीं था । नयी इमारतें और उस के माथे पर लगी रागनी की झालें उस के लिए नयी थी पर इन इमारतों की बुनियात में जो कुछ था, वह जग के लिए बड़ा पुराना था बड़ा अपना था । १९१५ के कलेशाम में अपने सार खानदान से मैं अकेला बचा था वह बता रहा था और फिर उस की गामोशी में युद्ध की भयानकता सिसकने लगी थी ।

एक ऊँचा पहाड़ पर खड़े होकर उस ने जगमग करते शहर का दखा मैं ने भी दखा और फिर हम ने अपने विरवानी दोस्त से पूछा था, “इस देश की सीमा अब कहाँ तक ह ?

वहाँ तक जहाँ तक राशनी फगी हुई ह । दूर जहाँ अंधेरा गुरू हाता ह वहाँ से टर्की का सीमा गुरू होती ह ।

इस उत्तर में एक स्वाभिमान था—छून की नखिया का तग-तरवर तलाश किया हुआ स्वाभिमान पर मैं देख रही थी इस स्वाभिमान के अर्थ जो कुछ मर लिए थे, अमरीका से आये आरमानियन के लिए इस के अर्थ उस से बहुत गहर थे । ज्यों का सिक्के की तरह सभी के लिए एक जसा हाना शायद जरूरी नहीं, सम्भव भी नहा

खामोशी का गीत

टाँसटाय का कत्र पर से लाये गये कुछ पत्ते अब भी मेरे सामने पड़े हैं। इन का हलका पीला रंग एक धीमे से स्वर की तरह है। मैं अब भा मन का एकाग्र बहने ला यह स्वर धीमे धीमे मेरे काना में गूँजने लगता है।

मास्का स दा सौ किलामीटर का लम्बा रास्ता लम्बे पेडा में घिरा हुआ था। यह अकतूर का महीना था। पेडा के पत्ते सुनहरे पाले साने के चौड़े पत्ता की तरह पडा से घूलने लगते थे। कई जगह पडा के तने मज्जद थे—चादी की तरह। और आम्बा का एम परी की कहानी का अम हाता था जमे चादी के पडा पर माने के पत्ते उगे हा।

टाँसटाय की निजी जमीन की सीमा लाघते ही परी कहानी का सारा रूप बन गया। हवा तेज हा गयी थी और कई एक-एक घरता पर उगे हुए ऊँचे पेडों से पत्ते इस तरह बर रहे थे जमे तालबद्ध किसी आकाश गीत के स्वर घरती के काना में गुंजरित हा रहे हा।

टाँसटाय के घर का हर कमरा उसी तरह है, जमे १९१० में टाँसटाय के आविरा दिना में था। मा के उस काले दीवान से खबर जहा टाँसटाय का जन्म हुआ था, बार्डिंग हज़ार किताबा की लायब्रेरी और उम के साथ लगा हुआ वह कमरा, जिस में उस की मेज़ भी है, वमे का वमा ही पडा है जहाँ टाँसटाय ने बार एण्ड पीस' गित्ता था। साने के कमरे में पलग के पाम टाँसटाय की सपने कमोज टेंगी हुई है। एक बोंपकपी की तरह मुझे याद है कि मैं इस कमोज के पाम खग हुई थी टाँसटाय के पलग की पट्टी पर एक हाथ रखकर—खिडकी में स हलकी-सी हवा आयी और बमाज की बाहें हिलकर मेरी बाह का छू गयी। एक पल के लिए समय की आगे बन्ता मुझसे पीछे पलट पडो थी इतनी तेजी से कि १९६६ अपनी पलक थपककर १९१० बन गया था और मैं ने देगा कि गले में सफ़ बमाज पहनकर अपने पलग की पट्टी पर हाथ रखकर टाँसटाय पडा है।

यह पत्र देखा जा सकता था पत्रडा नहीं जा सकता था। और यह स्तना अवग पल था कि और कई पल मम के साथ मिलाया नहीं जा सकता था। खून का हृत्वन मेरे माथे की वनपटिया में बज रही थी। पर मामने समय के बँधेरे का एक दरिया बह रहा था और यह पत्र उस दरिया में एक छाये-स दीये का तरह अभी-अभी दागा था और अभा ही गप हा गया था। खून की हरकत ने मेरे माथे की वनपट्टी में

से मुञ्जरकर मेरी आँगा पर बना जार डाला पर अब मेरा आँगा व आग गिफ ठग और मटमल अवर का एक बना दगिया वह रहा था । फिर मर मन का हृरउ ने गान्ने होसर दगा—बमर में कोई नहीं था और गामने दीसा पर पत्त की पट्टी के पास गिफ एर बमाउ टंगी था ।

कितनी हा पगटणियाँ पत्ता की घना गुफाओं में जाती ह । एवं गुफा में टा-मगय की वत्र ह । चारा तरफ गामागी थी, पर लगता था वत्र की लामागी ह । गिद की गामागी से टूटा हुआ एर टुसल था । अपनआप म पूरा और बिगा भी आवाज के अस्तित्व से बनिपाउ—पेरा म गरा पोले पत्ता की आवाज म भी ।

मैं हट गिफ का गामागी का हिस्सा था । मरा हरेक साँस पेडा म दगते हुए पत्ता का तरह सर रहा था । मेरा पत्ता साँगा में भी एक गीत था—गायन एव कारनामा था

बड़ी दूर बड़े कुछ लडने पत्ता का पिरा पिरावर गिर व मुनहरी लाज बना रह थ । लवियाँ पत्ती का पनियाँ बनारर अपनो बमर में बाँध रहा थी । य सार पत्ते टों-गटाय की नितावा के वरत (पत्ते) लगने लगे जा पडा से गकर घग्ता की भार घग्ती के गगा की शाखा में गिरने घग्ती का जगजग वरत और फिर पेरा पर नये गिर म उगन ।

यह बरन और उगने का गीत था जा मैं ने उस गामागी में सुना था—गामागी का बिगा भा तरह ताज्जा या ढाता नहीं पत्ता म पत्ता के रग की तरह बगा हुआ लामागी का अपना हिस्सा ।

चुप की वन्द गली

मन बहुत अच्छी री में था, पञ्जाबी टण की लय पर एक टप्पा मुँह से निकल रहा था—

सुका पत्त वे तग्राकू दा
वही बग्या दी हाई बावला
मेरे हूना दा रग मावला

बल आगरिद से ममडानिया की राजधानी स्थापित जाने हुए रास्ते में जितने भी गांव आये थे, सत्र घरो के आगे तग्राकू के पत्ते सूखने के लिए डाल रखे थे। पत्तों का रंग भूय की धूप पी-पीकर ताँबे जमा हो रहा था। धरती के इस टुकड़े का स्वतंत्र हुए कोई बीस बरस हुए ह और स्वतंत्रता बीम बरसा की युवती की तरह पहाड़ की हरियाली में, मक्का की सुनहरी चालिया में, और भेदा व आटुओं से लदी तहनिया में घूमती दिखती है। सिरा पर लाल पटक बांधे कई लड़कियाँ सड़क के किनारे सुलल तग्राकू बैच रही थी। उस मारी वादी का नाम भी इस के बागल के नाम पर है—टाटो वगेम'। उसी सुबह इस के आगा की आगमगाहँ देखकर आयी थी—छाटे छोटे टापुओं में बनी आरामगाहँ। प्यारा सा रंग भी बर रही थी और खुशी भी।

उसी सुबह सुना था कि आज के लेखक मित्रवर एक छाला-मा शहर बनाना चाह रहे हैं—अंतर्राष्ट्रीय लेखक शहर। एक पत्र प्रेरक मुच में पूछ रहा था कि यह शहर क्या बनाना चाहिए? जवाब दिया था—बरबरा और फूला के मुमेठ से। पत्थर ज़िंदगी की हज़ारता की नुमाइन्दगी करेंगे, और पत्र मनुष्य की बचपना का।

मन की उमी री में था कि एक बहुत बड़े मरखारी अकसर ने हँसकर भुने कहा था, 'आप ने अपने देश में एक जोरत का प्रधान मंत्री चुनकर हम मर्तों का मर्दानगी का एक ज़माना दे दिया है।' और मैं ने हँसकर जवाब दिया था 'मैं खुश हूँ कि हम न आप को ईर्ष्या का कोई मौका दिया है।'

मेरे पास आगरिद से बेलफ्रेड पहुँचने के लिए हवाई जहाज़ का टिकट था—टिकट पर तारीख और हवाई जहाज़ के चलने या बज़न लिखा हुआ था, पर यह पता नहीं कि टिकट दते समय किस ने और किस तरह यह लिख दिया था क्योंकि उस दिन आगरिद से कोई जहाज़ बेलफ्रेड नहीं जाता था। आगरिद आगरिद ने स्थापित पहुँचने के लिए बार का इन्तज़ाम हुआ और फिर अगला सुबह स्थापित में हवाई जहाज़ में बेलफ्रेड पहुँचने का। मूषागिया का एक गाँव अबगाम्बेरा और मूषागिया

का प्रिय महात्मा सल्लामी कार मे मेरे साथी थे ।

‘नरमा का मेला तुम्हें कैसा लगा ? यूयापिया का शायर मुझे पूछ रहा था, और मैं कह रही था, किसी भी जवान की कोई नग्न मुझ तक नहीं पहुँची, पर मेरे लिए इस मेले की तीन रातें इस तरह थी जैसे मैं इस शहर में एक नहीं दो झीलें दम रही हूँ । एक नीले पानी से लबालब और दूसरी इनसानी आवाज़ों और मानवीय जगता स छाँकती

और वह हँस रहा था कि इनसाना दिल कई बार कस एक-सा मोचते ह । उस ने उस रात एक नग्न लिखी थी जिस का भाव था कि दरिया के पुल पर खड़े होकर जब कई देशों के शायर नग्न पड़ रहे थे तो उसे लगा था कि एक दरिया पुल के नीचे वह रहा था और एक दरिया पुल के ऊपर ।

इस बड़ी साझा खुशगवार री में हम सब थे और कार का ड्राइवर भी । उम ने मिर पर एक सफेद टोपी पहन ली और मुझे कहने लगा, “आज मैं गाँधी टोपी पहनकर कार चलाऊंगा । हिंदुस्तान को मेरा सलाम !” और उस ने अपनी जवान में एक गीत गाया, जिस का भाव था मेर सूरज ! मेरे महदूब ! मेरा रूह की ताकत के लिए मुझे थोड़ी-सी घूप दे दे

कार का मालिक एक मेहरवान दास्त भी था और अल्बानिया जवान का विद्वान भी । भगदोनिया की छाती में एक दद ह कि उस का हिस्सा बल्गारिया के अधीन ह और एक हिस्सा अल्बानिया के अधीन । अल्बानिया से एक लम्बी अदावत चली आती ह । वहा बमते कुछ भसेडानियन लोग अब भी वहा ह पर कुछ इस ओर आ गय ह । यह हमारा अल्बानिया जवान का दान्त कई बीस साल हुए इन जार आ गया था पर इस के मा-दाप अब भी वहा ह और उन्हें देखे इसे बीस माल हो गये ह । जाने अब वे कितने बूढ़े हो गय होंगे उस ने कहा और सब के मन की गै एक माड पलट गयी ।

यूयापिया के प्रिय ने अभी तक अपने बारे में कुछ नहीं बताया था । रास्ते में एक जगह सड़ होकर दायर का एक-एक गिलाम पीते हुए उस के हाठ छलक पड़ तुम शायर लग बड़ सुगनसीब ह । हवाकत की दुनिया नहीं बमता ता कपना की दुनिया बसा रेतो हो मैं बीस साल कायलिन बजाता रहा ह साज के तारा स मुझे इस्क ह । पर जग ब त्ति में मेरा दाया बाँह पर गाली लग गयी । अब उस हाथ स मैं कायलिन नहीं बजा सकता मैं किमी कन्सट (गोछ) में नहीं जाता क्याकि वहा किसी कायलिन की गावाज सुनवर मुप मे अपना स्वय खेग नहीं जाता मगात मेरी छाती में जमा हुआ ह

मगात के आगिर हाथा का गालिया क्या लगता ह ? इन का जवाब किमी के पाग नहीं । तवागीख चुप ह । हम भा चुप दे । और मन का री चुप का एक बन्द गली की आर मुड गयी

एक गीत का जन्म एक अवस्था का जन्म

खलील जिब्रान ने एक दिन अपने हाथ में पकड़ा हुआ जाम अपने माथे से भी ऊपर उठाया और फिर मेरे नाम पर उस ने जाम में से एक लम्बा घूंट भरा। जानती हूँ कि मेरी इस बात से अभिमान की गन्ध आती है पर वास्तव में यह स्वाभिमान के रस में भरे हुए अगूरा की खुशबू है, जो पक-पककर शराब की घूंट की सी तीखी गन्ध बन गयी है।

खलील जिब्रान ने अपने जाम में से यह घूंट भरते हुए कहा था, मैं अपने हाथ का जाम अपने सिर से भी ऊपर उठाता हूँ, और फिर होठों से लगाकर एक लम्बा घूंट उन के लिए भरता हूँ जो अपना जिंदगी के जाम को अकेले पीते हैं। सो उस ने यह घूंट मेरे नाम पर पिया था, आप के नाम पर पिया था—आप सब, जो अपने जिंदगी के जाम को अकेले पी रहे हैं।

मुझ में इस अपनी प्यास के लिए हजार शिक्वे जागे होंगे आप ने अपनी इस प्यास का हजार बार कोमा होगा, पर खलील जिब्रान मुझ से और आप से इसी लिए बड़ा है कि वह इस प्यास का गुज़र कर सका। अपने जाम को अकेले ही पीना, भले ही आप को इस में से अपने खून का और आसुआ का स्वाद आये। और प्यास की इस सीमा के लिए जिंदगी का गुक्र करना। क्योंकि इस प्यास के बिना आप का दिल उस सूखे हुए समुद्र का बिनारा बन जाता था जिस में न कोई गाँव होता है, न कोई लहर।

यह समय जिंदगी के बहुत-से रास्ता से गुज़रने के बाद आता है। आप की और मेरी तरह खलील जिब्रान ने व पहले बचन भी देखे थे 'कभी वह समय था जब मैं ने मनुष्यों का साथ चाहा था उन के साथ मिलकर दावतें सजायी थी, और फिर उन के जाम से अपने जाम का टकराया था पर वह शराब मेरे माथे की नाटियाँ में नहीं पहुँची। वह शराब मेरा छाती में नहीं लहरायी। वह केवल मेरे परा तक ही उतर सकी थी। मेरी प्रतिभा सूखी रह गयी थी। मेरा मन ढँका रह गया था।

जिस के पाम दिल की दोलत होता है, उस दोलत के न खचें जाने का दद केवल वही जान सकते हैं। खलील जिब्रान के इस दृष्ट ने कहा था, 'मेरी आत्मा अपने ही पर्वे हुए फल के भार में झुकी हुई है। क्या ऐसा कोई नहीं जिसे वही भूख

लगी हा वह आये, अपना व्रत तोड़ दे इस फल का चप ले और मुझे इस भार से हलका कर दे ।'

इस दद की जा जलन में न और पाल पाटस ने देखी ह उस पड़ने हुए लगता ह कि लिखनेवाले ने ता क्या, अगर पढ़नेवाले ने भी इस जाग का वझ वप अपने अग सग न रसा हा ता वह इस की पहला लपट से ही झुलस जाये । यह राशनी की वह दीवानी तलाश जिस क अघे माटा स हजारा के पैर टकराये ह और वे निराशा की, शिकायत की, रानक वा या मौत का गहरी खाइया म जा पड़े ह । यह केवल कभी कभी ही हाता ह कि एक बीमार और राऊ रोऊ करता बालक बडा हाकर राजे-द्रसिंह बेदी बन जाना ह मा की ममता के लिए तरसा हुआ एक बच्चा बालाङ्काक बन जाता ह, गरीबी और यातना के झकझारे खाता हुआ एक लड्का मार्की बन जाता ह । यह दद जन्म सृजनात्मक हा जाता ह तो करामाती बन जाता ह और स्वय को पहचानन पहचानते इनमान पाल पाटस बन जाता ह खली न जिवरान बन जाता ह ।

पाल पाटस ने जिस औरत स मुह उत की उस ने पाल का पहचाना नही था । न पहचाने जाने के दद ने पाल को एक जनून द दिया कि वह अपने मन की सूबसूरती का ऐसे गिलरा की आर ले जाय कि जब कभी वह औरत जाने या अनजाने ही उस सूबसूरती की आर देखे तो उस क अ दर पाल के दद असा ही एक दद जाग उठे, कि उस न ऐसे जादमा का पहचाना नही था । परा स ये रास्ते बाधकर पाल सानी उम्र उस शिपर की जाग चलता रहा और चरन चलते वह जो कुछ अपने से बात करता रहा आज वही बातें दुनिया भर के आशिका का बंद बन गया ह कुरान बन गयी ह

“जब तुम ने मेर प्यार का स्वाकारने स
इनसार कर दिया
मैं ने चौकट स गुजरे बिना
तुम्हार साने के कमरे का दरवाजा भिटका दिया ।
और अपने हाथ में पन्डा हुई बिवाह की जगूठी का
बाहर सडक पर ख” हुए—
एक भिलारी के पात्र में डाल दिया ।”

उस दिन हमारी भापा के शब्द भी
कराह रहे थे
जिस दिन मैं ने तुम्ह अलविदा कही ।

जम हमारी तवारीख दो हिस्सा में बँटी हुई ह
ईना के जन्म से पहल, और ईसा के जन्म के बाद

मेरी जिन्दगी भी दा हिस्सा म बँटी हुई ह
तुम्हे दखने से पहले, और तुम्ह दखने के बाद ।

एक दिन मैं ने गली म मौत का दया था ।
वह बिल्कुल इस जिन्दगी जमी ह,
जो जिन्दगी मैं तुम्हारे बिना जी रहा हूँ ।

ईश्वर ! लाभ तुझे करामाती कहते ह
क्या तुम इतना नहीं कर सकते
कि मेरे दिल की खूबसूरती में स

एक चुटकी भर निमाल ला
और वह चुटकी मेरे जिम्मे में डाल दा ।

तुम्ह फिर से दखना ऐमे हागा
जब आवा हाने के बाद काइ जाया का पा ले ।

अगर तू मेरे साथ चलती
मैं सारा उम्र अपने मन की अमराया म
तुम्हारा हाथ पकडकर चलता रहता ।

माइकेल ऍंजेलो जब किसी खूबसूरत पत्थर का दया करता था ता उस का
आवा में बंटी हुई तमवीर जाँखा में स उतरकर सामने पत्थर पर जा बंठती था और
जिस की आर देखते-देखते उस के हावा म पकड़ा हुई छेनी उतावला हा उठती कि वह
इस तसवीर के आम-नास लगा हुआ पत्थर छील द ताकि वह प्रत्यक्ष हाकर सब का
दिखाई देने लगे । इस तरह के इस स माइकेल ऍंजेलो पत्थरा का गढ़ा करता था,
पाल पॉन्स ने इस तरह के इसक से अपना शायमियन का गना ।

एक बड़ी छोटी-सी बात ह । जिन दिना जब ठिंडी हुई थी, दिपासलाई की
डबिया नहीं मिलनी थी । पाल ने एक दुकानवाले को कुछ पैसे पागी देकर कुछ
डबियाँ मुरमित करवा ला थी । एक दिन जब वह अपनी डबिया लेकर लौटने लगा
ता एक औरत बड़ी जल्दत स आयी और दुकानवाले से एक डबिया मागने लगी ।
दुकानवाले के पास सचमुच ही और डबिया नहीं बची थी । औरत का मुँह उतर गया ।
पाल ने अपनी जेब से एक टावा निकाली और उस औरत का दे दी । औरत जवान
थी, खूबसूरत थी पर जब वह डबिया लेकर लौट पड़ी ता पॉन् ने उस लौटती औरत
की पीठ की आर भी न दखा ताकि जाने या अनजाने उस औरत की खूबसूरती को
सराहता वह अपनी डबिया की कीमत न बमूल कर रहा हा । यह एक छोटी-सी बात ह

एक गीत का जन्म

पर इतना बारीक खयाल एक बड़े कलाकार का ही आ सकता है ताकि उस के व्यक्तित्व के वृत्त में जरा-सी कसर भी न रह जाये ।

एक वह समय था जब मैं ने 'कम्पन' नज़्म लिखी थी

घरती को आज घत तोड़ना है
दिल का थाल बने परसूँ
गीता का धान कूटते हुए
कापने लगी ओखली ।
किस्मत ने ह रुई पिजाई
ज्यो-ज्या चरखा गूँज सुनाये
कांप रही है प्राण जुलाहिन
कांप रही है तकली ।

आज गगन की सीढ़ी कापे
तारे उतरे एक एक कर
मन के बिन महला में सहसा
मची हुई है खलबली ।

बिस पापी ने तीर चलाया
इश्क का जगल सहम गया है -
डरती और कापती हुई भाग गयी है
यादों की भूमावली ।

मुझे याद है कि इस कम्पन से घबराकर मैं उस रात खलाल ज़िबरांन पढ़न लग गयी थी, पर खलील ज़िबरांन का कोई भी बाल मुझ तक नहीं पहुँचा था । और मैं हारकर किताब का जब बन्द करने लगी तो खलील ज़िबरांन ने कहा था 'अगर मेरे अन्दर आज तुम तक नहीं पहुँच रहे तो कोई बात नहीं—कभी फिर सही । मैं शिकवे की हालत में थी । मुझे किसी से कोई शिकवा नहीं था, अपनी प्यास से शिकवा था ।

दा बप बीत गये, मन का हालत कुछ इस तरह ही रही

रात जस पीतल की बटोरा है
चाद की सफ़द कलई उतर गयी
आज कल्पना बसरा गयी है
और सपना बडवा गया है ।

इश्क की दह ठिठुराती जाये
गीत का कुरता बसे सीमे

अमृता प्रीतम की छेष्ट रचनाएँ

खयाल का टाँका खुल गया है
कलम की सुई टूट गयी है ।

आत्म-परिचय का यह वही लम्बा रास्ता था जिसे पाल पॉटम भी काट रहा था

तू ने इसलिए यह शराब न पी
कि गिलाम सु दूर नहीं था ।

उस औरत की उपस्थिति में
जिसे तुम प्यार करते हो
ईश्वर इस धरती पर विराजा लगता है
पर अगर वह औरत कभी तुम्हें प्यार करती हो
तो क्या होता है, यह मुझे पता नहीं—
क्योंकि मेरे साथ कभी यह घटा नहीं ।

शहर की गलियाँ मैं अकेले घूमने
मैं कई बार गलियाँ के नुक्कड़ा पर
उसी औरत को देखता हूँ—
जिसे मैं प्यार करता हूँ
वह भी अकेली होती है, नितांत अकेली
और उस आदमी को खोज रही होती है—

हम भरे समुद्र में
उन दो जहाजों की तरह होते हैं
जो अपने अनचाहे दिलों के झण्डे
एक पल के लिए एक-दूसरे के आगे झुकाते हैं—
और फिर एक-दूसरे के पास से गुजर जाते हैं ।
इस तरह एक दूसरे के पास से गुजरते जहाज
एक दूसरे के बदरगाह नहीं बन सकते ।

किसी उस से प्यार करना
जो तुम्हें प्यार न करता हो
किसी उस देश का नुमाइन्दा बनना है
जिस मुल्क का अस्तित्व ही कोई न है ।

कभी गुजरा तो शायद इसी राह से ही होगा, पर अब खलील खिवरान बहुत आगे पहुँच चुका था दिक्कत नहीं देता था । दूर वही से उस की आवाज आयी “मैं तुम्हें इनकार की राह नहीं पकड़ने दूँगा । पूर्ति की राह की आर आओ । यकान तुम्हें नहीं रास आयगी । इस थाह को पाना पड़ेगा । और वह भी हँसते होठों से ।” यह

एक गीत का अन्त

विराट् अन्तर का आवाज थी, इसलिए गिकवे की आँखें नीचे झुक गयी। वह थक भी घटुत गया था रास्त म ही रह गया। मैं उम में मुक्कन हावर आगे चल पडी। और देखा, पाल पाटस भी आगे चल रहा था।

पाल कह रहा था

अगर तुम किमा उम औरत स प्यार करते हो
जो ओग्त तुम्हें प्यार न करती हा
उम ममय एक् ही ईमानदार बात हो सवती ह
कि तुम दूर चले जाओ
दूसर गहर म, दूसर दग में दूसरी दुनिया में
वही भी चले जाओ।

पर जिन्दगी का वास्ता ह चले जाओ।
तुम चाहे पूरी तरह टूट जाओ
पर उम न यह देखने दना।
वह तुम्ह एक भित्तारी बना क्या देने
वह जा तुम में एक् बादगाह लग गवती थी।
अगर मुने अपनी सागी जिन्दगी का
एक् शब्द म वणन करना हा
तो मैं कहूंगा एकासीपन
और फिर इस शब्द का दोहरा दूँगा।

अपने अगले रास्ते के गीत को मैं इसी लिए एक गीत का जन्म नहीं कहती एक अवस्था का जन्म कहती हूँ जिस अवस्था में एक आशिक उम चारपाई पर भी निश्चित होकर सो सकता हूँ जिस के चारा पाये हात्मा के बने हा, और जिस चारपाई को पीडाआ की मूँज ने घुना हो और इस चारपाई पर सनेवाला मुहब्बत की आग का हुक्के की पालतू जाग की तरह अपने सिरहाने रखकर सो सकता हूँ।

इस अवस्था की देन हूँ कि एक दिन जय मैं ने सामने देखा खलील जिब्रान ने अपने हाथ म पकड़ा हुआ जाम अपने माथे से भी ऊपर उठाया और फिर एक लम्बा घूँट भरा, मेरे नाम पर, पाल पाटस के नाम पर, और आप सत्र के नाम पर जा अपनी जिन्दगी के जाम को अकेले पी रहे हूँ।

मुने अपने जाम से अपने खून का और अपने आसुआ का स्वाद आता हूँ इसी तरह, जमे आप का अपने जाम से अपने खून का और आसुआ का स्वाद आता होगा। पर आज मैं प्यास की इस सोगात के लिए जिन्दगी का गुक्र कर सकती हूँ अपनी ओर से भी और आप की ओर से भी, क्योंकि इस प्यास के बिना मेरा या आप का दिल उस सूखे हुए समुद्र का फिनारा बा जाता जिस म न कोई गीत हाता ह और न कोई लहर।

दुब्रोव्निक (छब्बीस थियेट्रो का शहर)

शायन हलकी-सी घुघ का जादू था कि राम से यूगोस्लाविया जाते हुए राह का सागर और आममान, एक दूसरे में अपना रंग मिलाकर कुछ पला के लिए एक हा भये लगते थे, अहसास होता था कि आधा आसमान पैरा के नीचे ह आधा मिर के ऊपर। या आना सागर के नीचे वह रहा है और आधा मिर के ऊपर।

हेनरी मिलर के लिए उस के एक समालोचक ने कहा था कि वह किसी पारदर्शी ग्लेस मछली के पेट में पड़े हुए उम इनमान की तरह ह जा अपनी जगह से हिल नहीं सकता, पर मछली के पेट से बाहर जा कुछ घटित हो रहा ह उस देख जरूर सकता ह। देख सकता ह और लिख सकता ह। यह केवल हेनरी मिलर का नहीं, हर लेखक के भीतर के हेनरी मिलर का भुगता हुआ अहसास ह। चिह्नात्मक मछली के पेट में पड़े होने का अहसास हम सब जानते ह, पर जिन पलों की यह बात कह रही हूँ, वे पल पिछा की मन्द से मिफ आदर की ही नहीं, बाहर की हकीकत भी बने हुए थे।

आखों के सामने मिफ अपना अस्तित्व था—जिस्म के हाथ सिफ इसी तक पहुँच सकते थे पर साच के हाथ बहुत लम्बे होने ह, वह इस अस्तित्व का दुनिया के उस सब कुछ में अपना मम्ब-ब ढूँढ रहे थे, जो 'सब कुछ' इन्सान का पकड़ म आ सकनेवाली बहुत खूबसूरत घटनाओं की श्रवण में भी घटित होता ह, और भयानक घटनाओं की श्रवण में भी।

सागर की हरी नीलाहट कितनी शायराना ह, पर मैं क्या करूँ मेरी आँखें उस पतली कोमल और जलमिलाती मतलब के नीचे जाकर उम सतह के नीचे पड़े हुए मगरमच्छ भी देख लेती ह —मेरे हाथ के पास पानी हुई साज की एक किताब का एक पान मोच रहा था, और मेरे साथ की सीट पर बठा हुआ एक बुजुर्ग चेहरा मुझे कह रहा था, मैं इजराइली हूँ, हम ने पीली दर पीली जीने की अदोजेहद की ह, पर अभी थमा हुई अरब लोगों के साथ हमारी लड़ाई बना उदास हादसा ह। हम जीना चाहते हैं—मरना और मारना नहीं चाहते, पर इस 'पर के पीछे जा कुछ ह यह कहने की जरूरत नहीं थी। पिछले दिनों में एक नरम लिखी थी—“इजराइल का ताजी मिट्टी और अरब की पुरानी रेत जब खून में भीगती है तो उस की गंध स्वाहम-स्वाह महान्त के जाम में डूब जाता ह।”—वह इजराइली भी एक सामोश-सा जिन्न इसी 'स्वाहम-स्वाह' का कर रहा था। इजराइली लोग की मेहनत और अक्लमन्दी में किसी की शक नहीं, पर लोगों की घरता छीनकर, अरबवागियों को हमें के लिए उन के

दुब्रोव्निक (छब्बीस थियेट्रो का शहर)

विभाधी बना दना वह 'पर' हुआ सागर की हरी और नीली सतह के नीचे एक मगरमच्छ का तरह पड़ा हुआ है।

हलकी धुंध का जादू था या रंगों की साजिश, या मेरी अपनी नज़र का कुछ। पल लम्बे होते गये। किसी ह्वेज मशीन के पेट में पड़े होने का अहसास तीव्र होता गया। बाहर जो कुछ हो रहा था भयानक घटनाओं की शक्ल में भी दिखता रहा और खूबसूरत घटनाओं की शक्ल में भी। कल हिंदुस्तान से आत समय एक अखबार के नुमांन्दे ने एक सवाल पूछा था 'इस पादशह जगस्त को हम ने पिछले बीस सालों की समालोचना करनी है इन बीस सालों में हम ने क्या कुछ पाया, और क्या कुछ पाने से रहे गया? तुम्हारा क्या जवाब है?' जवाब दिया था सब से बन्दर जो कुछ पाया है वह इसी सवाल का अस्तित्व है। यह सवाल एक लेखक से आज्ञा दश में हा पूछा जा सकता है। लिखने की बोलने की और सोचने की स्वतन्त्रता हम ने पायी है। जो नहीं पाया वह यह है कि इस के काबिल उतरनेवाला जवाब नहीं पाया। मोरें विंगल हुए थे पर इन्हें इस्तेमाल करनेवाले हाथ देश की समूची कमाई के लिए मिलकर आगे नहीं हुए बल्कि जल्दी में उन्हें अपने अपने दायरे में समेटने के लिए सिंकुड गये हैं, जिस का नतीजा है दिन पर दिन बन्ती हुई कीमतें, और दिन पर दिन निरसाह हानि हुई जिंदगी। पर इस सब कुछ में भी यह आस बची है कि शायद यही सब कुछ किसी दिन लम्बाकर बत जायगा और आज भी सोच रहा थी—हिंदुस्तान का परदेशी मुल्को से सांस्कृतिक आदान प्रदान केवल दसी आज्ञा की देन है। हम अपने मुल्क की सत्त लफ्फा में जालाचना करते हैं क्योंकि हमारे सपने उस के साथ जुड़े हुए हैं—मिफ उमी के साथ जुड़े हुए हैं और वह हमारी जालाचना को सहता है क्योंकि यह अपनत्व का तकाजा है। यही अपनत्व हमारी कमाई है।

फाम इण्डिया?' दुर्गावतनिक के एयरपोर्ट पर जब मेरे मेज़बानों ने पूछा, तो सब से पहला गुरु मेरा जितनी के साथ यही था कि आज मेरा मुल्क आजाद है, और मैं एक आज्ञा मुल्क के लेगक की हसियत से यहाँ खड़ी हूँ।

दुर्गावतनिक बिल्कुल सागर के किनारे सर और छाड़ के पेडा से लदी एक वाली है। गहर का घेरा मिफ दो किलोमीटर है पर इस दो किलोमीटर का चौगिरदा मीला तक सफ के पडा से फग हुआ है। यूगोस्लाविया छह रिपब्लिक्स में बँटा हुआ है यह दुर्गावतनिक क्रोएशिया रिपब्लिक की हद में है। इस के उत्तर और पूव में पहाड़ हैं दक्षिण और पश्चिम में सागर।

गहर की घेर में लेनेवाली पुरातन दीवारें २१२१ गज लम्बी हैं और इन दीवारों का भातरी हिस्सा १७७२९९ गज है। ये सब काई बत्तीस गाव हैं। और कुछ आवासीय साठ हजार हैं। लेनिन तेईम हजार की शहरी आबादी में सब काई छह हजार लोग पुरातन दीवारों के भीतरी हिस्से में रहते हैं बाकी साथ लगती बस्तियों में।

इस शहर की जहाजा तिजारत बहुत पुरानी है। वाग्वम के नये बूटे अमरीका

मैं सब से पहले इसी शहर ने तिजारती जहाज भजे थे। इस शहर की बढ़ती अमीरी के साथ जहा इम के लागा को अपना शहर दुनिया के बहुत खबसूरत शहरों की तरह बनाने का बलबला पदा हुआ वहा जिन्दगी की अमारी का मनाने के लिए उन्होंने नाच, नरम और नाटक भी बड़े उत्साह से अपनी जिन्दगी में शामिल किये। कोई बता रहा था, “दुआवनिक के ताले दुनिया में बहुत मशहूर ह। और मैं हंस रही थी, ‘ताले भी और नाटक भी। ताले बमायी हुई दौड़त का समालने के लिए और नाटक जिन्दगी के वन्द भेग को खालने के लिए।’ कहा जाता ह कि पराने बक्तों में भी कोई मेला या व्याह नाच और नाटक के बिना नहीं हो सकता था। इस समय इस शहर में छावास ओपन एयर थियेटर ह। हर साल नाटकों का एक समर फेस्टीवल मनाया जाता ह। वैसे भी इस शहर की कमाई का गुरु से समदरी राजी कहा जाता ह। तिजारती जहाजों की कमाई के अलावा, इन के किनारे जो अमरीकन फामीनी, इतालवी और जर्मन लाग गरमी की छुट्टिया मनाने आते ह, उन से हुई कमाई भी इस की ‘समदरी राजी’ में शामिल ह। हर साल लाकभौतों और नाटकों का मेला भा परदेशियों के लिए आकर्षण का एक कारण है। यह मेला काइ डेड महीना लगातार मनाया जाता है।

मेला के प्रबंधकों की तरफ से दिया गया सुनहरी बज त्रिवरतास अपनी कमीज से टागकर, इस लफ्ज स्वतंत्रता के साथ धरती के इस टुकड़े का पुराना इश्क भा दख सकती थी। जत्र नेपोलियन ने इस का अपनी जीत में शामिल कर लिया था और फिर नेपोलियन की मौत के कुछ सप्ताह बाद आस्ट्रिया ने ता इस के निहत्ये हुए नौजवान अमीरा ने एक सौगाथ ली थी कि वह बिन-ब्याहे मर जायेंगे ताकि उन की औलाद का गुलामी न देखनी पड़े

शहर के मुख्य दरवाजों के साथ लगन भीतरी दरवाजों पर एक सतर खुदी हुई ह “दुनिया भर के साने के माल पर भी स्वतंत्रता बेची नहीं जा सकती।” यह सतर इस दरवाजों की पाच सौ साला वरमी मनाते हुए सन १९२२ में लिखी गयी थी।

‘हमारे पास छह रिपब्लिकन ह, पाच क्रौमें, चार जवानों, तीन मजहब, दो लिपियाँ और एक लालसा हमेशा स्वतंत्र रहने की—यूगोस्लाव लाग यह मुहावरा अक्सर दाहराते ह। यह ठीक ह कि यह सब कुछ यूगान्स्लाविया का अपना है, पर इस सब कुछ को मुहाबरेबन्द पण्डित जवाहरलाल नेहरू ने बिया था, और इस क लिए वे नेहरू के गुरुगुजार ह

पुरातन दीवारा के घेरे में बाहर बिल्कुल नयी इमारतें ह—पहाड़ों के इद गिद मौला तक पगो शीशों के दग्वाजोंवाली और जिन दरवाजा के सामने देग-देग की बारें पक्तियाँ बांध रखी ह—पर तबारीखी गहर की गलियाँ तवागीख के भारी कत्मा में मगली आज भी बेबल पल्ल चलते परों के लिए खुली हैं। बचे गये के पहाड़ से निरन्तरी छाया गलिया के सिरे चुपचाप उस सागर की ओर तबते गते हैं,

दुमोवनिक (छावास थियेट्रों का शहर)

पानियों को चोरकर इस शहर में बभादुर भी धारियाँ करती थी और
की तलवारों भी

एक सभ्मे के पास बनी व तीन सीढ़िया आज बहुत थकी हुई लगती ह जहा
ही फरमान सुनाये जाते थे—पहला सीढ़ी पर खडे होकर शहरवासिया पर
लगे टैक्स का फरमान दूसरी सीढ़ी पर खडे होकर कोई उस से अहम मामले
जाता फरमान और सब से ऊपरी तीसरी सीढ़ी पर खडे हाकर सब स बडी
ग के एलान जसी—के बारे में सुनाया जाता था । आज इन सीढ़िया के
ही छुप में जो सरसराहट ह लगता ह वह उन लाखा और कराडा सासा में
ह जो गरम सांस कभी इन फरमाना का सुनते हुए लाखा और कराडो
निकले थे

चच के आगनो की छाया उदासी हुई ह । जाने कितने हाया की प्रायना इस ने
इस का छाया में उनीद-स कनूतर हर वक्त बडे रहते ह—शायद लोगा के जुडे
चिह्न बनकर बडे रहते ह ।

इन पुरानी तवारीखी इमारतो क दरीचे और उन क खंडहर और किला की
रियाँ नाच और नाटक खलने के लिए जजाब साजगार ह । पत्थरा और
की आट से निकलते नाटका के पात्र, और पुराने पहाडा वशा में—फूलगार
चाले मोहरा के हार और लाट-काली कुरतियाँ पहने और सिरा पर पटके
निकलती नाचिया, वतमान का हाथ पकडकर उसे बीते समय क घर बुलावा
ती ह ।

इस समय शहर में इना शहर की साल्टवी सदी म हुए एक शायर और
र, भारिन दरयिच के नमय की धूल में ढक गये नाटका का झाड-पाछकर
पढने और उन पर बहस करने के लिए एक सभा बनी ह । अमरीका से भी
हैल्य विनानी आये हुए ह यह बहस एक हुता रहेगी । इस लखक के दा नाटक
शहर में खेले जा रहे ह । एक नाटक परी-कहानी ह । इसे खलने क लिए
विनारे एक पहाडी स्थान चुना गया ह । पेडा का बहुत बडा एक घेरा ह
में स निकलते ऊचे-नीचे कितने ही रास्ते ह । परिया के अलोप हाने क लिए
अ होने के लिए और पेडों पर चढ़ने के लिए, या उन पर पडे हरे पत्ता के
ने क लिए, अजीब कुदरती माहौल ह ।

शेक्सपीयर के नाटक भी बहुत मरुबूल ह । एक पुराना किला इन नाटको का
लिए इतना योग्य स्थान बन गया ह कि वह सिफ शेक्सपीयर के नाटका के
रक्षित रख लिया गया ह ।

ऑयेलो और हमलेट के पात्र किले की लम्बी और जँघेरी सीढ़िया में स
शराखो से लाल्टेन लेकर झाकते, मुडरा पर मशालें लेकर चलते और लकडी
पुरातन दरवाजा के ताले खोलते और बंद करते अपनी पूरी भयानकता स

गंगा का माह जाते ।

समुंद्री बानी के एक आर जल थल करता सागर ह और दूसरी आर मरे मागर (डेड सी) की जीती पसली पहाडा में खुबी हुई ह । बाग का एक हाथ खुला हवेली की तरह गता है, जिस पर कुदरत की खूबसूरती जगमग करती लगती है और बानी का एक हाथ बन्द मुट्ठी की तरह लगता ह जिसे सिफ बहुत होले-होले खाला और जाना जा सकना ह । इतिहास की जद्दोजह्द इस मुट्ठी में बन्द ह

इस बार किसी दस का देखने का मेरा तजरबा बिल्कुल अलग किस्म का है । दुमापिये की जरूरत नहीं, उस के बिना शहर में चल जाता है । हाल्ल शहर क दरवाजे स बाहर हैं, बिल्कुल सागर क किनारे । मेजबानो ने कमरा ले दिया है पर राट्टी खुल खरीदना ह । उस के लिए बह ७,५०० दीनार रोज के मेहमान को दते ह पर साथ यह कहकर, "हमें मालूम ह, यह काफी नहीं होंगे, बडे होटल में दस स रानी महा खरीदी जायेंगो, पर अगर एक बत राट्टी किसी सस्ती जगह स खा ली जाये " और शहर में सस्ता जगह ढूढने के लिए पलातसा के बाजार म और उस में स दायें-बायें निकली पत्थरा की गलियों म घूमते हुए लोगो मे सीधा वास्ता पन्ता है । नये दानार चानू हो गये ह (सौ पुराने दीनार एक नय दीनार के बराबर) पर अभी तक पुगन दीनार में गिनती करनी लारों को आमान लगती ह । वे इसी में कीमत बताते जोर पूछने ह ।

अभी एक बडी उम्र का औरत ने बाह पकड ली था कि मैं उस से बात का बना एक छाटा-सा बैग जरूर खरादूँ । कीमत पूछी, पता चला पाच हजार दीनार । पास कोई लाल घागा के बन्दार थल बेच रहा था । उस का तकाजा था कि मैं एक थल जूट खरीदूँ । कीमत पूछी छह हजार दीनार । मुबह-मुबह चाय के प्याले की जरूरत थी बाजार बहुत दूर था, वम भी वहा चाय नहीं मिलती । इसलिए हाटल म हा चाय पीनी था जिस का बिल १ ४४० दीनार था

राज समर ममाराह के किसी नाटक का टिकट मुझे मेजबान भेज दते हैं वस उस टिकट की कीमत पाच हजार दानार ह सिफ एक शो का ।

देन रही है—सामने चब में माथे से, छाती से और घुटना मे घटते गूनवाली ईसा की पण्डित लगी हुई ह । बाहर दीवार के साथ पीठ टिकाये आज के आर्टिस्ट अपना पार्टस फा पर रखकर बेचने के लिए बठ ह । गिम्नवर्ग की नम याद आ रही ह— दुआ कर मिफ मद जोर औरत के लिए, जा अहसास क बादगाह हाते ह और अपना जीता हट्टिया के ईसा "

शहर की पुगन पथरीला दीवार पर चढकर मारे शहर के गिर घूमना एक अजीब तजरबा ह—दीवार स जरा नीचे पर बिल्कुल पाम लगत घरा का यह एक खल्ल जरूर लगता हागा क्याकि उन के कमरों म बिछे विस्तर मेजों पर पडी रोदिया और आँगनो में सूखन डाले गये कपरा की कतारें दगकों का आँखा के सामने बिछा

दुमाबनिक (छव्योस धियदों का शहर)

आग के फूल आग की लकीर

सागर के किनारे सूख डूबता नहीं लगता, आग का एक लपट पानी में बुझती लगती है। और फिर सागर उम कटारे के पानी की तरह काला-नीला हो जाता है जिस में बहुत-से बौले बुझाये हैं। पर अम्बरी आग बुझती नहीं। कुछ घड़ियाँ ही गुजरती हैं कि आग का वह टुकड़ा मल मलकर पानी में नहाया हुआ, और आगे से भी ज्यादा चमका हुआ, फिर पानी में स निकल आता है। आज कुछ सतरों अनायास हाँठा पर फटकने लगी—

“आग का टुकड़ा मैं ने अभी पानी में बुझाया था
और फिर अभी जलता हुआ पानी में से निकल आया है
शायद तेरा झूठ भी अम्बर की आग है
कि जिसे बुझाने के लिए आज कोई सागर भी काफी नहीं।

सोच रही थी—नरमें आग के फूल होती हैं। ये मनुष्य की छाती में खिलती हैं माये में खिलती हैं और यहाँ तक कि राख की हड्डी पर भी इन के फूल पड़ जाते हैं। और वह मनुष्य एक अमानुषिक हृद तक मनुष्य हो जाता है पर मनुष्य-जाति से बिछुड़ जाता है। यह बिछुड़न उम पर बहर भा करती है और करम भी। वह बाहें पमारकर सारी घरती का गले से लगाना चाहता है पर घरती की खलता फला में नहीं बहलता वह ताकत के और जग के शोख खेला से बहलनी है। और उस का बाहें खिलाव में फैल रहे जाती है और फूल एक एक कर के जिन्दगी की अधहीनता की काली त्वाँ में गिरते रहते हैं

“जो कभी आजकल हमारी वैमना पान्न रहा जाती। वह हमारी बहुत बड़ी शायरा है। दुब्रावनिन का एक शायर लुका पालीऐतक अभी मुझे कह रहा था ‘पर घरती का कोई टुकड़ा भी उम के परा का थाम नहीं सकता। वह कभी किसी गाँव में होता है, कभी किसी शहर, कभी किसी जग में। सारी जिन्दगी उस ने अकेले गुजारी है इसी तरह पैरा में सफर के छात्रे पहनकर

अब पालीऐतक ने उम के खयाल में गाकर उम की एक नरम की कुछ पत्तियाँ पनी

‘आज मैं ने अपनेआप से कहा कि वह मेरी बात सुने ।
मुने वहाँ ले जाये—जहाँ कुछ जाना-बूझना न हो
मिष्ट पाग का वाज्र मुवह-मवेरे रास्ता निगाये

और रात का चाद मेरा पहरेन बुने

आज मैं ने अपनेआप से कहा कि वह मेरी बात सुने ।”

पर कार्द सिफ तब ही तो नहीं होता, जब दिखता ह । वैमना पारन वहाँ थी,
मेरे पास बेंच पर बठी हुई । पालाएतक उस की नरमें पड रहा था

जिस्म सागर के बहुत गहरे पानी की तरह हाता है,

इम में सिफ कुछ मछलियाँ होती ह—

जा बुलबुलाती ह और चमक जाती ह

मेरा दस्क गुफा में से निकलते पानी की तरह ह—

कौन जाने वह कहा से आया जो कहा पहुचेगा ।

अभी अभा रोशनी का पर एक पवत से फिमल गया

जोर पत्ते जो मेरी छाती से उगे, अब छाती पर झर रहे

वह जा इम राह कभी नहीं आया

मैं उसे एक चुप अदब भेज जाऊँगी

और आज मैं एक वजित पीडा गान गाऊँगा ।

इस जिन्दगा का कोई क्या करे जहा सिफ खुशियाँ वजित नहीं हाती पीडा भी
वजित होती ह । क रात ता मेलिआव के पेश किये हुए लोक-नृत्य देखे थे जिस में
मसेडोनिया का एक लोक गीत था

हो मारे सुदरी ! हो मार सुदरी ! मैं वासद बनकर आया

मसमल दे दे, धागा दे दे, मुचे अभा लौटकर जाना

मालिक मेरा विरागी बठा तेरा पहरेन सीता

कहा मे आया कामिद बदा कौन ह मालिक तेरा ?

मैं ने कभी आख न देखा नाम न जाने मेरा

ओ मारे सुदरी ! ओ मोरे सुदरी ! यही तो कहना मेरा

उस ने तरी परछाइ देखा, नाम जानता तेरा

कहते ह बारह दासिया के घेर में कोई सुदरी हमाम की आर जा रही थी कि
एक कपडा क कारीगर ने उस की परछाइ दग ली बुत खयालों म बग गया था,
इमलिए नाप की ज़रूरत नहीं रह गयी थी, उस ने अपने एक शागिद को सुदरी के
पास भेजा था कि उसे सिफ कपडा चाहिए नाप नहीं चाहिए । परछाइयो को भी इस्क
करनेवाले लोगों का कोई क्या कर ? एस लागा का और कुछ नहीं बनता सिफ गीत
बनते रहे ह

एक और नाच का गीत था—

‘ ऊँचे झराखे खडी सुदरी तरकीब बना

गज-गज लम्बे वाल काट के एक रस्मी लटका

एक बार तेरा हार्थ चूम लूँ — ४०

एक बार मैं मुझ तक पहुँचूँ — ४१

“फिर मैंने कहा — ”

“आज, सिर्फ आज, बस एक चंडी जीनेकी काममा करता गीत था रात
तो मल्लिकार्जुन ने बताया था कि वह शायद इस साल के आखिर में अपने लोक-नाच लेकर
हिन्दुस्तान आयेगा वह अफ्रीका की लड़कियों को किसी पञ्जाबी या हिन्दी-गीत की
एक दा पत्निया सिखलाना चाहता था १५ जून की एक बोली में ने उसे याद करवा दी”

“दो दिन घट जिनका पर जिनका मटक दे नाल ”

वह खुश था कि जीने के फलमके से भरी हुई यह मतर उम के किसी लोक-नृत्य में खूब
उतरेगी

और आज इन गीतों की बात करने, और वसना पारन की नज़में पढ़ते हुए
पलीएतक ने अपनी नज़मों के कुछ बक पलटे—

“आज की रात बहुत भारी है

तेरा वदन—सागर के पानी की तरह सितकी और सलेटी

शायद मा ने सागर की तेज पर तुझे कोख में डाला था

मैं ने तेरे हुस्न का एक घूँट पिया ह और दद चखे ह

और इम नज़म का जन्म पीडा की गुफा में हुआ ह

एक मासूम बच्चे की तरह दस ने धरती पर पाव रखे ह ’

“मैं—कोई आधे साल से—

तेरे आँगन के पेड़ की परिक्रमा में खड़ा हूँ

और मेरी जमहारी, सब कुछ जानती, एक गहरी साँस भर रही

और पिछली कोठरी में बँटी चुप गव प्राथना कर रही

आज की रात बहुत भारी ह

रात की छाती में एक सितारी आत्मा

और मेरे सीने में तेर इत्त का दोलत

और एक गीत आज दधे पाव आममान में चल रहा

प्रभात अभी बिलकुल खारी ह

कि अभी उस ने वासना नहीं भुँधी

और तेरा वदन बबिया की तरह मेर वदन पर बरस रहा

चरणों की कमर में पानी का लहंगा है

और मेरी पलकों पर तेरे हुस्न के गाये

और तेरा वदन सगीत की तरह मेरे वदन से ठहर रहा

सितार आँगन की बेर पर अगूर की तरह लगे है

एक बैठक एक दुपहर

एअर रेड की आवाज थी, फिर गिरते हुए बम्ब की, और फिर उस की आग की चमक देखकर, हरानी से मस्त हुए बच्चा की आवाजें मम्मी ! क्राम बम्ब, डैडी ! क्रीम बम्ब !' और फिर बम्ब के पटने की आवाज, जीर बच्चा की वे आवाजें जो मुरदा मा, और मुरदा बाप के सीने से लिपटकर रो रही थी, मम्मी ! आई डोण्ट लाइव क्रीम बम्ब, डैडी ! आई डाण्ट लाइव क्रीम बम्ब !

बमरे म वह टेप लगा हुआ था जिम में कुछ दर पहले, एक अमरीकन शायर माइकल ने मेरे घर आकर वियतनाम पर लिखी अपनी नज़म गायी थी ।

शिव के हाथ म स चाय का प्याला गिरते गिरते बचा । हलवे की भरा हुई प्लेट को एक तरफ सरकाने हुए कहने लगा ' दीदी ! कुछ भी गले से नीचे नहीं उतरता, यह नज़म सुनकर कुछ भी नहीं खाया जायेगा ।

सब के गले में इस नज़म का धुआ था । और सामें कडवी होती चली गयी अब टेप पर एक अमरीकन लम्बी जौनवेज़ गा रही थी, 'हम मरे हुआ की गिनती नहीं करते जब खुदा हमारी तरफ ह' जौनवेज़ की आवाज हमार काना म चुभ रही थी दिला का टीस रही था । उस का यग्य तेज़ छुरी की तरह मार कर रहा था

मैं जिस देग म रहती हू खुदा उस की तरफ ह
ताराख बतायेगी—खून बतायेगा
कि घोडो के दस्त भागते हुए गुजर
औ रेड इण्डियन कुचले गय
फिर घरेलू जग औ शहीदा क नाम मुझ जबानी याद करने पडे

हाथ म बट्टकें साथ खुदा खडा हुआ
पहली जग आयी गुजर गया,
औ जग क कारण का मुझे आज तक पता नहीं चला ।
पर मैं न उसे स्वीकारना सीख लिया ह,
वह भी गल्लर से
मरे हुआ की गिनती नहीं करते जब खुदा हमारी तरफ ह
फिर दूसरी जग भी आया, औ गुजर गयी

हम ने जरमना का माफ कर दिया, और उन्हें दास्त कहा
 भले ही उन्होंने साठ लाख लाग कत्ल किये थे
 अब जरमन भी हमारे साथ है,
 और खुदा उन को तरफ है
 मैं ने महान् रूसियों से नफरत करना सीखा
 औ यह भी कि हमें उन से जरूर लड़ना है
 अब हमार पास बड़े हथियार हैं, हम उन पर चलायेंगे
 आप सवाल मत पूछें, पूछ नहीं सकते ।
 मैं ने क्यों यह बात सोची है
 ईसा मसीह राया, ता हम ने एक चुम्बन से उसे दगा दे दिया
 मैं कुछ नहीं कहती, आप सोच ।—खुद साचें
 मैं बेहद थक गयी हूँ—
 मैं ने, जो दुविधाएँ जानी ह
 वक्त उन का पता नहीं द सकता
 शायद मेरे मस्तक में जमा हाते हैं,
 औ फिर जमीन पर फिमल जाते हैं
 मगर खुदा मेरी तरफ ह—ता जग नहीं हागी नहीं होगी

शिव ने हवा में बाजू पहराया, “ऐसी आवाज कभी नहीं सुनी, कभी नहीं
 सुना, मैं मर गया ’ जौनवेश की आवाज में सीना काल लिपटे हुए प्रतीत होने थे—
 काल, जा लागो के खून में भीगता रहा । काल, जा लागो के खून में भीग रहा ह ।
 और काल, जा लागो के लहू में भीगता रहेगा, तब तक, जब तक खुदा सचमुच इस
 आवाज की बगल में आकर नहीं खड़ा हो जाता, और हर उस आवाज के पहनू में
 नहीं खड़ा हो जाता, जा जिन्दगी के लिए तड़प रही है

मेरा बेटा एक टेप उतार रहा था, एक लगा रहा था । वह किंग लूथर के दंग
 का गीत सुनाना चाहता था यह आज हमारा नहीं पर बल्क हमारा होगा । ’ टेप में
 से आवाज आने में देर लगी ता शिव का सन्न बावू में न रहा । उसे बताया गया कि
 टेप उलटा ह, यादा देर लगेगी, शिव ने हुरान होकर टेप की तरफ दगा, “अभी यह
 सोचा था, अभी उलटा बस हो गया ?”

मेरा बेटा हँस पड़ा—‘अबल ! यह तकनीकी बात ह ।”

“इसी तकनीक का तो मुझे पता नहीं चल सका,” शिव मन की आग से पिघला
 हुआ था । बहने लगा ‘मैं मुहब्बत को हमेशा गोपी रखता रहा, पर वह हर बार न
 जाने किंग वज्र उलट जाती था अच्छी भंगी आवाज न जाने वहाँ गुम जाती थी”
 फिर मैं बजाता कुछ था, बजता कुछ था, ”

टेप में बिग लूथर के दश का गीत अभी नहीं मिल पाया था—बि अमरीकन मछुआ का गीत बज उठा, “मद का जन्म मेहनत करने के लिए हुआ है, औरत का रोने के लिए”—गीत के मछुए समुद्र में डूब जाते हैं, और किनारे पर उन की औरतें राती हैं

‘दीदी ! हम सब इस गीत की तरह, आधे समुद्र में डूब जाते हैं और आधे किनारे पर बड़े रोते रहते हैं,’ शिव की आवाज दाशनिक् हो उठी, “शायर के दिल में मद भी हाता है, औरत भी । वह मद की तरह मेहनत करने के लिए जन्म लेता है, और औरत की तरह रोने के लिए ”

सामने मेज पर ‘अफरो एशियन राईटिंग्स’ का नया अब पड़ा हुआ था । शिव कभी अपनी कापती हुई उँगलियों में दबे हुए सिगरेट को जलाता और कभी सामने पड़े अक के पन्ने पलटता संभलने की कोशिश में था बि अचानक बोल उठा, ‘यान हे मिल गयी बिद्यतनामी शायरा यान हे की नये अब म तसवीर भी थी और नज्म भी ।

‘सुना दीदी !’ शिव ने यान हे की नज्म पत्नी शुरू की, “सन्तरे के पेड़ो पर मैं जब चिड़िया की चहक सुनती हू, तुम याद आते हैं और मेरे हाथ म से चरखे की हत्थी छूट जाती है । मैं इस तरह तुम्हारा इन्तजार कर रही हू, जसे सन्तरे का पेड़ फल लगने का इन्तजार करता है

यान हे के हाथ म से चरखे की हत्थी फिसली ता शिव के हाथ म से उस का अपनाआप फिमल गया । उस की आवाज पहले गले में काँपी फिर दीवारो से टकरायी, मैं और सूरज फिर घर के पीछे चले जाते हैं, उसे घर की मरी हुई धूप दिखाता हूँ ’

पाकिस्तान की रेशमा ने जसे शिव की बात का साथ दिया टेप म से उस की आवाज बिलख पड़ी ‘हाथ आए रब्बा ! नहींआ लगदा दिल मेरा ’ (हाथ खुदाया ! मरा दिल नहीं लगता)

देखो दीदी । रेशमा की धूप भी मरी हुई है, यान हे का धूप भी मरी हुई है जौनबेज की धूप भी मरी हुई है, माइकल की धूप भी और दीदी ! तुम्हारी धूप भी मरी हुई है । तुम ने जस लिखा था—मैं थी रात थी, स्यालो की गाराब थी, और बड़े दोस्त पर एक कोई वह था जा बहुत बार बुलाने पर भी नहीं आया था ” और शिव ने कापकर पूछा, “यह जो एक होता है वह कहाँ होता है ?

इसी एक की ता सारी बात है शिव ?” मैं ने शिव को गरम चाय का प्याला दिया और कहा ‘यह एक अपनाआप भी है अपना महबूब भी, और जगह-जगह पर व्यथ मर रहे लागो की साँस भी ’

शिव को डेढ बजे की गाडी पकडनी थी, डेढ बज चुका था, गाडी जा चुकी

थी। वक्त अपनी रपतार चला जा रहा था, सिफ़ शिव मरी हुई धूप के पान बठा हुआ था और रेशमा उस लाश के सिंगहाने थी घान हे बेहद उदास थी माइकल बहुत चुप था और जौनवेज़, उस लाश के पास खड़ी व्यग्य से कह रही थी, “हम मरे हुआ की गिनता नहीं करते ”

और मैं—हम सब—इ तज़ार कर रहे थे कि खुदा नचमुच कब हमारी तरफ़ हागा ? ?

इतालवी धरती

वैसे तो हर देश एक नरम की तरह होता है, जिस के कुछ अक्षर सुनहरे रंग के हो जाते हैं और उस की आवृत्ति बन जाते हैं। कुछ अक्षर उस के लाल हो जाते हैं, उस की अपनी या बेगानी बद्धका से लहू लुहान होकर। और कुछ अक्षर उस की हरियाली की तरह हमेशा हर रहते हैं जिन में से उस के भविष्य के नये पत्ते फूटते हैं और इस तरह हर देश एक अधूरी नरम सरीखा होता है। पर इतालवी धरती की छुआ तो लगा—जैसे एक नरम के पूरे या अधूरे होने के अमल का बड़ा प्रत्यक्ष दख रही हूँ। इस धरती के चप्पे चप्पे पर सगमरमर के बुत ऐसे लगते हैं जमे इस धरती में से बुत उगते हैं। लगा—नरम के जो अक्षर खाना में गिर गये वे सगमरमर बन गये, और जो अक्षर धरती में बीजा की तरह पड़ गये वे माइकल एंजेलो व तथा और कलाकारों के हाथ बनकर उभ पड़े और इन सफेद अक्षरों के इतिहास से लाल खून से रंगे अक्षरों का इतिहास भी बहुत लम्बा है—जब स्पार्टेक्स जस हजारों गुलाम शासक रोमना की तमांगबीनी के लिए एक दूसरे की जान पर खलते थे

और इस नरम के अक्षर पीले भी हैं—सौफज्जा—पोप के बंटीकन शहर की ऊँची दीवारों से टकराते और गुच्छा होकर खुद ही अपने अगा में सिकुड़ जाते। इतालवी धरती एक ऐसी होनी की धरती है जहाँ कई अक्षर उस के हरे जंगल की तरह भविष्य की शाखाएँ भी बन गये हैं—और कई अक्षर हमें के लिए खो भी गये हैं—शायद पहली बार तब खोये थे जब 'निवाइन कामेडी' का दान्ते जलावतन हुआ था और उस के साथ व भी जलावतन हो गये थे

और इस नरम के कुछ अक्षर व भी हैं जो किसी सैलानी से नहीं पड़े जा सकते—यह सिर्फ लिनार्दोडिबेन्सी की मोनालिसा की तरह मुसकराते हैं—रहस्य भरी मुसकान !





विश्व प्रसिद्ध उपन्यासों के

दुनिया के कुछ नावियों के वे पात्र बिन के अस्तित्व को,
लगा, मैंने किसी घड़ी बहुत पास से छूकर देखा है,
सिक्के छूकर नहीं उनके बच्चे में से गुटरकर भी
उनकी कुछ सीमें अपनी छाती में दबलकर
और उनके होठों की बात अपने होठों पर रखकर।

—अमृता घोष

मै राशेल	४०१
म लिडिया	४०४
मै मारिया	४०६
मै यलाश	४०८
मै गैदी	४११
म लैना	४१४
मै बैथरान	४१७
मै राधा	४२०
म मैलरा	४२२
मै पटना	४२६

मै राशेल'

बिनसट। एक दिन तुम ने अपने मन की सारी पीड़ा का एक वाक्य म समेट कहा था—अगर तुम अपनी बनायी तसवीरा को कभी मुँ ही खरीद सकने—तुम्हें मालूम ह इस जमे किमी एक वाक्य के पीछे बहुत बड़ा इतिहास होता है। इस इतिहास में वे सपने हाते ह जो हमारे अधूरेपन को हमेशा एक शीशे के सामने बिठा दते ह। इस इतिहास में वे सब हादसे हाते ह जिन से बँधे हुए हमारे पाव हमेशा अपनी उँगलिया पर से लहू पाछने रहते ह। और इस इतिहास में हमारा वह सारा अस्तित्व होता ह जो स्वय में पूरा होने के लिए बिलखता रहता ह—मेरा अस्तित्व भी अपने इतिहास को समेटे हुए ऐसा ही एक वाक्य बना हुआ ह कि अगर मैं अपने हाठों में रकी हुई बात अपने ही काना का सुना सकती—पर जिस तरह अपने बनाये हुए चित्र काई खुद नहीं खरीद सकता, अपने होठा की बात काई अपने काना को नहीं सुना सकता।

बात सुनने के लिए कान किसी दूसरे के चाहिए, पर कान ही तो नहीं ह। तुम्हारे पास कितने प्यारे कान थे, छाटे-भे गोल मे। मेरी उँगलियाँ सदा तुम्हारे कानों से खेलती रहती थी। तुम ने मुझे कहा था कि मेरी उँगलिया गुंजा थी और जब तुम्हारे काना को छूती थी वे गुटर गुँ गुटर करती थी। और इसलिए तुम ने मेरा नाम कबूतरी रख दिया था। मैं तुम्हारी वही कबूतरी हूँ तुम्हारा राशेल।

तुम अपन जिस्म की जिस जहरत का लेकर मेरे पास आय थे, उस जहरत का पूरा करने का कीमत सिर्फ पांच फ्रक थी। तुम ने पांच फ्रक सराय के मालिक को पिये और घन्टी भर के लिए मुझे खरीद लिया। तुम न लाल शराब की एक बोतल भी खरीदी थी। मैं भी शराब की तरह एक वस्तु थी। तुम ने अपने होठा से शराब का थूट भी भरा और मेरे जिस्म की गाँध का भी।

पर औरत जब वस्तु बनती ह, उस का कितना-कुछ ऐसा भी बाँकी रह जाता ह जो कि वस्तु नहीं बनता। मैं तुम्हें राज चाहिए थी पर तुम्हारे पास रोज पांच फ्रक नहीं हाते थे, इसलिए तुम उदास हो जाते थे। मैं तुम्हें कहा करती थी—तुम रोज मुझे पाँच फ्रक न दिया करा, उन के स्थान पर मुझे अपने काना से खेल लेन दिया करा। यन्तु की सिर्फ पाँच फ्रक चाहिए थे, पर यह बात वस्तु ने नहीं कहा था उस कितने कुछ ने कही थी जा वस्तु बनने से बचा रह गया था। यह वही कितना-कुछ था जो मेरे

१ इविन स्टोन के उपन्यास 'लस्ट फॉर लास्ट' में एक विश्वरार निरस्त वानपाग की एक प्रेमिका राशेल।

होठों से निकलकर तुम्हारे कानों तक पहुँचना चाहता था ।

मुझे मालूम था तुम ने गुरु से ही मुझे एक वस्तु की तरह जाना था । तुम ने सराय के मालिक का पाच प्रक दाने से पहले मुझे दखना चाहा था । मैं तुम्हें छाती से बच्ची लगी थी—पर मैं ने तुम्हें विश्वास दिलाया था कि मैं सालह वष से काम नहीं था । गस की पीली रोशनी मेरी पीठ की ओर थी मैं पीछे दीवार की तरफ सरक गयी थी और गस की बत्ती को ऊँचा कर मैं न उस की राशनी अपने चेहरे पर पड़ने दो, ताकि तुम मुझे अच्छी तरह से देख सको । तुम वितनी ही दूर मेरी नीली आँखा में देखने रहे और फिर अपनी आँखों से मरी गरदन और छाती को मापते रहे, और फिर तुम ने फसला कर लिया कि मैं बहुत सुंदर हूँ ।

‘मैं तुम्हें कसा लगता हूँ ? तुम ने मुझ से पूछा था ।

मैं तुम्हें रोज़ गली में से गुजरते हुए देखा करती थी । तुम अपनी पीठ पर एक बग़ा-सा थला लिये हुए होते थे । तुम मिर पर हट नहीं लगाते थे और मैं राग सोचती था कि तुम्हारे सिर को बड़ी धूप लगती होगी । धूप के कारण तुम्हारा आँखा में लाल डारे बिचके हुए होते थे । तुम मुझे बड़ अच्छे लगते थे । लग तुम्हें दीवाना कहत थे और तुम्हें मज्जाक में ‘फाऊ राऊ’ कहकर बुलाते थे ।

तुम जब मेरे छोटे-से कमरे में आकर मेरी चारपाई पर बैठ गये तो मैं ने दीवार से टगी हुई अपनी दोनों गुडियों को उतारकर तुम्हारी बाँहा में डाल दिया । सराय में आने से पहले मैं अपने गाव में इन गुडिया के साथ खेला करती थी अपना सहेलिया के साथ ‘घर घर खेला करती थी सराय में घर पर नहीं खेला जाता । जो भी आदमी पाँच प्रक दवर आता है वह सराय में आने समय घर का सपना अपने साथ लेकर नहीं आता । पर तुम्हें देखकर मेरा घर घर खेलने का मन हुआ था ।

तुम मेरा दोनों गुडिया को दाना हाथों में पकड़कर हँसने लगे तो मैं ने तुम्हें कहा था— मैं इन गुडियों की मा हूँ, तुम इन गुडिया के पिता । मेरी बात तुम्हारे कानों में से गुजर तुम्हारे दिल में उतर जाये इसलिए यह बात कहत हुए मैं ने तुम्हारे कानों को चूम लिया था । मेरा दीवाना मेरा फाऊ राऊ मैं तुम्हारे कान चूमत हुए तुम्हारे कानों में कहती रही थी ।

तुम्हें याद है जब तुम न पीला काटी के आधे भाग का किराये पर ले उस में अपना स्टन्डियो बनाया था, और पहले दिन छोटग-सा स्टोव खरीद तुम न उस पर अपने लिए खाना बनाया था तो तुम्हारे पास चम्मच बाई नहीं था । राटी ग्राते समय तुम ने मास की त्ततरी में से मास का टुकड़ा निकालने के लिए अपन ब्रग का उल्टा कर, उस की डण्डा को चम्मच बना लिया था । उस दिन तुम्हें अपना राटी में अपने रंगा की गुगलू आती रही थी ।—पर तुम्हें यह मालूम नहीं कि तुम जब शाम को मेरे कमरे में आ मुझे अपनी बाँहों में बीच लेत थे ता मेरा अन्दर-बाहर तुम्हारे रंगा की गुगलू में भर जाता था । तुम चले जाते थे तो मुझे सारी रात अपने गरीर में मैं तुम्हारे रंगा

की सुश्रू आती रहती थी। मैं साबुती थी, तुम्हें किसी दिन अपना वह सपना भी सुनाऊँगी जिस में से, जब मैं सो जाती थी, तो तुम्हारे रंग की सुश्रू आती था।

और जब तुम्हारा चित्रकार दोस्त पाल गौगा तुम्हारे पास रहने के लिए आया था, एक रात उस ने भी तुम्हारे साथ उस सराय में आना चाहा था तो मुझे मालूम हुआ कि तुम ने उसे समझा ताकीद की थी—'तुम सराय की कोई लड़की चुन लेना, पर राशेल को नहीं चुनना। राशेल सिर्फ मेरे लिए है' तो मैं ने समझा कि मेरे मन की बात तुम्हारे बानो तक पहुँच गयी थी। और मैं अपनी गुड़िया की तरह इस पटाके जमी बात के साथ भी खेने लगी कि मैं सिर्फ तुम्हारे लिए थी।

"अब तुम मुझे प्यार नहीं करते" मैं ने एक अधिकार से तुम्हें उलाहता दिया।

"तुम यह कैसे कह सकती हो, मेरी बबूतरी!" तुम ने मेरी गरदन पर अपने हाथ रख मुझ से पूछा था।

"तुम कितने दिन मुझे मिलने नहीं आये, तुम ने मुझे भुला दिया है। मैं ने बड़ लड़ से तुम्हें तगा मारा।

"मैं अपने दोस्त के लिए घर सजा रहा था। उस के स्टूडियो में फूँ लगाता रहा, बाहरली दीवार का मैं फिर पीला रंग करता रहा—पर तुम्हें मैं हमेशा याद करता रहा हूँ" तुम ने मुझे बताया।

"तब भी अब तुम मुझ से दूर थे? मैं ने इठलाते हुए पूछा।

"तब भी तुम ने मुझ विश्वास लिया।

"यह अपना बान मुझे दे दा मैं ने हीले से कहा जोर मेरी उँगलिया मेरे हाथ की तरह तुम्हारे बानो के पास गुटर-गूँ, गुटर गूँ करने लगी।

और फिर एक दिन सापहर का समय था। जाने क्या सूरज चढ़ा था, कण कण झुलसा जा रहा था। तुम सिर पर तोलिया बाँधे आये और मेरे हाथों में कागज की एक पोटला पकड़ा कहन लगे—'मैं तुम्हारे लिए एक चीज लाया हूँ।'

मैं ने उस चीज के गिद लिपटा हुआ अखबार का कागज खाला। उस के अंदर एक ड्राइंग-पेपर था, उस के अंदर एक और और उस के अंदर तुम्हारा बड़ा हुआ बान पड़ा हुआ था—आगे मुझे कुछ मालूम नहीं। जब मुझे होश आया, मैं ने देखा कि मैं सीलियो के नीचेवाले पत्थर पर गिरी पड़ा थी।

तुम मेरे पास सँगा चुके थे। पहले अस्पताल तक दूर, फिर पागलखान तक दूर, फिर इस दुनिया से भी दूर। मैं अपने माँ की बात का क्या करूँ? यहाँ पर बप बीतते गये हैं। मैं जिन्दा नहीं पर वह बात जिन्दा है।—मैं सराय की वह लड़की थी, जिस की एक रात की कीमत सिर्फ पाँच फक थी पर मेरे अंदर जो कुछ वस्तु नहीं बन सकता था उस कुछ की बात सुनने के लिए समय के पास बान नहीं थे। उसी कुछ की बात सुनाने के लिए मैं ने तुम से तुम्हारा बान माँगा था जो तुम ने मुझ दे दिया पर बिनास मैं ने तुम्हारा बान इस तरह नहीं माँगा था खुदा जानता है, इस तरह नहीं।

मैं राशेल

मैं लिडिया'

चालें। तुम मुझे उस लकीर पर खड़े हाकर मिले, जा इस दुनिया को दो हिस्सा में बाटती ह—

लकीर के एक ओर अपना पर रंग चढ़ता ह दूसरी ओर अपना पर चढ़ा हुआ रंग बरग हो जाता ह—

एक ओर हर समय जीवन को गरमाये रखनेवाली सुरक्षा हाती है दूसरी ओर जीवन पर हर समय छाया रहनेवाला ठण्डा सहमने का भाव।

अच्छाई दाना ओर हाती ह पर एक ओर वह गोल छोटे पत्थर का तरह तुम्हारे हाथ में खेती रहती ह और दूसरी ओर वह तुम्हारी मुट्ठी में पकने हुए उस नुकाले पत्थर का तरह हा जाती ह जिस की नोक हर समय तुम्हारी हथेली में चुभती रहती ह तुम्हारे मन में चुभता रहती ह तुम्हारे दिमाग में चुभती रहती ह

तुम न फास के एक हाटल में जब मुझे देखा था तुम ने पाया था कि मेरे जिस्म का रंग शहद जमा था। पर इस शहद में मेरे मन की मक्का भी बड़ी हुई थी। तुम्हारे बोमल से मन ने इस मक्खी के डक का छू लिया—इस के कारण चन्नेवाला साजिन का तुम्हें पता नहीं था।

तुम तेईस साल की उमर में अपने अमीर बाप से पैसे लेकर फास देखने के लिए आये थे—फास का जवानी देखने के लिए अपनी जवानों के जवान के लिए। और तुम फास की कला देखने के लिए आये थे। आठ गलरिया में खड हो जब तुम ने रंगा का, लकरो की ओर उन के सन्तुलन की बानें की, मैं बिलख उठी। यह कला तुम्हारे जस खूबमूरत जवान और अमीर लडके के लिए रंगा और रंगाआ का सन्तुलन थी पर मुझे जसी जखली साधारण और गरीब लडकी के लिए जिन्दगी का साथ था, जिन्दगी की तत्ति थी जिन्दगी की पनाह थी।

मैं एक तसवीर के सामने खडा, तसवार की तरह जड हा गयी थी। राटा का टुकडा और शराब का एक प्याला तुम ने उस तसवीर की तगरीह की थी। पर जसे हर तसवार की एक जगान होती ह, मेरी भी एक जवान थी, मैं तुम्हारे काना में बिख पड़ी, यह हमारी जिन्दगी की एक तमना ह। तन की भूख के लिए राटी का एक टुकडा और मन की प्यास के लिए मुहव्वत के कुछ बतरे। हम दुख और भूख

१ सामरसेट मार के उपनास 'विममस हॉलीडे' की पात्र लिडिया।

क मार हुए लागा की तमना । पर यह इतना-मा भी हमारी विस्मय म कहा ? चालें ।
यह तसवीर हमारी एक चीख ह

मैं ने जब पहली बार यह चीख सुनी थी इस की पीडा से मेरे जिस्म का आधा हिस्सा मारा गया था । वेश्या बनना ऐसा इनसान बनना ह जिस क जिस्म का आधा हिस्सा मारा गया हा ।

मेरी छाती में ऐसा दिल है जा कुछ दिनों के लिए या कुछ वर्षों के लिए किसी स मुहब्बत नहीं बर सकता, उस की मुहब्बत उस की उमर जितनी ही हो सकती ह । इस तरह के मन का अपनी छाती में रखे, राश अपना तन किसी को बेचना, क्या जिस्म के आधे हिस्से के मारे जाने का सबूत नहीं ?

तुम ने जब यह चीख सुनी, इस की पीडा से तुम्हारे जिस्म का आधा हिस्सा मारा गया । चिन्तक बनना भी ऐसा इनसान बनना है, जिस के जिस्म का आधा हिस्सा मारा गया हा—

मैं पाँच दिन तुम्हारे हाटल के कमरे म रही । तुम अपनी जवानी का जगन मनान क लिए फ्रास आये थे, पर मुझ से बातें करते हुए तुम्हें अपनी जवानी की बात विस्मृत हा गयी । अगा म जवानी की चमक और जेब में हज़ारा के नाट पा, चुपचाप बठ गहना, दबते जाना और साचते जाना भी क्या जिस्म के आधे हिस्से के मारे जाने का सबूत नहीं ?

मेरा बाप इस का एक अमनपसन्द शहरी था । समय की उथल-पुथल ने उसे गलन समझा जोर मरवा दिया । मैं घर से बेपर हुई और जुवान से बजुमान । जिंदा रहने के लिए राटी का एक टुकडा चाहिए था और मुहब्बत के कुछ बतर ।

मैं ने फ्रास के एक बहुत ही खूबसूरत आदमी स प्यार किया, पर वह बल्ल के इल्जाम में पकडा गया और अब पन्द्रह साल के लिए जेल में पडा हुआ ह । मैं उस क वापस आने का इतजार कर रही हूँ और मैं बेरया हूँ

मैं, जिम ने सपने में भा पराये मद का अग नहीं छुआ

चालें ! तुम्हारे पास सब कुछ ह तुम्हारा दश, तुम्हारी जुवान, पर चिन्ता के कारण तुम्हारा रंग हल्ला-मा पीला हा गया ह । तुम जब मुझ मे मिलकर अपने मौन्चाप के पाम वापस इगलण गये, ता उन्हान समझा कि फ्रास की किसी लटकी ने तुम्हें काई बुरी बीमारी द दी थी । व डॉक्टर का बुलाने की प्रक्र करने लगे थे । तुम, जिस ने एक पल क लिए भी किसी लटकी के अग का स्पग नहीं किया था

चालें ! इनमान के जिस्म का यह आधा हिस्सा क्या मारा जाता ह ? मैं बरया हूँ इस प्रन का उत्तर नहीं देड सकती, पर तुम चिन्तक हो, तुम इस प्रन का उत्तर खर देडना—

मै मारिया'

आप ने कई बार उम मरान के बार में दस्ता-मुना हागा जहा कई धमासान युद्ध हा रहा हा । मुझ सिफ यह कहना ह कि जग का मदान सिफ धरती का टुकड़ा नही होता, इनमान का सीना भी हा सकता है ।

मेरी छाती म सारी उम दा फौजें तनकर बठी रही । गले में जग की बरदी पहन हाया में हथियार पकड़, और दिल में एक खौफ लिय—यह खौफ बड़ा अजीब चीज होती ह यह जिम क दिल में आकर बठ जाये वह आदमी खौफनाक भी होता ह और खौफजदा भी । सा एक ही समय में दोना फौजें एक दूसरी को डरा भी रही थी और एक दूसरा स डर भा रही थी । अगर इस तरह बहू—कि य दाना ताकतें दा घड थे, लाजिक का गिर दोना का नसाब नहा हुआ था । यह मुझे मानूम था कि विसी दिन मर साथ मुट्ठव्यत जमा घटना घटगी, इस घटना के स्वग का मैं कई बार कल्पना किया करती थी पर अपनी आँखा-दगा अपनी माँ की मौत के कारण मुझे यह भी पता था कि इस घटना में एक ऐसा दह हागा—दाजस जसा दह—जिम में से मुझे उमर भर गुजरना हागा ।

यहा वह लबीर थी जहाँ खड हाकर मरी छाता म जग गुरू हुई थी और, फलिम्स ! तुम्हें दगना और मिलना एग था जगे मेर दानो हाथ एक स्वग का पनदन के लिए उठ गये हों और मर दाना पाँव एक दाजस का अग में जल रहे हा

पहला डिफस मैं न यह लिया था कि मैं न तुझ भाई बहवर बुलाया था । पर डिफस खाला फामर जसा था जिस से न तुम डरे थे न मैं ।

दूसरा डिफस मैं न यह लिया था कि तुम्हारे पाम जितने पस थ मैं न वह खच करवा लिये ताकि तुम धकरानर लदन से जरमनी वापस चले जावा । पर यह डिफस भी निशास से धूक गये गाल जसा था जिम हवा में ग गुजरत दग तुम हेंम लिय थे ।

तुम्हें याद हागा कि एक दिन तुम ने मर माथ चलते हुए बिना मूँदमूँद औरत को लेग दया था कि मेर नीतर का प्रेमिका का गारी ईर्ष्या एह ही बार में जागवर मेरे जीवों में गूँद भर गया था । यह जम कुछ हथियार थे जा तुम ने मेरे भातर छिट युद्ध को बढ़ावा देने क लिए उम दिन भज लिय थे ।

१ निवेदना मुर क उपन्यास 'विशाल दिशापर' की पात्र मायिया ।

इस का बाहरी रूप भी भयावह था। मैं तुम्हें जो कुछ मेरे हाथ में आया उस से पीटने लगी थी और नोचने लगी थी, जिस का अन्त इस ने कम कुछ नहीं हा सकता था कि मैं अपने जिस्म के हाँडा से तुम्हारे जिस्म को एक ही साँग में पी लूँ। नग्न मैं जल रहे भावा के साथ भी मैं सारे स्वर्ग की अपनी बाँहा में भर लेना चाहती थी—मैं ने वह इकगारनामा फाड़ दिया, जिस से मुझे स्टेज पर गाने के दा हजार गिनी मिलते थे। और मैं ने लन्दन की शोहरत को, दीलत को और गायद हाँ-ह्याम को भी अलविदा कहकर एक गाय में वह एतिहासिक महज किराये पर ले लिया, जिम में इंग्लैंड की मलिका बसा रह चुकी थी।

यह किराया चुवाने के लिए मैं ने अपना हर कीमती जेवर बच दिया था पर फिर भी मुझे इस में रहना सस्ता लगा (मैं छाटी होती जब नगे पाँव इटली में फूल बचा करता थी, तो उस गरीबी में मैं ने इस महल का सपना दखा था। तुम से मिलकर मुझ लगा था कि उस सपन को सब बर्गनेवाली घड़ी आ गयी थी, और सारी उमर का सपना जब सब जाने लगे तो उस घड़ा उस की हर कीमत सस्ती लगता ह)।

स्वर्ग मेरी बाँहा में था पर मेरे पाँव हवा में टटव रहे थे। पाव धरती पर रखती थी ता धरती पर दोख की आग जलती हुई महमूम होती थी—मैं जान गयी थी कि मैं तुम्हें मजा दती थी पर खुशी नहीं। कुछें मे स पानी निवाँती और कर्गों का घोनी जब मैं गाती थी ता तुम मेरी आवाज से उठने लगे थे। उस आवाज से—जिसे मुझने के लिए लग दो हजार गिनीयाँ देते थे—और मुझे लगा, तुम्हारे मन के मूनेपन को भरनेवाली मैं 'वस्तु नहीं थी सिफ उस गाय को ढकनेवाला एक ढकना था।

इस लिए एक दिन तुम्हें सोता हुआ छोडकर मैं तुम से दूर चली गयी—

तुम्हारी नजरा में भी मैं देनदार हूँ फलिक्स। और लगता ह मेरी इस कहानी का पढ़नेवाले हर पाठक की नजरों में भी मैं देनदार हूँ। पर किसी को पता नहीं कि मेरे अंदर क्या घमासान युद्ध छिपा हुआ था। यह किमी एक तरफ की हार या जीत का प्रदन नहीं था—जो भी हारता वह मेरा ही एक हिस्सा हाना था—पर, फलिक्स, तुम से दूर जाना सिफ ऐसे था जमे जग के भदान का और उस के रक्तपात को तुम से दूर ले जाना। उन ताकतों को दूर ले जाना, जिहे सिफ धड़ नसीब हुए थे पर सिर नहीं नमाव हुए थे।

मैं बलाश^१

इक स्ट्राएब के स्टूडियो में मैं दीवार की ओर मुँह किये खड़ी थी। किसी के सीनिया चरने की आवाज़ आयी

फिर मैं ने सुना—कमरे के दरवाज़े के पास खड़ा होकर कोई कमरे का लगे हुए ताले में एक चाबी घुमा रहा था

चाबी की आवाज़ सुन मेरे शरीर की सब रेखाएँ काप उठीं फिर दरवाज़ा खाल्दर जब कोई कमरे के अंदर आ गया ता मुझे लगा मरी पाठ पर उस ने अपनी दांता ज़ाँवें गड़ा दी थी

घबरायी हुई आँखों के भार को पीठ पर उठा सकना मेरे लिए बड़ा कठिन था। मैं जल्दी बहा स कहीं चले जाना चाहती थी पर मेरे सामने इटा की एक बहुत बड़ी दीवार खड़ी थी मैं कहीं नहीं जा सकती थी

कमर में जानेवाले ने दीवार में मुह छिपाने का मेरा अधिकार भी छीन लिया और विडविया के जागे टगे हुए माटे परदा का सरवाकर कमर में आ रहे प्रकाश की सहायता से वह मेरे मुह की ओर देखने लगा

मेरा माग बदन नगा था उस ने मेरे एक एक अंग को देखा और फिर पटक कर मुझे ज़मीन पर गिरा दिया

मैं जाने कितनी दूर ओंखे मुँह ज़मीन पर पड़ी रही फिर पता नहीं उस क्या खयाल आया उस न मुझ ज़मीन ने उठाकर दावार पर टाग दिया। इस बार वह अपने हाथ में एक चाकू पकड़ हुए था

मेरे अंग नग थे, और उन के नामने हवा में एक चाकू लहरा रहा था

हवा में लहराता हुआ चाकू मैं ने पहले भी एक बार देखा था। एक रोमन गहज़ादे के घर में मैं ग़बरनग थी। घर की हर चीज़ बड़ी कीमती थी। रोमन गहज़ादे ने मुझे बड़ी क़ामनी चीज़ें दी। इन चीज़ों में से एक चीज़ कीमती ग़लतफ़हमी भा था—मैं ने साचा, वह मुझ से विवाह कर लेगा। पर जिस वक़्त उस ने अपना घन्चा मुझे दे दिया तो वह ख़ुशफ़हमी मुझ से बापम ल ली

मेरा मास का बुत गली में बेचारा-सा बना खड़ा था और मर सामने हवा में झिन्गी के स्वीफ का चाकू लहरा रहा था

१ सागरसेट माग के उपनाम 'द गून एण्ड निक्स पैन्स' का एक पण्डित 'बलाश'।

इस चाकू से बचने के लिए मैं ने डा स्ट्राएव से विवाह कर लिया। वह जड़ ही मुझे फाम ले गया, और मैं ने उस के घर का दीवारा का इस तरह अपने गिद लपेट लिया कि हवा में लहराता हुआ चाकू किसी तरह भी मुझ तक न पहुँच सके।

स्ट्राएव एक सौधा-सादा आदमी था, पर उस के बनाये हुए चित्र विक्रि जाया करते थे, उसे पत्तों की बमो नहीं रहती थी। मुझे उस से मुहब्बत नहीं थी, न उस की बला न ही, पर मैं उस के लिए राटी बनाकर खुश थी, उस के कपडे सीकर खुश थी, उस के बनाये चित्रों की दीवारा पर सजाकर खुश थी।

एक दिन स्ट्राएव ने मुझ बताया कि वह अपने एक योभार दोस्त का अपने घर लाकर रखना चाहता था। इस दोस्त को मैं ने देख रखा था। यह उस समय का एक बहुत बड़ा चित्रकार था। मैं ने स्ट्राएव की अब तक हर बात मानी थी, पर यह नहीं मानो। एक गरीब हज़ार मिन्नतें कर यह बात मानने से इंकार कर दिया। पता नहीं क्या मुझे ऐसा लगा कि जब मैं लाल बाला और बिलासी होठवाला चार्ल्स सट्रिकलड के लिए घर का दरवाज़ा खालूगी तो हवा में लहराता हुआ चाकू दरवाज़े में से लपक कर मेरे कमरे में आ जायेगा।

स्ट्राएव ने जिद्द पकड़ ली। अब सोचती हूँ—उस ने नहीं यह तो बड़ा अच्छा था, मेरी हर बात मान लेता था। हवा में लहराने हुए चाकू ने जिद्द पकड़ ली थी। स्ट्राएव अपने दोस्त का घर ले आया। मैं ने अपना सिर झुका दिया और मरजी भा। मुझ से जितनी सवा हो सकती थी, मैं ने हाज़िर कर दी।

सट्रिकलड का जन्म बुल्गारिया में हुआ था। उस ने हाथ के इंगार से चाँदकूर मुझे नामने बिठा लिया। जैसे-जैसे वह मेरे जिस्म की बनबन पर उतरता जा रहा था, मुझे लग रहा था, मेरा जिस्म मुझ पर से उतरता जा रहा था और बनबन पर चढ़ता जा रहा था।

मैं ने अपने जिस्म पर से जब कपडे उतारे थे, मुझे अपनी तकदीर का पता नहीं चल सका था। पर जन्म मैं ने अपने मन पर से अपना जिस्म उतार दिया। मुझे अपनी तरतीर का पता चल गया। मैं सट्रिकलड से मुहब्बत करने लगी थी।

“मेरे पास मुहब्बत करने के लिए बिल्कुल वक़्त नहीं। तुम्हारा जिस्म बहुत ख़ूबसूरत है। मैं कुछ दिन इस की ओर देखता रहूँगा। कितनी ही बार इसे बनबन पर उतारूँगा, पर इस से अधिक समय मेरे पास नहीं।” सट्रिकलड ने मुझ से कहा।

“पर मैं अपने समय का क्या करूँ?” मैं ने उस से पूछा।

उत्तर उस के पास भी बाई नहीं था, मेरे पास भी काइ नहीं। पर उत्तर का होना ही तो प्रश्न के अस्तित्व का प्रमाण ग़ाह हाता।

स्ट्राएव को पता लगा उस ने अपना स्टूडियो मुझे दे दिया, उस ने मुझे सट्रिकलड के सहारे छोड़ दिया।

सट्रिकलड ने हमारा सहारे

और हवा ने अपने चाकू के सहार

मुश्किल से तीन महाने गुजरे थे कि हवा में लहराता हुआ चाकू मरे प्याउ में आकर बठ गया और फिर पिघलकर एक एसिड बन गया। मैं ने उग एसिड का पा लिया। कुछ दिन अस्पताल में तड़पना पड़ा, पर स्वयं के बचाव से मुक्त हो गयी।

मैं भूत गयी—मगर अस्तित्व केवल मेरा मांस का बुत नहीं था, रंग और रेशमों का एक बूत बुत भी था, जो सद्वृत्त ने बनबन पर बनाया था। वह बुत अभी बाका है

पता नहीं मैं ने अपने मांस के बुत को जंगल में एक प्याला पीने को दिया था, ता बनबन के बुत का भा एक प्याला दन का गप्पल मुने क्या आया। मैं अस्पताल में थी जिस समय मुझे लगा कि जंगल से शूटिंग और बाँटे हुए मेरे मांस के होठ जब ज़िन्दगी से मिलनवाली पीड़ा से हँस रहे थे तब जवान जोर लाकर मरे बनबन के हाँठ ज़िन्दगी से मिलनवाली सज़ा से गो रूट थे

स्टेरोएव के मन का समझ मक्ती है—उग की ईर्ष्या को भी उग के गुस्से का भी उग के तरस को भी उस की निराशा का भी। वह जब अस्पताल में से मरी लाश को लेकर और दफनाकर वापस अपने स्टूडियो में आया मैं दीवार की ओर मुँह किये खड़ी हुई थी। उग ने दीवार में मुँह छिपाने का अधिकार मुझ से छान लिया। मैं ने जब उस की आद देखा उग की मुट्ठी तना हुई थी। फिर उग ने मुट्ठी में एक चाकू पकड़ लिया और चाकू हवा में लहरा रहा था—

तुम्हारा अस्तित्व मुझ से गहन नहीं हो पा रहा एक पल के लिए भी नहीं और स्टैरोएव की चीख जैसी आवाज़ मेरे कानों में भर गया।

मेरा अग-अग निरस्त था न मैं स्टैरोएव का हाथ पकड़ सकती थी न उस की आवाज़ में बचने के लिए अपने कान बंद कर सकती थी। न उसे देखने से अपनी आँखें बंद कर सकती थी और न मुँह से कुछ बोलकर उस से क्षमा माँग सकती थी

फिर मैं ने देखा उग का हाथ ढीला पड़ गया। उस का मुँह खुले का खुला रह गया। उस का नीली जाँखें दखता-का-देखती रह गयी। उस की छाती ने धड़ककर उस से बहा—यह हुनर का शाहकार है तुम इस नहीं मिटा सक्त

स्टैरोएव ने चाकू दूर फेंक दिया। आन दूसरी ओर कर ली। पर मैं देख सकती था—चाकू अभी भी हवा में लहरा रहा था

मैं उस दीवार पर से उतरकर एक दूसरी दीवार पर टग गयी। दूसरी दीवार पर से उतर एक अन्य दीवार पर

मैं ने एक चाकू का एसिड बनाने की लिया था। पर इस दूसरे चाकू का कुछ नहीं कर सकती। मेरा बनबन का बुत सदा वापस रहता है चाकू अभी भी हवा में लहरा रहा है

मैं गवई

काइ इनसान ज़र अपनी आँखा म एक चमकता हुआ खँयाल पा लेता है ता नौद से लेकर जागने तक और जागने से लेकर नौद तक उम की मज्जिल की तरफ चलता, और रास्ते में खड़ी मुखालफत स टकराता आखिर जब मुखालफत की गाड़ी हुई सूलो पर चढ़ जाता ह तो उमे शहीद कहा जाता है । पर जा कोई अपनी आँखा म एक चमकता हुआ खयाल भी पा ले फिर नौद स लेकर जागने तक, और जागने से लेकर नौद तक, उस की मज्जिल की तरफ भी चलता रहे पर फिर खुद ही अपना मुखालफ बन अपने रास्ते में खड़ा हो जाये और फिर खुद ही एक सूलो गाड़ उस पर चढ़ जाये, ता पता नही उसे क्या कहना चाहिए । उसे शहीद नही कहा जा सकता । मैं मानती हूँ । पर उमे गवई जखर कहा जा सकता ह । मैं ने इन दानों गंगा को एक ही स्थान पर रखने के लिए यह बात नही कही अपने बदनसीब नाम की बसम, मैं शहीद शब्द का दर्जा बहुत बड़ा समझती हूँ, और उम शब्द के पाँवा मे खड़ी होने के लिए मैं ने दुनिया का सब स छाटा दर्जा चुना है—गवई । सच कहती हूँ, मुझे अपन नाम से छाटा दर्जा और कोर नही मिला ।

कलाड ! मेरी आँखा म तुम्हारी मुहब्बत की निफ चमक नही पड़ी थी, सारे का सारा सूरज ही पड़ गया था । और मेरी जिंदगी में कभी वह दिन नही आया जब मैं ने इस सूरज की ताव न क्षेत्रा हा । अंधेरा कही दिखाई नहा दे रहा था, पर मैं ता घर से अधर खरीदने के लिए निकली था—मैं ने सोचा था मैं अपना हुस्न निफ उसे दूँगी जा महल जमे घर स, साने की तारा जमे कपडा से और राजाआ के लस्तरखाना जसी रोटी से उम की कीमत चुका सके ।

तुम्हें याद हागा मैं तम्हें अकसर कहा करती थी—तुम अपना सूरज किसी और का दे दा । अगर मैं ने तुम्हारी रोटी पकाते तुम्हारे मले कपडे धाते, और तुम्हारे चेहर की तरफ देपते इस सूरज के साथ खेलते-खेलते अपनी जवानी गुजार दी ता फिर मैं अंधेरा कब खरीदूगी ? अंधेरा तो सिफ जवानी में खरीदा जा सकता ह तुम्हारा कुसूर नही । मेरे अपने ही होठ मेर शब्दा का कहा नही मानते थे । मेरे हाठ जब तुम्हाने साँसो का छूते थे, वे अपने शब्दों के सामने झूठ पड़ जाते थे और अधरे की

१ बिन्दू ला मूर के उपनाम 'बिन्दू डि लून' में भास के एक संगीतकार कलाड बैन्गी की प्रभिका गैरी ।

घात भूल जाते थे। म कई बार उन्हें जबरदस्ती और पिलाया करती या कि मैं ने एक गरीबी क मार हुए कलाकार स मुहम्यत नही करनी, मुचे कारीलिन की तरह यह हमीना बनना ह जिस से तीस मिनट मागने क लिए किसी का एक हजार द सौ पचास पौण्ड देने पड़ते थे पर तुम जब मेरी तरफ दक्षत थे ता जेधरे का प्याला मेर हाथा से छूट जाता था। और इस का मतलब था कि मैं ने वे सन पौंड तुम पर निछावर कर देने थे जा बपों स मेरे खयाला म छनक रहे थे।

खुद से नाराज होकर मैं तुम्हार कमरे का उस छत की आर देखने लगती थी, जो जब भी वर्षा हाता थी चूने लगता थी, और जिसे मसान मालकिन कभी भी ठीक नही करवाकर दती थी क्याकि तुम कभी भी उसे पूरा किराया नही द पात थे। और फिर जब म इस छत के नीचे से भाग जाने के लिए उठती थी, तो मेरी रोड की हड्डी मेरी पाठ म राने लगती थी।

तुम्हें याद होगा हम छुट्टिया में एक खेल खला करते थ। मैं जब दूसर-तीसरे दिन बाजार से सज्जिया लाकर तुम्हारे लिए रोटी पकाता थी ता रोटी खाते हुए तुम पूजा करते थे—

तुम रोटी बड़ा स्वादिष्ट बनाती हा कल हम होटल में राटी नही खायेंग तुम घर रोटी पकाआगा ?'

'पका दूंगा, पर कल यह राटी तुम्हें बहुत महँगी पड़ेगी।

'कितना महँगी ?

तुम्हें एक हजार चुम्बन देने पड़ेंगे।

'एक हजार बहुत ज्यादा ह सात सौ।'

'नही।'

'अच्छा आठ सौ।'

'पूर एक हजार।'

अच्छा नो सौ पचाम।

एक हजार स एक भी कम नही।'

'अच्छा, पर यह बिल्कुल डाका ह।'

यह दीवाना खेल हम अक्सर खेला करते थे। पर खुशी विसा भी दावानगा से शमिन्दा नही होती।

एक बार मैं ने खुद से इक्कार किया कि सितम्बर तक मैं ये छुट्टियाँ मनाऊँगी, इस से अधिक नही। सितम्बर के आने म अभी तीन महीने बाकी थे। और मैं ने सोचा था कि मैं ने खुद को तान महीने दकर, खुद पर बड़ा एहमान किया था। पर मेरा यह अपनापन न जाने क्या था, क्या नागुरुगुजार जब सितम्बर आया ता यह मेरी ओर इस तरह धूरकर देखने लगा जैसे मैं इस के पास से कुछ चुराने लगी था। यह और दिन मागता था, मैं ने इसे और दिन द दिये पर मैं इस से नाराज हा गयी।—फिर

इ ने जोर दिन माने, पर मैं इस न और अधिन ताराज हो गया ।

इस अपनआप का झूठा साक्षित करन के लिए मैं ने धीर धारे गन का सहारा लिया कि कलाड जत्र देर स घर आता था तो जरूर किसी दूसरी औरत स मिलकर आता था । और कलाड ! इस गन का सहारा ल मैं राज तुम स लडने लगा ।

तुम मुने कुछ नहीं कहत थे पर मुझे मालूम ह कि तुम्हारे प्यार म कभी गुस्मा मिलने लगा था, कभी तरस कभी एहमान, कभी घनाउट, और फिर कभी बकजाई भी । ये चीजें भी सहारे के लिए बड़ी अच्छा थी ।

पर ये सहारे बड़े खतगनाक थे । इन्होंने मेरे हाथ में एक दिन पिम्ती पनडा दा । पना नहा, इस से मैं तुम्हें मार देना चाहता था कि खुद को यह मेरे हाथ स चल गया । मैं इस की आवाज स डरकर बेहोश हो गयी । पर इस की गाली न तुम्हारे जिस्म से छुट्ती थी न मेरे जिस्म स दाना जिस्म सहो-सलामत थ पर कुछ दिना में ही मुझे पता चल गया कि मेरे हाथ मलामत नहीं थे । उन में कोई सुराख जरूर हो गया था ।

यही एक सुराख था जिना म मैं बेगी गूली गाड सकता थी जमी, पर चढकर लाग गहाद हाते ह । गहोद हाने का दर्जा मेरे हिस्स म नहा आया, पर सूली पर चटना मुने नमीब हो गया ।

मैं ने खुद का अंधरे का व्यापार करने के लिए मना लिया । महल जना घर चान्ती थी, मेरे हुस्न ने मुझे खराद दिया । माने की तारा जमे लगाम चाहती थी, मेरी जवानी ने मुझे परीद दिये

पर कलाड !—वर्षों बाद जत्र तुम बसर से मर रहे थे तुम्हारी बीवी तुम्हारे सिरहाने बठी हुई थी, तुम्हारा बच्ची तुम्हारे दगवाजे के पास खेल रही थी, उस वक्त तुम्हारे घर के दगवाजे के आगे आतर कोई पूर रख गया था । तुम्हारी बच्ची ने के फूल देखे थे और ले जाकर तुम्हारे सिरहाने रख दिये थे । तुम ने फूल को सूँघा था, पर तुम्हें यह पता नहीं लगा था कि वे फूल कहा कौन रख गया था । कलाड ! वे फूल मैं ने रखे थे, तुम्हारी गबी ने, जा मरकर भी नहीं मरी था । तुम्हें पता ह जो सूलियों पर चढते ह व मरकर भी नहीं मरते ।

मैं लैनी'

बमे ता पग हाने स लेकर मरने तक मरी कहानी सिर्फ एक फिरा ह — “वर्षों में वष जमा हाने चले गये पर मैं उतने का उतना ही रहा’ जमे एक वषपन था जा लम्बा हाता गया और एक उंचे लम्बे आदमी की गवत में फलता गया—पानी के किनारे खड हाकर मैं अपना टुलिया देगता था—जैय बढ, डलप हुग बढे बढा पर थापा हुआ चहरा जोर चेहरे पर दो माटी जोर पीलो आसा ब गडे ।

ठहरा हुआ पानी नहीं पिया करते । तुम्हें प्यास लगी हुई हा ता तुम पूर का पूरा जोहड भी डकार जान हो । जाज मुझे बहता करता था पर मुझे जवाब नहीं मूमता था । दुनिया में अगर हर जगह बहता हुआ पानी न मिले तो मैं इस बात का क्या जवाब दे सरता था ।

तुम ने जेय म मरा हुआ चूहा क्या डाल रखा ह ? जाज मुझ स झिडकते हुण पूछा करता था पर मैं क्या बह सकता था । अगर वह जिंदा मेरी जेब म नहीं ठहरता था ता इस में मेरा क्या दाप था । मैं तो बवल जेब में हाथ डालकर उस की मुलायम सी पीठ को अपनी हथेला स छूकर दसना चाहता था ।

और जाज मुझ स नाराज होता था कि मर हुण चूहे का जेब म स निवाल फेंकता क्या नहीं था । पता नहा क्या वह मुझ पर विगडता था हालांकि मैं ने उसे बताया था कि वह मुझे सडक पर पडा मिल गया था मैं ने किसी के पाम से उसे चुगया नहीं था । मेरी पूछी न मुझे रबड का चूहा दिना था पर काई रबड, बिभी जीबित मांस की तरह बसे हो सनता था ।

‘तुम्हारे कारण मेरा नौकरी भा छूट जाती ह तुम हर जगह कोई गलत काम कर देत हा और फिर हम बितने ही दिन मार मार धूमन रहते ह । जाज मुझ से शिकायत करता था हालांकि उस पता था कि मैं कभी बुरी बात नहीं करता था । उसे मालूम था कि पिछली नौकरी छूटने से पहले मैं न एक छापी सी लडकी के फाव को इसलिए हाव लगाया था क्योंकि वह बहुत मुलायम था । मैं उसे चूहे की पीठ की तरह छूकर देखने लगा था, पर वह लडकी चीखें गारने लगा थी ।

जाज का दुखी कर मैं दुखी हा जाता था इसलिए मैं उस से बहता था कि मेरे कारण अगर तुम पर मुसीबन आती ह तो तुम मुझे छाड डा ।

१ स्टेन के उपन्यास ‘ऑफ माइस एण्ड मैन’ का मुख्य पात्र लैनी ।

‘तुम अकेले कहाँ जाओगे ?’ जाज मुझ से पूछता था ।

‘किसी पहाड़ में काई कन्दरा ढूँढ लूँगा ।’ मैं कहता था ।

फिर वहाँ क्या कराये ?’ जाज सोच में पड़ जाता था ।

‘कुछ नहीं, मारा दिन घूँस सक्ता । वहाँ मैं अकेला नहीं हाऊँगा, एक चूहा दूँ लूँगा और फिर खेलना रहूँगा । मैं सब कहता हूँ मुझे इस से अधिक कुछ नहीं चाहिए था कि काई ऐसी जगह हो जहाँ मुझे कोई न गताये और मुझ से मेरी चीज न छीने ।

जाज ने मुझ से वह चूहा छीनकर पेंस दिया था और उस की जगह मुझ से इस्तरा किया था कि किसी दिन वह मुझे चिन्ता चूहा ले देगा । चूहे बहुत छोटे होते हैं । उन्हें हाथ में प्यार करो ता वह हथेली पर पड़े-पड़े मर जाते हैं । जाज ने मुझ से इस्तरा किया था कि वह एक चूहा नहीं मुझे एक छोटा-सा पिल्ला ले देगा । पिल्ला गानद जन्दी नहीं मरेगा और जाज ने कहा था कि भले ही घर-बार और बीबी-बच्च हम लोग की तकदीर नहीं होने पर फिर भी जब हम मजदूरी कर बहुत पैसे कमा लेंगे तो हम एक छाना गा घर बनायेंगे, और घर में एक गाय रखेंगे और कुछ सुअर पालेंगे । हम सरगाश भी रखेंगे । और हम रोटी बनाने के लिए एक चूहा खरीदेंगे और फिर दूध पर बनी गान्नी मलाई आयेगी

और फिर जब हम मजदूरी कर रहे थे एक दिन छुट्टीवाले दिन मैं भूसे के ढेर में बैठकर एक पिल्ले को प्यार कर रहा था कि उस की गरदन मुड़ गयी । पिल्ला चूहे की तरह छाना नहीं था । पता नहीं वह इतनी जल्दी क्या मर गया । मैं मरे हुए पिल्ले से बातें कर रहा था कि मनेजर की बीबी आ गयी और मुझ से बातें करने लगी । मैं ने उस से साफ कह दिया था कि मुझे उस से बातें नहाने करनी क्योंकि जाज ने मुझे किसी भी औरत से बातें करने से मना किया हुआ था । पर वह फिर भी मुझ से बातें करती रही और फिर मुझ से नाराज हो गयी कि मैं हर वक्त पिल्ला और खरगोशों की बातें क्यों करता था और कहने लगी कि उस के बाल खरगोश और पिल्ला से भी मुलायम थे और मैं उस के बालों का हाथ से छूकर क्या नहीं देखता था ।

और फिर वह जोर-जोर से हँसने लगी । मैं डर गया था कि उस की हँसी की आवाज अगर कही जाज ने सुन ली तो वह मुझ पर खूब बिगड़ेगा । इसलिए उस की हँसी को रोकने की सातिर मैं ने उस का मुँह अपने हाथ से बंद कर दिया । मैं उस का मुँह अपने हाथ से बंद किये रहा ताकि उस की आवाज जाज तक न पहुँच जाये और फिर जब वह चुप हो गयी तो मैं ने अपना हाथ अलग कर लिया । मुझे क्या पता था कि वह पिल्ले की तरह इतनी जल्दी मर जायेगा ।

मुझे नहीं पता था कि अब लागा ने मुझे बंदूक से मार देना था । शायद जाज का पता था, इसलिए वह मुझे वहाँ ले गया उस पानी के किनारे, जहाँ बैठकर एक दिन उस ने मुझ से कहा था कि हम इस नदी के पार एक दिन एक घर बनायेंगे, उस घर में हम एक गाय रखेंगे और

मैं नन्हा के बिना बठार उम पार की जमीन की तरफ दौड़ा रहा, जहाँ हमें घर बनाना था और जाऊँ मरा पाठ पीछे गया था। तितनी ही दूर मुझ से उम घर की बातें करता रहा। मैं ने गाँवाँ या बिना जाऊँ मुझ ने क्या नाराज होगा पर मैं क्या था कि वह मुझ से ताता नहीं था। यदि मुझ से डरता कर रहा था कि हम उम घर में बहुत भी जल्द रहेंगे।

यह साग सपना मेरी आँखों के आगे हिल रहा था—गाँव का मुलायम-मुलायम जिम्मा 'रगोणा' के सफ़ेद-गहरे बाँध, चूड़ा के छाँटे पत्ते—और फिर मुझे लगा कि वह हिलता हिलता मेरी आँखों में आकर ठहर गया था। अब मैं आँखें नहीं खोल सकता था। आँखें भी एक जगह पर ठहर गया थीं और उन में क्या हुआ सपना भी एक ही जगह पर ठहर गया था।

जाऊँ मेरे दादा ! मैं कैसे तुम्हारा दुनियाँ बना करूँ कि तुम ने मुझ एगी सुन्दर और ताता मोत मरने दिया। अगर तुम एक घड़ी और खूब जाते तो मुझे डक रहे लोगो की नियाँ भीड़ ने बहुत बुरी मोत मारना था। अगर मैं उन व हाया करता तो इस सपना की जगह एक बड़ा भयानक खौफ़ मरा आँखों में समा जाना था, और फिर सदा के लिए उम ने मेरी आँखों में बँध जाना था।

पर जाऊँ ! इस दुनियाँ में मैं एक लकी नहीं मैं लकियाँ की वह बनी भीड़ है अकेलापन जिस की तपनार होता है और हम सब जिन्दगी की सुन्दर चीज़ों का कभी हाथ से छूकर देगन के लिए तरस रहे हैं। धूबमूरत चाँदों नसीब नहीं हाता और तरस हुए हाथ जब भी किंगी चीज़ों को छूते हैं वह मर जाती है और फिर जालिम हाथ उस के पीछे भागने लगते हैं और उन लोगो का आग-आगे भागता हुआ हर लकी खौफ़जना है।

मैं तुम से एक बात पूछता हूँ जाऊँ ! अगर इस दुनियाँ में लकी इतने अधिक हैं तो जाऊँ इतने अलग क्या नहीं, ताकि हर लकी जब मरने लगे तो कोई महरबा जाऊँ उसे मिल जाये और उम का सपना की बातें करता रहे और फिर उन की आँखों के आगे सपना हिलता रहनेवाला सपना उस की आँखों में एक अपना ठिकाना ढूँढ़ ले। फिर भले ही आँखें कभी न खोल सकें। आँखें भी एक ही जगह ठहरी रहें और उन में समाया हुआ सपना भी एक ही स्थान पर सपना रहे।

मैं कैथरीन'

चान्स ! तुम्हारी मौत की खबर सुनकर आज मलिका बिकटारिया ने मुझे अफमोस का तार भेजा है—मुझे मिसिज चाल्स डिक'ज को—अगर मलिका बिकटारिया तुम्हारे जीवित रहते मुझे 'बरोनेट' की पदवी दे देती, जसा कि हवा में यह खबर थी तो मैं लेडी डिक'ज भी कहलवा सकती थी पर कुछ भी कहने से या कहलवाने से क्या होता है मैं जानती हूँ चा'स ! मेरा विवाह कभी तुम से नहीं हुआ था । मैं गिरजे व उस पादरी को चुठलाती नहीं जिस ने विवाह की रस्म निवाही थी, मैं केवल यह कहना चाहता हूँ कि मेरा विवाह सिर्फ तुम्हारे एक हाथ की तीसरी उँगली से हुआ था

तुम्हारे हाथ की तीसरी उँगली जिस पर सारी उमर वह अगूठी पड़ी रही, जो मेरी बहन मेरी ने मरते समय तुम्हें दी थी । मर चुकी बहन व जिन्दा इश्क को मैं ने अपना लिया था और तुम्हारी तीसरी उँगली का समेत उस अगूठी के अपनी जिन्दगी का माथी मान, मैं ने अपनी कोख में से दस बच्चों का जन्म दिया छाने छोटे डिकन्ज छाने छोटे याज

हर ब्याज का कोई मूलधन हाता है । यह मूलधन अगर मद और औरत के आपसी प्रेम का हा, तो वर्षा इस्तेमाल करने से भी खत्म नहीं होता । पर यह धन अगर किनी के एकपत्नीय प्रेम का हा ? मैं यह नहीं कहती कि तुम ने मेरे सवाली प्रेम का जवाब नहीं दिया था, तुम्हारे प्यारे-म्यारे खत अभी तक मेरे पाम सँभाल कर रखे हुए हैं पर उन खतों में जा जवाब था, वह मेरे प्यार का जवाब नहीं था, वही मेरी सोयी-सायी आँखा और अभी-अभी जागी जवानी को लिखा हुआ जवाब था—पर जब जवानी सा जानी है तो आँखें पूरी तरह जाग पड़ती हैं । और अपनी सा रही जवानी के वक्त मैं ने पूरी तरह जाग रही आँखा से देखा कि जिस मूलधन का ब्याज मैं हर नये वष अपनी गाद में खिगानी थी, वह धन केवल मेरा एकपत्नीय प्रेम था और इस धन में तुम ने अपनी मरखी का जा धन मिलाया था वह मेरी खत्म हो रही जवानी के साथ ही खत्म हो गया था और अब तुम्हारे खयाल में मेरा किसी ब्याज पर भी कोई अधिकार नहीं रह गया था—मेरा अपने बच्चे पर भी कोई अधिकार नहीं रह गया था

१ चाल्स डिक'ज की पत्नी कैथरीन का आखिरी खत ।

चास ! जब तुम्हारे पास जमाने भर की शाहरत था, मेरे पास मेरा गुमनामी थी। तुम्हारे पास अब दुनिया भर के साथ की रौनक था मेरे पास मेरा अकेलापन था। तुम्हारे पास अब हज़ारा पौंड की वह आमना थी, जो खर्च किये खर्च नहीं होती थी, मेरे पास मेरे एकपक्षीय प्रेम का वह सिक्का था जो तुम्हारी दुनिया में चल नहीं सकता था। इसलिए मेरा कोई बच्चा अगर तुम से आस बचा मुझे मिलने आ जाता था तो मैं खुद ही उसे मना घर दता थी—मैं नहीं चाहती थी कि मेरा गुमनामी, मेरे अकेलेपन और मेरे प्यार का छोटा सिक्का मेरे किसी बच्चे की विस्मय बन जाये अगर किसी बच्चे ने तुम्हारी विरासत सभालनी थी—तुम्हारी दौलत, तुम्हारी शोहरत और तुम्हारा अपनत्व—तो उस के लिए तुम्हारा यही आना थी।

चास ! जब तक तुम जीवित रहे मेरा यह विश्वास भी जीवित रहा कि भले ही मेरा विवाह तुम्हारे समूचे अस्तित्व से नहीं हुआ था पर तुम्हारी तीसरी उँगली से तो अवश्य हुआ था, इसलिए कल जब तुम्हारी मौत की खबर मुझे मिली, मैं ने काला लिबाम पहन लिया। डीन की आना से तुम्हारी कब्र कुछ दिना के लिए तुम्हारे दशको के लिए खुली रखा गयी ह और जब मैं आखिरी बार तुम्हें दफन के लिए रात को तुम्हारी कब्र पर गयी तो तुम्हारी तीसरी उँगली की विधवा होने के नाते मैं ने चाहा कि तुम्हारी उँगला में पड़ी हुई जूठी अब मैं अपनी उँगली में पहन लूँ। पर फिर मुझे पता चला कि मेरी सब से छोटी बहन जारजीना ने मेरे आने से पहले ही वह जूठी अपनी उँगली में पहन ली थी, और मुझे पता चला कि यह केवल जारजीना की मरजी नहीं थी यह तुम्हारी भी मरजी थी।

कब्र से वापस आकर मैं ने यह काला लिबास अपने गले में से उतार लिया ह। मुझे तीसरी उँगली की विधवा होने का अधिकार भी नहीं मिला इसलिए मैं काला बेल पहनने का अधिकार भी नहीं लेना चाहती। मैं ने कभी भी वह नहीं लेना चाहा, जो तुम ने मुझे देना नहीं चाहा। चास ! मैं ने सब गलतफहमियाँ तुम्हारे जिंदा रहते दूर कर ली थी सिर्फ यही एक गलतफहमी रख छोड़ी थी पर आज मरते वक़्त तुम ने मेरी यह गलतफहमी भी दूर कर दी। तुम न बड़ा अच्छा किया क्याकि जो लाग देवताआ के पास से एकपक्षीय प्रेम की आग चुराकर लाते ह उन के अगा पर कोई गलतफहमी शाबा नहीं देता, उन के अगा की नग्नता ही उन की पवित्रता होती ह।

चास ! तुम्हें एक बात बताऊँ ? जिस उपश्रित कुटिया में मैं रहती हूँ उस की दीवार पर दा तसवीरें लगी हुई ह—एक तुम्हारी और एक मेरी—जिस डनियल की चित्रकारी के तुम कायल थे, ये उसी डनियल की बनायी हुई तसवीरें ह और इन तसवीरों में बड़े समय, बड़े घड़ी वह पल, वही के वही ठहरे हुए ह, जब तुम्हें मैं ने पहली बार देखा था और तुम ने मुझे पहली बार समय को रोक सक्ने का बल या तो किसी चित्रकार में होता ह या किसी आशिक में। डनियल के बनाये हुए चित्र में

और मेरी कल्पना में, तुम—अपनी झिलमिल करती हुई जवानीवाले तुम—सदा कायम रहे हो, सदा कायम रहोगे। और मैं जब भी इस दीवार की ओर देखती हूँ मुझे तुम्हारा चित्र बड़े अभिमान के साथ इस दीवार पर बठा हुआ दिखाई देता है। पर मेरा अपना चित्र ? देख सकती थी—डेनियल की कला ने इस का साथ कुछ कायम रखा हुआ था, जो समय ने कायम नहीं रखा, और यह चित्र इस बात से शमसार मुझे सजा इस दीवार पर से उतरने के लिए उतावला दिखाई देता था पर इस समय मामबत्ती की कापती राशनी में बैठकर मैं जब तुम्हें खत लिखने लगी, तो मेरा यह चित्र दीवार पर से उतरकर मेरे पास आ गया, और फिर मुझे लगा कि वह मेरे हाथ में स कायम लेकर तुम्हें खत लिखने लगा। नही मुझे गलतफहमी नहीं हुई, वहाँ मेरे ये सुरदरे और बड़े हाथ और कहा उस के मुठायम और जवान हाथ उस ने जन्मी-जल्दी यह पत्र लिखा और फिर अपने कान के पास झूल आये काले सिमाह वाला का गुच्छा हाथ से परे कर उम ने मेरी ओर देखा, और फिर मुसकराकर वह सामने दीवार पर चला गया। और जब मैं देख रही हूँ कि वह इस दीवार पर, तुम्हारे चित्र के बिगुल पाम हाकर बड़े अभिमान से बठ गया है। ऐसे, जैसे उस ने अपनी मुस्तकिल जवानी का कोई भेद हूँड लिया है—तन की जवानी का नहीं पर शायद मन की जवानी का।

कभी समय था, चाल्स ! जब मैं तुम से किसी अधिकार का परदा चाहती थी, और तुम्हारी किसी मेहरबानी का सहारा माग लेती थी और अपने अकेलेपन की टिडोरन से घमराकर तुम्हारे साथ गुजारी किमी अच्छी घड़ी की धूप के नीचे खड़ी हो जाती थी और आज तक मैं ने तुम्हें जितने भी पत्र लिखे थे वह किसी गलत फहमी की रगोन सियाही से लिखे थे, पर आज अपना यह आखिरी पत्र मैं तुम्हें सफेद सियाही से लिख रही हूँ—अपने मन जमी सफेद, जिम में कोई रंग उजर नहीं आता, पर जिम में सभा रंग समाये हुए हैं। और इस पत्र में मैं सस्कारों के सब परदे उतार तुम्हें एक बात लिख रही हूँ कि मैं न आज अपने अस्तित्व की नग्नता को चूम लिया हूँ।

अब जब मैं यह पत्र तुम्हारी कब्र में रखन के लिए आयी हूँ, तो मैं ने काला नहीं, सफेद लिबान पहन रखा है और चाल्स ! आज मैं वह सबती हूँ कि मेरा विवाह कभी तुम्हारे साथ नहीं हुआ था। तुम्हारी तीसरी उँगली के साथ भी नहीं। मेरा विवाह मेरे एकपत्नीय प्रेम के साथ हुआ था, और वह अब भी जीवित है, तुम्हारी मौत के बाद भी जीवित है इसलिए उस के जीवित रहते हुए मैं काला लिबान नहीं पहन सकती।

गम भरत वन हिचकिया लेत ह पर, मेर महबूब ! कई मुझ-जम भी होत ह, जो मौत की दहलाज पर पाव रखते समय नही, जिन्दगी की दहलीज पर पांव रखते समय ही य हिचकियां लेन लगते ह ।

एक छाटी-सी बच्ची का इस दुनिया में अनाथ हो जाना और आँखें फाड़ फाड़कर कभी जमीन की तरफ दखना और कभी आसमान की तरफ—यह अवैलापन मेरी पहली हिचकी थी, जो मैं ने जिन्दगी खत्म करते हुए नहीं, जिन्दगी शुरू करते हुए ली थी ।

जिम घर में भा पनाह लेती भले ही उस के बत्तीस काम करती, पर राटी का हर निवाला निगलते समय गले में फँस जाता, जमे उस राटी का आटा पाना मैं नहीं तरम म गूँधा गया ह । यह बेचारगी मेरी दूसरी हिचकी थी ।

अकेली और जवान औरत की आबरू इस दुनिया में उस कच्चे रंग की तरह हाती ह जो राट-चलते हुआ की नजर से उड़ता रहता ह । इस दुनिया का दिया हुआ यह कच्चा रंग मेरी तीसरी हिचकी थी ।

तुम्हारा इश्क, मेरी नज़रा में मेरी रूह का नेकनामी था पर बाकी सब की नज़रा में मेरी बदनामी । छाटे-से स्कूल का नौकरी मेरी रोटी का सहारा मुन से छीन ली गयी क्योंकि मैं नेकनाम औरत नही थी । यह भी मेरी एक हिचकी थी, भले ही यह हिचकी मैं ने राकर नही भरी, हँसकर भरी, क्योंकि इस का सम्बन्ध तुम्हारे इश्क से था ।

और मूने दिना और बीरान राता में तुम्हारे इन्तज़ार की हिचकी, तुम्हारे विरह की हिचकी और उस सहम की हिचकी कि तुम इस समय न जाने कहाँ हागे, और तुम्हारे पीछे बटूकें लिये दौड़ते हुए दुश्मना ने पता नही तुम्हारा साथ क्या सलूक किया हागा और फिर बटूक की गोली से तड़पते मेरी एक आखिरी हिचकी—पर मेरे महबूब ! इन सब हिचकिया से मुझे काई उलाहना नही, बल्कि जा हिचकी बटूक की गोली से तड़पते हुए मैं ने ली उस की मैं देनदार हूँ । तुम्हारे गिन् दुश्मनो का घेरा पड़ जाने पर जिस समय तुम्हारी मौत यकीनी हो चुकी थी अगर उस समय

१ बल्लगारियन लेखक हान वाजीव के उपन्यास 'अष्टर दि योर्क' के मुख्य पात्र ओमनियानोव की प्रेमिका राधा ।

मैं तुम्हारे हाथों में न मर जाती तो जा जिन्दगी मुझे गुज़ारनी पड़ती, उस साचकर सिक्र औरत ही नहीं बाँप उठती, यह घरती भी बाँप उठती हूँ ।

पर मेरी एक और हिचकी है, मेरे महबूब ! मेरे गले में रुकी हुई एक हिचकी । मैं राधा, एक औरत शायद तुम्हें धामा भी कर दूँ, पर मैं औरतजात, तुम्हें धामा नहीं कर सकती । तुम जिसने गुलामी की लानत से इतनी नफरत की कि देश को स्वतंत्र करवाने का सपना पहली बसम तुम ने खाया । फिर, जिम ने बना और जंगलों में भटकते हुए उमर गुज़ार दी पर जिसका विद्वान एक पल भी न डोला । और तुम, आ मित्र एक बहादुर आदमी नहीं थे, बहादुरी की बहावत बन गये थे तुम ने अपनी ग़रहाज़िरी में अपने एक दोस्त का मेरे पास आया सुनकर मुझ पर इस तरह शक किया कि मरी बाई भी मित्र तुम्हारा विश्वास न बन सकी यह सिर्फ एक इत्तफाक था कि मुद्दा बाद तुम्हारे एक दूसरे दास्त ने उस दास्त का मुँह लिया एक ऐसा मामूला खत तुम्हें दिया कि तुम्हें फिर मुन पर विश्वास आ गया । पर मेरे महबूब ! यह बसा विश्वास था जो एक बेगाने के मुँह से सुनी बात पर टूट सकता था और जिम में मैं कुछ भी नहीं था । मैं जमे हुई, १ हुई हुई, न हुई

मैं मलरी एक मनुष्य नहीं एक रोप हूँ दुनिया की हर खूबसूरती का जिनह करने वाली हर छुरी के खिलाफ एक रोप। यह खूबसूरती चाहे एक बुत की शकल में हो और चाहे एक सोच की शकल में और यह छुरी चाहे ताकत के नाजायज इस्तेमाल की शकल में हो और चाहे चुप की साजिश की शकल में।

मैं ने 'एल्स वय दूह' नामक एक आदमी को गाली नहीं मारी थी चुप की साजिश की गाली मारी थी। इस के लिए कुछ महीने जेल में रहने का मुझे कोई रम नहीं था, क्योंकि जिस समाज में मुझे रहना पड़ा था उस की बनावट भी इसी बंद का दूसरा रूप था। सत्तावाँ लोहे की हा या कला की पहचान से इनकारी होनेवाली नजरा की इस स काई फक नहीं पड़ता।

यह आक्रांश अगर किसी और चीज से समझीता नहीं कर सकता तो गरीबी से गुमानामा से जिदगी की अथहीता से और खुद को शराब के प्याले में धीरे धीरे घुला देनेवाली आत्महत्या से अवश्य समझीता कर सकता हूँ। यह समझीता मैं ने कर लिया था। पर एक दिन भर इस अधर में एक नगी किरण जमा आदमी मुझे मिलने के लिए आया। उस की मुलाकात का एक-एक शब्द मैं आप को बताता हूँ।

'मैं ने तुम्हें खत लिखा था बुलाया था तुम आये क्या नहीं मलरी ?'

"मैं नहीं आ सका, पर तुम्हारा यहाँ मुझ घर आकर ढूँढना, मिलकुल गलत तरीका ह। ऐसा दुनिया में नहीं हाता। तुम्हें चाहिए था—तुम मुझे अपने दफ्तर आने के लिए मजबूर करते और पहली बार जब मैं आता, तुम उस दिन दफ्तर से नदारद होते। दूसरी बार तुम मुझ से डेढ़ घण्टे अपने बाहरवाले कमरे में इन्तजार करवाते और फिर डेढ़ घण्टे बाद तेजी से आकर मुझ से हाथ मिलाते और कहते कि आज तुम्हें कुछ जरूरी काम था और तुम्हें अफसोस था कि आज तुम मुझ से कोई बात नहीं कर सकाग। और फिर इसी तरह हम बात को दो महीने लटकाये रखते। फिर दो महीने बाद तुम मुझे काम देते और जब मैं यह काम तयार कर तुम्हारी भेज पर रख देता, तो तुम माये पर बल डाल उस काम को घूरते और फिर उसे रद्द कर देते—हमेशा ऐसा ही होता ह, इस बार क्यों नहीं ?

नहीं, इस बार नहीं।

१ आनन रैण के नावल 'काउण्टेन हैट' का एक पात्र मंगरा।

“तुम हावड रोख । तुम बड़ी खूबसूरत इमारतें बनाते हो, मैं तुम्हें सब बताऊँ मैं इसी लिए तुम से मिलने नहीं आया । मिलने पर—वह आदमी, वह आदमी नहीं निकलता, जो अपनी कला की खूबसूरती के समकक्ष ठहरता है ।”

“अगर मैं आदमी के तोर पर भी उस पे पूरा उतरता हाऊँ—फिर ”

“ऐसा कभी नहीं हाना ।”

“मैं एक नयी इमारत बना रहा हूँ, मैं चाहता हूँ तुम उस के लिए एक बुत बना दो । मैं अभी एक कागज पर लिख देता हूँ कि अगर मैं तुम्हारा बनाया हुआ बुत इस्तेमाल में न लाऊँ, तो उस के लिए दस हजार डालर हरजाना दूँगा ।”

‘मैं ने शराब नहीं पी हुई इसलिए मेरे हाथ-हवाय कायम है, तुम मेरे साथ हाथ हवाय की बातें करा—तुम स एक बात पछें ? यही कि इस काम के लिए तुम ने मुझे क्या चुना है ?’

‘क्याकि तुम एक बहुत अच्छे कलाकार हो ।’

“यह सच नहीं ।

“क्या यह सच नहीं कि तुम एक बहुत बड़े कलाकार हो ।”

‘मेरा मतलब है कि तुम्हारे चुनाव का यह कारण सच नहीं । क्या मैं पूछ सकता हूँ कि मुझे काम देने के लिए तुम ने किम ने कहा है ?’

“किमी ने नहीं ।’

“किसी उम औरत ने कहा थागा, जिम के साथ मैं कभी ’

‘मैं किसी ऐसी औरत को नहीं जानता ।

“फिर तुम्हारे पाम पैसे कम हागे शायद इसलिए ’

“इस खर्च के लिए बहुत बड़ी रकम है ।

मैं ने एक बार एक समालाचक की गोली मारा थी, बंद हुआ था, यह बात शायद तुम्हारी इस्तहारबाजी के काम आ सकती है ’

ऐसी बिल्कुल कोई बात नहीं ।’

‘फिर तुम मुझे बताते क्यों नहीं ?’

तुम ऐम ही फुजूल कारण साचते हा सीधा क्यों नहीं साचते कि मुझे तुम्हारा काम पसन्द है ।’

“कहने का यही फिकरा सब स पहले कहा जाता है कहा जाना भी चाहिए पर तुम मुझे असली कारण क्या नहीं बताते ?’

‘यही कि मुझे तुम्हारा काम पसन्द है ।’

तुम्हारा मतलब है कि तुम ने मेरी वे सारी कलाकृतिया—सारे बुत देखे हैं जा मैं ने कभी बनाये थे ? और तुम्हें वे पसन्द आ गये अगर किसी के यह बताये कि तुम्हें वे पसन्द करने चाहिए ? और सिफ इसी बात ने तुम्हारी आखा मे मेरी कदर भर दी ?

“हाँ !”

राख द्वारा की हुई यह ‘हाँ’ मेरे लिए बहुत बड़ा सन्मा थी। एक आश्चर्य का सदमा। मैं ने गरीबा और गुमनामी की एक अँधेरा काठरी में रहते हुए जिस चीज की अस्तित्वहीनता से मुश्किल से समझोता किया था, उस चीज का अस्तित्व का आश्चर्य मेरी सहन शक्ति से बाहर की बात थी।

“तुम। बेवकूफ मैलरी। तुम्हें कोई हक नहीं कि तुम मेरी या किंगो और की राय की परवा करा। तुम हम से बहुत ऊँचे हो। तुम्हारे जमा कगार हमारे पाम कोई दूसरा नहीं। कला में जो सम्भव हो सकता है तुम ने उसे सम्भव बनाया है— राख मर सामने खड़ा वह रहा था और मैं जिस ने अँधेरे के साथ जीन की आन्त डाल ली थी नगी किरण-से इस आत्मा को देखकर रो पड़ा।

मैं राख के प्रति बहुत गुस्सेगुजार हो उठा। इसलिए नहीं कि उस ने मुझे एक बहुत बड़ा काम दिया था, और इसलिए भी नहीं कि वह खुद चलकर मेरी कोठरी में आया था, बल्कि सिर्फ इसलिए कि वह ‘ह’—इस दुनिया में वह ‘ह’।

मैं कह रहा था कि मैं मल्लो एक आदमी नहीं एक आक्रोश हूँ, गुस्से की एक स्तर हूँ। जिन बेचारा को कला की पहचान नहीं उन के लिए मेरे मन में कोई गुस्सा नहीं। गुस्सा सिर्फ उन के लिए है जिन्हें पहचान भी होती है और वे फिर भी चुप रहते हैं। चुप की छुरी हाथ में लेकर वे कलाकार का धीरे धीरे ज़िह्न करते हैं। कलाकार के जबह हा जाने में भयानकता नहीं भयानकता यह है कि कलाकार की गरदन में से बहता खून हर किसी को दिखाई देता है पर उस गरदन पर चलती छुरी किमी को दिखाई नहीं देती।

राख मुझ से सहमत है, पर वह मुसका रहा है। भयानकता का खोफ सोच रहा है एक बीमारी की तरह है और हर बीमारी की तरह इस के भी जन्म होते हैं। जन्म उसी जिस्म में असर कर सकते हैं जो जिस्म वही से कुछ बहुत तगड़ा नहीं होता। रोरक को मुसकराते हुए देखकर मैं यह नहीं कह सकता कि उसे भयानकता का पता नहीं या उस ने यह भयानकता भोगी नहीं, सिर्फ यह कह सकता है कि राख एक खालिस सेहत है, इतना कि वह हर खोफ के हर जन्म से बचकर है और चुप को किसी साजिश का भी भारन से बे-परवा।

मैं ने गोली मारने की परवा की थी, रोरक को देखने से पट्टे। देखने के बाद—साचता हूँ इस परवा की ज़रूरत थी तो गरीबी के, गुमनामी के, जिन्दगी की अथहीनता के, और खुद को शराब के प्याले में धीरे धीरे घुला देनेवाली आत्महत्या के अंधर में, किमी नगी किरण के अस्तित्व को देखने की ज़रूरत थी—और इस अस्तित्व की भी वही बाहर से इन्तजार करने की ज़रूरत नहीं थी, ऐसा बनने की ज़रूरत थी।

मैं ऐरना'

माँ ! मैं ऐरना बाग़ रहा हूँ

मर गये मैं कोई आवाज़ नहीं बे-आवाज़ बाग़ रही हूँ

तू माँ ओ सालीबा—पूरा आयगा—अमरीबन ।

मैं ऐरना बुनकर—पूरी की पूरी जरमन ।

पर हम मित्र यह नहीं । कितना कुछ तुम से उतारनेवाग़ है कितना कुछ मुझ से । यह जो पाग़ू का लाग-लोट झाड़ दें—तो तू माँ जोर मैं ऐरना—बन जाते ह ।

दया ! मैं ने यह ग़ी बहा रि रह जाने ह मैं न कहा ह—बन जा ह

बग़ यह रह जाने जोर बन जाते बं बाच का अन्तर ह—एक पाग़ाला—जिन का चल सनना बहुत मुश्किल ह

नही गुग ह नही बहना चाहिग़ था बहना चाहिग़

ह ता सब समयो बं लिए हा जायगा । मैं उम सब समयों के लिए नहीं बनाना चाहती । था का सम्बन्ध मित्र हमार समय से ह । हम अपने बन्धनीय समय का आनेवाले समय के साथ न जायें । हमार समय की बन्धनीय परछाई, मैं चाहता हूँ कि आनेवाले समय पर न पड़े । माँ ! नफरत का लफ़्ज़ वहाँ ख़त्म होता ह और मुहब्बत का लफ़्ज़ वहाँ शुरू होता ह । हम दाना ने यह जगह ऐसी थी—उस दिन जिस दिन हम दाना पहली बार हमबिस्तर हुए थे । तू अपने अगा मे मर अग अग को चीर देना चाहता था । अपनी नफरत के ज़ार से । और मुहब्बत की उस विलम्बिताहट को पकड़ लेना चाहता था जो हर अग से पर थी

जोर हम ने अपने अगा तो तोड़-तोड़कर देगा था

और हम कितनी देर तक उस जगह पर राडे रहे थे जहाँ नफरत का लफ़्ज़ ख़त्म होता ह और मुहब्बत का लफ़्ज़ शुरू होता ह

एक लफ़्ज़ मे कितनी राह शामिल होती है यह तू भा जाता था मैं भी और यह भी कि यह राह सिर्फ़ लम्बी नहीं थी भयानक भी थी इस में वह जरमन बन्दूक की गाठियाँ भी शामिल थी जो तेरे बड़ गूढ़मूरत और बड़ प्यार का भाइया की छाती में लगी थी और दो बन्ना की मिट्टी तेरे आँसुआ से भी तरी माँ के आँसुआ से भी, तेरे बाप के आँसुआ से भी रोज़ गीली हो जाती थी । और बन्ना की उम गीरी

१ लिथान यूरेस के उपवास 'आरमैगे डॉन' की एक पात्र ऐरनेस्टावा ।

मिट्टी में स, जर्मनी की हर चीज के लिए नफ़रत की एक तीव्र गंध उठती थी और मैं तेरे अंगा से लिपटी हुई—एक जर्मन लट्की की और मुझे पता था कि जब तू मेरे हाठ चूम रहा होता था नफ़रत का गंध का भा चूम रहा होता था

नफ़रत का इस गंध में उस कानसपेशन कम्प का लगा की गंध भी थी जो तू ने, सिर्फ तू ने पहली बार डूबी थी। और मोला तक फैली उस का दुगन्ध तेरे मन में नफ़रत की दुगन्ध बन गयी था। और तू ने उस शहर के एक-एक जर्मन को ललकार के पूछा था जगल की ओर से जब हवा आती थी तुझे यह दुगन्ध नहीं आता थी ?

और जाने के लिए ललकते हर जर्मन ने झूठ वाला था। वे सब कहते थे, 'आती थी, पर हम ने साचा कि मिफ चमड़े की फेंकटरी की गंध है।'

और तू ने चीखकर कहा था 'मौत की इस फेंकटरी की गंध तुम सब ने सूँधी, पर चुप रहे। तुम सब नाबो हा '

'और तू ने हरक जर्मन का गान काड रोक लिया और हुक्म दिया कि जब तक हरेक जर्मन उस कम्प म जाकर सब लगा का नहीं दसता तब तक उस को गान काड नहीं मिलेगा।—

और—शा। मैं जानता थी कि हर एक जर्मन म से हा एक मैं थी—

मैं—तेरी महबूबा—तेरी ऐरना

मेरी नफ़रत की डगर भी बड़ी लम्बी थी—तुम अमरीकन जब राज मेरी धरती पर बम फेंकते थे मेरे लागा के हसीन जिस्म खून, मांम और बरखी बनकर गलिया में बहने थे

हमारे सिर की छतों, इट और पत्थर बनकर हमारे निरों पर गिरती था और मर हुआ स भी बदतर जा हम जीते रह गये थे—अन्त के दाने-दाने के लिए तरस गये थे

और अछूनी कुँआरी हमारी लन्बिया राज गलिया में तुम्हारी एलायड फासैंज—अमरीकन स्मी, बरतानवी और फासीसी फौजिया के हाया रेप हा रही था और हमारा जर्मन गव राज रोटी के एक-एक टुकड़े पर बिकता था

पर शा। इस सब से परे भी कुछ होता है—वह जगह जहा दुगन्ध खत्म होती ह, जहा सुगन्ध गुरु होती ?

तू और मैं अचानक मिले और पता नहीं कब और किस तरह उस जगह पर पहुँच गये, जहाँ अनहानियाँ होनियाँ बनती ह

तू अपनेआप से लडा मैं अपनेआप से लगी और हम दाना ने अपने-अपने जिस्म से रिसते गहू को पाछकर एक-दूसरे की नफ़रत के साथ गले से लगा लिया।

हम दोनों कभी समय से बलवान हो जात, कभी समय हम स बलवान हा जाता

मैं परना

कुछेक पड़ाव थे, जिन से हम आगे लाघ गये थे—

तेरी जिन्दगी का एक पड़ाव था जब कि तू लन्दन में पोस्टेड था। वहा तुझे एक वह जोरत मिली थी जिन से जुग हाते हुए तेरे जिस्म का मान रो उठा था। पर तू ने अपने-आप को जुदा हाने का हुक्म द दिया था, क्योंकि दूर वही उस का खाविद भी था, और दूर वहा उन के वन्चे भी थे। और तुझे लगा था कि उस स बिछुडकर भा तू सारी उम उस पनाव पर खड़ा रहेगा। कई बरस खड़ा रहा। पर जब तुझे मैं मिली, तू मुसकराकर उस पड़ाव से आगे चल पड़ा

जोर सा ! मेरा भी एक पड़ाव था जहाँ मैं बचपन से खड़ी हुई थी। मेरे बचपन का दास्त डीटरिखरशर बहद खूबमूरत लम्का था। उस का मुह गम्भीर था, मेहरवान भी। और फिर वह नाजी यूथ का मेम्बर बन गया था। जब कोई लेक्चर सुनकर आता था तो मैं कहती थी, 'चल नाव चलायें।' तो वह हँसकर कहा करता था, 'इस रोमाण्टिक बात का आज के लेक्चर से जाड नहीं बैठता। पर उस का सस्त सस्त हुआ मुह मेर साथ नाव में बैठकर फिर नरम-नरम हो जाता था। पर कुछ दिन बाद उस का मुह इस तरह सस्त हो गया था कि पिघलने में भी नहीं आता था। और फिर वह हमलावर फौज में शामिल हा गया था। वह दूर चला गया था, पर मैं उस का इन्तजार करती रही थी। मुझे यकीन था वह जब वापस जा जायेगा उस का मुह मेर दिल के सँक से पिघल जायेगा। पर वह कभी वापस न आया। जरमन फौज ने जब रुम पर हमला किया था वहा बफ में जान ताड-ताडकर मरनेवाला मैं एक वह भी था। मुझे उम का सिफ मौत का घडी लिखा खत मिजा था—बेहद उदास, और हिलटर की उम बेवफाई स भरा हुआ जिस के लिए कभी किसी जरमन के होठ नहीं हिले थे। जोर एक पश्चात्ताप भरा हुआ उन जल्मा के पश्चात्ताप से, जिन के लिए अब 'खुन' लफ्ज के पास भी कोई पनाह नहीं थी।

और मुझे लगा था—अब मैं कभा किसी मुह को प्यार करने लायक नहीं रह गया थी। और मैं एकाकीपन के एक पड़ाव पर खड़ी हो गयी थी। कई बरस खड़ी रही। पर सौं ! जब मैं तुझे मिली—नहीं मिली नहीं जब मैं ने तुझे जाना—तो मुसकराकर उस पड़ाव से जागे चल पड़ी थी

हम दानो चल दिये थे पता नहीं, किस मजिल की जार पर चल दिये थे और एक दद भी हमारे साथ-साथ चल पड़ा था

ना ! मेरा इक्लौता भाई तरे देग म कुँद था—जगी बदी। मैं उम का भी इन्तजार किया करती थी। पर वह जब कद म से छूटकर घर आया, तो जितना नाजी वह जाने बन्न था उतना ही आते बन्न था। वह कडवाहट से भर गया कि मैं एक जरमन आदमी की जगह, एक अमरीकन का मुहज्वत कर रही थी

और उस घडी लगा—वह दद जो मेरे साथ-साथ चला था मैं पाछे रह गयी थी और वह आगे बटने लगा था

पर मैंने वह घनी सैमाल ली। मैंने तेरी तरफ—अपने इशक की तरफ—
और तीखे पैर उठाये और उस दद से आगे बढ़ गयी—

और फिर एक भयानक मोड़ आ गया। तेरे हाथों में एक वह फाइल आ गयी,
जिम में मेरे बाद के नाज़ी हाने का पूरा सबूत था। और पूरा सबूत था कि वह कई
हजारों पोलिश लोग गुलाम मजदूरों की शकल में जर्मनी लाया था।

मैं अपनेआप का भी कुसूरवार समझती हूँ कि मेरे बाप पर मेरा विश्वास कितने
गहन अधियारे जैसा था कि मुझे कभी भी कुछ नज़र नहीं आया था। एक बार यह
विश्वास कुछ टालने का था मैं अपने बाप से कुछ पूछने का थी कि मा ने धमकाकर
कहा था, 'कोई अच्छी बेटो अपने बाप से सवाल नहीं करती।' और मैं अपनेआप को
अच्छी बेटो समझती थी, इसलिए फिर कोई सवाल जवान पर तो क्या मन में भी नहीं
आने दिया था।

पर शा ! तू ने जान-बूझ कर कुसूर किया है—मेरे बाप की फाइल का अपनी
मेज़ की दराज़ में छिपा दिया। तेरा यह कुसूर किसी की नज़र में नहीं था पर तेरी
अपनी आत्मा ने नहीं छिप सकता था ? तेरा अपनाआप तेरी अपनी आत्मा में कुसूरवार
हो गया था।

तू ने मुझे कुछ न बताया। पर उस दिन के बाद तू ने जब भी मुझे चूमा,
अपने होठों में एक नफरत भगवत् चूमा। जिस तू मुझे नहीं एक नफरत का चूम
रहा है।

हमारे पैरों के नाचे कोई जमीन नहीं थी। हम एक नदी में तर रहे थे—
लगातार। और हम नदी के दा किनारे—नफरत और मुहब्बत के किनारे थे। हम
कभी नफरत के किनारे से भागकर मुहब्बत के किनारे जा लगते और कभी मुहब्बत
के किनारे से भागकर नफरत के किनारे जा लगते

एक दिन मैं न इस नदी के पानी में गोते-से खाती हुई तुझ से तर मन का
भयानक भेद पूछ लिया। तू ने वह छिपायी हुई फाइल मेरे सामने रख दी

उस दिन मैंने तेरी मुहब्बत की याह पा ली—यह मुहब्बत गहरी थी।
इतनी गहरी कि तू अपनेआप का भी उस में डुबाने के लिए तयार हो गया था।

उस दिन मैंने तुझे डूबने से बचाया था। तेरा—डूबते हुए का हाथ पकड़ा
था कहा था, तेरी प्यारा जिन्ना मैं एक नाज़ी पर नहीं धार सकती।'

और उस दिन वह फाइल तूने अपने अफसर के हवाले कर दी थी

उस दिन हमने अपनी जिंदगी के आनेवाले दिनों का बलपना कर के दमा
थी—हम जाना एक-दूसरे के गले लगकर सोये हुए और अपनी-अपनी नींद में बड़बड़ा
रहे—तू जर्मन हमलावरों के हाथों अपने मरे भाइया के नाम ले-लेकर रा रहा
और मैं अमरीकी जूँद में यह बाप की पीठ का और जर्मन सत्ता पर जान ताकती
अपना माँ के चेहरा का दर्शन तो रही

